पुलिस नेतृत्व

पुलिस नेतृत्व

पं. गोविन्द वल्लभ पंत पुरस्कार योजना के अंतर्गत पुरस्कृत

डा. प्रशांत चौबे

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो
गृह मंत्रालय, नई दिल्ली

(भारत सरकार, गृह मंत्रालय ने हिन्दी में पुलिस संबंधी पुस्तकें उपलब्ध कराने के लिए गृह मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति ने 23 मई, 1979 की अपनी बैठक में यह निर्णय लिया था कि न्याय वैद्यक, अपराध शास्त्र, पुलिस अनुसंधान और पुलिस प्रशासन आदि विषयों पर लिखित हिन्दी की मौलिक पुस्तकों पर पं. गोविन्द वल्लभ पंत पुरस्कार योजना प्रतिस्थापित की जाए। तदनुसार 22 मार्च, 1980 को अपर सचिव की अध्यक्षता में गृह मंत्रालय में हुई बैठक में निर्धारित मापदंडों के आधार पर इस संबंध में जो निर्णय लिए गए उसके अनुसार इस योजना को अंतिम रूप दिया गया। इस योजना के अंतर्गत ही भाग 1 में मौलिक प्रकाशित पुस्तकों को पुरस्कृत किया जाता है तथा वर्ष 1982 से भाग 2 के अंतर्गत दिए गए विषयों पर पुस्तक लेखन कार्य कराया जाता है। इसी के तहत यह पुस्तक प्रकाशित की जा रही है।)

इन पुस्तक में दिए गए विचार लेखक के निजी है
इनसे पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो,
गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली की
सहमति आवश्यक नहीं है।

प्रकाशक के सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रकाशक – पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो (गृह मंत्रालय),
3/4 मंजिल, ब्लाक–II, सी.जी.ओ. कंप्लैक्स,
लोदी रोड, नई दिल्ली–110003

एकमात्र वितरक – नियंत्रक प्रकाशन विभाग,
सिविल लाइंस, दिल्ली–110054

प्रथम संस्करण – 2014

मुद्रक – प्रबंधक, भारत सरकार मुद्रणालय

अनुक्रमणिका

अध्याय	1	नेतृत्व : अवधारणा एवं स्वरूप	7
अध्याय	2	पुलिस नेतृत्व : आवश्यकता एवं स्तर	33
अध्याय	3	नेतृत्व प्रक्रियाएं एवं उपयोगिता	59
अध्याय	4	संचार : संचार के बाधक एवं सहायक तत्व एवं सफल संचार	80
अध्याय	5	संवेदनात्मक दक्षता : अवधारणा एवं आवश्यकता	107
अध्याय	6	आत्मावलोकन एवं आत्म विश्लेषण	129
अध्याय	7	समय प्रबंधन	145
अध्याय	8	द्वंद्वात्मक परिस्थिति एवं निवारण	167
अध्याय	9	तनाव प्रबंधन	194
अध्याय	10	पुलिस से सामाजिक अपेक्षाएं और नेतृत्व	208
अध्याय	11	पुलिस प्रशिक्षण और नेतृत्व	237
अध्याय	12	पुलिस नेतृत्व सुधारात्मक पहलू	276

अध्याय 1

नेतृत्व : अवधारणा एवं स्वरूप

नेतृत्व शब्द अपने आप में एक अवधारणा को अंतर्निहित करता है, जहां किसी विचार, किसी समूह, किसी अवधारणा किसी उद्देश्य या परिणाम से लेकर क्षेत्र, वृहद क्षेत्र प्रांत राज्य, राष्ट्र, समाज को या किसी समय विशेष की जन अवधारणा को अपने प्रभाव में लेकर उद्देश्यों की ओर अग्रसरण मुख्यतः उद्भाषित होता है। नेतृत्व, सीधे शब्दों में अपने प्रभाव से विचारधारा एवं लक्ष्यों का संकेन्द्रण है, जहां नेतृत्वकर्ता समूह के या संगठन के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अपने मार्ग निर्देशन में समूह की शक्ति को क्रियान्वित एवं दिशान्वित करता है। नेतृत्व में शक्ति का तत्व अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है, शक्ति का प्रभाव समूह के सदस्यों को न केवल प्रभावित बल्कि कई मामलों में विवश भी करता है जिससे की निर्धारित लक्ष्यों की ओर समूह की प्रगति केन्द्रित होती है।

मानवीय विकास के प्रारंम्भिक स्तर पर ही नेतृत्व की अवधारणा का विकास परिलक्षित होता है, पाषाण एवं पुरापाषाण काल में जब मानव होमोसेपियंश के रूप में अपना आकार ले रहा था, उसी समय विभिन्न आपदाओं-विपदाओं से बचने तथा उनसे संघर्ष करने के लिए समूह में रहने का विकल्प ही श्रेष्ठ था। चूंकि पूर्व से विभिन्न प्राणियों के समूह स्थापित हो चुके थे, अतः कुछ एक मानव वैज्ञानिक का यह दावा कि, प्रारंभिक तौर पर अकेले रहने का प्रयास करने, उसमें सफल नहीं होने पर ही समूह में मानव के स्थापित होने को प्रामाणिक नहीं माना जा सकता, बल्कि प्रारंभिक स्तर पर मानव ही नहीं अपितु प्राणी मात्र अपनी रक्षा, आवश्यकता, संचय, संग्रह, तालमेल, पुनः उत्पादन आदि के लिए समूह में रहने के लिए विवश था। सामूहिक जीवन के

साथ ही नेतृत्व की अवधारणा का विकास प्रारंभ होता हैं। प्रारंम्भिक तौर पर जहां अघोषित नेतृत्व को स्वीकार कर उनका पथ प्रचलन समूह ने किया, जो कि आगे चलकर विभिन्न स्तरों पर स्थापित हुआ तथा स्तरीकरण का दौर लगातार जारी है। पहले जहां शारीरिक क्षमता, अधिक क्रूरता, अधिक तेज आवाज में बोलने की शक्ति या अधिक छीनने की शक्ति नेतृत्व के निर्धारक थे, वहीं आगे चलकर वंशगत, सामाजिक, आर्थिक, मानसिक, क्षमताएं और परिष्कृत रूप में समूह का अधिकाधिक समर्थन नेतृत्व के निर्धारक स्थापित हुए। मानवीय सभ्यता का विकास नेतृत्व के निर्धारक तत्वों का विकास दर्शाता है, यहां-जहां नेतृत्व चयन वस्तुनिष्ठ होता गया वहीं नेतृत्वकर्ता के गौण लक्षणों के स्थान पर सूक्ष्म लक्षण अधिक क्रियाशील हुए। जनचेतना के विकास ने संघर्षपूर्ण नेतृत्व परिस्थतियों को प्रभावी रूप से स्थापित किया। इसी के साथ नेतृत्व में एक तरफ जहां समूह, हितकारी शक्ति को महत्व दिया गया वहीं नेता के ईश्वरीय शक्तियों से समर्थ होने एवं उसमें ईश्वरीय आलौकिक लक्षणों का अधिरोपण क्षीण हुआ। इस लक्षण ने कहीं न कहीं नेतृत्व की लोकतंत्रीय अवधारणा का बीजारोपण किया।

लोकतंत्रीय नेतृत्व की अवधारणा पारम्परिक अवधारणा से भिन्न मानक पर स्थापित होती है तथा इस अवधारणा ने न केवल नेतृत्व की परिभाषा को पुर्नस्थापित किया, अपितु नेतृत्व की जिम्मेदारियों में अभूतपूर्व वृद्धि करते हुए एक सतत क्रियाशील तथा विकासशील नेतृत्व अवधारणा को स्थापित किया पारम्परिक नेतृत्व से विपरीत लोकतंत्रीय नेतृत्व विभिन्न दक्षताओं तथा वास्तविक आदर्शों को अपने में समाहित करता है, सर्वश्रेष्ठ की संभाव्यता के विकास सिद्धांत से ओत-प्रोत नेतृत्व अब न केवल अपनी दक्षताओं में वृद्धि करने के लिए सतत कार्यशील है, बल्कि बने रहने के लिए उसका संघर्ष उसे लगातार परिष्कार के प्रति उत्साहित करता है। साथ ही समूह की स्वीकार्यता और सर्वमान्यता के लिए वह न केवल निर्देशात्मक या डिक्टेटर की भूमिका में रहता है बल्कि सुझावात्मक एवं सामन्जस्य से प्रभावी निर्णय वह अधिकांशतः करता है।

नेतृत्व के आवश्यक तत्वों में शक्ति का स्थान पूर्व से स्थापित है जो कि वर्तमान में भी अपने आप को चरितार्थ करता है। कहा जाता है कि शक्ति का समाहन या उपस्थिति मात्र से ही व्यक्ति में प्रभावित करने की क्षमताएं उपलब्ध हो जाती हैं। उक्त प्रभावित करने की क्षमताएं नेतृत्व के अन्य तत्वों से संयोजित

होकर, सक्षम नेतृत्वशीलता का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। शक्ति की उपलब्धता, लौकिक एवं आलौकिक प्रकृति की हो सकती है, शक्तिमत्ता प्रदत्त किए गए अधिकरण से, पारम्परिक रूप से वंश परम्परा के रूप में, किसी के प्रसाद स्वरूप या स्वयं के द्वारा अपनी क्षमताओं से अर्जित हो सकती है। इस प्रकार उक्त सभी प्रकारों में समाहित शक्तिमत्ता, वर्तमान नेतृत्व की अवधारणा एवं इसके लोकतांत्रिक स्वरूप में क्षमताओं से अर्जित शक्ति मत्ता के रूप में श्रेष्ठ नेतृत्व को परिभाषित करती है। अन्य स्वरूपों में जहां शक्तिमत्ता के प्रभाव से नेतृत्व प्रभावित होता है वहीं इस रूप में नेतृत्व की क्षमता शक्तिमत्ता को प्रभावित करती है। नेता के रूप में अपने समूह या संगठन की आस्था का केन्द्रण तभी पूर्ण रूप से प्राप्त किया जा सकता है जब आधार शक्ति क्षमताओं के आधार पर अर्जित हो। द्वितीय श्रेणी में नेतृत्व के उस रूप को भी स्वीकार्यता प्राप्त है जिसमें शक्ति अधिग्रहण उपरांत या पूर्व से ही विविध क्षमताएं और कौशल विकसित किए जाकर नेतृत्व का प्रभाव स्थापित किया जाता है। क्षमता एवं कौशल से रहित नेतृत्व सिर्फ शक्ति के आधार पर प्राधिकार प्राप्त नेतृत्व के रूप में स्थापित हो सकता है लेकिन समूह को प्रभावित करने की सार्मथ्य या समूह के लक्ष्यों को शत-प्रतिशत प्राप्त करने की दिशा में कारगर नहीं हो सकता, संगठन विशेषकर पुलिस जैसे कानून व्यवस्था का संचालन एवं लागू कराने वाले संगठनों में अनुशासन तथा शक्ति का सामन्जस्य प्राधिकार प्राप्त नेतृत्व की स्थापना करता है, लेकिन वर्तमान परिवेश में जहां व्यवस्थापक लोकतंत्र एवं प्रबंधन का विशेष प्रभाव है, व्यक्तिगत कौशल के बिना सफलता प्राप्त नहीं की जा सकती क्योंकि संगठन के सदस्यों के व्यक्तिगत सक्षमताएं एवं दुर्बलताएं तथा वैयक्तिक विभिन्नता के बीच सामंजस्य स्थापित कर संगठन के लक्ष्यों की पूर्ति एवं बेहतर परिणामोत्पादकता तभी सार्थक हो सकती है जब नेतृत्व में वैयक्तिक कौशल एवं समूह में नेतृत्व के प्रति आस्था समाहित हो।

नेतृत्व विशेष लक्ष्य प्राप्त करने के लिए एकाधिक व्यक्तियों के समूह का संयोजन है, यहां नेता औपचारिक रूप से घोषित या अघोषित हो सकता है नेतृत्व की अवधारणा तथा नेतृत्व के लक्षण एवं सिद्धांतों के संबंध में सदियों पूर्व से निर्धारक प्रयास किए गए हैं। दार्शनिक प्लेटो ने सर्वप्रथम नेतृत्व के संबंध में विश्लेषण उपरांत यह प्रश्न, स्थापित किया कि" क्या नेतृत्व के गुण विशेष रूप से अंतर्निहीत होकर व्यक्ति भेद के रूप में परिभाषित है? इस खोज से

नेतृत्व की अवधारणा एवं उपादेयता का विकास प्रारंभ हुआ तथा नेतृत्व कुछ व्यक्तियों के अधिकारों में निहीत है, से पृथक अवधारणा कि नेतृत्व विशेषताओं के रूप में समाहित लक्षणों का विकास है को स्थान मिला। इस प्रकार यह विचार नेतृत्व के लक्षण सिद्धांत के रूप में स्थापित हुआ। उन्नीस वीं सदी में थामस कार्ललायल और फ्रांसिस गॉल्टन ने इस संबंध में अवधारणा का प्रस्तुतीकरण किया कार्ललायल ने प्रतिभा कौशल और शारीरिक विशेषताओं की पहचान की तथा गॉल्टन ने वंशानुगत प्रतिभा के रूप में नेतृत्व के निर्धारक सुनिश्चित किए, गॉल्टन ने शक्तिशाली व्यक्तियों के परिवारों में नेतृत्व के गुणों की पहचान की जाँच की तथा बताया कि किस प्रकार पीढी दर पीढी नेतृत्व के गुण विरासत में हस्तांतरित हुए। दूसरे शब्दों में नेता जन्मजात होते हैं कि प्रारम्भिक अवधारणा यहां प्रकाश में आई। वर्ष 1940 और 1950 के दशक में स्टोगडिल और मान जैसे विचारको ने नेतृत्व के वैकल्पिक सिद्धांत का प्रतिपादन किया तथा यह तथ्य प्रकाशित किया कि व्यक्ति जो किसी एक परिस्थिति में या एक समूह विशेष के लिए नेता है, यह जरूरी नहीं अन्य स्थितियों में किसी भी समूह के लिए नेता के रूप में स्थापित हो। इस प्रकार यहां नेतृत्व एक स्थाई व्यक्तिगत विशेषता न होकर स्थिति जन्य दृष्टिकोण से देखा गया।

यहां नेतृत्व के स्थायित्व को स्वीकार नहीं किया जाकर एक वैकल्पिक अवधारणा के सिद्धांत के रूप में नेतृत्व को परिभाषित किया गया। आगामी दशकों में नेतृत्व की अवधारणा विशेषता के सिद्धांत के आधार पर स्थापित की गई, विचारको ने शोध के आधार पर यह स्थापित करने का प्रयास किया कि नेतृत्व के लक्षण वैयक्तिक विशेषताओं में अंतर्निहीत है। विशेषताओं का मात्रात्मक और गुणात्मक, समायोजन, नेतृत्व कुशलता को निर्धारित करता है। जकारो ने अपने सिद्धांत में बड़े व्यक्तिगत लक्षण को इन व्यक्तिगत विशेषताओं के रूप में संज्ञानात्मक क्षमताएं, मूल्य, सामाजिक कौशल, विशेषज्ञता और समस्या सुलझाने के कौशल को प्रस्तुत किया यहां निर्धारित विशेषताओं में यहां समूह के मूल्य और उन पर आधारित सामाजिक कौशल, विषय या कार्यक्षेत्र लक्ष्य के संबंध में विशेषज्ञता इनके साथ संज्ञानात्मक क्षमताओं के सामंजस्य और समस्या की स्थिति में निराकरण कौशल को समाहित किया जाकर नेतृत्व के आधुनिक स्वरूप का प्रार्दुभाव हुआ वहीं नेतृत्वकर्ता के रूप में विभिन्न गुणों का निर्धारण और उन्नयन का सार्थक

विवेचन भी प्रारंभ हुआ। नेतृत्व के गुण परिस्थितिजन्य प्रभावों एवं समयगत अनुकूलताओं के साथ किस प्रकार अल्प परिवर्तित या अपरिवर्तित हो सकते है के संबंध में प्रभावी व्याख्या इस अवधारणा में की गई। विशेषता सिद्धांत के पश्चात इस सिद्धांत की आलोचनाओं को दृष्टिगत रखते हुए विशेषता पेटर्न की व्याख्या के रूप में खोजकर्ताओं ने एक पृथक एवं परिष्कृत पैटर्न सिद्धांत की व्याख्या आगामी समय में प्रस्तुत की इस सिद्धांत में निर्धारित किया गया कि नेतृत्व लक्ष्य या परिणामों पर व्यक्तिगत विशेषताओं का प्रभाव अधिक होता है।

नेतृत्व के सिद्धांतों के संबंध में दार्शनिकों की अवधारणा एवं सिद्धांतों का सम्यक रूप अनुशीलन करने पर यह तथ्य प्रकाश में आता है कि नेतृत्व सिद्धांतों में जहां बीसवीं सदी के प्रारंम्भिक वर्षों में नेतृत्व के सिद्धांत नेतृत्वकर्ता और समूह के सदस्यों के पारस्परिक संबधों एवं संघर्षों पर अधिक केन्द्रित है जबकि बाद के सिद्धांतों में पारस्थितिक कारकों एवं कौशल के अवयवों को अधिक मात्रा दी गई है, नेतृत्व की अवधारणा का विकास एवं सिद्धांतों की व्याख्या में तत्व केन्द्रित व्याख्या मानवीय सभ्यता के विकास एवं विकसित लोकतांत्रिक नेतृत्व की अवधारणा से तारतम्य स्थापित करता है। विभिन्न समयों पर नेतृत्व को व्याख्यायित एवं परिभाषित करने के प्रयासों को नेतृत्व के विभिन्न सिद्धांतों के रूप में जाना जाता है नेतृत्व के सिद्धांतों को 08 प्रमुख सिद्धांतों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है।

1. *वैयक्तिक महत्ता सिद्धांत* : प्रारम्भिक तौर पर स्थापित यह सिद्धांत नेतृत्व के देवीय स्वरूप को परिभाषित करता है। यहां नेता को एक महान व्यक्ति तथा लौकिक एवं अलौकित शक्तियों से ओत प्रोत माना जाकर समूह के द्वारा नेतृत्व में विशेष श्रृद्धा का प्रदर्शन किया जाता है। नेतृत्व के लक्षण एवं क्षमता महान व्यक्तियों के विशेषाधिकार के तौर पर देखे जाते है। यह सिद्धांत विशेषकर वीर गाथा, पौराणिक एवं राजशाही के नेतृत्व को परिभाषित करता है। नेतृत्व के जन्मजात सिद्धांत के पक्षपोषण के साथ ही इस सिद्धांत में अर्जित विशेषताओं का महत्व नहीं है तथा लक्ष्यों के संबंध में विचारण और प्रक्रिया निर्धारण तथा निर्णयन की एक पक्षीय व्यवस्था इस सिद्धांत में निर्धारित की जाती है। सुधार एवं सुझाव की संभावना की अल्पता तथा समूह के लोकतांत्रिक मूल्यों का अभाव इस सिद्धांत की आलोचना के मुख्य कारण है।

2. *विशेषता सिद्धांत* : नेतृत्व के लक्षण विशेष होकर विशेष व्यक्तियों में

ही समाहित होते है तथा अधिकांशतः अनुवांशिक या पीढीगत होते है की अवधारणा के साथ विशेषता सिद्धांत विशेष लक्षणों को नेतृत्व का कारण मानता है। यह सिद्धांत इस रूप में पुनः वैयक्तिक महत्ता सिद्धांत का ही दूसरे रूप में पक्ष पोषण करता है। चूंकि नेतृत्व के लक्षण एवं विशेषताओं पर एकाधिकार या सिर्फ अनुवांशिक संवहन की अवधारणा वर्तमान परिवेश में स्वीकार्य नहीं है अतः विकासशील एवं विकसित समाज में इस सिद्धांत को प्रासंगिक नहीं माना गया। यह सिद्धांत विशेष व्यक्तित्व की पहचान या वैयक्तिक विशेषताओं की पहचान के द्वारा नेतृत्व को व्याख्यायित करता है। यहां यह प्रश्न स्वाभाविक प्रत्यक्ष होता है, कि यदि सिर्फ विशेषता ही नेतृत्व का निर्धारण करतीं है तो वह व्यक्ति जो इन विशेषताओं को धारित करते हैं लेकिन अपने आप में नेतृत्वकर्ता नहीं है उन्हें किस प्रकार व्यक्त किया जाएगा?

3. *आकस्मिकता सिद्धांत* : आकस्मिक परिस्थितियां नेतृत्व का निर्धारण करती हैं तथा परिवेष के कारक आकस्मिक परिस्थिति में नेतृत्व का अस्तित्व स्थापित करते है। इस सिद्धांत के अनुसार कोई भी नेतृत्व शैली सर्वोत्कृष्ट नहीं है बल्कि नेतृत्व की सफलता बहुत सारे तत्व पर निर्भर करती है जिनमें नेतृत्व शैली, नेतृत्वकर्ता की विशेषताएं, जिस समूह का नेतृत्व किया जा रहा है उस समूह के सदस्यों की विशेषताएं तथा लक्ष्य के संबंध में परिस्थितियां भी शामिल हैं।

4. *परिस्थितिजन्य सिद्धांत* : यह सिद्धांत नेतृत्व के द्वारा कार्य का सर्वोत्तम विकल्प चयन करने को नेतृत्व की सफलता का आधार मानता है। सर्वोत्तम विकल्प का चयन उपस्थित परिस्थिति के कारण के आधार पर चयनित किए जाते है, यहां नेतृत्व के द्वारा विभिन्न शैलियों का चयन स्थिति के अनुसार किए जाने को निर्णय क्षमता के लिए उपयुक्त माना जाता है।

5. *व्यवहार सिद्धांत* : यह सिद्धांत अच्छे नेतृत्वकर्ता जन्मते नहीं बल्कि बनते है, कि अवधारणा पर नेतृत्व की व्याख्या करता है। नेतृत्व के गुण सीखकर अच्छा नेतृत्वकर्ता बना जा सकता है इसके लिए प्रशिक्षण एवं अवलोकन के आधार पर नेतृत्व क्षमता का उन्नयन किया जा सकता है। यह सिद्धांत मानसिक और आंतरिक क्षमताओं की अपेक्षा नेतृत्व के कार्य व्यवहार पर अधिक जोर देता है।

6. *सहभागिता सिद्धांत* : सहभागिता सिद्धांत में समूह की सहभागिता पर

विशेष जोर दिया जाता है यहां प्रत्येक स्तर पर समूह से चर्चा, विचारों का आदान-प्रदान के माध्यम से नेतृत्वशैली और लक्ष्य निर्धारित किए जाते हैं। इस सिद्धांत में नेतृत्व सहभागिता को प्रोत्साहित करता है तथा लक्ष्य प्राप्ति में सभी के अवदान का सुनिचयन करता है। नेतृत्व के प्रोत्साहन के परिणाम स्वरूप समूह के प्रत्येक सदस्य की प्रतिबद्धता तथा समूह के प्रति सार्थकता का उन्नयन होता है इस सिद्धांत में नेतृत्व अपने अधिकारों के साथ दूसरों के विचारों का सार्थक समायोजन प्रस्तुत करता है।

7. *प्रबंधन सिद्धांत* : यह सिद्धांत आदान-प्रदान सिद्धांत के रूप में जाना जाता है, यहां पर्यवेक्षण संगठन एवं सामूहिक उपादेयता पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इसमें नेतृत्व दण्ड एवं पुरस्कार के मूल वाक्य पर कार्य करता है। नेतृत्व प्रशासन के स्थान पर प्रबंधन को महत्ता देते हुए जहां एक तरफ अच्छे कार्य के प्रति पुरस्कार प्रदान करता है वहीं कार्य में अक्षमता, अल्पता या परिणामहीनता की स्थिति में दण्ड की व्यवस्था सुनिश्चित करता है। यह सिद्धांत सामान्यतः व्यापारिक प्रतिष्ठानों में दृष्टिगत होता है।

8. *संबंध सिद्धांत* : यह सिद्धांत नेतृत्व के परिवर्तनशील सिद्धांत के रूप में भी जाना जाता है, जिसका आधार नेतृत्व और समूह के बीच संबंध होते हैं यहां नेतृत्व अभिप्रेरण और उत्प्रेरण के माध्यम से समूह के लक्ष्यों के अनुरूप परिवर्तन पर जोर देता है। नेतृत्व समूह के सदस्यों के कार्य प्रदर्शन पर केन्द्रित होता है, साथ ही समूह का प्रत्येक सदस्य अपनी क्षमता और लक्ष्य को पूरा करें यह भी नेतृत्व की प्राथमिकता होती है तथा नेतृत्व नैतिक एवं चारित्रिक मानकों की उच्चता से ओत-प्रोत होता है।

नेतृत्व क्षमता जहां सम्यक रूप से नेतृत्व कार्य शैली एवं गुणों का वर्णन एवं विश्लेषण निर्धारित करती है वहीं विभिन्न संगठन तथा संगठन की अपेक्षा के अनुरूप नेतृत्व की आवश्यकता एवं आधारभूत सिद्धांतों में परिवर्तन परिलक्षित होता है। इस प्रकार नेतृत्व को संगठनात्मक आधार पर विभिन्न स्वरूपों में वर्गीकृत किया जा सकता है। नेतृत्व पर सर्वाधिक शोध प्रशिक्षण एवं विश्लेषण उद्धम, क्षेत्र, में किया गया है, उद्यम या कारपोरेट क्षेत्र में विभिन्न उत्पादन एवं सेवा प्रदाय से जुड़ी निजी कंपनियों एवं सार्वजनिक क्षेत्र में भी उत्पादन तथा उत्पादकता की वृद्धि के लिए विभिन्न स्तरों पर नेतृत्व क्षमता के विकास पर अत्यधिक संकेन्द्रण किया जाता है, अत्यधिक प्रतिस्पर्धा तथा इस

क्षेत्र में संसाधनगत उपलब्धता एवं संगठन की उपादेयता से लाभ का सीधा समायोजन होने के कारण इस क्षेत्र में नेतृत्व पर सर्वाधिक ध्यान दिया जाता है। इस क्षेत्र में हो रहे आधुनिक शोध नवीन, शैलियों का अन्वेषण तथा विभिन्न प्रकार से परिवर्तन कर नेतृत्व क्षमता के उन्नयन एवं परीक्षण का प्रयास इस क्षेत्र में किया जाता है। यहां महत्वपूर्ण यह है कि कुशल नेतृत्वकर्ता के प्रति आर्थिक, प्रतिष्ठागत, संगठनगत, प्रोत्साहन अत्यधिक होने के कारण इस क्षेत्र में प्रत्येक नेतृत्वकर्ता अपने स्तर पर नेतृत्व कौशल के उन्नयन का प्रयास करता है। निर्देशों का द्विपक्षीय आदान प्रदान, कौशल का त्वरित प्रत्यक्ष एवं मूल्यांकन, शक्तियों का स्पष्ट विभाजन तथा लोकतांत्रिक नेतृत्व शैली का अधिक प्रभाव इस क्षेत्र में नेतृत्व के परिवेश को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक हैं।

नेतृत्व क्षमता के अदृश्य प्रभाव या अप्रत्यक्ष मान्यता वाले क्षेत्र के रूप में सामुदायिक नेतृत्व वर्तमान परिवेश में दृष्टिगोचर होता है, इस क्षेत्र में नेतृत्व की अपार संभावनाएं होने के बावजूद संस्थागत कौशल प्रशिक्षण का कोई स्थान नहीं होता। सामुदायिक लोकतांत्रिक व्यवस्था होने के कारण कौशल के स्थान पर दूसरे तरीको से जन समूह का समर्थन प्राप्त करने का प्रयास वर्तमान में परिलक्षित हो रहा है। यहां संगठन के उद्देश्य सीमित होकर मात्र लोकतांत्रिक प्रक्रिया में येनकेन प्रकारेण अपनी विजय या चयन तक सीमित हैं। कौशल से अधिक तकनीकी कारकों तथा जाति, समूह, धर्म, भाषाई समूह के आधार पर बहुमत निर्माण की मान्यता प्राप्त होने के कारण इस क्षेत्र में कौशल प्रतिस्पर्धा का सर्वथा अभाव परिलक्षित है। सामुदायिक नेतृत्व का वास्तविक कार्य और लक्ष्य जो कि जन अपेक्षा में संकेन्द्रित होना चाहिए के स्थान पर व्यक्तिगत या पार्टीगत लाभ तक सीमित हो गया है जिसके कारण समूह समाज तथा राष्ट्र को क्षति उठानी पड़ रही है। संगठन के सदस्यों की कार्य के संबंध में उच्चता की बाध्यता नहीं होना तथा व्यक्तिगत विकास की परिस्थितिगत संभाव्यता, सामुदायिक नेतृत्व की विशेषता है, वहीं आधुनिक कौशल उन्नयन, शोध के प्रभावों का अभाव, नेतृत्व के विकसित आधुनिक स्वरूप की मान्यता का ह्रास इस क्षेत्र की ऋणात्मक विशेषताएं हैं।

परिवेश एवं व्यक्तिगत भिन्नता तथा कौशल वैविध्य की दृष्टि से कार्य क्षेत्र सर्वाधिक संपन्न माना जाता है, कार्य क्षेत्र से तात्पर्य विभिन्न प्रकार के कार्यों पर आधारित तथा विशेषकर शासकीय कार्य संगठन से है। इस क्षेत्र में नेतृत्व

की स्तरीकृत व्यवस्था होती है तथा विभिन्न स्तरों के अपने स्पष्ट कार्य अधिकार होते हैं तथा व्यक्ति अपने निर्धारित कार्य अधिकार एवं कर्तव्यों के प्रति उत्तरदाई होता है। उत्तरदायित्व निर्धारण तथा निर्देशों का ऊपरी स्तर से निचले स्तर की ओर एकपक्षीय संचार इस क्षेत्र में प्रमुख विशेषताएं होती हैं। चयन तथा पदोन्नति की शासकीय प्रक्रिया एवं मापदण्डों के कारण जहां एक तरफ कौशल वैविध्य का वृहद प्रयास यहां दृष्टिगत होता है वहीं दूसरी तरफ कौशल उन्नयन के प्रति सदस्यों की अभिप्रेरण अल्प होती है। इस क्षेत्र में अल्प अवधि एवं दीर्घ अवधि लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निर्धारित प्रक्रिया का पालन अनिवार्य होता है तथा संगठन के बने सेटअप में ही कार्य करना होता है, इस प्रकार के नेतृत्व में वैयक्तिक उपलब्धी की संभावनाएं अल्प होती हैं तथा वैयक्तिक कौशलता से तंत्र को प्रभावित कर लक्ष्य प्राप्ति के नए आयाम स्थापित करना भी अपेक्षाकृत दुर्लभ होता है।

शैक्षणिक संगठन का नेतृत्व अपने आप में वृहद विषय होने से इसे पृथक रूप से परिभाषित किया जाता है यहां बड़े स्तर पर निजी संगठन उद्यम का रूप ले रहे हैं। इस प्रकार के संगठन के उद्देश्य अच्छी शिक्षा बेहतर एवं नवीन संसाधनों के माध्यम से प्रदाय करना होता है। यहां संगठन का नेतृत्व स्तरीकृत होता है लेकिन अत्यधिक स्तर न होकर मुख्य रूप से प्रशासन एवं शैक्षिक स्तरों में विभक्त होता है तथा नेतृत्व की अपेक्षाकृत सरल और कोमल व्यवस्था यहां अपेक्षित होती है। निजी एवं स्वायत्तशासी संगठन कौशल विकास का प्रयास करते हैं लेकिन नेतृत्व मानकों के प्रति अत्यधिक सक्रियता इस क्षेत्र में प्रत्यक्ष नहीं होती है। सामान्य धारणा इस क्षेत्र में नेतृत्व कौशल एवं उन्नयन के प्रभाव को अत्यधिक रेखांकित करने की नहीं है। लेकिन इस क्षेत्र में नए प्रयोगों से नेतृत्व कौशल उन्नयन के माध्यम से विद्यार्थी को प्रभावित कर शिक्षक की विद्यार्थी समूह के प्रति नेतृत्वकर्ता की भूमिका एवं अनुयाई के रूप में उन्हें प्रभावित कर शिक्षा का प्रभाव स्थापित करना इस क्षेत्र में अत्यधिक श्रेयस्कर हो सकता है इस दिशा में प्रयास किए जा रहे हैं।

नेतृत्व के समूह के रूप में परिवार का नेतृत्व अत्यधिक वैयक्तिक तथा भावनात्मक संबंधों पर स्थापित होता है। संगठन के सदस्य के तौर पर नैतिक एवं भावनात्मक जुड़ाव तथा संगठन के प्रति पूर्ण विश्वास की भावना यहां नेतृत्व को पृथक रूप में परिभाषित करती है। मान्यता, वरिष्ठता, अर्थशक्ति

यहां नेतृत्व के निर्धारक होते हैं तथा औपचारिक प्राधिकरण, अत्यल्प होता है। नेतृत्व के प्रति आदर एवं सम्मान की भावना तथा सदस्यों का भावनात्मक लगाव यहां मुख्य विशेषता है। परम्परा तथा पारिवारिक मान्यता एवं संस्कारों की मुख्य भूमिका यहां स्थापित होती है। पारिवारिक नेतृत्व की तरह मित्र समूह के नेतृत्व को पृथकता से परिभाषित किया जाता है यहां प्राधिकरण एवं स्तरीकरण का सर्वथा अभाव होकर योग्यता एवं क्षमता के आधार पर अघोषित नेतृत्व प्रभावी होता है। वाद-विवाद नेतृत्व के विचारों के प्रति अस्वीकार्यता की संभावना अत्यधिक होती है तथा नेतृत्व कौशल की वास्तविक कसौटी के आधार पर नेतृत्व निर्धारण होता है क्योंकि समूह की शैक्षिक, मानसिक, आयुगत, योग्यताओं में सर्वाधिक समानता इस प्रकार के समूह में विद्यमान होती है।

संगठन में नेतृत्व की आवश्यकता का सीधा सा आशय संगठन की शक्ति विशेषकर मानवीय शक्ति को संगठन के उद्देश्य के प्रति सर्वोत्कृष्ट रूप में अग्रसर कर अधिकतम परिणाम उत्पादन या लक्ष्य प्राप्ति संभव करना है। इस दिशा में विभिन्न संगठनों में कारक आधारित आवश्यकता या परिवर्तन अपेक्षित होते हैं।

प्रथमतः संगठन की संरचना किस प्रकार की है?

संरचना स्तरीकृत है या नहीं?

संगठन का स्वरूप वृहद है या सीमित?

संगठन में नीति निर्धारक एवं विभिन्न स्तर के नेतृत्व में क्या आमने-सामने का संचार संभव है या नहीं?

संगठन में नेतृत्व के विभिन्न स्तरों के विचारों की स्वीकार्यता की संभावना है या नहीं?

संगठन के आदेश-निर्देश के प्रति सामान्यतः विभिन्न स्तरों के नेतृत्वकर्ता की भावना का स्वरूप क्या है आदि।

ये संरचनात्मक तथ्य है जिनके आधार पर नेतृत्व की परिस्थिति एवं धारणा निर्धारित होती है। यहां संगठन की संरचना में वांछनीय परिवर्तन कर लक्ष्य प्राप्ति एवं कार्य उत्पादकता में सुधार संभव हैं संगठन की स्पष्ट तथा वैज्ञानिक सरलीकृत संरचना का निर्माण, वृहद संगठन की स्थिति में विभिन्न इकाइयों, उप इकाइयों आदि में विभाजन तथा विभिन्न स्तरों पर आपसी प्रत्यक्ष

संचार इस दिशा में श्रेयस्कर होते हैं। उच्च स्तर पर लिए गए निर्णय की प्रति किसी भी स्तर से सुझाव दिए जाने की संभाव्यता तथा उपर्युक्ता के आधार पर उनकी स्वीकार्यता से निश्चित ही सहभागिता का उन्नयन होता है तथा संगठन में व्यक्तिगत सहभागिता संगठन की उपादेयता को समानुक्रम में विकसित करती है। संगठनात्मक स्तर पर कर्तव्यों अधिकारों एवं जिम्मेदारियों का स्पष्ट तथा प्रत्यक्ष उल्लेख संरचना का प्रभावी बनाता है तथा द्वंद्व की स्थिति की अल्पता को स्थापित करता है।

नेतृत्व की शैली, प्रक्रिया, प्राथमिकता एवं अपने स्तर पर रोल प्ले का निर्धारण संगठन में कार्य प्रोफाइल के आधार पर परिवर्तित होता है, सफल नेतृत्व के लिए अपेक्षित है कि नेतृत्व के स्वरूप को इसी आधार पर निर्धारित किया जाये। इसे दूसरे शब्दों में संगठन की अपेक्षा के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। एक संगठन की विभिन्न इकाइयों या स्तरों पर इस प्रकार के कारक अनुसार परिवर्तन किया जाना लक्ष्य प्राप्ति में सहयोगी कारक है। इसे **'तलवार और सुई'** के उदाहरण से आसानी से समझा जा सकता है कि जहां जो आवश्यक है उससे अधिक या उससे कम लक्ष्य प्राप्ति में सहायक नहीं होता। नेतृत्व के लिए यहां अत्यधिक महत्वपूर्ण है कि कार्य प्रोफाइल के आधार पर कार्यशीलता का निर्धारण किया जाये। प्रोफाइल का निर्धारण विभिन्न कारकों पर निर्भर करता है मुख्य रूप से दो प्रकार के कारक निर्धारण में प्रभावी होते हैं। प्रथमतः संगठन द्वारा स्थापित पद में निहित शक्ति अधिकार एवं दायित्व जो कि सामान्य रूप से उस पद पर नियुक्त होने वाले प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त होते हैं। सरल शब्दों में कहा जा सकता है कि संगठन के संविधान या नियमों में ही इनकी घोषणा पूर्व निर्धारित रहती है। द्वितीयतः वह अधिकार दायित्व महत्वपूर्ण होते हैं, जो कि घोषित, लिखित या निर्धारित नहीं होने के बावजूद व्यक्तिगत कौशल के आधार पर अपने निर्धारित पद पर रहते हुए अर्जित किए जाते हैं। प्रोफाइल निर्धारण एवं संगठन के प्रति उपादेयता की दृष्टि से द्वितीय कारक अत्यधिक महत्वपूर्ण होकर स्वमेव व्यक्तिगत योग्यता के मूल्यांकन के रूप में स्थापित होते हैं तथा संगठन में भूमिका के विशेषीकरण को स्थापित करते हैं।

अल्प अवधि लक्ष्य नेतृत्व की कसौटी के रूप में परिभाषित किए जाते हैं सीमित संरचना एवं सीमित अवधि में शत प्रतिशत पूर्णतः की संभावना के कारण नेतृत्व क्षमताओं के मूल्यांकन के साथ ही प्रभाव स्थापना में इनका विशेष

महत्व होता है। ये लक्ष्य भविष्य की संभावना के रूप में भी नेतृत्वकर्ता के लिए महत्वपूर्ण होते हैं संगठन में विभिन्न अल्प अवधि लक्ष्यों की प्रकृति तथा आवृत्ति के आधार पर, नेतृत्व का स्वरूप प्रभावित एवं परिवर्तित होता हैं। इनमें संयोजन एवं अभिप्रेरण की प्रभावी भूमिका होती है। साम्यिक प्रकृति तथा परिवर्तन शीलता के कारण वह बाध्यपूर्ण कार्य प्रणाली की स्थापना के कारण भी इन्हें कौशल उन्नयन में सहायक माना जाता है।

संगठन के मुख्य लक्ष्य या दीर्घ लक्ष्य वे आधार होते हैं जिन पर संगठन की संपूर्ण मानव संसाधनगत विशेषता निर्भर करती है। नेतृत्व का स्वरूप इन लक्ष्यों के लिए ही गढ़ा जाता है तथा विभिन्न लघु संयोजनों के उपरांत संगठन की उपादेयता का मूल्यांकन इन्हीं लक्ष्यों के आधार पर किया जाता है। इस रूप में ये अति महत्वपूर्ण तथा निर्धारक होते हैं। नेतृत्व की सार्थकता इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किसी भी प्रकार तिनका-तिनका संयोजन कर लक्ष्य समायोजन के रूप में की जा सकती है। संगठन के लक्ष्य नेतृत्व प्रक्रिया के प्रभावन के अपेक्षा का गठन करते हैं तथा नेतृत्व की सफलता के मुख्य निर्धारक होते हैं।

संगठन में वे लोग या वह मानव संसाधन जो नेतृत्व के अधीन कार्य कर रहा है या नेतृत्वकर्ता की टीम का मानव संसाधन किस प्रकार से निर्देशों को स्वीकार करता है?

उसका अभिप्रेरण का स्तर कैसा है?

लक्ष्यों के प्रति उसकी प्रतिबद्धता किस स्तर की है?

नेतृत्व के प्रति उसकी आस्था किस श्रेणी की है?

समूह के रूप में उनका आपसी सामंजस्य एवं अंतःसंबंध कैसे हैं? आदि।

वे कारक जिनके आधार पर इकाई की मानवीय कार्य उत्पादकता निर्धारित होती है। सक्षम नेतृत्व इन के आधार पर कार्य स्वरूप का गठन एवं परिवर्तन सुनिश्चित करता है। यहां समूह की तत्वगत, अल्पता का चिह्नांकन किया जाकर उस पर फोकस किया जाना, अभिप्रेरण, प्रतिबद्धता एवं आस्था, के उन्नयन हेतु विशेष प्रयास किया जाना समूह के अंर्तसंबंधों के लिए विभिन्न उपक्रम किए जाना तथा समूह को मानसिक एवं शारीरिक क्षमता की समानता के उप समूहों में विभाजित किया जाना आदि नेतृत्व की उत्पादकता के प्रमुख कारक होते हैं।

विभिन्न संगठनों में संगठन की निर्धारित नीति एवं कार्य परिस्थिति की कुछ घोषित तथा अघोषित मान्यताएं होती हैं इन्हे दूसरे शब्दों में संगठन की दृय एवं अदृश्य, अच्छाइयों एवं बुराइयों के रूप में भी जाना जाता है। संगठन में वर्चस्व शोषक प्रवृत्ति, अंतर्निहीत प्रतिबद्धता आदि के आधार पर नेतृत्व प्रक्रिया एवं स्वरूप प्रभावित होता है। इन अंतर्निहित कारकों के मध्य बेहतर कार्य परिस्थिति का निर्माण कर लक्ष्य प्राप्ति एवं इनके संगठन की उत्पादकता पर पड़ने वाले विपरीत प्रभावों का परिहार करना प्रभावी नेतृत्व के प्रमुख दायित्व होते हैं। संगठन में इस प्रकार के कारक अधिकांशतः पाए जाते हैं तथा सामान्यतः ऋणात्मक प्रभाव ही उत्पादित करते है इनके कारण नेतृत्व के स्तर पर आपसी खींचतान, वैमनस्य आदि समय तथा संसाधन की क्षति कारक होता है। साथ ही इनके उन्मूलन का सीधा प्रयास कहीं न कहीं अधिकारों में हस्तक्षेप, संगठन के मूल स्वरूप को प्रभावित करने की चेष्टा, या अधिकारों का अतिरेक उपयोग के रूप में ही प्रतिक्रिया पाते हैं। ऐसे में इनके बीच प्रभावी सामंजस्य तथा परिणामों पर न्यूनतम प्रभाव निर्धारित करने वाली पक्रिया और स्वरूप का चयन निर्धारण वांछनीय होता है तथा इसी रूप में नेतृत्वशीलता पर इनका प्रभाव श्रेयस्कर माना जाता है। इस प्रकार निम्न प्रकार के संगठनों में नेतृत्व की अपेक्षाओं के अनुरूप तथा उक्तानुसार संरचनागत कारकों को संज्ञान में रखते हुए नेतृत्व की प्रक्रिया एवं स्वरूप निर्धारित किया जाना श्रेयस्कर होता है।

नेतृत्व के तत्व

नेतृत्व सभी चीजों को जानने से अधिक समूह की ऊर्जा को सार्थक रूप से विभक्त किए जाने की प्रक्रिया है। नेतृत्व के तत्व वे निर्धारक होते हैं जिनकी उपस्थिति एक सक्षम प्रभावी नेतृत्वकर्ता में होना आवश्यक होता है। तत्व से आशय उन घटकों से होता है जिनसे मिलकर उस वस्तु प्रक्रिया का निर्माण होता है। यहां तत्व, कौशल, या गुणों से इस रूप में भिन्न होते हैं कि कौशल या गुण अधिक या कम हो सकते हैं या अधिक कौशल और गुणों की उपलब्धता अधिक प्रभावी होती है लेकिन अल्पाधिकता से अस्तित्व प्रश्नगत नहीं होता, वहीं दूसरी तरफ तत्व आवश्यक वांछनीय घटक होते है तथा तत्वों में से किसी एक की अल्पता अस्तित्व को ही प्रश्नगत कर देती है। नेतृत्व के तत्व क्या हों या क्या हो सकते हैं, के संबंध में विभिन्न विचारकों ने विभिन्न तरीकों से व्याख्या

प्रस्तुत की है। नेतृत्व के तत्व निर्धारण को निरपेक्ष रूप से स्थापित करना निश्चित ही जटिल विषय है तथा नेतृत्व के तत्वों की व्याख्या में नेतृत्व कौशल या गुणों का समावेश विभिन्न विचारकों द्वारा किया गया है।

नेतृत्व के तत्वों की व्याख्या छः शब्द, छः तत्व के सिद्धांत के आधार पर की गई है। यहां ये छः तत्व, छः भावना या गुणों का संयोजन प्रस्तुत करते हैं। क्योंकि नेतृत्व के लिए आवश्यक रूप से वांछनीय है।

छः शब्द छः तत्व	ने तृ त् व	विश्वास तार्किकता सक्षमता संयोजन प्रतिस्पर्धा अवदान

1. *विश्वास* : समूह के नेतृत्वकर्ता के रूप में प्रथमतः यह आवश्यक है कि आत्म विश्वास प्राप्त किया जाए तथा समूह के प्रत्येक सदस्य में नेतृत्व के प्रति विश्वास की भावना स्थापित की जाए, समूह एवं नेतृत्व के बीच विश्वास से आत्म विश्वास का उन्नयन नेतृत्वकर्ता की व्यक्तिगत जिम्मेदारी होती है। समूह के सदस्यों में एक दूसरे के प्रति एवं संगठन के प्रति भी आत्म विश्वास का होना समूह की सफलता के लिए वांछनीय होता है।

2. *तार्किकता* : नेतृत्वकर्ता की बात उसके निर्देश में तार्किकता होना तथा उसके द्वारा कहे गए या स्थापित किए गए आदर्शों एवं उसके स्वयं के कार्यों के बीच एकरूपता होना, समूह की कार्य उत्पादकता वृद्धि के लिए अत्यधिक आवश्यक तत्व है। इस प्रकार की तार्किकता तथा निर्देशों का समाधान कारक होने से समूह के सदस्यों पर धनात्मक प्रभाव पड़ता है इस प्रभाव के माध्यम से नेतृत्व के प्रति विश्वास में वृद्धि होती है। नेतृत्व के प्रति विश्वास में कमी या अविश्वास की स्थिति में समूह नेतृत्व के संदेश प्रभावी रूप से स्वीकार नहीं करता जो कि लक्ष्यों पर ऋणात्मक प्रभाव डालता है अतः नेतृत्वकर्ता के तौर पर निर्देशों का एवं स्वयं की कार्यपद्धति का तार्किक होना आवश्यक होता है।

3. *सक्षमता* : कोई भी नेतृत्व कार्य क्षमताओं के बिना स्थापित नहीं रह

सकता नेतृत्वकर्ता के रूप में स्वयं को किस प्रकार सक्षम बनाया जाए तथा किस प्रकार परिवेश को सक्षम बनाया जाये, को जानना अत्यधिक आवश्यक है। नेतृत्व अपनी क्षमता से उदाहरण प्रस्तुत कर कार्य के माहौल एवं परिस्थिति का निर्माण करता है तथा जिन क्षेत्रों में वह जानकारी नहीं रखता उन्हें अर्जित करता है अन्यथा उनकी जानकारी सहित वे व्यक्ति समूह में तैयार करता है जो लक्ष्य प्राप्ति के लिए कार्य परिणति में सक्षम होते हैं।

4. *संयोजन* : प्रभावी नेतृत्व हमेशा अपने समूह के संयोजन के प्रति सतर्क रहता है। जब समूह बढ़ता है तथा नेतृत्व के नीचे की पंक्तियां प्रभावी विस्तार प्राप्त करती हैं, ऐसे में नीचे की पंक्ति का विकास प्रतिरोधित न हो इस दिशा में सतत प्रयास अपेक्षित होते हैं। समूह वृद्धि पर सदस्यों को अपने हाल पर छोडने की अपेक्षा लक्ष्य प्राप्ति के लिए समुचित संयोजन की व्यवस्था करके समूह की क्षमताओं के उत्कृष्ट दोहन को सुनिश्चित करना तथा संदेश के वृहद समूह में उसी रूप में प्रतिकृत होकर निचले स्तर तक पहुंचाने की व्यवस्था सुनिश्चित करना नेतृत्व के लिए अति आवश्यक है। समूह के संयोजन के अभाव में परिणामों पर प्रभाव स्वतः सिद्ध है। संयोजन से आशय विभिन्न क्षमताओं के सदस्यों के बीच रहकर तालमेल से भी है।

5. *प्रतिस्पर्धा* : अपनी टीम को उत्कृष्टता के स्तर की ओर प्रेरित करने का लगातार प्रयास अति आवश्यक होने के साथ संगठन के लक्ष्य प्राप्ति में आवश्यक तत्व है, समूह में विभिन्न स्तरों के बारे में सभी सदस्यों को जानकारी होना तथा यह जानकारी होना कि उत्कृष्ट कार्य क्षमता के प्रदर्शन पर स्तर उन्नयन संभव है। समूह में योग्यता के प्रोत्साहन का हर संभव प्रयास करना, पुरस्कार, वेतन वृद्धि, पदोन्नति, के माध्यम से उत्कृष्टता का सम्मान स्थापित करना नेतृत्व के लिए अत्यधिक आवश्यक है। इनके माध्यम से समूह में प्रतिस्पर्धा की भावना स्थापित होती है तथा प्रतिस्पर्धा की भावना प्रत्येक सदस्य की व्यक्तिगत कार्य क्षमता में प्रभावी वृद्धि करती है।

6. *अवदान* : नेतृत्व को लक्ष्यों के प्रति स्वयं के अवदान के माध्यम से समूह के प्रत्येक सदस्य को अपने अवदान के लिए प्रेरित करना होता है, प्रत्येक सदस्य किसी न किसी रूप में अपना अवदान, अंशदान या सहयोग लक्ष्यों के प्रति प्रदाय करते हैं तब बेहतर परिणाम की उत्पादकता, सुनिश्चित होती है नेतृत्व लक्ष्य प्राप्ति के लिए अधिक मानसिक एवं शारीरिक श्रम के द्वारा अपने

विश्राम की चिंता किए बगैर अधिक समय कार्य के द्वारा तथा लक्ष्य के प्रति अपने सर्वाधिक अवदान के द्वारा समूह को इस हेतु प्रेरित कर सकता है। समूह में प्रत्येक स्तर पर अवदान की भावना से ही बेहतर कार्य उत्पादक समूह एवं नेतृत्व की स्थापना संभव है।

नेतृत्व के तत्वों की व्याख्या में सामान्यतः गुणों, कौशल अथवा शैली की व्याख्या अथवा इनसे सम्प्रक्त व्याख्या की जाती है। वास्तव में विभक्त रूप से नेतृत्व के तत्वों का निर्धारण करना धारणाओं के आपसी अन्तः सम्बंधों के कारण संभव नहीं पाता या यह कहे कि निरपेक्ष निर्धारण की संभाव्यता अल्प है तो अतिशोक्ति नहीं होगी नेतृत्व में नेतृत्व की आधारभूत **शक्ति** जिसे अन्य शब्दों में प्राधिकरण भी कहा जा सकता है होना आधार भूत है क्योंकि वह शक्ति प्राधिकरण ही नेतृत्व को स्थापित करती है। यहां विचारको में मतभेद इस आधार पर है कि स्व अर्जित नेतृत्व या व्यक्तिगत कौशल से स्थापित भूमिका की स्थिति में शक्ति का तत्व पूर्व उपस्थित नहीं होकर अर्जित किया जाता है। यहां यह विचारणीय है कि स्व अर्जन की स्थिति में नेतृत्व का वास्तविक स्थापन्न या मूर्त रूप में पद धारण तभी पूर्ण होता है और नेतृत्व का प्रारंभ तभी होता है जब शक्ति अर्जित स्थापित कर ली जाती है। इस प्रकार नेतृत्व के मूल तत्व के रूप में आधारभूत शक्ति प्रमुख तत्व के रूप में स्थापित होती है।

समूह के आदर्श इसका संगठन तथा उसके लक्ष्यों के प्रति श्रृद्धा की भावना का होना भी नेतृत्व का वांछनीय तत्व है इसे **भावनात्मकता** शब्द से व्यक्त किया जा सकता है। समूह के लक्ष्य एवं आदर्श की पूर्ण परख एवं उससे सहमति उपरांत समूह के प्रति भावनात्मक लगाव स्थापित होता है तथा इस प्रकार के भावनात्मक स्तर पर मतवैविध्य की स्थिति में नेतृत्व के प्रति समूह की आस्था तथा उच्च स्तर का विश्वास प्राप्त नहीं किया जा सकता जो कि नेतृत्व की सफलता के लिए अत्यधिक वांछनीय होता है। स्वयं के संगठन के प्रति भावनात्मक जुड़ाव से ही नेतृत्व के प्रति उसके समूह की आस्था विकसित होती है जो कि परिणामों का मूल आधार भी होती है। अतः भावनात्मकता को नेतृत्व के प्रमुख तत्व के रूप में व्याख्यायित किया जा सकता है।

किसी भी प्रकृति के कार्य समूह में नेतृत्व के प्रभाव का प्रमुख आधार संचार होता है। नेतृत्व संचार के माध्यम से विभिन्न रूपों में प्राप्त संदेशों को अग्रेषित करता है तथा स्वयं के द्वारा निर्धारित कार्य स्वरूप लक्ष्य आदि को प्रेषित

करता है। संचार क्षमता के बिना नेतृत्व की सफलता की परिकल्पना नहीं की जा सकती समूह के अनुरूप संचार का शत-प्रतिशत प्रभाव उत्पादन तथा समय अनुरूप संचार के विविध माध्यमों का बेहतर उपयोग तथा समूह की संचार दक्षता में सतत उन्यन के माध्यम से सफलता का सुनिश्चित होना संभव होता है अतः संचार को नेतृत्व के आवश्यक तत्व के रूप में निर्धारित किया जा सकता है।

समूह के लक्ष्य एवं कार्य कौशल में प्रभावी दक्षता तथा समूह को अपनी दक्षता से आकर्षित कर समूह की क्षमताओं का उन्न्यन करना नेतृत्व की प्राथमिक चुनौतियों में शामिल है नेतृत्व में चमत्कार के सिद्धांत के अनुरूप पूर्व धारणा की नेतृत्वकर्ता विशेष गुणों से युक्त होता है, वर्तमान परिस्थितियों में भले ही पूर्ण रूप से स्वीकार न की जाए लेकिन नेतृत्व की मान्यता वास्तविक रूप में तभी स्थापित होती है जबकि नेतृत्व में प्रभावी कार्य दक्षता उपलब्ध हो। इस प्रकार नेतृत्व की कार्य दक्षता, नेतृत्व का आवश्यक तत्व है।

समूह का **समायोजन** कर अधिकतम क्षमताओं का उपयोग तथा लक्ष्य के प्रति सही दिशा में अग्रसरण करना नेतृत्व का मूल कार्य है तथा समूह में लक्ष्यों के प्रति उत्प्रेरण का विकास जिससे की समूह अपना कार्य पूर्ण उत्साह तथा स्वेच्छा से बिना किसी दबाव के करें, साथ ही कार्य के प्रति समूह की अभिरुचि आदर्श रूप में विकसित हो कि समूह के सदस्य अपने कार्य में रुचि के साथ आनंद अनुभूति कर सके। नेतृत्व इस प्रकार अपनी समायोजन क्षमता से कार्य उत्पादकता में वृद्धि करता है।

इस प्रकार उक्त तत्वों को नेतृत्व के निर्धारक तत्व कहा जा सकता है। नेतृत्व की प्रक्रिया काल, परिस्थिति के अनुसार परिवर्तनशील है, अतः विभिन्न परिस्थितियों में परिवर्तित मानक संभव हैं।

नेतृत्व के गुण

नेतृत्व के गुण क्या हों? इस बात को लेकर विभिन्न समय में विभिन्न व्याख्याएं प्रस्तुत कर निर्धारण का प्रयास किया गया है। जब हम नेतृत्व के गुणों की चर्चा करते हैं, तब स्पष्ट एवं निर्धारक गुण व्याख्यापित किया जाना आसान नहीं होता, क्योंकि नेतृत्व के गुण परिस्थिति पर निर्भर होते हैं तथा प्रत्येक व्यक्ति अपने विविध सामर्थ्यों एवं गुणों के माध्यम से नेतृत्व का प्रतिपादन करता है। नेतृत्व के सर्वश्रेष्ठ गुणों की यदि श्रेष्ठ नेतृत्वकर्ताओं में खोज की जाती है तो विभिन्न गुणों की उपस्थिति एवं अनुपस्थिति का आश्चर्यजनक रूप प्रकट होता है। विभिन्न श्रेष्ठ नेताओं जैसे रिचर्ड वेन्सन, कान्डोलिसा राईस, विन्सटन चर्चिल, डोनाल्ड ट्रमे,

नेल्सन मंडेला, मदर टेरेसा आदि में सभी चर्चित तथा सफल नेता रहे हैं तथा नेतृत्व के विविध गुणों के आयाम इनमें समाहित रहे हैं लेकिन इसके विपरीत आपस में क्षेत्र या स्थान परिवर्तन या एक दूसरे के स्थान पर स्थापन्न की स्थिति में सफलता का संशय आवश्यक रूप से विद्यमान होता है। नेतृत्व कौशल या गुणों का निर्धारण से अधिक परिस्थिति अनुसार गुणों का सार्थक उपयोग अधिक आवश्यक होता है। नेतृत्व के कौशल या गुणों को आठ प्रकार की क्षमताओं के रूप में प्रकाशित किया जा सकता है। ये क्षमताएं अपने आप में विभिन्न उपरूपों को भी समाहित करती हैं।

1. विचारशीलता

'रणनीतिक समस्याओं के प्रति समस्या निवारण एवं विश्लेषण, नवाचार एवं रचनात्मकता, निर्णयन, अनिर्धारित स्थिति में निर्णयन'

समूह के कार्यकारण की रणनीतिक की विस्तृत तस्वीर तथा इस संबंध में लगातार विचारशीलता। उपस्थित एवं संभावित समस्याओं के प्रति तथा समस्या निवारण और सतत विश्लेषण तथा पूर्व विचार निर्णयन जिससे की समूह की समस्याएं रूकावट के स्तर पर न पहुंच सकें। रचनात्मक सोच के साथ नवाचार पर विचार एवं प्रोत्साहन, जिससे की समूह का आत्मविश्वास एवं उत्प्रेरण स्थापित हो, समूह से लगातार विचार-विमर्श तथा निर्णयन एवं अनिश्चत की स्थिति में भी स्पष्ट निर्णय जिससे की संशय की स्थिति निर्मित न हो तथा समूह आसवस्त हो कि नेतृत्व प्रभावी तथा सभी परिस्थितियों में भी विचारशील एवं युक्तिसंगत है।

2. प्रबंधन

'समय प्रबंधन, मीटिंग एवं विचार-विमर्श, प्रोजेक्ट एवं प्राथमिकताएं, अर्थ प्रबंधन, वरिष्ठ एवं कनिष्ठ प्रबंधन, तकनीकी प्रबंधन, सूचना प्रबंधन'

प्रबंधन नेतृत्व का प्रमुख गुण है, नेतृत्वकर्ता का श्रेष्ठ प्रबंधक होना नेतृत्व क्षमता की प्रभावशीलता के लिए आवश्यक होता है, अपने तथा अपने समूह के समय का प्राथमिकता के आधार पर सदुपयोग करना। समूह की मीटिंग एवं विचार-विमर्श को लक्ष्य उन्मुख बनाते हुए प्रबंधित करना समूह की प्राथमिकताएं, लक्ष्य एवं समयानुरूप निर्धारित करना, समूह के अर्थ के साथ ही उपयोगी उपलब्धता के आधार पर वित्त प्रबंधन करना। समूह में वरिष्ठ एवं कनिष्ठ के बीच बेहतर तालमेल तथा सह संबंधों का प्रबंधन करना तकनीकी एवं सूचनाओं

को लक्ष्य उन्मुख करते हुए प्रबंधित करना जिससे की समूह की उत्पादकता बधित हो।

3. टीम भावना का विकास एवं लक्ष्योन्मुक्त समूह का निर्माण

'समूह विकास की समझा होना, व्यक्तित्व का सदोपयोग, अनुभवों से लाभ लेना, सफलता का जन, टीम परिवर्तन को संचालित करना, टीम इनपुट की योजना बनाना, टीम का कार्य विभाजन वैज्ञानिक तरीके से करना।'

नेतृत्व की सफलता लक्ष्योन्मुक्त टीम निर्माण में निहित होती है, टीम निर्माण के द्वारा एक दिमाग दो हाथ को सौ दिमाग दो सौ हाथ एवं हजार दिमाग दो हजार हाथ से हजारों लाखों की संख्या में कार्य हेतु परिवर्तित किया जाता है। टीम निर्माण प्रक्रिया आपसी सह-संबंधों का विकास एवं समूह की भावनाओं को लक्ष्योन्मुख करने तथा अधिकाधिक कार्य उत्पादकता निर्धारित करने में निहित होती है। समूह की समझ उसकी आवश्यकताएं अपेक्षाएं दृढ़ताएं तथा कमजोरियों की सार्थक परख नेतृत्व का अत्यधिक आवश्यक गुण हैं। जिसके माध्यम से टीम निर्माण प्रेरित होता है। समूह की विविधताओं को समूह की कमजोरी बनने से बचाना तथा विविधताओं का उपयोग लक्ष्य प्राप्ति में किया जाना वांछनीय प्राथमिकता होती है। सामान्यतः वैविध्य पूर्ण स्थिति को सामूहिक अवरोध के रूप में देखा जाता है लेकिन यह नेतृत्व की कला है कि वह उससे अधिकतम आउटपुट प्राप्त करें। समूह के प्रत्येक अच्छे बुरे अनुभव को समूह से चर्चा एवं विचार-विमर्श के माध्यम से तथा उस अनुभव में अच्छाइयों बुराइयों से अवगत कराते हुए अनुभवों का लाभ लेना तथा अल्पताओं एवं दुर्बलताओं की पुर्नवृत्ति न हो यह निर्धारित करना। समूह की सफलताओं पर उत्साह एवं जश्न के द्वारा सदस्यों को यह अहसास कराना की सफलता तथा उसमें उनका अवदान महत्वपूर्ण है साथ ही इसी माध्यम से सफलता के प्रति अभिप्रेरण स्थापित करना। समूह के परिवर्तनों का असर समूह की कार्यप्रणाली एवं उत्पादकता पर न पड़े इस हेतु प्रत्येक परिवर्तन पर पूर्व स्थिति या पूर्व से बेहतर स्थिति का अनुभव सदस्यों को कराकर परिवर्तनों से भी लाभ लेना। योजनाबद्ध तरीकों से टीम इनपुट तैयार करना, जिससे कार्यकरण सहज, सरल तथा तात्कालिक लक्ष्य आसान हों; यह निर्धारित करना स्वभाविक सरल, समान तथा वैज्ञानिक कार्य विभाजन एवं छोटे-छोटे लक्ष्यों का निर्माण कर क्षमता एवं योग्यता अनुरूप समान वितरण करना।

4. स्व विकास

'व्यक्तिगत आवश्यकताएं, कार्य एवं व्यक्तिगत जीवन,संतुलन, स्व अभिप्रेरण एवं स्व निर्धारण, जागरूकता का प्रदर्शन, भावनात्मक दक्षता, स्व कार्य निष्पादन योजना, व्यक्तिगत सीमाओं का निर्धारण, अन्य के प्रति व्यवहार, प्रक्रिया का विकास, मूल्य एवं सिद्धांत'

नेतृत्वकर्ता के तौर पर व्यक्तिगत या स्व विकास अत्यधिक महत्वपूर्ण निर्धारक गुण है। नेतृत्व न केवल कार्य संचालन का एक अंग होता है बल्कि समूह के लिए एक आदर्श भी होता है। नेतृत्वकर्ता स्वकौशल के आधार पर ही समूह के कार्य मूल्यांकन तथा उस पर आधारित गुण दोषों का निर्धारण कर पाता है। प्रभावशाली कार्य निष्पादन एवं नेतृत्व के लिए उसकी व्यक्तिगत अपेक्षाओं का ज्ञान, उनकी पूर्ति की सम्भाव्यता की सीमा तथा व्यक्तिगत अपेक्षाओं के प्रति विभिन्न स्तरों पर ज्ञापित करने की प्रवत्ति नेतृत्व की परिस्थितियों को अनुकूल बनाने में सहायक होती है। युक्ति संगत मूल्यांकन तथा आवश्यकता के स्तर एवं आवश्यकता पूर्ति उपरांत कारगर उपयोग सुनिश्चित होने की स्थिति में इस दृष्टि से आत्मविश्वास का उन्नयन होता है तथा आत्मविश्वास नेतृत्व में आवश्यकताओं के प्रति मांग एवं पूर्ति संबंधी प्रयासों को परिपूर्ण करने में सहायक होता है।

व्यक्तिगत जीवन में चुनौतीयों तथा परिस्थिति का स्तर भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में भिन्न-भिन्न होता है। व्यक्तिगत जीवन पारिवारिक अपेक्षाएं एवं धनात्मक या ऋणात्मक व्यक्तिगत परिस्थितियां कई प्रकार की होती हैं। व्यक्तिगत जीवन के तत्व सामान्यतः व्यावसायिक कार्य निष्पादन में अवरोध उपस्थित करते हैं। इस प्रकार की परिस्थितियां अधिकांशतः नियति के रूप में उपस्थित होती हैं जहां अमूलचूक परिवर्तन कर पाना सामान्यतः संभव नहीं होता है। ऐसे में सफल नेतृत्वकर्ता का एक प्रभावी गुण यह भी होता है कि वह अपने व्यक्तिगत जीवन एवं व्यवसायिक जीवन के बीच तालमेल तथा संतुलन सुनिश्चित करें। बेहतर संतुलन निश्चित ही कार्य की धनात्मक परिस्थितियां पूर्ण मनोयोग में सहायक होता है।

नेतृत्वकर्ता से प्राथमिक अपेक्षा होती है कि वह समूह को कार्य एवं लक्ष्य के प्रति अभिप्रेरित करे। समूह की अभिप्रेरित करना उसी स्थिति में संभव हो पाता है जबकि नेतृत्वकर्ता स्वयं कार्य के प्रति अभिप्रेरण से ओतप्रोत हो। समूह में ऐसे नेतृत्वकर्ता सामान्यतः लोकप्रिय होते हैं जो स्वविवेक एवं स्व निर्धारण की दक्षता का प्रदर्शन विभिन्न कार्यों में करते हैं। स्व अभिप्रेरण एवं स्व निर्धारण जहां नेतृत्व की प्रति संगठन के सदस्यों की अनुसरण भावना का विकास करने में सक्षम होते

हैं वहीं नेतृत्व की सक्षमता एवं समूह के आदर्श के रूप में स्थापना करने में प्रभावी भूमिका निभाते हैं।

परिवेश तथा परिस्थितियों के प्रति जागरूक रहकर संगठन के लिए प्रभावी तथ्यों का चयन एवं जागरूकता के प्रदर्शन माध्यम से नेतृत्व के आदर्श की स्थापना करना, नेतृत्वकर्ता का वांछनीय गुण है। समूह की नेतृत्व से अपेक्षा होती है कि वह नवाचार, आधुनिकतम तकनीकी तथा विभिन्न कार्यों के आधुनिकतम सुगम, माडल का चयन करके वह संगठन की कार्य सुगमता सुनिश्चित करें। नेतृत्व के पुरातन तथा आधुनिक तकनीकी नवाचारों से अनभिज्ञ होने के प्रदर्शन मात्र से संगठन में नेतृत्व के प्रति एनोमी की भावना का प्रसार होता है जिसका निवारण जागरूकता एवं उसके प्रदर्शन के माध्यम से ही संभव होता है।

समूह के सदस्यों से नेतृत्व के भावनात्मक संबंध तथा जुड़ाव नेतृत्व के लक्ष्यों के प्रति समूह की आस्था के मानक होते हैं। नेतृत्व यदि संगठन की भावनाओं पर खरा उतरता है तो निश्चित ही उसकी सफलता का सुनिश्चयन अधिकांश प्रतिशत में संभव हो जाता है। भावनात्मक दक्षता के माध्यम से नेतृत्व समूह की समस्या निवारण में प्रभावी भूमिका निभाकर अधिकतम उत्पादकता की श्रेणी तक पहुंचाने में समर्थ होता है। सामान्यतः पुलिस जैसे संगठन में इस प्रकार के तत्वों का बेहद अभाव प्रकाश में आता है। इसका परिणाम इस स्तर के तारतम्य के अभाव के साथ ही लक्ष्य के प्रति प्रत्येक सदस्य के अभिप्रेरण के अभाव के रूप में परिलक्षित होता है। इस प्रकार की दक्षता का आशय संगठन के हितों की उपेक्षा करके सदस्यों की जरूरतों को पूरा करना कतई नहीं होता है, बल्कि सदस्यों के प्रति भावनात्मक समझ उनकी समस्याओं के प्रति सहगामी, सहानुभूति पूर्ण रूख का प्रदर्शन तथा संगठन की अपेक्षाओं एवं सदस्यों की आवश्यकताओं के मध्य तालमेल सुनिश्चित कर बेहतर परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। पुलिस संगठन में इस प्रकार की दक्षता के विकास की अत्यधिक संभावनाएं विद्यमान हैं।

नेतृत्वकर्ता के तौर पर स्वयं के परिणाम निष्पादन की समीक्षा तथा विकास को योजनाबद्ध तरीके से निरूपित करना तथा गुण दोंषों के आधार पर संगठन के साथ नेतृत्व के स्तर पर कार्य निष्पादन की समीक्षा एवं उसमें सुधार का विश्लेषण तथा योजनाबद्ध तरीके से इस प्रक्रिया में अपेक्षित सुधार नेतृत्व का वांछनीय गुण होता है संगठन या इकाई के स्तर पर जहां इस प्रकार का विकास अवरुद्ध होता है वहां नेतृत्व की असफलता प्रारंभ होती है।

संगठन में नेतृत्वकर्ता के प्रभावी एवं सुदृढ़ व्यक्तित्व की अपेक्षा समूह के

द्वारा की जाती है। नेतृत्व के सक्षम व्यक्तित्व का अवलंबन समूह के सदस्यों के कार्य निष्पादन में सहायक होता है। आधुनिक जनतांत्रिक नेतृत्व की अपेक्षाओं के बावजूद नेतृत्वकर्ता के व्यक्तित्व में कतिपय सीमाएं वांछनीय होती हैं, सीमा निर्धारण का आधार सक्षम एवं सुदृढ़ व्यक्तित्व निर्धारण होता है तथा इस प्रकार के व्यक्तित्व संबंधी तत्व नेतृत्व की जनतांत्रिक प्रक्रिया के प्रति गतिरोधकारी नहीं होते हैं।

संपर्क में आने वाले लोगों से कुशलतापूर्वक बातचीत तथा विचारों का आदान-प्रदान एवं इस प्रक्रिया के दौरान संगठन एवं नेतृत्व के तथा व्यक्तिगत लक्ष्यों का संरक्षण एवं प्रत्यक्ष व्यक्ति से संगठन के स्तर पर एवं व्यक्तिगत स्तर पर क्या अपेक्षा है इसका पूर्ण प्रदर्शन करना नेतृत्वकर्ता की सफलता में अत्यधिक सहायक गुण होता है। इसमें महत्वपूर्ण यह होता है कि अपनी बात रखते हुए सामने वाले की भावनाओं को ठेस न पहुंचने न दी जाए, साथ ही व्यवसायिक हितों के प्रतिकूल कोई बात स्वीकार न की जाए। वार्तालाप कौशल से न केवल व्यवसायिक हितों की पूर्ति सुगम होती है बल्कि आपसी सहसंबंधों का विकास भी होता है जो कि अनुकूल परिणाम प्रदान करता है।

सुदृढ़ व्यक्तित्व का निर्धारण व्यक्ति के मूल्यों एवं सिद्धांतों के आधार पर सुनिश्चित होता है। व्यक्ति सैद्धांतिक स्तर पर किस प्रकृति का है तथा जीवन एवं विभिन्न कार्यों के प्रति किस प्रकार के मूल्य उसमें निहित हैं। यह नेतृत्वकर्ता के तौर पर सफलता का निर्धारक मापदण्ड है। संगठन के सदस्य तथा प्रभाव में आने वाले सभी की सीमाओं का निर्धारण तथा प्रभावित होने एवं अभिप्रेरित होने का स्तर बहुत हद तक व्यक्ति के सिद्धांत एवं मूल्य निर्धारण के आधार पर सुनिश्चित होता है। पुलिस संगठन में इस प्रकार के कई उदाहरण प्रकाश में आते हैं जहां नेतृत्व के इन गुणों के कारण विभाग या इकाई की छवि का निर्धारण होता है। जो कि संगठन को व्यापक रूप से प्रभावित करता है।

5. संचारशीलता

'लेखन शक्ति, प्रस्तुतीकरण, उद्‌बोधन, सक्रिय श्रवण, संदेशों की स्पष्टता, मूल्यांकन कर फीडबैक देना एवं लेना'

नेतृत्वकर्ता अपने स्तर पर, बहुमुखी संचार करता है तथा विविध माध्यमों में प्रभावी संचार एवं विविध स्तरों पर संचार की सक्षमता एक नेतृत्वकर्ता की सफलता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, संदेशों का तथा लक्ष्यों एवं उद्‌देश्यों का यथा स्थिति लिखित या मौखिक प्रस्तुतीकरण जिसमें कि संदेश प्राप्त करने वाले

को न केवल स्पष्ट हो बल्कि उसकी मूल भावना का व्यंजनात्मक आशय वह ग्राह्य कर सके। समूह के समझ प्रस्तुतीकरण के कौशल जिनमें की आत्मविश्वास, भाषा संबंधी अनुशासन, भाषा एवं संदेश पर पूर्ण अधिकार वांछनीय गुण हैं। सामान्यतः पुलिस जैसे संगठनों में जन संबोधन कौशल के प्रशिक्षण एवं विकास के संबंध में अधिक महत्व नहीं दिया जाता जबकि नेतृत्वकर्ता इस कौशल के माध्यम से न केवल संगठन को सही दिशा में निर्देशित कर सकता है अपितु कई परिस्थितियों में जनता को भी इस माध्यम से केन्द्रित एवं निर्देशित किया जा सकता है जो कि कानून व्यवस्था संबंधी स्थितियों में अत्यधिक लाभप्रद हो सकता है। अपना संदेश अन्य तक पूर्ण रूप में प्रसारित करने के समतुल्य महत्व इस बात का होता है कि दूसरे के संदेशों को भी गंभीरता से सुना एवं समझा जाए। संदेश स्पष्टता के स्तर पर, भाषिक स्तर पर या उसमें समाहित तत्वों के स्तर पर अपूर्ण अतिरिक्त या अस्पष्ट होने की स्थिति में भी सफल नेतृत्वकर्ता का दायित्व होता है कि वह संदेश को सप्रयास उसकी पूर्णता में ग्रहण करें तथा उस पर वांछित परिणति प्रदान करें। विभिन्न कार्य योजना एवं विभिन्न कार्यों के संबंध में मूल्यांकन एवं उसका प्रदर्शन समूह की उन्नति एवं परिष्कार के लिए बेहद आवश्यक होता है। सफल नेतृत्वकर्ता विभिन्न अवसरों पर फीडबैक प्रदान करके तथा समूह के सदस्यों से एवं उच्च स्तर से फीडबैक लेकर यह कार्य सुनिश्चित करता है। फीडबैक के अभाव में रणनीतिक अल्पताओं तथा योजनागत सक्षमताओं पर विमर्श नहीं हो पाने के कारण अपेक्षित सुधार संभव नहीं हो पाता है। साथ ही योजना एवं कार्य पद्धति में समाहित ऐसे तत्व जो परिणाम उत्पादकता में विशेष रूप से सहायक का मूल्यांकन एवं प्रोत्साहन भी संभव नहीं हो पाता।

6. सदस्यों का विकास

'अच्छे कार्य पर प्रोत्साहन, व्यक्तिगत मार्ग दर्शन, कोचिंग मैंटरिंग, सीखने के माहौल का विकास, सहयोग लेने एवं देने की प्रवृत्ति का विकास, परिवर्तन के लिए परिवेश निर्माण।'

नेतृत्वकर्ता का दायित्व अपने साथ, अपने समूह के सदस्यों का भी व्यक्तिगत एवं कौशलगत विकास सुनिश्चित करना होता है। इसके द्वारा जहां समूह की संतुष्टि का स्तर परिवर्धित होता है, वहीं उच्च कौशल युक्त टीम का विकास होता है जो कि संगठन के लक्ष्य प्राप्ति में प्रभावी भूमिका निभाता है, सदस्यों की कार्य दक्षता को प्रोत्साहित करना तथा उसमें उत्तरोत्तर वृद्धि के प्रति सतत प्रयासशील रहना नेतृत्वकर्ता का दायित्व है। अपेक्षा अनुरूप व्यक्तिगत निर्देश तथा

व्यक्तिगत एवं समूहगत समस्याओं के संबंध में मार्गदर्शन कोचिंग, मैंटरिंग पद्धति के माध्यम से समाधान करना जिससे की दक्षता संवर्धन प्रभावित न हो, संगठन में सीखने की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करना तथा पुरस्कार एवं प्राथमिकता प्रदान कर यह भावना समाहित करना जिससे कि सदस्यों में विभिन्न नवाचारों; ज्ञान, दक्षता, कौशल आदि सीखने के संबंध में प्रतिस्पर्धी वातावरण तैयार हो सके। जब समूह के सदस्य स्व प्रेरणा से सीखने की भावना एवं इस विषयक प्रतिस्पर्धा से प्रभावित होते हैं तब संगठन का कुल दक्षता संवर्धन प्रभावी रूप से विस्तारित होता है। नेतृत्वकर्ता के तौर पर व्यक्तिगत अहम न मानते हुए सदस्यों को कार्य में सहयोग प्रदान करना तथा अपने काम में आवश्यकतानुसार सहयोग लेना। वे गुण हैं जिनके माध्यम से आपसी सामंजस्य एवं सहकार्य का वातावरण निर्मित होता है तथा पूरा संगठन परिस्थिति अनुसार एक-दूसरे के सहयोगी के रूप में वांछित स्थान पर कार्य करते हुए न केवल कार्य को आसान बनाता है बल्कि कार्य का एक स्वस्थ वातावरण स्थापित करता है। सदस्यों की पारम्परिक पद्धतियों में विश्वास तथा उनके प्रति अपरिवर्तनवादी सोच कई बार संगठन में नवाचार एवं आधुनिकतम तकनीकियों के प्रसार में अवरोध का कार्य करती है। सफल नेतृत्वकर्ता अपने साथ समूह को भी विभिन्न युक्तियों के माध्यम से परिवर्तन के प्रति संवेदनशील बनाता है तथा परिवर्तन की स्वीकार्यता को स्थापित करता है। इस हेतु विभिन्न आधुनिक तथ्यों की जानकारी का प्रसार उनकी आवश्यकता तथा वांछनीय होने के संबंध में तथ्यों का आदान-प्रदान एवं परिवर्तन की स्थिति में स्वयं के जोखिम के प्रति विश्वास का ज्ञापन आदि के माध्यम से परिवेश निर्माण करता है जिससे कि संगठन के सदस्य परिवर्तन के प्रति सहज स्वीकार्यशील हो जाते हैं।

7. स्व व्यक्तित्व

'परिवर्तित नेतृत्व शैली, द्वंद्वों का परिहार, विभिन्न व्यक्तियों से प्रभावी संपर्क, आवश्यकतानुरूप कार्य निष्पादन, स्वयं का वीजन, आवश्यकतानुसार नई कार्य दिशाओं की स्थापना, रणरणनीतिक योजना, उदाहरण प्रस्तुत कर नेतृत्व प्रदर्शन की क्षमता'

नेतृत्वकर्ता का खास व्यक्तित्व उसकी इस रूप में सफलता निर्धारित करता है, अपनी नेतृत्व शैली के प्रति परिवर्तनशील प्रवृत्ति जिससे की आवश्यकतानुरूप नेतृत्व शैली में परिवर्तन कर संगठन की अपेक्षा की सफल पूर्ति की जा सके। विभिन्न स्तरों पर द्वंद्वात्मक परिस्थितियों में प्रभावी समाधान तथा समाधान दक्षता जिससे की संगठन या इकाई का कार्य इस प्रकार प्रभावित न हो, विभिन्न प्रकृति

के व्यक्ति एवं सरल एवं जटिल व्यक्तित्वों से कुशलता पूर्वक संपर्क एवं अपेक्षित परिणाम प्राप्त करने की क्षमता, संगठन के कार्य एवं लक्ष्यों के प्रति स्वयं का स्पष्ट विजन होना तथा उसके संबंध में व्यक्त करने की प्रभावी क्षमता जिससे की संगठन में संदेह की स्थिति न हो। नेतृत्वकर्ता के रूप में कार्य एवं लक्ष्यों के प्रति नई दिशाएं निर्धारित करना जिससे की संगठन के सदस्यो एवं नेतृत्व की रुचिपूर्ण कार्य परिस्थितियां विद्यमान रह सकें। विभिन्न कार्यों की रणनीतिक योजना बनाना तथा उसके प्रति सतत विचारशील रह कर एवं सदस्यों से विचार विमर्श कर उत्तरोत्तर विकास एवं योजना के संबंध में सदस्यों की संबद्धता सुनिश्चित करना जिससे की कार्यरूप परिणति सरल हो सके। नेतृत्वकर्ता संगठन के लिए स्वयं के व्यक्तित्व एवं कार्य दक्षता प्रदर्शन के माध्यम से एक उदाहरण प्रस्तुत करता है। सदस्य उस उदाहरण से प्रेरणा एवं प्रभाव प्राप्त करके लक्ष्योन्मुख होते हैं। नेतृत्वकर्ता की इस प्रकार की सक्षमता उसे सदस्यों के मध्य आदर्श एवं प्रेरणाश्रोत के रूप में स्थापित करती है।

8. परिवर्तनशीलता

'बहुलतावादी एवं जटिलतापूर्ण परिस्थितियों का समाहार, स्थानीय एवं भू-मण्डलीय रूझानों एवं आवश्यकताओं की पहचान, परिवर्तन के प्रति उत्प्रेरक की भूमिका, युक्तिसंगत जोखिम लेने की क्षमता।'

नेतृत्व एक सतत प्रक्रिया है तथा यह सार्वभौम सत्य है कि किसी भी संगठन की परिस्थितियां परिवर्तनशील होती हैं। नेतृत्व के स्तर पर परिवर्तनों की स्वीकार्यता तथा परिवर्तनों से संगठन के लक्ष्यों के प्रति सार तत्वों का ग्रहण करना नेतृत्वकर्ता के रूप में अतिआवश्यक गुण है, वर्तमान बहुलता वाद तथा विभिन्न तथ्यों एवं परिस्थितियों की जटिलता के कारकों से सार्थक सार ग्रहण एवं वैश्विक स्तर पर तथा स्थानीय स्तर पर हो रहे परिवर्तनों की वस्तुनिष्ठ परख एवं ज्ञान होना जिससे की रणनीति एवं कार्य योजनाओं को वर्तमान एवं भविष्य में संभव परिवर्तनों के अनुरूप निर्धारित किया जा सके विभिन्न परिवर्तनों के प्रति सकारात्मक रूख तथा संगठन के उद्देश्य से वस्तुनिष्ठ सोच का निर्धारण जिससे की परिवर्तनों की धनात्मकता ही संगठन में समाहित हो, नेतृत्वकर्ता के रूप में परिवर्तनों के प्रति अभिप्रेरक की भूमिका का निर्वाहन करना जिससे की परिवर्तनशील प्रक्रिया को सुगमता पूर्वक ग्रहण किया जा सके परिवर्तन के साथ जोखिम की संभावना सर्वथा व्याप्त होती है तथा सफल नेतृत्वकर्ता परिवर्तन के सार्थक परिणामों के उद्देश्य से युक्तिसंगत जोखिम ग्रहण करने तत्पर रहता है।

इस प्रकार नेतृत्वकर्ता के गुणों के संबंध में शोध एवं विश्लेषण के आधार पर सक्षम नेतृत्व के कई गुणों की अपेक्षा प्रकाशित होती है। कहा जाता है कि एक नेतृत्व के अनेक गुण होते हैं जिनके आधार पर वह विभिन्न देश, काल, परिस्थिति, व्यक्ति, चुनौतियों से संपर्क एवं संघर्ष कर अपने लक्ष्यों को प्राप्त करता है। यद्धपि नेतृत्व के गुणों को समग्र रूप में व्याख्यायित किया जाता है तथापि यह प्रमाणित तथ्य है कि नेतृत्व के गुण परिस्थिति एवं स्तर के आधार पर परिवर्तनशील होते हैं। अतः नेतृत्व के गुणों की व्याख्या एक समान्य अवधारणा का प्रकाशन है तथा संगठन एवं परिस्थिति अनुसार यह विशेष रूप में ज्ञापित की जा सकती है। निष्कर्ष के तौर पर नेतृत्व के सामान्य गुणों पर आधारित नेतृत्व की परिभाषा अथवा यह कि नेतृत्वकर्ता कौन है? निम्न तत्वों के आधार पर की जा सकती है।

1. नेतृत्वकर्ता जानता है कि वह कौन है।
2. वह अपने में सकारात्मक सोच रखता है।
3. वह अपने आप में विश्वास रखता है।
4. परिवर्तन उसके जीवन की प्रक्रिया होती है।
5. वह आगे की सोच एवं योजना तैयार रखता है।
6. वह सह संबंधों का निर्माण करता है।
7. वह आशावादी सोच और व्यक्तित्व से ओतप्रोत होता है।
8. वह विभिन्न मुद्दों को व्यक्तिगत तौर पर नहीं लेता।
9. वह प्रभावित कर अन्य नेतृत्वकर्ता विकसित करता है।
10. वह अपने समूह के सदस्यों का सम्मान एवं उनसे भावनात्मक जुड़ाव रखता है।

इस प्रकार उक्त दस गुणों के आधार पर नेतृत्वकर्ता के व्यक्तित्व को परिभाषित एवं स्थापित किया जा सकता है।

नेतृत्व के गुण वास्तव में सीमाओं में निरूपित नहीं किए जा सकते है। किसी गुण को वैयक्तिक गुण के रूप में स्थापित कर कोई व्यक्ति सार्थक परिणाम प्रदान कर सकता है। वहीं भिन्न व्यक्ति भिन्न गुण के माध्यम से वही परिणाम प्रदान कर सकता है। कई बार विशेष नेतृत्व कौशल के आधार पर सफल नेतृत्वकर्ता को देखा जाता है। वही कई गुणों के समायोजन पर भी सफलता के अपेक्षित परिणाम प्रदर्शित नहीं होते देखे जाते है। नेतृत्व व्यक्तित्व का मूलभूत गुण है तथा विभिन्न नेतृत्व के कौशल मानक या सवांर्ग चयनित कहे जा सकते है।

अध्याय 2

पुलिस नेतृत्व : आवश्यकता एवं स्तर

समाजशास्त्री दुर्खीम ने मानव सभ्यता के विकास में अपराध को आवश्यक बुराई के रूप में शास्वत माना है। इस रूप में समाज में प्रारंभ से ही अपराध का अस्तित्व रहा है। अपराध का अस्तित्व अपने साथ अपराधी, अपराधिक कानून या नियम तथा इन नियमों का पालन कराने वाली संस्था और नियम उल्लंघन पर निर्धारित प्रक्रिया को सुनिश्चित करने वाली संस्था के अस्तित्व को स्वयं सिद्ध स्वीकार्य बनाती है। इस प्रकार पुलिस संगठन विभिन्न स्वरूपों में समाज में अस्तित्व में रहा है तथा समाज की अपेक्षाओं एवं शासन व्यवस्था के प्रतिमानों के आधार पर सामयिक परिवर्तन भी इस संगठन की रूपरेखा, कार्यप्रणाली एवं अन्य कार्यपालिक परिस्थितियों में दृष्टिगत हुए हैं। लोकतांत्रिक व्यवस्था में पुलिस संगठन समाज की अति अपेक्षा से प्रभावित होता है, समाज की अपेक्षाओं के अनुरूप विभिन्न उद्देश्यों एवं सेवाओं के लिए अपेक्षा पुलिस संगठन से की जाती है। यह स्वभाविक इसलिए भी है कि लोकतांत्रिक व्यवस्था में राज्य की शक्ति के प्रत्यक्ष प्रमाण के तौर पर एवं समस्या पर तत्काल सहयोग की अपेक्षा के तौर पर पुलिस संगठन संपूर्ण क्षेत्र में अपनी इकाई थाना के रूप में सदैव उपलब्ध रहता है एवं सातों दिन 24 घंटे अपनी सेवाएं देता है। विकासशील देशों में जहां राज्य के संसाधन सीमित हैं वहां पुलिस के समानान्तर अन्य इकाइयों की अनुपलब्धता तथा पुलिस संसाधनों की अल्पता समस्या को और गंभीर बनाते हैं, जहां निर्धारित अपेक्षा की पूर्ति अधिकाधिक प्रतिशत में असंभव प्रायः हो जाती है। साथ ही पुलिस संगठन के प्रति समाज की विपरीत धारणा अपना स्थान लेती है। संसाधन एवं परिस्थितिगत विपरीत स्थितियों में काम करने, कार्य आधिक्य एवं विश्राम के अल्प समय होने के कारण पुलिस व्यवहार विपरीत रूप में

प्रभावित होता है, जो कि समाज में पुलिस छवि का विरूपण और अधिक मात्रा में पुष्ट करता है। ऐसी स्थिति में समाज की आम धारणा में पुलिस संगठन को समाज की आवश्यक बुराई के रूप में परिभाषित तक कर दिया जाता है।

पुलिस संगठन से आशय समाज के उस हिस्से से है जो कि समाज अपने नियम कानूनों का पालन सुनिश्चित करने एवं शांति व्यवस्था बनाए रखने अपराधों की रोकथाम करने के लिए अधिकृत किया जाता है। सामाजिक विकास और राज्य संस्था तथा लोकतांत्रिक नीति नियामकता के बदलते परिवेश में पुलिस संगठन भी अपने स्वरूप में परिवर्तित हुआ है तथा प्रारंम्भिक दौर की अपेक्षा इस संगठन की जनतांत्रिक जिम्मेदारियों में भी उत्तरोत्तर प्रगति परिलक्षित हुई है। पूर्व की अपेक्षा कार्यों का स्थाई निर्धारण एवं वर्गीकरण विकसित हुआ है, वहीं संगठन को वैधानिक तौर पर लोकतांत्रिक एवं जनता तथा कानून के प्रति उत्तरदाई संगठन का दर्जा प्राप्त हुआ है। प्रारंम्भिक तौर पर राजतांत्रिक सत्ता के प्रति जहां इस प्रकार के संगठन का कार्य जनता के बीच राजशाही के आदेशों देश की तामीली करना एवं आम जनता में राजशाही के प्रति भय स्थापित करना था तथा समय एवं सत्ता के अनुरूप पुलिस की प्राथमिकताएं पृथक पृथक होकर परिवर्तनशील थीं। इसके विपरीत वर्तमान में पुलिस के दायित्वों का जनोन्मुखी स्थाई निर्धारण के साथ ही प्राथमिकताएं निर्धारित हैं। परिवर्तन का अग्रसरण मूल स्वरूप को प्रभावित किए बगैर सुधारात्मक उपायों के रूप में सीमित हुआ है। पुलिस समाज की सहयोगी संस्था के रूप में मुख्य रूप से अपराध नियंत्रण, अपराध अन्वेषण, कानून व्यवस्था का निर्धारण, आम जनता तथा आम जनता के विशिष्ट व्यक्तियों की सुरक्षा मुख्य रूप से करती हैं। अपने नवीन स्वरूप में जन-सहयोगी जनमार्गदर्शक एवं जनहितैषी रूपों में भी विविध कार्य पुलिस संगठन द्वारा प्रतिपादित किए जा रहे है। कार्यों के स्वरूप एवं वृहदता के चलते विभिन्न शाखाओं को विभिन्न लक्ष्यों की प्राप्ति एवं विशेष कार्य निर्धारण के लिए स्थापित किया गया है। पुलिस संगठन के कार्य जनता से सीधे जुड़े होने तथा इनका स्वरूप अधिकांश परिस्थितियों में निषेधात्मक होने के कारण पुलिस संगठन समाज में चर्चित तथा विशेष भूमिका में स्थापित होता है। आम जनता के कानून पालन एवं यातायात निर्धारण मेला, त्यौहार उत्सव आदि व्यवस्था जैसे कर्तव्यों के कारण संगठन की प्रतिपग आवश्यकता समाज के हर वर्ग को होती है। यही कारण है कि अन्य संगठनों की अपेक्षा पुलिस संगठन का जनसांख्यिक प्रभाव का दायरा अत्यधिक विस्तृत रूप में परिभाषित होता है। इस परिप्रेक्ष्य में यह कहना भी अतिश्योक्ति पूर्ण नहीं होगा कि समाज का लगभग शत प्रतिशत जन भाग कहीं न कहीं पुलिस संगठन एवं उसके कार्यों से प्रभावित

होता है। लोकतांत्रिक समाज में राजनैतिक दल, जनता का विश्वास अर्जित करने तथा जननिर्वाचन में सफल होने हर संभव प्रयास करते है। सत्तारूढ़ दल जहां कानून व्यवस्था एवं अपराध नियंत्रण को अपनी उपलब्धि के तौर पर ज्ञापित करने का प्रयास करता है वहीं विपक्षी दल कानून व्यवस्था एवं शासन की अन्य कमियों को रेखांकित करने हेतु जन आंदोलन के माध्यम से शासन तंत्र की विफलता को स्थापित करने का प्रयास करता है। जन आंदोलन एवं जन आंदोलन की स्थिति में आक्रोश संबंधी परिस्थितियों में समाज, शासन एवं व्यवस्था तंत्र के प्रतिनिधि निवारक या सबसे सामने पुलिस संगठन ही होता है। इस रूप में भी सत्ता संघर्ष या लोकतांत्रिक निर्वाचन को प्रभावित करने वाले कारक इस संगठन में निहित हो जाते है। समाज को प्रभावित करने वाले गंभीर अपराध तथा उनमें संलिप्तता एवं सफलता भी समाज की विचार धारा को प्रभावित करती है। अक्सर अपराधों में प्रतिष्ठित संपन्न प्रभावशाली लोगों की संलिप्तता संबंधी प्रश्न प्रमुख रूप से सामाजिक चिंता का विषय होता है, तथा इसके प्रति पुलिस संगठन से अपेक्षा एवं अपेक्षा की अल्प या अनापूर्ति की स्थिति में प्रकरण की वास्तविक परिस्थितियों से अनभिज्ञ बड़े जन समुदाय द्वारा आरोप तथा ऋणात्मक धारणा पुलिस के प्रति स्थापित की जाती है। यहां समाज की गतिविधियों के प्रति भी आमजन रोष व्यक्त करने के आसान साधन के रूप में पुलिस संगठन को साधन के तौर पर उपयोग करते हैं। हालांकि इस प्रकार की परिस्थिति के लिए संगठन की कमियाँ या पूर्व उदाहरण मुख्य रूप से उत्तरदाई है, लेकिन प्रत्येक परिस्थिति में संगठन का दोष निर्धारित करना भी प्रत्येक मामले में सही नहीं कहा जा सकता।

समाज से जुड़े महत्वपूर्ण व्यक्तियों राज्य के बड़े पदों पर आसीन महत्वपूर्ण व्यक्तियों की सुरक्षा वर्तमान परिवेश में पुलिस का महत्वपूर्ण दायित्व बन चुका है। संचार क्रांति एवं सूचना प्रौद्योगिकी के इस दौर में जहां समाज के ऐसे महत्वपूर्ण व्यक्तियों की संख्या में वृद्धि हुई है वहीं विशिष्ट व्यक्तियों का आवागमन भी बड़ा है। वी.आई.पी. सुरक्षा जहां राज्य के लिए अति महत्वपूर्ण व्यवस्था होती है एवं प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में कहीं न कहीं आम जन को भी राज्य के नागरिक होने के नाते महत्व रखती है। इस प्रकार की व्यवस्थाओं में पुलिस के कार्य यातायात रोकना, लोगों को रोकना एवं विशिष्ट व्यक्तियों के अनुयायियों को उनके पास जाने से रोकना होते है। इन परिस्थितियों में पुनः पुलिस के प्रति आमजन का सोच अनावश्यक बाधा उत्पन्न करने वाले के रूप में निर्धारित होता है। राज्य के विभिन्न अवैध एवं समाज को प्रभावित करने वाले कार्यों के निरोध के लिए राज्य विविध विभागों का निर्धारण करता है। यह विभाग अपने कार्य के लिए जैसे शराब, नशीली

एवं मनः प्रभावी तत्वों, औषधि, उत्खनन आदि के संबंध में विशिष्ट कार्यों के लिए उत्तरदाई होते है। ये विभाग पुलिस की तरह ही शासकीय तथा राज्य के विविध अधिनियमों के तहत नियमित एवं संचालित होते हैं। लेकिन आम जनता से संपर्क एवं व्यापक प्रचार-प्रसार के अभाव में तथा संबंधित अधिनियमों में पुलिस की सहगामी भूमिका निर्धारित होने के कारण इनके कार्यों में अनियमित्ता या अल्पता के लिए भी आमजन पुलिस के प्रति उत्तरदाई सोच निर्धारित करते हैं। मानवीय संसाधनों की अल्पता पुलिस संगठन का स्थाई लक्षण बन चुका है कारण चाहे आर्थिक संसाधनों की अल्पपूर्ति को कहा जाए या कि संसाधनों की पूर्ति की अपेक्षा मांगकर अत्यधिक तीव्र विकास को माना जाए लेकिन सामायिक आवश्यकताओं के परिप्रेक्ष्य में मानवीय संसाधनों की अल्पता हमेशा संगठन में परिलक्षित होती है। इसका सीधा प्रभाव पुलिस की कार्य प्रणाली पर पड़ता है उपलब्ध सदस्यों को जहां अधिक समय एवं श्रम देना होता है, बावजूद इसके वांछित कार्यों की उपेक्षा से समाज की भर्त्सना का भी शिकार होना होता है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में सामंती शासन काल के अनुभव एवं पूर्वाग्रह तथा स्वाधीनता के पूर्व की स्थितियों के पूर्वाग्रह भी पुलिस के लिए समाज में छवि संबंधी चुनौती प्रस्तुत करते हैं। पूर्व की आत्ताई तथा दमनकारी पुलिस छवि जन मानस में पैठ बनाकर, वर्तमान छवि को भी प्रभावित करती है। यह प्रभाव पूर्वाग्रह जघन्य, ऋणात्मक प्रभाव होते हैं जो कि कार्यकुशलता तथा निष्पक्षता एवं उसके मूल्यांकन को बुरी तरह प्रभावित करते हैं।

पुलिस संगठन एक शासकीय संगठन होने से शासकीय संगठन संबंधी अपनी विशेषताओं को समाहित करता है साथ ही कार्य की प्रकृति के कारण अनुशासित, वर्दी धारी बल की भूमिका का भी निर्वाहन करता है, साथ ही विधि संबंधी आवश्यकताओं तथा अनुसंधान संबंधी सैद्धांतिक तथा तकनीकी नवाचार भी संगठन से अपेक्षित होता है। समाज के हर वर्ग से सीधा तथा ज्वलंत संपर्क होने के कारण समन्वय सरोकार एवं सहानुभूति की अपेक्षाएं भी पुलिस संगठन से की जाती है। नेतृत्व की दृष्टि से पुलिस संगठन में निहित विशेषताओं को निम्न बिन्दुओं से रेखांकित किया जा सकता है।

. अनुशासनात्मक भूमिका
. संदेशों का ऊपर से नीचे की ओर प्रवाह
. कार्य की अधिकता,
. आंतरिक एवं बाह्य समूहों का नियंत्रण
. वैविध्य पूर्ण परिस्थितियां
. संगठन में विविध पृष्ठ भूमि एवं स्तर के सदस्य

. सामूहिक उत्तरदायित्व
. अपेक्षाकृत नेतृत्व का अधिक उत्तरदायित्व
. तनावपूर्ण परिस्थितियां
. उच्च अधिकारित्व का प्रभाव
. पुरस्कार एवं दण्ड़ की व्यवस्था का प्रभाव
. कार्य के प्रति अभिप्रेरण कारक का अभाव
. संसाधन अल्पता
. संगठन की आंतरिक परस्पर विश्वास शीलता का अभाव

पुलिस संगठन में अंतः स्थापित विशेषताएं नेतृत्व की विकासशील लोकतांत्रिक व्यवस्था के स्थापित मानकों के विपरीत नेतृत्व की प्रक्रिया को एक पक्षीय संचार विचार-विमर्श तथा निर्णयों में सामूहिक अभिमत की मान्यता को स्वीकार नहीं करती है। अनुशासनात्मक संगठन अनुशासन के आधार पर अपने से वरिष्ठ के निर्णय एवं निर्देश को ही सही मानने तथा उस पर विचार या सुधार प्रस्तावित नहीं करने पर जोर देती है। संगठन में जब निर्देश का प्रसार एक पक्षीय होता है तथा दूसरे पक्ष को सिर्फ परिणाम बताने हेतु ही अवसर प्रदान किया जाता है तब ऐसी स्थिति में सामान्यतः संगठन के सदस्यों में अविश्वास की भावना तथा निर्णय के प्रति अतिरेक पूर्ण होना या अनावश्यक होना जैसी भावनाएं सामान्य होती हैं। नेतृत्व की आधुनिक तथा मान्य लोकतांत्रिक प्रक्रिया के विपरीत प्रशासकीय व्यवस्था तंत्र, अच्छे कार्य के प्रोत्साहन के प्रति अभिप्रेरण कारकों का अभाव तथा सभी प्रकार के संसाधनों की अल्पता वे कारक हैं, जो पुलिस नेतृत्व को अत्यधिक चुनौतीपूर्ण बनाते हैं। पुरस्कार एवं दण्ड पर आधारित कार्य व्यवस्था में जहां पुरस्कार के प्रति आकर्षण निश्चित ही किन्ही अंशों में अभिप्रेरण प्रस्तुत करता है लेकिन इसके विपरीत दण्ड संगठन के सदस्यों को उससे कहीं अधिक अंश में ऋणात्मक रूप से प्रभाव डालता हैं। नेतृत्व के प्रति आस्था एवं संगठन के लक्ष्यों के प्रति श्रद्धा की अपेक्षा का हास भी इस प्रक्रिया में होता है। संगठन में आम धारणा की दण्ड बिना प्रयास मिलता है एवं पुरस्कार के लिए कार्य के अलावा अन्य प्रयास भी करने होते हैं, संगठन के प्रति सदस्यों की भावनात्मक मूल्यों में क्षति कारक होती है। नेतृत्व की परिस्थितियों में जहां तनाव हीनता प्राथमिक आवश्यकता के रूप में निरूपित की जाती है। वहीं इसके विपरीत पुलिस संगठन की कार्य परिस्थितियों के मूल में ही विभिन्न प्रकार के तनाव संबंधी तत्व विद्यमान होते हैं। नेतृत्व के आधुनिक मानकों में उच्च स्तरों के प्रति सम्मान एवं लक्षयों के प्रति समग्रता वांछनीय मानी जाती है लेकिन पुलिस जैसे

संगठन में निहित उच्च अधिकारित्व का तत्व इन मानकों में स्वीकार्य नहीं माना जा सकता। वर्तमान समतावादी युग में सिर्फ रेंक या स्तर के आधार पर उच्च अधिकारित्व की स्थापना सहज स्वीकार्य नहीं होती जिसके परिणाम स्वरूप पुलिस जैसे संगठनों में आंतरिक विरोधाभास द्वंद एवं अनुशासन-हीनता की घटनाएं प्रकाश में आती है। सामान्यतः अनुशासन एवं संगठन की वर्दीधारी बल की प्रकृति के आधार पर इसे सही ठहराने का प्रयास किया जाता है, लेकिन नेतृत्व के स्तर पर तथा संगठन के लक्ष्य प्राप्ति मानकों के आधार पर इसमें सुधार के अपेक्षा प्रतीत होती है। कार्य विभाजन की दृष्टि से पुलिस संगठन अधिनियम, रेग्यूलेशन एवं अन्य आदेश परिपत्र आदि के माध्यम से कार्य विभाजन की स्थापना निर्धारित करता है लेकिन चुनौतीपूर्ण परिस्थितियां तथा विभिन्न घटना, दुर्घटना आदि के प्रति उत्तरदायित्व के स्तर पर विभाजन तथा निर्धारण का अभाव सर्वथा प्रतीत होता है। ऐसी परिस्थितियों में विभिन्न स्तरों पर नेतृत्व को ही उत्तरदाई माने जाने की परंपरा के कारण विशिष्ट लक्ष्यों के प्रति संगठन के प्रत्येक भाग का वांछित अभिप्रेरण स्थापित या प्रत्यक्ष नहीं हो पाता है जो कि विशिष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति में बाधक तत्व बनता हैं, इसका सीधा प्रभाव नेतृत्व कुशलता पर भी पड़ता है जहां नेतृत्व कहीं न कहीं भयभीत एवं नियति के भरोसे की स्थिति तक में प्रतीत होता है जो कि नेतृत्व की विकसित परम्परा की स्थापना को वाधित करता हैं, स्तरीकृत संगठनात्मक तंत्र कार्य विभाजन एवं विभिन्न लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सक्षम कारक माना जाता है तथा विभिन्न स्तरों से सूचना का आदान प्रदान एवं लक्ष्यों का संचालन प्रक्रिया को वैज्ञानिक रूप में स्थापित करता है। लेकिन इसके विपरीत जब स्तरीकृत व्यवस्था में एक ही प्रकृति के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न पर्यवेक्षक स्तर निर्धारित किए जाते है। तब कहीं न कहीं संचारगत विरोधाभास तथा लक्ष्यों के प्रति संनिष्ठा में एक रूपता एवं संगठन के विभिन्न प्रतिस्पर्धी लघु समूहों में विभक्त होने जैसी परिस्थितियाँ प्रकाश में आती हैं। कई प्रकरणों में तो संगठन का महत्वपूर्ण हिस्सा किसी स्तर के नेतृत्व के अधीन लक्ष्यों के प्रति न केवल दिग्भ्रमित होता है बल्कि कई प्रकरणों में आंतरिक तौर पर लक्ष्य प्राप्ति के विपरीत स्थितियां भी आंतरिक तौर पर निर्मित करता है। पुलिस नेतृत्व का मुख्य कार्य बिन्दु संगठन का आंतरिक नेतृत्व ही है, लेकिन पुलिस नेतृत्व को बाह्य सहयोगी एवं लक्ष्य समूह जनता के प्रति नेतृत्वशील होना होता है जो कि नेतृत्व की बाह्य परिस्थिति का निर्धारण करते हैं पुलिस के अनुसंगिक संगठन नगर सेना, सशस्त्र बल, विशेष पुलिस अधिकारी, ग्राम एवं नगर रक्षक आदि को विभिन्न परिस्थितियों में लक्ष्य प्राप्ति के लिए संलग्न किया

जाता है। यहां अल्पकालिकता तथा निर्धारित विशेष लक्ष्य एवं निर्धारित समयावधि के कारकों के साथ कार्य करना होता है। कई परिस्थितियों में आमजन समूह को भी लक्ष्य प्राप्ति के लिए मार्गदर्शित कर अग्रसर करना होता है। इस प्रकार की परिस्थितियाँ पुलिस नेतृत्व में वैविध्य पूर्ण क्षमता की अपेक्षा को रेखांकित करती हैं। इसके साथ ही पुलिस संगठन वैविध्यपूर्ण परिस्थितियों एवं चुनौतियों का सामना करता है तथा क्षेत्रीय दृष्टि से भी चुनौती क्षेत्र वैविध्यपूर्ण होते है जो कि अन्य संगठनों की अपेक्षा पुलिस नेतृत्व की अधिक सजगता एवं सफलता की अपेक्षा को अनिवार्य बनाते हैं, पुलिस संगठन में अवसर की समानता के अनुरूप तथा शासकीय नियम संचालन के अनुसार विभिन्न पृष्ठ भूमि से आए हुए सदस्यों का विभिन्न स्तरों पर चयन किया जाता है। विभिन्न शैक्षिक एवं सामाजिक पृष्ठ भूमि के कारण मान्यताओं एवं प्रतिमानों की वैविध्य पूर्ण स्थिति जहां लक्ष्य प्राप्ति के लिए एकरूपीय परिस्थिति के अभाव को रेखांकित करती है, वहीं आवश्यक योग्यताओं के स्तरीकृत विरोधाभास की स्थिति भी संगठन को कार्य उत्पादकता एवं लक्ष्य प्राप्ति के क्षेत्र में ऋणात्मक रूप से प्रभावित करती है।

इस प्रकार पुलिस संगठन की संरचनात्मक विशेषताएं नेतृत्व के आधुनिक प्रतिमानों के प्रति सुग्राहता की स्थिति स्थापित करने हेतु संस्थागत प्रयासों की अपेक्षा का वांछनीय होना रेखांकित करती है। संगठन के स्तर पर अपनी विशेषताओं को तथा अल्पताओं को समाहित करते हुए संगठन का नेतृत्व किस प्रकार प्रभावी कार्यशैली का विकास करें एवं किस प्रकार लक्ष्य प्राप्ति सुनिश्चित हो यह निर्धारण संगठन की उपलब्धि को एवं सार्थकता को स्थापित करते है।

पुलिस नेतृत्व : अवधारणा

नेतृत्व के संबंध में पूर्व सोच नेतृत्वकर्ता की दुर्लभ गुणों से युक्त किसी विशेष व्यक्ति या नायक के रूप में उसकी छवि को प्रस्तुत और स्थापित करती है। वहीं विपरीत इसके भविष्य का नेतृत्व प्रेरक समूह कार्य एवं सहभागिता के अभिप्रेरण के रूप में परिभाषित होता है। पुलिस का सकारात्मक नेतृत्व वर्तमान समाज एवं राज्य के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है। चूंकि पुलिस संगठन समाज एवं राष्ट्र की प्रत्येक जनता की अपेक्षाओं का कारण, होता है अतः सकारात्मक पुलिस नेतृत्व सीधे तौर पर समाज एवं राष्ट्र को प्रभावित करता है। संगठन के सभी सदस्य अपनी ऊर्जा का सार्थक दिशा में पूर्ण संनिष्ठा के साथ लक्ष्य प्राप्ति के लिए उपयोग करें यही नेतृत्व का प्रमुख लक्ष्य होता है। एक सफल नेतृत्वकर्ता

के लिए यह आवश्यक होता है कि वह अपनी व्यक्तिगत आवश्यकताओं एवं उपलब्धियों से अधिक विभाग के लक्ष्यों की पूर्ति को महत्व दे, पुलिस विभाग लक्ष्य प्रधान संगठन है तथा इस संगठन के लक्ष्य जनता से सीधे तौर पर जुड़े हुए है, न केवल जुड़े हुए है बल्कि जनता के मूर्त एवं मानवीय अधिकारों के अस्तित्व को प्रभावित करने वाले हैं, अतः ऐसे में युक्ति संगत पुलिस नेतृत्व के अभाव को समाज की न्यायपूर्ण परिस्थिति के ह्रास के रूप में देखा जा सकता है। पुलिस नेतृत्व की अवधारणा भी विभिन्न पुलिस संगठन इकाइयों की लक्ष्यों के प्रति अग्रसर होने की मात्रा एवं परिस्थिति तथा विविध इकाइयों के एक मनस टीम के रूप में कार्य एवं लक्ष्य निष्पादन के रूप में परिभाषित की जा सकती है। साधारण स्वरूप में पुलिस संगठन की ऊर्जा को लक्ष्योन्मुख करने तथा लगातार सार्थक दिशा में अग्रसर करने एवं संगठन में निर्धारित जन लक्ष्यों एवं जनहितों की प्राप्ति सुनिश्चित करने के लिए अभिप्रेरत संयोजनकर्ता एवं टीम निर्माण कर्ता की भूमिका सुनिश्चित करने की प्रक्रिया को पुलिस नेतृत्व कहा जा सकता है। पुलिस नेतृत्व की अवधारणा नेतृत्व के सामान्य सार्वभौम गुणों के साथ संगठन की अपेक्षाओं के अनुरूप नेतृत्वगुणों का विकास तथा संगठन के प्रत्येक सदस्य को नेतृत्व के तथा संगठन के लक्ष्यों के प्रति उन्मुख करने की कला के रूप में स्थापित होती है। पुरातनवादियों की सोच की पुलिस या फोर्स जैसे संगठनों में नेतृत्व का अधिकारवादी रवैया एवं आदेश निर्देश संबंधी एक तरफा संदेश प्रवाह की प्रक्रिया ही सफल है। ऐसे संगठनों में नेतृत्व की अवधारणा या आधुनिक सहकार एवं सहभागिता के विचार प्रभावी निष्पादन नहीं कर सकते हैं। इन विचारों का विश्लेषण शोध एवं केस स्टडी के माध्यम से किया गया तथा यह निष्कर्ष ही प्रतिपादित हुआ कि प्रजातांत्रिक सरकारों एवं विकेन्द्रिगत शासन व्यवस्थाओं में चूंकि जनता की सहभागिता हर स्तर पर प्रमुख रूप से स्वीकार की जाती है तथा शासन से लेकर सामाजिक जीवन के संचालन व्यवस्थाओं एवं विधि निर्माण आदि में जहां जन भागीदारी में सुनिश्चित की गई है। ऐसे कई उदाहरण है जहां जनता के द्वारा विद्रोह आंदोलन आदि के माध्यम से अपनी सहभागिता का सुनिश्यिपन भी किया गया है। ऐसी स्थिति में जनता से सीधे तौर पर तथा प्रत्येक पहलू से जुड़े पुलिस संगठन में सुधारवादी नेतृत्व की अवधारणा की स्थापना अनिवार्य हो जाती है। संगठन का स्वरूप जन भावना एवं जन अपेक्षा के अनुरुप निर्धारित किया जा सकता है तथा संगठन के आंतरिक स्वरूप एवं संगठन की आंतरिक प्रक्रिया एवं उसके नेतृत्व की अवधारणा निश्चित ही संगठन के लक्ष्य निर्धारण एवं उसके कार्य की प्रक्रिया में

प्रतिबिम्बित होती है। अतः इस लिहाज से भी नेतृत्व अवधारणा का विकासवादी विचार सार्थक प्रतीत होता है। ऐसे कई उदाहरण या केस स्टडी उपलब्ध है जहां पुलिस के किसी स्तर के नेतृत्वकर्ता ने अपनी भूमिका के माध्यम से अपने इकाई स्तर पर अमूलचूल परिवर्तन सुनिश्चित किए हैं तथा बेहतर परिणाम प्राप्त किए हैं। ऐसे कई उदाहरण भी प्रकाश में आए हैं जहां नेतृत्वकर्ता अपनी इकाई का चेहरा बन जाता है तथा इकाई में निहित दोषों का परिहार मात्र नेतृत्वकर्ता की व्यक्तिगत छवि के कारण संभव हो जाता है। पुलिस संगठन में इस प्रकार के परिणाम वृहद महत्व के होते हैं तथा राष्ट्र एवं समाज के लिए महत्वपूर्ण अवदान तक स्थापित करने में सक्षम होते हैं। सुदृढ़ तथा सकारात्मक पुलिस नेतृत्व से कई बार जनाक्रोश एवं जनधन की बड़ी हानि, बल्वा आदि को भी न्यून कर दिया जाता है। इस प्रकार अन्य संगठनों की अपेक्षा पुलिस संगठन में नेतृत्व की अवधारणा तथा नेतृत्व की सार्थकता का महत्व अधिक रूप में स्थापित होता है। पुलिस नेतृत्व विभिन्न केस स्टडी एवं प्रशिक्षण तथा नवाचार के माध्यम से प्रोत्साहित किया जा सकता है। इस संबंध में अंतर्राष्ट्रीय पुलिस प्रमुख संघ ने यह निष्कर्ष प्रतिपादित किया है कि गंभीरता पूर्वक प्रयास करके एवं इस दिशा में प्रतिबद्ध होकर उत्कृष्ट नेतृत्वकर्ता के रूप में नेतृत्वकर्ता अपने आपको स्थापित कर सकता है। श्रेष्ठ नेतृत्वकर्ता सर्वश्रेष्ठ अनुगामी हो यह भी आवश्यक है। नेतृत्वशीलता का विकास लम्बी एवं सतत प्रक्रिया है जो कि सतत प्रयासों से प्राप्त की जा सकती है।

पुलिस विभाग का नेतृत्व स्थिति एवं स्तर के आधार पर संगठित होता है तथा मुख्य रूप से चार स्तर का नेतृत्व पुलिस संगठन में विद्यमान होता है।

1. प्रथम स्तर

यह लघु इकाई नेतृत्व है जो कि समस्या निवारण तथा आधारभूत कार्य निष्पादन के प्रति उत्तरदाई है यहां लघुकालिक लक्ष्यों की प्रधानता तथा नीति या प्रक्रिया के निर्धारण के संबंध में अल्प अधिकारिता प्रमुख विशेषताएं होती हैं साथ ही इस प्रकार की नेतृत्व इकाई जनता से प्रत्यक्ष संपर्क तथा संगठन के सभी लक्ष्यों के प्रति आधारित कार्यपालिक होने से संगठन में इस स्तर की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण होती है। किसी भी परिस्थिति में प्राथमिक उपलब्धता तथा प्राथमिक एकशन इसी स्तर के द्वारा किए जाने से भी इस स्तर के नेतृत्व की भूमिका आधारभूत सिद्ध होती है। इस स्तर पर उच्च अधिकारित्व का अत्यधिक दबाव तथा गुण दोषों के आधार पर उच्च स्तरीय समीक्षा निर्णय क्षमता को प्रभावित

करती है। तथा दण्ड का भय इस स्तर पर अत्यधिक कारगर होकर जहां एक ओर उत्तरदायित्व की भावना में वृद्धि करता है वहीं दूसरी ओर आत्मविश्वास को कम करने का कार्य भी करता है। इस स्तर पर टीम भावना का विकास तथा संचार कौशल अत्यधिक आवश्यक होते हैं। नेतृत्व की विश्वसनीयता उच्च एवं निम्न दोनों स्तरों पर स्थापित करना प्राथमिक स्तर के नेतृत्व के लिए सर्वाधिक चुनौती पूर्ण कार्य होता है। सामान्यतः पुलिस थाना चौकी एवं रणनीतिक लघु समुहों के नेतृत्व को प्राथमिक स्तर के नेतृत्व के रूप में देखा जा सकता है।

2. द्वितीय स्तर

पुलिस संगठन में द्वितीय स्तर को मध्यम स्तरीय नेतृत्व के रूप में भी जाना जाता है यहां नेतृत्व की चुनौती अपने आप को स्थापित करने की प्रमुख रूप से होती है, नेतृत्व प्राथमिक एवं तृतीय स्तर के बीच सामन्जस स्थापित करना होता है वहीं उच्च स्तरीय निर्देश एवं संदेशों का पूर्णता में प्रसार करना तथा पर्यवेक्षण एवं मार्ग दर्शन में उनका पालन कराना आवश्यक होता है। इस स्तर पर निर्णयन एवं कार्यपालन दोनों ही श्रेणियों की पूर्णता का अभाव द्वितीय स्तर के नेतृत्व की कार्यकुशलता एवं कार्य संबंधी अनुभव ज्ञान आदि की आवश्यकता में वृद्धि करता है। इस स्तर पर नेतृत्व अपनी कुशलता एवं प्रभाव के आधार पर ही प्राधिकरण को सार्थक रूप में स्थापित कर सकता है। इस स्तर पर कार्य कुशलता श्रेष्ठ प्रशिक्षक, मार्ग दर्शक एवं कौशलयुक्त व्यक्तित्व नेतृत्व के लिए वांछनीय होता है।

3. तृतीय स्तर

यह स्तर सांगठनिक नेतृत्व का स्तर है। इस स्तर पर संगठनात्मक शक्तियां तथा प्राधिकार के प्रभाव का आधिक्य प्रभावी होता है। संगठन की रणनीति कार्य योजना तथा लक्ष्यों के परिचालन के दिशा में तृतीय स्तर अत्यधिक प्रभावशाली है। इस स्तर पर नेतृत्व की विचारशीलता मूल्यांकन एवं विश्लेषण की क्षमताओं का सराहनीय प्रदर्शन अपेक्षित होता है। संगठन से भावनात्मक जुड़ाव तथा निहित पुरस्कार एवं दण्ड की शक्तियों का युक्तिसंगत प्रयोग तथा विपरीत परिस्थितियों में संगठन के विभिन्न स्तरों की सुरक्षा एवं उनमें आत्म विश्वास का संचार इस स्तर की प्रमुख चुनौती होती है। तृतीय स्तर का नेतृत्व बेहतर रणनीति एवं स्पष्ट निर्देशों के माध्यम से संगठन के लक्ष्य प्राप्ति को आसान बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

4. चतुर्थ स्तर

इस स्तर के नेतृत्व को नीति निर्धारक स्तर कहा जाता है संगठन के संबंध में नियम तथा संगठन की रूप रेखा तैयार करना पत्र परिपत्र एवं निर्देशों के माध्यम से संगठन की दिशा निर्धारित करना इस स्तर के नेतृत्व का प्राथमिक दायित्व होता है संगठन के वांछनीय संसाधनों की उपलब्धता आवश्यकता पर विश्लेषण एवं विचार विमर्श तथा अपरिहार्य एवं जटिल परिस्थितियों में विभिन्न स्तरों को मार्गदर्शन एवं सहयोग के माध्यम से संगठन की आत्मविश्वास एवं मोराल में वृद्धि इस स्तर के द्वारा की जाती है। दण्ड एवं पुरस्कार संबंधी वृहद एवं अपीलीय अधिकारों का युक्तिसंगत उपयोग संगठन के निचले स्तरों को इस स्तर के प्रति आस्थावान बनाते है। संगठन की कार्य विधि की रेखा का निर्धारण तथा संगठन एवं सत्ता के मध्य सामन्जस्य एवं संदेशों, भावनाओं एवं आवश्यकताओं के आदान प्रदान के द्वारा यह स्तर पुलिस संगठन के उच्चतम स्तर के रूप में अत्यधिक प्रभावी होता है। हित संरक्षा, निष्पक्षता, अवसरों की समानता की स्थापना इस स्तर के लिए प्रमुख चुनौती होती है।

पुलिस संगठन के स्तरीकरण के अनुरूप विभिन्न स्तरों के नेतृत्व में विविध विशेषताएं अपेक्षित होती है तथा कार्य की प्रगति एवं वैविध्य पूर्ण परिस्थितियों में उक्त विशेषताएं भी परिवर्तनशील होती है अतः पुलिस नेतृत्व बहुमुखी तथा वैविध्य पूर्ण विशेषताओं की अपेक्षा नेतृत्वकर्ता से करता है। वर्तमान परिस्थितियों एवं अपेक्षाओं के मद्देनजर पुलिस नेतृत्व में 'सहभागी नेतृत्व' की अवधारणा का विकास हो रहा है।

सहभागी नेतृत्व

पुलिस नेतृत्व शैली संगठन एवं उसके प्रत्येक सदस्य की कार्य में सहभागिता एवं सहयोग के प्रोत्साहन के आधार पर निर्धारित होती है, जहां पूर्व में पुलिस नेतृत्व शैली नेतृत्व की व्यक्तिगत कौशल बुद्धिमत्ता, साहस के इर्द गिर्द व्याख्यायित एवं परिभाषित की जाती थी वहीं आधुनिक तौर पर यह बहुमुखी प्रकृति के समूह कार्य, सर्वसमाहन तथा विकेन्द्रिगत नेतृत्व के रूप में व्याख्यायित्व एवं परिभाषित होती है। पुलिस नेतृत्व के परिवर्तन की प्रकृति मानवीय विकास के अन्य क्षेत्रों के समानुरूप परिवर्तन की दिशा निरूपित करती है। सहभागी नेतृत्व, की अवधारणा प्रशासन एवं प्रबंधन की ऐसी प्रक्रिया का निर्धारण करता है, जो कि शक्ति कार्य एवं प्रभाव का संगठन के सदस्यों या टीम के बीच वितरण करके लक्ष्य प्राप्ति की सफलता निर्धारित करता है।

सामान्यतः जो सदस्य उच्च एवं निम्न स्तर तथा अधिकारित्व की भावना में सीमित होते हैं। वे इस प्रक्रिया में नेतृत्व के सहभागी के रूप में कार्य करते है। यहां नेतृत्व वृहत तौर पर सहकर्मियों के बीच विभाजित होकर सहभागिता सुनिश्चित करता है न कि एक या कुछ अधिकारियों में सीमित रूप से निहित होता है। इस प्रकार वितरित नेतृत्व प्रक्रिया पुलिस जैसे कानून व्यवस्था संबंधी संगठन में अधिकाधिक तौर पर प्रयुक्त नहीं की जाती है तथा इस विषय में पारंपरिक सोंच पुलिस संगठन में इस प्रकार की प्रक्रिया की सफलता को संदेह की दृष्टि से देखता है। जबकि अध्ययन, अनुभव एवं केस स्टडी से यह प्रमाणित रूप से स्थापित तथ्य है कि इस प्रकार की प्रक्रिया पुलिस संगठन में समुदाय या जनोन्मुखी, बुद्धिमत्ता पूर्ण पुलिसिंग,के प्रति संगठन का अनुकूलन बनाती है तथा संगठन के प्रत्येक स्तर के सशक्तिकरण के साथ ही संगठन के स्वशासीकरण को भी मजबूत दिशा प्रदान करती है। बी.ए.पी.डी. पुलिस संगठन जो कि उपनगरी लघु पुलिस संगठन है जिसमें 165 सदस्य शामिल हैं, यह उत्तर पूर्वी ओकलाहोमा में है। यहां इस दिशा में प्रयोग करते हुए संगठन के स्वरूप को प्रतिभागी तथा सहभागी नेतृत्व सुनिश्चित करने के लिए अंतर कार्य, सदस्य समिति बनाई गई हैं तथा इसके उपरांत संगठन की लक्ष्य निष्पादन का अध्ययन किया गया। बी. ए. पी. डी. केस स्टडी यह प्रदर्शित करती है कि सहभागी नेतृत्व प्रक्रिया संगठन के सदस्यों की संगठन के प्रति आस्था, गर्व, मोराल, अभिप्रेरण, कार्य उत्पादकता, नेतृत्व विकास, एवं सामुदायिक पुलिसिंग प्रयासों की स्वीकार्यता में वृद्धि करती है। केस स्टडी सहभागी नेतृत्व के माध्यम से संगठन नेतृत्व एवं सदस्यों वरिष्ठ एवं कनिष्ठ अधिकारियों के बीच के अंतर या दूरी के बीच सेतू निर्माण के कार्य का प्रमाणन भी स्थापित करती है। बी.ए.पी.डी. केस स्टडी से यह निष्कर्ष भी समर्थन प्राप्त करता है कि पुलिस जैसे कानून व्यवस्था संबंधी एवं कानून पालन संबंधी संगठन में सहभागी नेतृत्व का धनात्मक प्रभाव है। सहभागी नेतृत्व को तीन प्रकारों में विभक्त किया जा सकता है। तीनों प्रकारों के अपने लाभ आवश्यकताएं एवं निर्धारक तत्व हैं।

सहभागी नेतृत्व प्रक्रिया के तीन स्तर

सहभागी नेतृत्व के जनतांत्रिक कार्य स्थल प्रबंधन पर केन्द्रित होती है। सदस्यों के निर्णय निर्माण में सहभागिता की स्तर,सदस्यों के संगठन के कार्य विधि पर प्रभाव एवं सहभागिता का आधार के अनुरूप इस प्रक्रिया को तीन स्तरों में विभाजित किया जाता है :

1. सुझाव सहभागिता
2. कार्य सहभागिता
3. उच्च सहभागिता

1. *सुझाव सहभागिता* : इस प्रक्रिया में कर्मचारियों एवं सदस्यों को सूचना एवं सुझाव के वृहद अवसर प्रदान किए जाते हैं, सुझाव देने की स्वतंत्रता के साथ ही निर्णयन शक्ति को वितरित या विकेद्रीकृत नहीं किया जाता हैं। यहां संगठन में स्वतंत्रता पूर्वक विचारों का आदान प्रदान प्रत्येक स्तर पर संभव होता है, यहां संगठन के विभिन्न स्तरों के मध्य अधिकारित्व भावना के स्थान पर सामन्जस्यपूर्ण वातावरण की प्रधानता के साथ ही उच्च स्तर का पर्यवेक्षण औपचारिक रूप में होता है तथा आंतरिक संचार अपेक्षाकृत खुले रूप में संभव होता है। इस प्रकार की नेतृत्व प्रक्रिया प्रयोग तथा व्यक्तिगत, सामूहिक एवं संगठन के स्तर पर प्रशिक्षण को प्रोत्साहित किया जाता है। इस प्रकार के संगठन जहां सुझाव की स्वतंत्रता प्रत्येक स्तर पर होती है, वहीं नवाचार, कार्य उत्पादकता, कार्य संतुष्टि, की भावना अधिक होती है, वहीं इस प्रकार के तंत्र में कर्मचारियों की अनुपस्थिति भी अपेक्षा कृत कम होती है।

सुझाव सहभागी नेतृत्व प्रक्रिया सामान्यतः सरल प्रतीत होती है, खासकर प्रशासक या उच्च स्तर की दृष्टि से क्योंकि इसमें वास्तविक निर्णय शक्ति वरिष्ठ स्तर पर ही समाहित होती है तथा संगठनात्मक शक्तियों का विभाजन भी नहीं किया जाता तथा सामान्य रूप से एक खुले वातावरण का निर्माण भी संगठन में आंतरिक तौर पर हो जाता है। यह प्रक्रिया सिद्धांततः संचार एवं सुझाव की खुली प्रक्रिया एवं अवसर को महत्ता देती है तथा प्रत्येक स्तर से प्राप्त श्रेष्ठ सुझाव एवं सूचनाओं के कार्यरूप में परिणति के अवसर भी उपलब्ध कराती है। वास्तविक रूप में सुझाव सहभागी नेतृत्व की स्थापना अत्यधिक आसान नहीं होती है। खासकर पुलिस जैसे संगठनों में जहां वरिष्ठ, मध्यम एवं कनिष्ठ पर्यवेक्षण स्तर पर कमांड और कंट्रोल की पुरानी परम्परा है तथा संगठन के सभी लोग इसके लिए अभ्यस्त भी हैं। पुलिस के पारम्परिक नेतृत्वकर्ता इस प्रकार की प्रक्रिया को श्रेयस्कर नहीं होना बताते एवं सिद्ध करते हैं। सक्षम अंर्तवैयक्तिक संचार, सुझाव प्रशिक्षण, व्यवस्थापन्न, संयोजन, मेन्टीरिंग एवं सहभागी निर्णयन, आदि वे कौशल हैं जिन्हें पुलिस जैसे संगठन में आसानी से स्वीकार्य नहीं किया जाता है। यह स्थिति कहीं न कहीं संगठन में सुधार एवं सदस्यों के आत्मविश्वास में बाधक होती है। पुलिस संगठन सामान्यतः विकासशील विचारधाराओं को स्वीकार करने वाला एवं विभिन्न कौशलों की उपयोगिता को स्वीकार कर शामिल करने वाले संगठन के तौर पर विकसित नहीं होने का भी यह एक मुख्य कारण है। पुलिस

विभाग में विविध समरूप एवं अन्य संगठनों से अंतर्संगठन संचार नहीं होना भी इस प्रकार के अवरोध का मुख्य कारण है। द्विपक्षीय संचार व्यवस्था, कर्मचारियों के सुझावों को महत्ता दिया जाना तथा श्रेष्ठ सुझावों पर कार्य किया जाना,सूचना के आदान प्रदान की व्यवस्था सुनिश्चित करना वे माध्यम हो सकते हे। जिनसे इस दिशा में अच्छे परिणाम प्राप्त किए जा सकते है। संगठन के अंदर औपचारिक समितियों आदि का निर्माण जहां सूचनाओं का आदान प्रदान तथा उन पर फीडवैक की व्यवस्था हो , नियमित आंतरिक तथा अंतर कार्य इकाइयों की मीटिंग जिनमें की कार्य सुधार लक्ष्य आदि पर खुला विचना विमर्श हो सके, समस्या निवारण के संबंध में तथा कार्य प्रक्रिया के विकास के संबंध में परिचर्चा, औपचारिक सुझाव व्यवस्था, के माध्यम से सुझाव सहभागिता को प्रभावी बनाया जा सकता है। आधुनिक संचार एवं इलेक्ट्रोनिक माध्यमों से सूचनाओं का आदान-प्रदान तथा कर्मचारियों के श्रेष्ठ सुझावों एवं नवाचारों का प्रकाशन किया जाकर न केवल उत्साहवर्धन किया जा सकता है तथा संगठन के प्रति निष्ठा में भी वृद्धि की जा सकती है। इस प्रकार संस्थागत सुधारों से कर्मचारियों की संगठन संबंधी मूल्य एवं संगठन में प्रतिभागिता की भावना, तथा नवाचार एवं संगठन के लक्ष्यों के प्रति प्रतिबद्धता की स्थापना भी संभव होती है।

औपचारिक तथा संरचनात्मक सुधारों के साथ ही गंभीर प्रशिक्षण इस दिशा में अत्यधिक महत्वपूर्ण तत्व है। संगठन के मानवीय संसाधन को इस दिशा में लगातार कुशलता पूर्वक प्रशिक्षित किया जाकर सुझाव सहभागिता का विकास सरल हो जाता है। पुलिस संगठन में आधुनिक पद्धतियों पर प्रशिक्षण, संचार कौशल, समस्या निवारण, काचिंग, मेन्टरिंग आदि के प्रशिक्षण हेतु कोर्स तैयार कर जिसमें इन विषयों पर केस स्टडी, रोल प्ले, आदि का समावेश हो तथा प्रशिक्षण के दौरान विभिन्न परिस्थितियों में इनके उपयोग कैसे किया जाए इस संबंध में परिस्थिति निर्माण एवं समाधान को भी शमिल किया जाए तो बेहतर परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं।

सुझाव सहभागी नेतृत्व प्रक्रिया पुलिस विभाग के लिए प्रभावी तथा कम खतरे वाली पद्धति साबित हो सकती है। पुलिस के नियमित कार्य प्रक्रिया में कर्मचारियों को संगठन के प्रति अधिक महत्वपूर्ण होने का आत्मविश्वास तथा गौरव इस पद्धति की निहित विशेषताएं हैं, जो उनकी कार्यक्षमता एवं अभिरुचि में अभूतपूर्व वृद्धि कर सकती हैं। संगठन के कार्यों के प्रति स्वउत्तरदायित्व की भावना के विकास के साथ ही इस पद्धति के माध्यम से विभाग के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण अनुभवी सुझाव एवं सूचनाएं भी इस पद्धति से प्राप्त की जा सकती हैं। यह पद्धति पुलिस विभाग में

अंतर्वैयक्तिक तनाव प्रबंधन में भी प्रभावी भूमिका का भी निर्वाहन कर सकती है।

2. *कार्य सहभागी* : कार्य सहभागिता पद्धति, सुझाव सहभागी पद्धति से आगे निश्चित अंशों में स्वयत्तता की स्थिति का निर्धारण करती है। संगठन द्वारा सीमित अंशों में निर्धारित एवं नियमित रूप से तथा विशेष कार्य गुणवत्ता संबंधी कार्य के लिए गुणवत्ता समूहों को स्वतंत्र किया जाता है। यहां संगठन के मूल लक्ष्यों की प्रभावित किए बिना, परिणाम आधारित स्वायत्तता निर्धारित की जाती है। यह पद्धति लघु इकाइयों में कारगर होती है जहां सुझाव सूचना के साथ निर्णयन में भी कर्मचारियों की सहभागिता बेहतर परिणाम प्रदान करती है। कर्मचारी नियमित सूचनाओं, सुझावों का आदान-प्रदान, कार्य के तौर-तरीके, प्रशिक्षण, समस्या निवारण, कार्य प्रक्रिया के सुधार, सेवा प्रदाय, तथा यहां तक की इकाई स्तर की रणनीतिक योजना बनाने में भी सहभागिता सुनिश्चित कर सकते हैं। सुझाव सहभागी पद्धति की तरह कार्य सहभागी पद्धति में भी अत्यधिक जोखिम कारक प्रभावी नहीं होती है क्योंकि शक्ति एवं निर्णयन का वितरण सीमित होता है तथा अंतिम स्तर की रणनीति एवं निर्णयन प्रबंधन या प्रशासन के द्वारा ही किया जाता है, यहां प्रशासन अधिकारों एवं निर्णयन संबंधी नियम भी निर्धारित कर सकता है। जिनके वितरण से संगठन एवं प्रशासन सहज रूप में स्वायत्त समूहों को शक्ति का वितरण कर सके, इस पद्धति में कर्मचारी स्थानीय कार्य एवं परिस्थतियों के प्रति एक नियंत्रण की भावना से ओत-प्रोत होता है तथा संगठन एवं कार्य के प्रति सर्वेसर्वा होने की भावना भी उसमें व्याप्त होती है। जिसके परिणाम स्वरूप अत्यधिक अभिप्रेरण, संचार, नवाचार की भावना, तथा अत्यधिक आत्मविश्वास उसकी क्षमता में अभूतपूर्व वृद्धि करता है। कार्य सहभागी नेतृत्व प्रक्रिया के संबंध में बी.ए.पी.डी. यातायात इकाई ने प्रयोग किया जिसमें यातायात के कर्मचारियों को दीर्घकालीन रणनीति बनाने का अवसर प्रदान किया गया जिसमें कि समुदाय को यातायात संबंधी तथ्यों से अवगत कराया जा सके तथा यातायात इकाई का विकास किया जा सके। इस प्रक्रिया में प्रत्येक स्तर के कर्मचारियों को सहभागी बनाया गया। इसका परिणाम बी.ए.पी.डी. ट्रेफिक यूनिट को एक वृहद तथा दीर्घकालीन योजना के रूप में मिला जिसमें की कार्य का समय, कार्य वितरण, इकाई की रणनीति, प्रशिक्षण, उपकरणों की आवश्यकता, स्टॉफ की पाली वितरण व्यवस्था तथा इकाई की दीर्घ कालीन व्यवस्था के संबंध में वृहद योजना का समावेश था। इस प्रकार कार्य सहभागी पद्धति लघु इकाई, विशेष कार्य इकाई एवं सीमित लक्ष्य प्राप्ति में कारगर पद्धति हो सकती है। इसमें पर्यवेक्षण एवं निर्देश न्यूनतम स्तर पर समाहित होते हैं वहीं लक्ष्य एवं परिणाम को प्राथमिकता दी जाती है। यह पद्धति सुझाव सहभागिता

के तत्वों को सीमित परिधि में समावेश करते हुए स्वात्तता की स्थापना पर बल देती है। पुलिस जैसे संगठन में संस्थागत तौर पर कार्य सहभागी व्यवस्था के अनुरूप परिस्थिति वाले अवसर अल्प माने जाते है। सामान्यतः कानून व्यवस्थापन एवं संबंधी रणनीति में चूक की भरपाई संभव नहीं होती या दूसरे शब्दों में समाज के लिए हानिकारक होती है अतः ऐसी परिस्थितियों में संगठन कार्य विभाजन पद्धति जैसे विकल्पों की उपेक्षा करता है। लेकिन प्रभावी प्रक्रिया होने लघु लक्ष्यों की प्राप्ति में समय संसाधन एवं अच्छे परिणामों की दृष्टि से इसका उपयोग किया जा सकता है। अकादमिक, योजना संबंधी, प्रशिक्षण, मानव संसाधन संबंधी लक्ष्यों के लिए इस प्रक्रिया का निर्धारण सुनिश्चित किया जा सकता है। अपरिहार्य परिस्थितियों एवं तात्कालिकता की स्थितियों में भी यह पद्धति कारगर हो सकती है।

3. *उच्च सहभागिता* : सहभागी नेतृत्व का आधुनिकतम तथा सर्वाधिक जोखिमपूर्ण स्वरूप इस पद्धति को कहा जा सकता है। यहां सुझाव सहभागिता एवं कार्य सहभागिता संबंधी सभी विशेषताओं को समाहित किया जाता है। उच्च सहभागी समूह में कर्मचारी शक्ति सूचना, मानव संसाधन विकास संबंधी प्रक्रिया, टास्क फोर्स या नीति निर्धारण समूह जो कि रणनीतिक निर्णय लेने में सक्षम होते हैं, की व्यवस्था सुनिश्चित करता है। उच्च सहभागिता पद्धति सामान्यतः शासकीय, अशासकीय संगठनों में अत्यधिक उपयोग में नहीं लाई जाती है तथा इसे जोखिमपूर्ण पद्धति के रूप में निरूपित किया जाता है। इसके साथ ही यह तथ्य भी प्रामाणिक है कि इस पद्धति के युक्ति संगत प्रयोग से अत्यधिक अप्रत्याशित परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। कर्मचारियों की वृहद निष्ठा, संगठन के प्रति सदस्यों का प्रत्येक परिस्थिति में हितसाधक व्यवहार, संगठन का बेहतर सकारात्मक सहयोग, वृहद उत्पादकता, उच्च कार्य संतुष्टि स्तर, निम्न अनुपस्थिति, प्रबंधन एवं कर्मचारियों के बेहतर अंतः संबंध एवं प्रभावी समग्र, सांगठनिक, कार्य उत्पादकता, आदि को इस पद्धति के माध्यम से सार्थक किया जा सकता है।

बी.ए.पी.डी. नेतृत्व समूह उच्च सहभागी नेतृत्व समूह के रूप में कार्य करता है, यह समूह संगठन के नीति निर्धारण के स्तर पर कार्य करता है। इस समूह के 12 सदस्य अपने रैंक से परे मिलकर वृहद स्तर पर संगठन से संबंधित निर्णय निर्धारित करते हैं। इस समूह की संरचना भी सहभागी नेतृत्व पद्धति का प्रतिनिधित्व करती है। जिसमें कर्मचारियों के द्वारा चुने गए सदस्य, अधिकारी स्तर पर निर्धारित किए गए सदस्य एवं पुलिस यूनियन के स्तर पर निर्धारित सदस्य शामिल होते हैं। जो कि इस समूह में अपने सहकमियों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

अधिकांशतः यह सदस्य विविध डिविजन, इकाई, विविध कार्यों से संबंधित प्रतिनिधित्व इस समूह में करते है। इस समूह के प्रत्येक सदस्य को समान मताधिकार प्राप्त होता है तथा कोई भी निर्णय करने के लिए समूह की दो तिहाई बहुमत वांछनीय होती है। यह समूह नियम बनाने प्रक्रिया निर्धारित करने तथा नीति संबंधी मामलों में बाध्यकारी निर्णय लेने में सक्षम एवं स्वायत्त होता है। कार्य परिस्थितियां, कार्य परिवेश एवं रणनीतिक मामले भी समूह के द्वारा निर्धारित किए जाते हैं। उच्च सहभागी पद्धति बी.ए.पी.डी. लीडरशिप टीम में संगठन प्रमुख को नेतृत्व समूह के समक्ष प्रस्तुत होने वाले एवं निर्धारित किए जाने वाले मामलों, में यह निर्धारित करने की शक्ति प्राप्त है कि मामला नेतृत्व टीम के द्वारा निर्धारण योग्य है या नहीं। साथ ही समूह को विशेष व्यक्तिगत मामलों कानूनी तथा संरचना संबंधी प्रावधानों आदि में निर्णय लेने के लिए सीमित कारकों का निर्धारण भी किया गया है। इस प्रकार उच्च सहभागिता पद्धति का परिष्कृत स्वरूप बी.ए.पी.डी. द्वारा ग्राहय किया गया है।

उच्च सहभागी नेतृत्व प्रक्रिया जहां संगठन के सदस्यों एवं कर्मचारियों में स्वामित्त की भावना तथा उच्च श्रेणी का आत्मविश्वास स्थापित करती है, वहीं प्रबंधन के जोखिम कारक की विद्यमानता अवरोधकारक के रूप में उपस्थित होती है। पुलिस विभाग में उच्च सहभागी नेतृत्व समूह की स्थापना तथा कार्य रूप परिणति, विरले मामलों में ही प्रकाश में आई है। परिस्थिति, लक्ष्य, एवं उपयोगिता के आधार पर इसका प्रभावी प्रयोग पुलिस विभाग के लिए भी सार्थक सिद्ध हो सकता है।

ओकलाहोमा पुलिस कांफ्रेस में सहभागी नेतृत्व के संबंध में पुलिस प्रमुखों के अभिमत के संबंध में विचार किया गया तथा बी.ए.पी.डी. मॉडल एवं केस स्टडी तथा गुण दोषों के आधार पर चर्चा परिचर्चा उपरांत मत जाने गए। उपस्थित सदस्यों से प्रश्नोत्तरी के आधार पर मत विभाजन कर विभिन्न अभिमत ज्ञात किए गए। यहां शामिल सदस्यों की औसत आयु 47 वर्ष, जिनमें पुरुष सदस्य 94 प्रतिशत, स्नातक स्तर की डिग्रीधारी 54 प्रतिशत, अपनी इकाई के कार्यपालिक प्रमुख 70 प्रतिशत,अपनी स्थिति में न्यूनतम पिछले 02 वर्षों से कार्यरत 55 प्रतिशत, गत 20 वर्षों से कानून व्यवस्थापन्न डयूटी से संबंद्ध 68 प्रतिशत रहे। कॉन्फ्रेस की शुरुआत में जहां 54 प्रतिशत लोगों ने सहभागी नेतृत्व के बारे में जानकारी होना तथा इसे कमजोर एवं अप्रभावी बताया था वहीं कान्फ्रेस के दौरान 86 प्रतिशत पुलिस प्रमुखों ने कानून पालन कराने वाली एजेंसी पुलिस में सहभागी नेतृत्व को प्रभावी तथा उपयोगी बताया। 50 प्रतिशत सदस्यों ने पूर्व से

ही सहभागी नेतृत्व की प्रक्रिया के उपयोग किए जाने की बात स्वीकार की। कान्फ्रेस के समापन पर जब बी.ए.पी.डी. केस स्टडी पर परिचर्चा तथा उपस्थित सभी स्तर के सदस्यों से विचार विमर्श पूर्ण किया जा चुका था, 96 प्रतिशत लोगों ने सहभागी नेतृत्व की सार्थकता को स्वीकार किया। यद्यपि लगभग सभी प्रमुखों ने सहभागी नेतृत्व को पुलिस के लिए सार्थक स्वीकार किया तथापि कर्मचारी सहभागिता के स्तर के संबंध में कुछ मतभेद प्रकाश में आए। 24 प्रतिशत सदस्यों का मत था कि नीति निर्माण स्तर पर उच्च सहभागिता बेहतर विकल्प है जबकि 40 प्रतिशत ने कार्य सहभागिता को उर्पयुक्त माना 32 प्रतिशत सदस्यों ने सुझाव सहभागिता को उत्कृष्ट मॉडल स्वीकार किया। शेष 4 प्रतिशत सदस्यों ने पारम्परिक प्रबंधन को ही श्रेयस्कर बताने का प्रयास किया। साथ ही 54 प्रतिशत सदस्यों को सहभागी नेतृत्व के माध्यम से प्रबंधन के अधिकारों के हास की चिंता रही।सर्वे में जहां अधिक आयु वाले सदस्यों का सहभागिता के प्रति मत कम धनात्मक था वहीं कम आयु वाले सदस्यों ने अधिक रुचि पूर्ण तरीके से विचारधारा को स्वीकार किया। इसी प्रकार अधिक शिक्षित सदस्यों का अभिमत विचारधारा के प्रति अधिक धनात्मक रहा, इस प्रकार अपेक्षाकृत युवा एवं अधिक शिक्षित सदस्यों ने सहभागी नेतृत्व प्रक्रिया की सार्थकता को अपेक्षाकृत,सार्थक दृष्टिकोण अपनाते हुए, सहभागिता एवं कर्मचारी के अधिकार हस्तांतरण के प्रति व्यावहारिक सोंच का प्रदर्शन किया।

इसी प्रकार सामूदायिक पुलिसिंग एवं सहभागी नेतृत्व विचारधारा के बीच समानुपातिक, सहसंबंधों का प्रतिपादन हुआ, सामूदायिक पुलिसिंग उपयोग एवं पसंद करने वाले अधिकांश सदस्यों ने सुदृढ़ तरीके से सहभागी प्रबंधन शैली एवं उच्च सहभागिता को स्वीकृति प्रदान की। विश्लेषण के दौरान सामुदायिक पुलिसिंग, सहभागी नेतृत्व, अधिकारियों के मोराल के सहसंबंध के बारे में भी निष्कर्ष प्रतिपादित हुआ, जहां सामुदायिक पुलिसिंग अभ्यास में होना तथा सहभागी नेतृत्व नहीं होना पाया गया वहां अधिकारियों का मोराल निम्न स्तरीय प्रकाशित हुआ इसी प्रकार जिन इकाइयों में सहभागी नेतृत्व किसी भी स्तर पर उपयोग किए जाने लेकिन सामुदायिक पुलिसिंग उपयोग नहीं किए जाने की बात रखी वहां भी अधिकारी मोराल 'आत्म विश्वास एवं संतुष्टि का स्तर' निम्न पाया गया। इस प्रकार सहभागी नेतृत्व का सार्थक प्रयोग उस स्थिति में अधिक परिणाम उत्पादक होता है, जहां इकाई के स्तर पर जनतंत्रीय व्यवस्था के साथ ही कार्यों में सामुदायिक संलग्नता भी स्थापित होती है।

संसाधनगत अल्पता एवं निवारण : पुलिस संगठन खासकर भारत जैसे

विकासशील देशों में लगातार मानवीय एवं उपकरणगत अल्पता से जूझता है। आधुनिकीकरण एवं संसाधन वृद्धि होती है। लेकिन तब तक आवश्यकताओं में उससे अधिक वृद्धि दर्ज हो जाती है, इस प्रकार आवश्यकता का स्तर कम नहीं हो पाता है। अखिल भारतीय स्तर पर विभिन्न राज्यों की पुलिस की कुल स्वीकृत बल की संख्या जनवरी 2011 की स्थिति में 20.6 लाख है। इस प्रकार प्रति 1 लाख जनसंख्या पर भारत वर्ष में 174 का पुलिस बल कार्य करता है। जो कि यह संख्या अपने आप में अन्य देशों की तुलना में एवं आवश्यकता की दृष्टि से अत्यल्प है। इसके साथ ही स्थिति ओर चिन्तनीय हो जाती है कि इनमें भी औसतन 24 प्रतिशत पद रिक्त हैं। नीचे तालिका में विभिन्न राज्यों की कुल स्वीकृत बल संख्या तथा प्रति 1 लाख जनसंख्या पर पुलिस की स्वीकृत संख्या एवं उनमें रिक्त पदों का प्रतिशत दर्शाया गया है।

	स्वीकृत बल संख्या	**प्रति लाख जनसंख्या पर स्वीकृत पुलिस बल**	**रिक्ति का प्रतिशत**
1. आंध्रप्रदेश	131099	155	31 प्रति.
2. अरूणाचल प्रदेश	11955	966	42
3. असम	62149	200	2
4. बिहार	85939	88	27
5. छत्तीसगढ	50869	207	18
6. गोवा	6108	348	16
7. गुजरात	87877	151	27
8. हरियाण	61307	248	28
9. हिमाचल प्रदेश	17187	256	22
10 जम्मू कमीर	77464	575	6
11. झारखंड	73005	235	30
12. कर्नाटक	91256	155	10
13. केरल	49394	141	07
14. मध्यप्रदेश	83524	115	09
15. महाराष्ट्र	153148	139	10
16 मणिपुर	31081	1147	26
17. मेघालय	12268	469	17
18. मिजोरम	11246	1112	06
19. नागालैंड	24226	1073	00

20 उडीसा	53291	130	18
21. पंजाब	79565	291	14
22. राजस्थान	79554	118	11
23. सिक्किम	5421	886	27
24. तमिलनाडू	120441	178	15
25. त्रिपुरा	44310	1224	17
26. उत्तरप्रदेश	368260	184	59
27. उत्तराखण्ड	20775	211	24
28. प. बंगाल	72998	81	18
29. अण्डमान	4417	1018	22
30. चण्डीगढ	7873	695	22
31 दादर	325	114	13
32. दमन द्विप	281	140	06
33. दिल्ली	81467	441	01
34. लक्षद्वीप	349	478	36
35. पांडिचेरी	3941	352	25

इस प्रकार कुल 2064370 के स्वीकृत बल में 24 प्रतिशत की औसत रिक्तियां तथा एक लाख जनसंख्या पर 174 पुलिसकर्मियों की कुल स्वीकृत संख्या भारत में पुलिस संगठन की मानव संसाधन संबंधी उपलब्धता की स्थिति ज्ञापित करती है। इसमें भी 24 प्रतिशत रिक्तियां स्थिति को और अधिक गंभीर बनाती है।

पुलिस संसाधन की उपलब्धता के विभिन्न क्षेत्रों यथा परिवहन के लिए वाहन, हथियार, संचार तंत्र, प्रशिक्षण, विधि विज्ञान प्रयोगशाला एवं फिंगर प्रिंट ब्यूरों, पुलिस उपकरण, विभिन्न भवन निर्माण के संबंध में भारत सरकार द्वारा वर्ष 2000-2001 में राज्य पुलिस संगठनों की आधुनिकीकरण योजना प्रारंभ की गई। तथा विभिन्न राज्यों में राज्य की स्थिति अनुसार 100 प्रतिशत एवं 75 प्रतिशत सहयोग के मान से राशि उपलब्ध कराई गई। वर्ष 2007 में इस योजना अंतर्गत किए गए कार्यों का मूल्यांकन किया गया। तो अधिकांश मामलों में कार्य एवं संसाधनगत उपलब्धता की स्थिति ठीक नहीं पाई गई। परिवहन एवं वाहन संबंधी उपलब्धता के संबंध में अल्पता की पूर्ति करने के स्थान पर अधिकांश राज्यों ने आधुनिकीकरण योजना अंतर्गत क्रय वाहनों को पुराने कंडम वाहनों से प्रति स्थापित कर दिया। इस प्रकार वाहनों की कमी की स्थिति पूर्ववत बनी रही। आंध्रप्रदेश में

जहां 58 प्रतिशत वाहनों को पुराने वाहनो से प्रतिस्थापित किया गया वहीं बिहार में कुल आवश्यकता से 45 प्रतिशत पुलिस वाहन कम उपलब्ध रहे, उत्तर प्रदेश में 10000 वाहनों की आवश्यकता के विरूध सिर्फ 2400 वाहन उपलब्ध हुए। इसी प्रकार आवासीय एवं गैर आवासीय पुलिस भवन की उपलब्धता भी आवश्यकता से अत्यल्प रही, आंध्रप्रदेश में विभिन्न कारणों से 53 प्रतिशत स्टाफ क्वार्टर तथा 45 प्रतिशत कार्यालय भवन अपूर्ण पाए गए। वहीं बिहार में 60000 स्टाफ क्वार्टर की आवश्यकता के विरुद्ध सिर्फ 6 प्रतिशत को ही योजना में शामिल किया जा सका। झारखंड में जिला स्तरीय कन्ट्रोल रूम के लिए भी फोर्स अनुपलब्धता के कारण कार्य अवरोध की स्थिति पाई गई। हथियारों के संबंध में अधिकांश राज्यों की स्थानीय थाना पुलिस पुराने चलन से बाहर हो चुके हथियारों पर निर्भर पाई गई। यहां तक की गंभीर समस्याग्रस्त क्षेत्रों में भी आधुनिक हथियारों की अल्पता प्रकाश में आई। संचार साधनों की दृष्टि से कुछ राज्यों में पुलिस संचार नेटवर्क की स्थापना ही ठीक से नहीं होना तथा कुछ राज्यों में इसका प्रसार सिर्फ जिला स्तर तक होना पाया गया, जबकि आधुनिक संचार उपकरणों की अल्पता अधिकांश राज्यों में रही। इसके अलावा फारेंसिक एवं फिंगर प्रिंट इकाइयों, प्रशिक्षण केन्द्रों एवं सायबर सैल आदि की उपयुक्त उपलब्धता नहीं पाई गई।

यह स्थिति पुलिस संगठन की संसाधनगत उपलब्धता को ज्ञापित करती है, जहां समय के साथ जनसंख्या नए शहरी एवं आवासीय क्षेत्रों का विकास हुआ है वहीं अपराधियों ने अपराध के आधुनिक तौर तरीके एवं उपकरणों के इस्तेमाल प्रारंभ किए हैं। समाज के विकास के साथ पुलिस कार्य के नए तथा महत्वपूर्ण क्षेत्रों का उदय हुआ है तथा सायबर अपराध जैसी नई अपराध अवधारणाएं प्रकाश में आई हैं, जहां पृथक से स्थापना की आवश्यकता का सृजन हुआ है। इन सब परिस्थितियों के बावजूद पुलिस संसाधनों की पूर्ति अपेक्षा के अनुरूप अल्प रही है। यही कारण है कि पुलिस संगठन मानवीय एवं अन्य आवश्यक संसाधनों की कमी से विभिन्न प्रदेशों में जूझ रहा है। विकासशील देश में शासन की प्राथमिकता विकास होती है तथा ऐसी स्थिति में बजट का केन्द्रीयकरण विकास की योजनाओं की ओर अधिक होता है तथा पुलिस की विभिन्न संसाधनों की अपेक्षा एवं पूर्ति का अंतर लगातार बढता जाता है। ऐसी स्थिति में पुलिस अपनी प्रक्रिया एवं आधुनिक प्रणालियों, जनसहयोग, तथा सकारात्मक नेतृत्व के माध्यम से संसाधनगत अल्पता के बाबजूद बेहतर परिणाम दे सकता है। यहां पुलिस नेतृत्व का सकारात्मक रूप तथा जनतांत्रिक नेतृत्व शैली का विकास उपयुक्त व्यक्ति से उर्पयुक्त कार्य का निष्पादन निर्णय की स्पष्टता, त्वरित निर्णय लेना,

संसाधनों का सार्थक एवं उपयुक्त उपयोग करना नेतृत्व के वे पहलू हैं जिनसे संसाधनगत अल्पता का निवारण किया जा सकता है।

मानव संसाधनों का बेहतर प्रबंधन संगठन के संसाधनों की बचत के प्रति समानुपाती रूझान व्यक्त करता है। वर्तमान में मानव संसाधन प्रबंधन एवं व्यवस्थापन्न संबंधी प्रशिक्षण पर निजी क्षेत्र में अत्यधिक कार्य किया जा रहा है बल्कि मानव संसाधन विकास एवं प्रबंधन के संबंध में पृथक इकाइयों की स्थापना कर पर्याप्त बजट का उपयोग इस पर विभिन्न कंपनियां कर रही हैं। पुलिस संगठन में मानव संसाधन प्रबंधन पर प्रशिक्षण का सर्वथा अभाव प्रदर्शित होता है, साथ ही संगठन के मानव संसाधन प्रबंधन के लिए पृथक स्थापना या इकाई की उपलब्धता भी प्रकाश में नहीं आती है। ऐसी स्थिति में विभिन्न श्रेणी के नेतृत्व से यह अपेक्षा और अधिक बढ जाती है कि नेतृत्व के स्तरों पर न केवल मानव संसाधन एवं अन्य संसाधनों के युक्तिसंगत उपयोग को सुनिश्चित किया जाए बल्कि आवश्यकता के आंकलन अनुसार ही युक्तिसंगत तौर पर उपलब्धता सुनिश्चित कराई जाए। विभिन्न संसाधनों की अल्पता के बावजूद पुलिस के परम्परागत तरीके उपलब्ध संसाधनों के भी दुरूपयोग, अल्पउपयोग, अति उपयोग की स्थिति प्रकट करते हैं। सामान्यतः कानून व्यवस्था या वी.आई.पी. सुरक्षा के नाम पर आवश्यकता से अधिक अधिकारी एवं कर्मचारियों को तैनात करने की प्रवत्ति जिससे की अधिक से अधिक मानव संसाधन के चलते व्यवस्था में कोई विसंगति न हो। इसी प्रकार यह सोच कि अधिकतम मानव संसाधनों की मांग किसी स्थिति में की जाना क्योंकि मांग के अनुरूप कुछ कम बल ही उपलब्ध कराया जाएगा। ऐसी स्थिति प्रत्येक स्तर पर समस्या उत्पन्न करती है, जहां वरिष्ठ स्तर मांग के अनुरूप फोर्स उपलब्ध नहीं करा पाते, वहीं अधिक से अधिक उपलब्धि सुनिश्चित कर अपने स्तर पर होने वाली कमी से बचने का प्रयास करते हैं। वहीं परिस्थिति का उर्पयुक्त मूल्यांकन नहीं होने से कार्य वितरण एवं मानव संसाधनों का उचित उपयोग नहीं हो पाता, मानव संसाधन के साथ ही वाहन, डीजल, डी.ए. आदि के रूप में अधिक संसाधनों का दुरुपयोग होता है तथा कार्य भी प्रभावित होता है। पुलिस संगठन में अपना जोखिम कम करने तथा अपना दायित्व समय पूर्व सुनिश्चित करने की प्रवृत्ति के चलते आवश्यकता से पूर्व बल को बुलाने की प्रवृत्ति विभिन्न स्तरों पर पाई जाती है। उदाहरणार्थ डयूटी प्रातः 09.00 बजे प्रारंभ होने की स्थिति में वरिष्ठ स्तर पर 07.00 बजे फोर्स उपलब्ध होने का संदेश दिया जाता है, लेकिन विभिन्न स्तरों पर निर्देश पूर्ति तथा जोखिम न्यून करने की गरज से

प्रत्येक स्तर उपस्थिति समय को अल्प करता जाता है तथा तीन स्तरों के बाद फोर्स को प्राप्त संदेश में प्रातः 05.00 बजे उपस्थित होने निर्देशित किया जाता है। इस प्रकार फोर्स में निर्देशों के प्रति संदेह तथा बताए गए समय से विलंब से ही पहुंचने की भावना विकसित होती है बल्कि कहीं न कहीं मानव संसाधनों का दुरुपयोग भी प्रकाशित होता है। इसी प्रकार की परिस्थितियां विभिन्न संसाधनों के उपयोग के संबंध में प्रकाश में आती हैं तथा विभिन्न संसाधनों का युक्तिसंगत उपयोग नहीं होने से अल्पता की स्थिति और अधिक विकराल हो जाती है। विभिन्न उदाहरण एवं केस स्टडी यह प्रमाणित करते हैं कि नेतृत्व के स्तर पर इस दिशा में प्रयास तथा प्रशिक्षण सार्थक परिणाम प्रस्तुत करते हैं। पुलिस नेतृत्व के द्वारा संसाधनगत सदुपयोग एवं अल्पता का परिहार निम्न आयामों के आधार पर प्रदर्शित किया जा सकता है।

निर्देशों की स्पष्टता

नेतृत्व का आत्मविश्वास, निर्देश स्पष्टता का जनक होता है तथा कार्य के स्पष्ट आदेश निर्देश, कार्य सुगमता एवं त्वरितता निर्धारित करते हैं जिससे कि संगठन एवं इकाई की छवि उज्जवल होती है, नेतृत्व के द्वारा दिए गए निर्देश में भ्रमपूर्ण स्थिति से प्रथमतः मनोयोग से कार्य निष्पादन नहीं होता है वहीं संसाधनों के दुरुपयोग की आशंका भी बढ़ जाती है। भ्रमपूर्ण निर्देश तथा निर्देश परिवर्तन या वापस लिए जाने की स्थिति में खर्च किए गए संसाधनों का मूल्यांकन एवं उपयोगिता सूचकांक के स्तर पर उपादेयता भी निर्धारित नहीं हो पाती जिसका खामियाजा संगठन की संसाधन निधि को भुगतना होता है।

त्वरित निर्णय

संगठन के स्तर पर रणनीतिक कार्य की शुरुआत नेतृत्व के निर्णय से होती है तथा विलम्बित निर्णय संसाधनों का क्षय प्रारंभ कर देता है। इकाई या समूह के स्तर पर निर्णयगत विलंब जहां मानवगत संसाधनों की ऊर्जा एवं समय लिए क्षयकारी होता है वहीं त्वरित निर्णय के माध्यम से न केवल ऊर्जा का सही उपयोग सुनिश्चित होता है बल्कि समूह के तात्कालिक उत्साह का उपयोग कार्य निष्पादन में सफलतापूर्वक किया जा सकता है। बिलम्बित निर्णय खासकर कानून व्यवस्था संबंधी स्थितियों में और अधिक घातक हो जाता है जब कार्यवाही के विलंब के कारण स्थिति बिगड़ने पर अधिक संसाधनों का उपयोग करना होता है।

आंकलन

परिस्थिति का आंकलन तथा परिस्थिति की वास्तविक मांग के अनुरूप संसाधनों की तैनाती एवं उपयोग नेतृत्व की प्रभावी आवश्यकता होती है जो कि संसाधनगत स्थिति को अत्यधिक प्रभावित करती है। सामान्यतः व्यक्तिगत जोखिम से बचाव की दृष्टि से आवश्यकता से अधिक संसाधनों का उपयोग किया जाता है जो कि अतिउपयोग की श्रेणी का होकर दुरूपयोग के रूप में निरूपित किया जा सकता है। वास्तविक मांग के आंकलन के लिए पूर्व में हुई इसी प्रकार की व्यवस्था तथा उसका वस्तुनिष्ठ विश्लेषण, परिस्थिति के संबंध में विश्वसनीय आसूचना संकलन, आंकलन के संबंध में विविध स्तरों पर विचार विमर्श कारगर साबित हो सकते है। संगठन के स्तर पर ऐसी परिस्थितियों में नेतृत्व के प्रति विश्वास तथा अपरिहार्य कारणों से उत्पन्न धनात्मक, ऋणात्मक गुण दोषों पर दण्डात्मक परिस्थिति स्थापित नहीं करने के द्वारा भी अतिरेक आंकलन की स्थिति को रोका जा सकता है।

सदुपयोग

उपलब्ध संसाधनों के अधिकतम दोहन के द्वारा संसाधन का बेहतर उपयोग तथा अल्पता का निवारण संभव होता है। नेतृत्व के द्वारा युक्तिसंगत तरीके से संसाधनों के उपयोग की परिस्थिति समय तथा पूर्ति एवं उपयोगकर्ता सदस्य के बारे में विधिवत योजना तैयार की जाकर इस दिशा में सार्थक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। संसाधनों का सदुपयोग अल्प एवं अति दोनों परिस्थिति से पृथक तथा उपलब्धता में आवश्यकतानुरूप अधिकतम दोहन की स्थिति को कहा जा सकता है। उपयोग कमी आपूर्ति पुनः उपयोग तथा शेष के संबंध में नेतृत्व के स्तर पर गहन मूल्यांकन एवं विश्लेषण तथा जानकारी एवं इसके प्रति व्यक्तिगत जिम्मेदारी संसाधनों के सदुपयोग में सहायक होते हैं।

वैकल्पिक संसाधनों का विकास

संगठन विशेषकर पुलिस जैसे संगठन में विभिन्न परिस्थितियों में स्थानीय स्तर पर संसाधनों का परिस्थिति अनुरूप विकास नेतृत्व का दायित्व होता है इन्हे वैकल्पिक संसाधन के रूप में निरूपित किया जा सकता है जैसे की ग्राम /नगर रक्षा समितियों तथा समुदाय आधारित मानव एवं संसाधनों का उपयोग।

पुनर्दोहन की व्यवस्था

प्रत्येक परिस्थिति में वे संसाधन जिनका पुनः उपयोग किया जा सकता है इस संबंध में योजना तथा उपयोग का सुनिश्चपन जैसे कि मानवीय संसाधन फोर्स आदि एक बार डयूटी उपरांत पुनः कब उपलब्ध होगा तथा किस प्रकार डयूटी करेगा आदि की पूर्व नियोजित योजना इस दिशा में सार्थक होती है।

प्रदर्शन

कई परिस्थितियों में प्रदर्शन का प्रभाव उपयोग से अधिक कारगर सिद्ध होता है तथा प्रदर्शन उपरांत उपयोग की आवश्यकता भी न्यून हो जाती है पुलिस व्यवहारिक तौर पर फ्लेग मार्च आदि में इस प्रकार की रणनीति का उपयोग करती है। प्रदर्शन अधिकतम प्रदर्शित करने के अनुरूप योजनाबद्ध तरीके से तथा प्रभाव आधारित होना श्रेयस्कर होता है।

व्यक्तिगत प्रभाव

नेतृत्व का व्यक्तिगत प्रभाव जनता के बीच उसकी छवि तथा संगठन में आंतरिक स्तर पर सक्षमता, कौशल एवं व्यक्तित्व के प्रति आस्था समूह के सदस्यों को समझने संवेदनात्मक दक्षता के प्रभाव नेतृत्व के प्रभाव में जो संसाधनगत आवश्यकताओं को अल्प करते हैं। कई उदाहरणों में जहां अत्यधिक संसाधनों का व्यय संभावित होता है प्रभावी नेतृत्व तथा उसकी रणनीति एवं समूह के सदस्यों का एकजुट प्रयास स्थिति को धनात्मक रूप से प्रभावित कर परिस्थिति का परिहार करने में सक्षम होता है।

सहभागिता

रणनीतिक स्तर पर व्यक्तिगत विचार तथा विश्लेषण के आधार पर नेतृत्व द्वारा सामान्यतः रणनीतिक निर्णय पुलिस प्रक्रिया में लिए जाते है। इस प्रकार की प्रक्रिया व्यक्ति विचार, अनुभव, विश्लेषण, एवं पूर्वागृह से प्रभावित होती है। ऐसी स्थिति में संसाधनगत उपयुक्तता का निर्धारण सुनिश्चित नहीं हो पाता जबकि इसके विपरीत निर्णयन की सहभागी प्रक्रिया तथा विचार-विमर्श उपरांत रणनीति निर्माण की स्थिति में उपयुक्तता का आकलन वास्तविक परिस्थिति के अनुसार संभव हो पाता है।

इस प्रकार अनुभवों के आधार पर यह निष्कर्ष प्रतिपादित किया जा सकता है कि पुलिस संगठन की संसाधनगत अल्पताओं से सक्षम नेतृत्व प्रक्रिया एवं नेतृत्व के युक्ति संगत निर्णय तथा प्रक्रिया के आधार पर वांछित परिणाम प्राप्त किए जा

सकते हैं। संसाधनों का विकास एवं विस्तार निश्चित ही संगठन की कार्य परिणाम के लिए अत्यधिक आवश्यक तत्व है, किसी भी संगठन में भौतिक संसाधनों को संगठन के औजार के तौर पर परिभाषित किया जाता है। साथ ही यह तथ्य भी प्रामाणिक है कि पुलिस संगठन की कार्य प्रकृति एवं समय अनुरूप वर्जित अपेक्षाओं के कारण तथा राज्य के शासकीय संगठन के तौर पर आर्थिक संसाधनों की सीमित उपलब्धता के कारण पुलिस संगठन संसाधनों की पर्याप्तता की स्थिति को प्राप्त नहीं कर पाता है। पुलिस संगठन के कार्य राज्य, समाज एवं जनता के लिए अपरिहार्य होते हैं तथा सक्षम पुलिस संगठन की उपलब्धि विकास एवं अधिकार संरक्षण के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण होती है। अतः पुलिस नेतृत्व की अवधारणा नेतृत्व के तत्वों का सम्यक विकास जिसके माध्यम से न केवल पुलिस संगठन की संसाधनगत अल्पताओं का आभास न्यूनतम हो बल्कि बेहतर कार्य निष्पादन किया जा सके, के लिए सार्थक प्रयासों की सख़्त अपेक्षा प्रतीत होती है।

पुलिस नेतृत्व की अवधारणा पुलिस संगठन के विभिन्न स्तरों यथा कार्यपालिक स्तर, मध्यम स्तर एवं उच्च स्तर के नेतृत्व के संस्थागत विकास तथा नेतृत्व की अपेक्षित कौशल के निर्धारण तथा इनके माध्यम से लक्ष्य प्राप्ति में सार्थक उपलब्धि पर केन्द्रित होती है, संगठन के तौर पर व्याप्त नेतृत्व संबंधी अल्पताओं का विश्लेषण कर उन पर सकारात्मक सुझाव तथा मानव संसाधन विकास संबंधी प्रशिक्षण को पुलिस के विभिन्न प्रशिक्षणों का महत्वपूर्ण हिस्सा बनाना अत्यधिक आवश्यक है। नेतृत्व के स्तर पर नवाचार सहभागी नेतृत्व प्रक्रिया का विकास तथा जनतांत्रिक नेतृत्व शैली को संगठन की मुख्य नेतृत्व शैली के तौर पर स्थापित करना भी वर्तमान समय की अपेक्षा है। पुलिस जनता संबंधों को आधार बनाकर पारदर्शी पुलिस व्यवस्था सुनिश्चित किए बिना आए दिन प्रकाश में आने वाले जन आक्रोशों को नियंत्रित नहीं किया जा सकता। आधुनिक समाज में जिस गति से संगठन से जनता एवं समाज की अपेक्षाएं बड़ीं हैं उस गति से संगठन ने अपने स्वरूप का विस्तार एवं परिमार्जन करने में अपेक्षाकृत प्रयास नहीं किए जिसका कि परिणाम पुलिस एवं जनता के बीच गतिरोध के रूप में प्रदर्शित होता है। पुलिस नेतृत्व की अवधारणा का सम्यक विवेचन यह तथ्य स्थापित करता है कि नेतृत्व प्रक्रियाओं एवं इस स्तर पर परिमार्जन के माध्यम से न केवल संगठन का आधुनिक विकसित स्वरूप स्थापित होगा बल्कि पुलिस जनता सह संबंधों का अवरोध एवं संसाधनगत अल्पताओं का परिहार भी निर्धारित हो सकेगा।

अध्याय 3

नेतृत्व शैली

सामान्यतः किसी भी संगठन के परिप्रेक्ष्य में यदि इस प्रश्न पर विचार किया जाता है कि 'प्रभावी नेतृत्वकर्ता क्या करता है?' तब विविध प्रकार के उत्तर प्रत्यक्ष होते हैं, जैसे नेतृत्वकर्ता रणनीति बनाता है, वह सदस्यों को अभिप्रेरित करता है, वह कार्य संस्कृति का निर्माण करता है। वह संगठन के लक्ष्यों के लिए जमीन तैयार करता है आदि। लेकिन जब नेतृत्व के संबंध में प्रश्न यह हो कि नेतृत्वकर्ता को 'क्या करना चाहिए?' तब एकमात्र उत्तर यही प्रकाश में आता है कि नेतृत्वकर्ता का एकमात्र कार्य परिणाम देना होता है। इस प्रकार यदि समग्र रूप में नेतृत्वकर्ता की सफलता का मूल्यांकन एकल तत्वीय आधार पर किया जाए तो परिणाम उत्पादन की दक्षता ही वह कारक निर्धारित होती है। सफल नेतृत्व लक्ष्य प्राप्ति के लिए किस प्रकार की प्रक्रिया निर्धारित करें, कैसे वह संगठन को एवं सभी सदस्यों को लक्ष्य प्राप्ति की ओर अग्रसर करे? नेतृत्वकर्ता अपने गुण एवं कौशल के साथ अपने अनुभव अपने प्रभाव एवं अभिप्रेरण के माध्यम से किस प्रकार संभावनाओं के शत प्रतिशत मूर्तरूप तक पहुँचकर परिणाम उत्पादन का उत्कृष्ट लक्ष्य प्राप्त करे।

इस प्रकार इन तथ्यों के विचारण के परिणाम स्वरूप नेतृत्व शैलियों की अवधारणा का प्रादुर्भाव हुआ। नेतृत्व शैली नेतृत्व के कौशल एवं तत्वों गुणों से भिन्न नेतृत्वकर्ता की वह प्रवृत्ति होती है जिसके माध्यम से वह समूह के सदस्यों को कार्य उन्मुख करता है। नेतृत्व शैली को समूह के प्रति नेतृत्वकर्ता के मूलभूत रवैया के रूप में भी व्याख्यापित किया जा सकता है। नेतृत्व शैली का प्रभाव संगठन की कार्य संस्कृति के साथ ही सदस्यों की सहभागिता की दिशा एवं सीमा को भी निर्धारित करता है। नेतृत्व शैली दिशा निर्देश देने, योजनाओं के कार्य रूप परिणति एवं सदस्यों के अभिप्रेरित करने के तरीके या पद्धति के रूप में देखा जा

सकता है। नेतृत्व के विभिन्न गुणों या कौशल की उपलब्धता या अनुपलब्धता के साथ ही संगठन के कार्य संस्कृति में निहित वे तत्व जो संगठन का वातावरण निर्धारित करने में प्रभावी थे के संबंध में शोध का परिणाम नेतृत्व शैलियों की स्थापना के रूप में परिणत हुआ। हेमवेकर फर्म ने 3871 विभिन्न स्तर के नेतृत्वकर्ताओं का चयन किया तथा उनकी कार्यशैली एवं प्रक्रिया के संबंध में शोध की तथा उन्होंने पाया कि प्रमुखतः छः विभिन्न नेतृत्व शैलियों हैं जिनके आधार पर नेतृत्व प्रक्रिया निर्धारित होती है। इन सभी छः नेतृत्व शैलियों में विभिन्न निर्धारित तत्व तथा भावनात्मक दक्षता के तत्व विद्यमान पाए गए। प्रत्येक शैली का सीधा तथा अद्वितीय प्रभाव संगठन के कार्य वातावरण के एवं सदस्यों का देखा गया। इसी प्रकार समग्र रूप में संगठन की मूल लक्ष्य प्राप्ति एवं परिणाम उत्पादकता भी शैली के आधार पर प्रभावित पाई गई। साथ ही एक महत्वपूर्ण परिणाम के रूप में यह तथ्य भी प्रकाश में आया कि सफल नेतृत्वकर्ता किसी एक नेतृत्व शैली पर आधारित नहीं होते हुए परिस्थिति एवं कार्य प्रकृति अनुरूप शैली परिवर्तन करते हैं। यही कारण है कि विभिन्न नेतृत्व शैलियों में किसी भी शैली को सर्वश्रेष्ठ नहीं माना जाता बल्कि शैली के परिस्थिति अनुसार सफल क्रियान्वयन को अधिक महत्व दिया जाता है। इस प्रकार नेतृत्व की छः मुख्य शैलियों को व्याख्यायित किया गया।

नेतृत्व की शैलियों के वर्गीकरण के संबंध में विभिन्न मत विचारको द्वारा प्रस्तुत किए गए हैं। विभिन्न विचारको ने भिन्न संख्या में शैली का वर्णन किया है लेकिन मुख्य रूप से नेतृत्व की छः शैलियों का वर्गीकरण स्वीकार किया जाता है।

1. बलात् शैली (coercivestyle)
2. आधिकारित्व शैली (authoritative style)
3. सम्बद्धता शैली (affiliative style)
4. जनतांत्रिक शैली (democratic style)
5. निर्धारक शैली (pacesetting style)
6. कोचिंग शैली (coaching style)

उक्तानुसार शैली वर्गीकरण में प्रत्येक शैली की अपनी विशेषताएं सक्षमताएं कमियां तथा सफलता की परिस्थितियां व्यख्यायित की जाती हैं। प्रत्येक शैली में विविध अंशों में संवेदनात्मक दक्षता के तत्व विद्यमान होते हैं। साथ ही संगठन के कार्य वातावरण परिवेश या संस्कृति पर भी प्रत्येक शैली के भिन्न भिन्न प्रभाव होते हैं। शोध के द्वारा विभिन्न शैलियों के परिवेश पर प्रभाव को

मापने का प्रयास किया गया। यहां परिवेश को निर्धारित करने वाले विभिन्न कारकों की दृष्टि से कौन सी शैली कितने अंशों में किस कारक को प्रभावित करती है, का अंकीय मूल्यांकन किया गया। परिवेश को प्रभावित करने वाले छः प्रमुख कारक—लचीलापन, उत्तरदायित्व, प्रतिमान, पुरस्कार, स्पष्टता एवं प्रतिबद्धता के आधार पर उक्तानुसार शैलियों का मूल्यांकन किया गया।

कारक	बलात शैली	अधिकारित्व शैली	संबद्धता शैली	जनतांत्रिक शैली	निर्धारित शैली	कोचिंग शैली
लचीलापन	-.28	.32	.27	.28	-.07	.17
उत्तरदायित्व	-.37	.21	.16	.23	.04	.08
प्रतिमान	.02	.38	.31	.22	-.27	.39
पुरस्कार	-.18	.54	.48	.42	-.29	.43
स्पष्टता	-.11	.44	.37	.35	-.28	.38
प्रतिबद्धता	-.13	.35	.34	.26	-.20	.27
कुल प्रभाव	-.26	.54	.46	.43	-.25	.42

इस प्रकार कोई भी शैली किस प्रकार कार्य वातावरण को किस रूप में तथा किन अंशों में प्रभावित करती है, को उक्त टेबल के आधार पर स्पष्ट करने का प्रयास किया गया। अंक नेतृत्व शैली तथा वातावरण के निर्धारक कारक के बीच सह संबंध को व्यक्त करता है। जैसे की परिवेश कारक लचीलापन बलात् शैली में -.28 तथा जनतांत्रिक शैली में .28 के आपसी सहसंबंध व्यक्त करते है तथा समान अंशों में जहां जनतांत्रिक शैली धनात्मक रूप से प्रभावित करती है वहीं बलात् शैली उतने ही अंशों मे ंविपरीत प्रभाव ज्ञापित करती है। इसी प्रकार अधिकारित्व शैली में पुरस्कार का सह संबंध .54 के रूप में अधिक अंशों में धनात्मक प्रभाव है वहीं इसी शैली का उत्तरदायित्व संबंधी कारक से .21 का सह संबंध है जो कि धनात्मक तो है किन्तु पुरस्कार संबंधी कारक की अपेक्षा प्रबल नहीं है। इस प्रकार अधिकारित्व शैली में पुरस्कार संबंधी कारक उत्तरदायित्व संबंधी कारक की अपेक्षा दोगने सह संबंध व्यक्त करता है। उक्त के अनुसार अधिकारित्व शैली का कार्य परिवेश पर सर्वाधिक सकारात्मक प्रभाव व्यक्त होता है। वहीं संबद्धता जनतांत्रिक एवं कोचिंग शैली भी कुछ कम अंशों में परिवेश को धनात्मक रूप से प्रभावित करती हैं। इस प्रकार शोध परिणाम यह निष्कर्ष प्रतिपादित करते हैं कि कोई भी

शैली पूर्ण रूप से सफल या प्रभावी नहीं मानी जा सकती बल्कि परिस्थिति एवं लक्ष्यों के अनुरूप सभी शैलियों के सीमित उपयोग अपेक्षित होते है।

1. बलात् शैली (coercive style) : इस प्रकार की नेतृत्व शैली में नेतृत्व बल पूर्वक या भय दिखाकर कार्य निष्पादन का प्रयास करता है। यहां संगठन के सदस्यों से त्वरित परिणाम की अपेक्षा की जाती है। नेतृत्व के निर्देश पर विचार विमर्श के स्थान पर नेतृत्व के निर्देश बिना विचार पालन करने के लिए ही कहा जाता है। भावनात्मक दक्षता संबंधी तत्वों का अभाव यहां व्याप्त होता है तथा भावनात्मक दक्षता के स्थान पर स्व नियंत्रण कारक प्रभावी होता है। इस प्रकार की शैली का संगठन की कार्य संस्कृति या कार्य वातावरण पर ऋणात्मक प्रभाव होता है। नेतृत्व की बलात् शैली को संगठन की किसी विकराल समस्या की स्थिति में तथा संगठन के सदस्यों के समस्याग्रस्त होने की स्थिति में ही उपयुक्त माना जाता है। यह शैली अधिकांश परिस्थितियों में न्यूनतम प्रभावी शैली मानी जाती है। इस शैली में संगठन की सुधारात्मक संभावना या लचीलापन न्यूनतम स्तर का हो जाता है तथा नेतृत्व के एक तरफा निर्णय लेने तथा उस पर विचार विमर्श संशोधन की संभावना समाप्त प्रायः होने से नवाचार एवं नए विचारों के प्रभाव मृत प्रायः ही होते है। संगठन के सदस्य स्व सम्मान एवं स्वाभिमानहीनता की स्थिति से ग्रस्त होते हैं। किसी भी सदस्य के नवाचार संबंधी विचार तथा सुधारात्मक बिन्दुओं पर कोई प्रभावी कार्यवाही नहीं होने से संगठन के प्रति सदस्यों की स्वमित्त भावना क्षीण हो जाती है।

इस शैली में पुरस्कार व्यवस्था से अभिप्रेरण की संभावना ध्वस्त हो जाती है। अधिकांश उच्च दक्षता वाले कर्मचारी रूपयों से अधिक पुरस्कार व्यवस्था से संतुष्टि प्राप्त करते हैं। तथा नेतृत्व के द्वारा कार्य पर पुरस्कार या इस भावना के ज्ञापन से अभिप्रेरण की उच्च स्थिति को प्राप्त कर संतुष्टि के उच्च स्तर को महसूस करते हैं, लेकिन बलात् शैली के नेतृत्व में इस प्रकार के गौरव की संभावनाएं समाप्त हो जाती हैं।

इस प्रकार समग्र विश्लेषण पर सामान्यतः कार्य संस्कृति एवं वातावरण तथा सहभागिता की दृष्टि से इस प्रकार की शैली सुधारात्मक प्रभाव स्थापित नहीं करती है। इस शैली को आकस्मिक परिस्थिति में जबकि संगठन किसी विशेष प्रकृति की समस्या से ग्रसित है अथवा संगठन के समक्ष आकस्मिक तथा जटिल प्रकृति का कोई कार्य लक्ष्य प्रस्तुत हुआ है तब इस शैली का प्रभावी उपयोग किया जा सकता है। समस्यामूलक भावनाओं एवं कार्य प्रणाली से ओतप्रोत कर्मचारियों की स्थितियों में भी यह शैली सकारात्मक परिणाम प्रदान करने में सक्षम हो

सकती है। इस शैली की प्रमुख विशेषता यह भी है कि इस शैली से सकारात्मक परिणाम तात्कालिक या त्वरित स्थितियों में ही प्राप्त किए जा सकते है दीर्घ कालिक स्थितियों में कार्य संस्कृति एवं परिवेश संबंधी ऋणात्मक कारक प्रभावशील होकर संगठन को ऋणात्मक दिशा में प्रभावित करते हैं। परिवेश निर्धारक छः प्रमुख तत्वों यथा लचीला पन, उत्तरदायित्व, प्रतिमान, पुरस्कार, स्पष्टता, प्रतिबद्धता की दृष्टि से विश्लेषण करने पर भी बलात् शैली प्रभावी प्रतीत नहीं होती है। इन कारकों के शैली के आधार पर पढने वाले प्रभावों के संबंध किए गए शोध के आधार पर लचीलापन -.28, उत्तरदायित्व -.37, प्रतिमान .02, पुरस्कार -.18, स्पष्टता -.11 तथा प्रतिबद्धता -.13 तथा परिवेश पर समग्र प्रभाव -.26 पाया गया है इस प्रकार यह शैली परिवेश पर छः में से पांच तत्वों में ऋणात्मक प्रभाव तथा एकत्व प्रतिमान पर अत्यल्प मात्रा में धनात्मक प्रभाव के साथ समग्र रूप में ऋणात्मक प्रभाव स्थापित करती है।

2. अधिकारित्व शैली (Authoritative Style) : नेतृत्व की अधिकारित्व शैली संगठन को सामान्य सोच के साथ सभी की सहभागिता तथा संगठन के अंतिम लक्ष्य की और अग्रसर करती है। यहां नेतृत्व संगठन को 'मेरे साथ आओ' के सिद्धांत पर कार्य हेतु अभिप्रेरित करता है। यहां यद्धपि निर्णयन अधिकांशतः नेतृत्व केन्द्रित होता है लेकिन संगठन के सदस्यों को कुछ स्तरीय अभिप्रेरण तथा सहानुभूति के माध्यम से लक्ष्य प्राप्ति में सहभागिता प्राप्त की जाती है। शोध निष्कर्ष भी यह परिणाम प्रतिपादित करते हैं कि, अधिकारित्व शैली छः शैलियों के मध्य अत्यधिक प्रभावी है। यह शैली कार्य संस्कृति एवं परिवेश के प्रत्येक बिन्दु पर सकारात्मक परिणाम तथा परिवर्तन सुनिश्चित करती है। इस शैली में नेतृत्व सदस्यों को लक्ष्यों संगठन के नए आयाम एवं वृहद सोच तथा परिवर्तित परिस्थितियों में बेहतर सहभागिता की ओर अग्रसर करती है। सदस्यों को प्रशंसा तथा पुरस्कार एवं पूर्व में किए गए कार्यों के आधार पर अभिप्रेरित किया जाता है। तथा उन्हें यह बताया जाता है कि किस प्रकार वृहद स्तर पर संगठन की रणनीति में वे किस प्रकार कारगर है। इस प्रकार प्रत्येक सदस्य संगठन के लिए स्वयं के महत्व की भावना से ओत-प्रोत होता है तथा वह क्यों संगठन के लिए महत्वपूर्ण है इस संबंध में भी स्थिति स्पष्ट रहती है। यही कारण है कि सदस्यों का स्व अभिप्रेरण का स्तर यहां अत्याधिक होता है। अधिकारित्व नेतृत्व में संगठन के प्रति समर्पण एवं संगठन के लक्ष्यों रणनीति, आदि के प्रति प्रतिबद्धता का स्तर भी उच्चतम होता है। संगठन के वृहद परिदृश्य में सदस्यों के व्यक्तिगत टास्क निर्धारित करके इस प्रकार की नेतृत्व शैली विभिन्न प्रतिमानों को

स्थापित करती है। जो कि लक्ष्यपूर्ति पर केन्द्रित होते हैं यहां कार्य मूल्यांकन का तरीका भी सदस्यों को हीन भावना प्रदाय करने वाला नहीं होता अपितु कार्य संगठन के निर्धारित वृहद लक्ष्य के अनूरूप है या नहीं पर टिप्पणी की जाती है जो कि निश्चित ही कर्मचारी के लिए सुधारात्मक धनात्मक प्रभाव ही अंकित करती है। इसके विपरीत सफलता के प्रति नेतृत्व की प्रतिक्रिया पुरस्कारों के रूप में ही अभिव्यक्त होती हैं। इस प्रकार सफलता पर पुरस्कार एवं असफलता पर सिर्फ लक्ष्यों के अनुकूल नहीं होने की टीप से सदस्यों की संगठन के प्रति निष्ठा प्रबल होती है। इस प्रकार इस शैली में नेतृत्व के निर्धारक की भूमिका के बावजूद सामान्य रूप से सदस्यों को स्व स्थापन्न एवं आत्म विश्वास के अत्यधिक अवसर प्राप्त होते हैं। इस शैली में नेतृत्व नवाचार, प्रयोग, तथा सीमित जोखिम उठाने का स्थान भी सदस्यों को प्रदाय करता है। अतः नेतृत्व की अधिकारित्व शैली सामान्यतः सभी परिस्थितियों में कारगर होती है। लेकिन परिवर्तन, स्तर, विस्तार, आदि स्थितियों में अधिक सार्थक परिणाम प्रदाय करती है। परिवेश को प्रभावित करने वाले कारकों की दृष्टि से इस शैली का मूल्यांकन किए जाने पर भी इस शैली के सकारात्मक प्रभाव व्यक्त होते हैं। लचीलेपन संबंधी कारक .32, उत्तरदायित्व .21, प्रतिमान .38, पुरस्कार .54, स्पष्टता .44, प्रतिबद्धता .35, अंको के साथ इस प्रकार के सभी 6 कारकों पर धनात्मक प्रभाव इस शैली के स्थापित होते हैं तथा संयुक्त रूप से पूरे परिवेश पर .54 के साथ समग्र परिवेश पर धनात्मक प्रभाव इस शैली में अंकित होता है। इस प्रकार परिवेश को धनात्मक रूप से प्रभावित करने की दृष्टि से अन्य पांच शैलियों से अधिक सक्षम अधिकारित्व शैली हैं। यद्धपि यह शैली अत्यधिक सक्षम शैली के रूप में स्थापित होती है। तथापि इसकी सीमाएं भी प्रकाश में आती हैं। विशेष रूप से जब नेतृत्वकर्ता की टीम या समूह विशेष का या नेतृत्वकर्ता से अधिक अनुभवी लोगों का है तब ऐसी स्थिति में समूह नेतृत्व से वांछित प्रभाव प्राप्त नहीं कर पाता है। इसी प्रकार न्यूनतम ऐसी परिस्थितियों के साथ अधिकारित्व शैली परिवेश संबंधी कारकों, अभिप्रेरण, प्रतिबद्धता, नवाचार एवं वृहद लक्ष्यों के दृष्टिकोण से प्रभावी शैली है।

पुलिस संगठन चूंकि अनुशासित एवं फोर्स के रूप में स्थापित संगठन हैं, अतः आधिकारित्व शैली के माध्यम से सार्थक परिणाम यहां प्राप्त किए जा सकते हैं। अन्य समूह केन्द्रित शैलियों के उपयोग की आलोचना जहां पुलिस संगठन में अनुशासन के आधार पर की जाती है या दूसरे शब्दों में नीति निर्धारण विचार, विनिमय की सहभागी प्रक्रिया से संगठन में वांछित अनुशासन के ह्रास की

संभावना ज्ञापित की जाती है। पुलिस संगठन के नेतृत्व का पुरातन सोच इसी भावना से प्रभावित होकर पुलिस नेतृत्व के परिवर्तन का विरोध करता है। साथ ही अनुशासन एवं पुरातन विचार के नेतृत्व में परिवेश संबंधी सुधारात्मक बिन्दुओं की उपेक्षा की जाती है। अधिकारित्व शैली उक्त दोनों परिस्थितियों को सार्थक मध्यम मार्ग स्थापित करती है। परिवेश संबंध में कारकों में सुधार के साथ ही अनुशासन बनाए रखने की संभावना अधिकरित्व शैली में विद्यमान होने से यह शैली पुलिस संगठन के लिए कारगर हो सकती है।

3. सम्बद्धता शैली (affiliative style):- सम्बद्धता शैली का नेतृत्व समूह के सदस्यों को प्राथमिकता के केन्द्र बिन्दु के रूप में स्थापित करता है। यह व्यक्तिगत मूल्यों एवं भावनाओं को लक्ष्यों एवं उद्देश्यों से अधिक महत्व प्रदान करता है। नेतृत्व की प्राथमिकता कर्मचारियों को खुश रखना तथा उनके बीच सौहार्द स्थापित करना रहती है। इस प्रकार का नेतृत्वकर्ता कर्मचारियों से भावनात्मक संबंध या बंधन स्थापित कर संगठन के प्रति उनकी निष्ठा वृद्धि का प्रयास करता है। इस शैली में संगठन के सदस्य को संपर्क की स्वतंत्रता प्राप्त होती है। तथा नेतृत्व से सतत् एवं वृहद संचार स्थापित कर विचार प्रभाव आदि का आदान प्रदान निबधि सुनिश्चित होता है। संगठन का लचीला वातावरण सदस्यों को एक दूसरे एवं नेतृत्व के प्रति विश्वास तथा नवाचार एवं जोखिम के प्रति अभ्यस्थ बनाते हैं। इस शैली में नेतृत्व सदस्यों के समग्र विकास के प्रति लगातार विचार एवं प्रयास करते हुए उनके अभिभावकत्व की भावना से प्रेरित होता है। संगठन के सदस्यों पर कार्य करने के लिए अनावश्यक दबाव अधिरोपित नहीं किया जाता बल्कि उन्हें इस बात की स्वतंत्रता दी जाती है कि वह किस प्रकार अपना कार्य अधिकतम प्रभावी रूप से कर सकते हैं।

सम्बद्धता शैली में पुरस्कार एवं सराहना की अपार संभावनाएं विद्यमान होती हैं। साधारणतः धनात्मक फीडबैक ही प्रदान किया जाता है, समयबद्ध मूल्यांकन प्रक्रिया में नियमित कार्य प्रयासों एवं ऋणात्मक मूल्यांकन को स्थान नहीं दिया जाता है। इस प्रकार मूल्यांकन कर्मचारियों के लिए अभिप्रेरण का माध्यम होता है। इस प्रकार का नेतृत्व सदस्यों को संगठन के प्रति सम्बद्धता की भावना प्रदान करने में प्रभावी भूमिका निभाता है। कार्य समाप्ति पर पार्टी उपलब्धियों पर उत्साह उमंग एवं जल्से के माध्यम से समूह को उत्साहित एवं प्रेरित करने का प्रयास इस शैली में किया जाता है। इस शैली का नेतृत्व मूल रूप से संबंध निर्माण में विशेष दक्षता प्रदर्शित करता है।

सम्बद्धता शैली की सामान्य धनात्मक प्रभाव इसे एक अच्छी शैली के रूप

में स्थापित करते है। लेकिन विभिन्न परिस्थितियों में इस शैली की सीमाएं एवं न्यूनताएं भी हैं। इस शैली को विशेष रूप में उपयोग किया जाना कारगर होता है। जहां संगठन में आपसी सौहार्द स्थापित करना वांछनीय हो, जहां टीम का मोराल बढाना आवश्यक हो गया हो, जब नेतृत्व एवं समूह के बीच सहसंवाद की अल्पता घातक हो या संगठन एवं सदस्यों के बीच अविश्वास की भावना व्याप्त हो आदि परिस्थितियों में इस प्रकार की शैली का कारगर उपयोग किया जा सकता है। संबद्धता शैली को अद्धितीय शैली के रूप में प्रयुक्त नहीं किया जाना चाहिए। इस शैली में लक्ष्य तथा सुधार के संबंध में निर्देशों के अभाव तथा स्पष्ट निर्देशों की अपेक्षा की स्थिति में उन्हें निर्देशहीन छोड़ देने के कारण सामान्यतः परिणाम उत्पादकता की दृष्टि से यह शैली कारगर नहीं होती है।

परिवेश को प्रभावित करने वाले कारकों की दृष्टि से सम्बद्धता शैली परिवेश पर धनात्मक प्रभाव स्थापित करती है। यहां विभिन्न कारकों में लचीलापन .27, उत्तरदायित्व .16, प्रतिमान .31, पुरस्कार .48, स्पष्टता .37, प्रतिबद्धता .34, अंकों के साथ सभी छः कारक इस शैली में धनात्मक रूप से प्रभावित होते हैं तथा परिवेश पर कुल धनात्मक प्रभाव .46 होता है जो कि धनात्मक प्रभाव होने के साथ ही अधिकरित्व शैली के बाद दूसरे स्थान पर धनात्मक प्रभाव है। इस प्रकार इस शैली का परिवेश पर विविधमुखी धनात्मक प्रभाव पड़ता है। यह शैली सदस्यों की अविश्वास, तनाव, संचारहीनता की स्थिति में निवारक उपाय के रूप में कारगर हो सकती है।

पुलिस संगठन में विभिन्न कल्याणकारी इकाइयों आदि में सम्बद्धता शैली का कारगर उपयोग किया जा सकता है। इसके अलावा ऐसे कई उदाहरण पुलिस संगठन में प्रकाश में आते है जहां विशिष्ट नेतृत्वकर्ताओं द्वारा संगठन या इकाई में अमर्यादित भाषा का प्रयोग अत्यधिक दण्ड का अधिरोपण एवं अव्यवहारिक एवं अधिक कार्य लेने से न केवल इकाई के सदस्यों का सौहार्द एंव सहसंबंध प्रभावित होते हैं बल्कि समग्र इकाई तनाव से प्रभावित होती है। ऐसी परिस्थितियों में उपचारात्मक साधन के तौर पर भी सम्बद्धता शैली का प्रयोग किया जा सकता है।

4. जनतांत्रिक शैली (democratic style) : नेतृत्व की जनतंत्रीय शैली प्रतिभागिता को केन्द्र में रखकर कार्य निर्धारण करती है इस शैली में समूह के सदस्यों के साथ ही अन्य संभव या प्रभावित होने वाले लोगों को भी सहभागिता प्रदान की जाती है। टीम नेतृत्व की अवधारणा के अनुरूप नेतृत्व में भी तथा रणनीतिक निर्णयों में भी विचार विमर्श प्रक्रिया को स्थान दिया जाता है। विभिन्न

मत, विचार एवं नवाचारों से जहां संगठन की निर्णय दक्षता वृहदरूपी हो जाती है वहीं संगठन के सदस्यों में सहभागिता से संगठन में भावनात्मक लगाव एवं प्रतिबद्धता की वृद्धि होती है। इस प्रकार का नेतृत्व लचीले पन के साथ ही उत्तरदायित्व की भावना में वृद्धि करता है। साथ ही कर्मचारियों के मत सुनकर एवं ग्राह्य कर वह यह निर्धारित करता है कि संगठन का मोराल कैसे उच्च बनाया जाए। इस शैली में चूंकि प्रतिमान एवं लक्ष्यों का निर्धारण एवं सफलता की संभावना का मूल्यांकन सदस्यों की सहभागिता से किया जाता है, अतः संगठन किस स्तर तक परिणाम प्रदान कर सकता है या नहीं कर सकता के संबंध में वास्तविक स्थिति का निर्धारण आसानी से हो जाता है। जनतंत्रीय नेतृत्व शैली जहां सहभागिता विचार आधिक्य एवं नवाचार में वृद्धि में सहायक होती है वहीं दूसरी ओर व्यावहारिक निर्णयन एवं लक्ष्य निर्धारण इस शैली को वैज्ञानिक का रूप प्रदान करते हैं। यहां संगठन, नेतृत्व एवं कर्मचारियों के बीच द्वंद्व का स्तर निम्न होता है। तथा संचारहीनता की स्थिति भी निर्मित नहीं हो पाती है। इस शैली में अल्पताएं ही विद्यमान हैं जैसे कि जनतांत्रिक शैली के नेतृत्व में अत्यधिक मीटिंग तथा अत्यधिक विचारों पर मत भिन्नता तथा निर्णय नहीं ले पाने की स्थिति एवं पुनः-पुनः मीटिंग तथा अत्यधिक महत्वपूर्ण विषयों पर भी निर्णय टालने जैसी परिस्थितियां प्रकाश में आती हैं। कई बार संगठन भ्रमित तथा नेतृत्वहीन होने की स्थिति तक पहुंच जाता है। यह शैली नेतृत्व के अनिश्चिय की स्थिति में प्रभावी होती है जहां नेतृत्व को विचार तथा मार्गदर्शन के लिए अच्छे कर्मचारियों का सहयोग अपेक्षित होता है। सक्षम विचार एवं निर्णय शील नेतृत्व के लिए भी नए विचार एवं सोच प्राप्ति के लिए यह शैली कारगर होती है। इस शैली में मूल्यांकन कारक तथा दण्ड एवं पुरस्कार की भावना अल्प प्रभावी होती है क्योंकि सहभागिता की उच्च प्रतिशतता मूल्यांकन प्रक्रिया के महत्व को क्षीण करती हैं।

परिवेश को प्रभावित करने वाले कारकों की दृष्टि से इस शैली का परिवेश पर धनात्मक प्रभाव होता है विभिन्न कारकों में लचीलापन संबंधी कारक .28, उत्तरदायित्व संबंधी कारक .23, प्रतिमान संबंधी कारक .22, पुरस्कार संबंधी कारक .42, स्पष्टता संबंधी कारक .35, प्रतिबद्धता संबंधी कारक .26 होकर सभी कारकों पर इस शैली का धनात्मक प्रभाव स्थापित होता है। तथा परिवेश पर समग्र प्रभाव .43 भी धनात्मक होता है इस प्रकार जनंतंत्रीय शैली परिवेश पर सर्वथा धनात्मक प्रभाव अंकित करती है। यह शैली इस दृष्टिकोण से अधिकारित्व एवं सम्बद्धता शैलियों से कम तथा अन्य श्रेष्ठ शैलियों से अधिक धनात्मक प्रभाव परिवेश पर अंकित करती है।

पुलिस संगठन में विशेष प्रकृति के लक्ष्य प्राप्ति एवं रणनीति निर्धारण में जनतंत्रीय शैली कारगर हो सकती है। कर्मचारी कल्याण एवं हित संबंधी नीति निर्माण प्रक्रिया में, फील्ड कर्मचारियों के लिए आवश्यक उपकरण साज-सज्जा के चयन प्रक्रिया में तथा विभिन्न विशेष लक्ष्यों एवं रणनीति में जहां छोटे लेकिन प्रभावी एवं अनुभवी समूह द्वारा कार्य निष्पादन किया जा रहा है जनतांत्रिक शैली प्रभावी परिणाम उत्पादक हो सकती है। पुलिस संगठन में सामान्य तथा आवृत्त रूप से प्रयुक्त होने वाली शैली के रूप में इस शैली का निर्धारण बिरला ही प्रकाश में आता है।

5. निर्धारक शैली (pacesetting style) : इस शैली में नेतृत्व परिणाम उत्पादकता को केन्द्र में रखकर कार्य करता है। यह शैली बलात् शैली की तरह नेतृत्व केन्द्रित शैली है लेकिन अपेक्षाकृत सक्षम शैली के रूप में तथा अपेक्षाकृत भिन्न परिस्थितियों में उपयोग की जाती है। इस शैली में नेतृत्व गुणवत्ता के उच्चतम प्रतिमानों को स्थापित करता है तथा स्वयं उनके उदाहरण समूह के समक्ष प्रस्तुत करता है। नेतृत्व स्वयं कार्यों को बेहतर एवं तीव्र बनाने के लिए प्रेरित होता है तथा संगठन के सभी सदस्यों से इसी प्रकार की अपेक्षा करता है। कार्य गुणवत्ता संबंधी कमियों को तत्काल पहचानकर उनमें सुधार की त्वरित मांग समूह से की जाती है तथा सुधार नहीं होने की स्थिति में तीव्र गति से प्रतिस्थापन्न भी सक्षम कर्मचारियों से कर दिया जाता है। यहां कार्य कौशल एवं गुणवत्ता को सर्वोच्चता प्रदान की जाती है। नेतृत्व के इस प्रकार की प्रवत्ति तथा सर्वथा उत्कृष्टता की अपेक्षा के कारण कई मामलों में कर्मचारियों के मोराल में कमी देखी गई है साथ ही नेतृत्व के द्वारा निर्धारित उच्च प्रतिमानों के संबंध में नेतृत्व के स्तर पर तो विचार स्पष्ट होते हैं लेकिन कर्मचारी के स्तर पर पूर्ण रूप में स्पष्टता के अभाव के कारण द्वंद्व की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। नेतृत्व की प्रतिक्रिया की उक्त कार्य के लिए उक्त व्यक्ति सही नहीं है या अक्षम है, का भी ऋणात्मक प्रभाव सदस्यों पर पड़ता है। तथा शीघ्र ही प्रतिस्थापन्न एवं बार बार प्रतिस्थापित होने की प्रवत्ति कर्मचारियों के आत्मविश्वास पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। इस प्रकार की शैली में संगठन के सदस्यों के मध्य कडी प्रतिस्पर्धा प्रारंभ हो जाती है। जो कि संगठन के आंतरिक सौहार्द को प्रतिकूल रूप में प्रभावित करती है। यहां कार्य से अधिक नेतृत्व की अपेक्षा का प्रभाव देखा जाता है तथा नेतृत्व का संगठन के सदस्यों के स्वयं के स्तर पर स्थापित नवाचारों के प्रति कोई प्रोत्साहन नहीं होता तथा कार्य अत्यधिक लक्ष्य केन्द्रित तथा एक ही प्रकार से लगातार कार्य करते रहने से उबाऊ लगने लगता है। संगठन के सदस्यों के स्तर पर इस प्रकार की शैली में विचार

नवाचार, तथा स्वयं की भूमिका के संबंध में प्रोत्साहन का अभाव होता है। इस शैली में पुरस्कार की प्रक्रिया का स्थान नहीं होता है क्योंकि नेतृत्व के निर्धारित प्रतिमानों एवं लक्ष्यों की दृष्टि से कार्य गुणवत्ता पुरस्कार योग्य होने की संभावना अल्प ही रहती है। नेतृत्व का फीडबैक सदस्यों के अनुगमन की स्थिति में नहीं दिया जाता तथा दिशा निर्देशों के लिए विशेषज्ञों की सहायता ली जाती है। जिसके कारण सदस्यों के व्यक्तिगत प्रयासों को उपयोगी होने की भावना न्यूनतम स्तर पर होती है जो कि संगठन के प्रति उनकी प्रतिबद्धता को प्रतिकूल प्रभावित करती है।

इस निधारक शैली का उदाहरण आर.एण्ड डी. फार्मासिटिकल कंपनी के बायोकेमिस्ट मि. सेम के उदाहरण से दिया जा सकता है। मि. सेम स्वयं उच्च स्तर के तकनीकी विशेषज्ञ होने से कंपनी में सभी की तकनीकी मदद करने में सक्षम थे। इसी कारण उन्हें कंपनी ने नए उत्पाद के अनुसंधान एवं विकास के लिए गठित टीम का प्रमुख नियुक्त किया इस टीम में अन्य सभी सहयोगी वैज्ञानिक दक्ष तथा स्व अभिप्रेरित थे। लघु लेकिन कार्य दक्ष कुशल समूह के नेतृत्वकर्ता के रूप में सेम ने स्वयं उदाहरण प्रस्तुत करते हुए अपने आप को उत्कृष्ट नेतृत्वकर्ता के रूप में स्थापित किया तथा सेम की टीम ने उत्कृष्ट स्तर एवं रिकार्ड समय में अपना कार्य सफलतापूर्वक पूर्ण किया। सेम की सफलता को देखते हुए कंपनी ने उसे डिवीजन के प्रमुख के तौर पर पदोन्नत किया नए दायित्व की स्थिति में सेम के कार्य उद्देश्यों का विस्तार हुआ तथा उसे अब कंपनी की कार्य योजना तथा विस्तार, प्रोजेक्ट के संबंध में समंवय विभिन्न स्तरों पर कार्य निर्धारण तथा अन्य स्तरों पर क्षमताओं का विकास करने की बहुमुखी जिम्मेदारी प्राप्त हुई, नई तथा वृहद परिस्थितियों में सेम सफल नेतृत्वकर्ता के रूप में अपने आप को स्थापित नहीं कर सका, वह सदस्यों के अपने जितने योग्य और सक्षम नहीं होने के कारण उन पर विश्वास नहीं करना, विभिन्न इकाइयों के द्वारा निर्धारित समय में वांछित लक्ष्य प्राप्त नहीं करना आदि कारणों से वह परेशान होकर स्वयं लंबे समय तक कार्य करने, विश्राम के समय, यहां तक की रात्रि एवं अवकाश के दिनों में भी स्वयं कार्य कर लक्ष्य प्राप्ति का प्रयास करने लगा। नेतृत्वकर्ता के रूप में समूह का विश्वास एवं अभिप्रेरण तथा निर्देश एवं कार्य विकास के द्वारा लक्ष्य प्राप्ति में बहुत असफल रहा। अंततः कंपनी द्वारा पुनः उसे पूर्वानुसार उत्पाद विकास संबंधी टीम का प्रमुख बनाया गया। इस प्रकार निर्धारक शैली नेतृत्व विशेष परिस्थितियों में जहां कर्मचारी, स्वअभिप्रेरित, तथा उत्कृष्ट सक्षमता युक्त होते हैं, तथा अल्प मात्रा में निर्देशन एवं संयोजन की आवश्यकता उन्हें होती है, की स्थिति में प्रभावी शैली के रूप में स्थापित होती है। बड़े समूहों में तथा जहां

अपेक्षाकृत विभिन्न क्षमताओं के कर्मचारियों की उपस्थिति हो तथा बहुमुखी लक्ष्य की प्राप्ति करना हो वहां इस शैली से वांछित परिणाम की प्राप्ति संदेह से परे नहीं मानी जाती है। नेतृत्व की एकल शैली के रूप में दीर्घ समयावधि के लिए निर्धारक शैली के उपयोग को उपयुक्त नहीं माना जाता है।

परिवेश पर प्रभाव की दृष्टि से यह शैली परिवेश को ऋणात्मक रूप से प्रभावित करती है। विभिन्न कारकों पर इस शैली के प्रभाव के मूल्यांकन पर लचीलापन संबंधी कारक -.07, उत्तरदाायित्व संबंधी कारक .04, प्रतिमान संबंधी कारक -.27, पुरस्कार संबंधी कारक -.29, स्पष्टता संबंधी कारक -28, प्रतिबद्धता संबंधी कारक -.20, के रूप में प्रभावित होते हैं। यहा उत्तरदायित्व संबंधी कारक के अलावा शेष संभी कारक ऋणात्मक रूप से प्रभावित होते हैं तथा परिवेश पर समग्र प्रभाव -.25 पड़ता है जो कि परिवेश पर प्रभाव की दृष्टि से ऋणात्मक स्तर पर द्वितीय श्रेणी पर आता है अतः परिवेश पर प्रभाव की दृष्टि से यह शैली ऋणात्मक प्रभाव अंकित करती है।

पुलिस संगठन में संक्षिप्त लक्ष्य एवं सीमित विशेष लक्ष्यों के लिए गणित विशेष टीम जहां योग्य चुनिन्दा अधिकारियों कर्मचारियों को चयन किया जाकर टीम गठन किया गया हो तथा पुलिस अनुसंधान एवं विकास संबंधी लक्ष्यों की प्राप्ति, प्रशिक्षण संबंधी नीति निर्धारण समिति आदि में इस शैली का कारगर इस्तेमाल किया जा सकता है। पुलिस संगठन शासकीय संगठन होने से विभिन्न स्तरों पर विविधता का मान अधिक होने से निर्धारित शैली, दीर्घ समय या एक मात्र नेतृत्व शैली के रूप में प्रयुक्त किया जाना युक्तिसंगत नहीं माना जा सकता।

6. कोचिंग शैली (Coaching Style) : कोचिंग शैली में नेतृत्व सदस्यों के कौशल वृद्धि के प्रयासों पर केंन्द्रित होता है। इस शैली में समूह के सदस्यों भविष्य के लिए तैयार किया जाता है। इस शैली का तात्कालिक प्रभाव संगठन की कार्य गुणवत्ता पर नहीं पड़ता क्योंकि यह शैली कार्य संबंधी लक्ष्यों के स्थान पर व्यक्तिगत विकास पर अधिक ध्यान दिया जाता है। तात्कालिक परिणाम नहीं देने की स्थिति में भी दीर्घ कालिक परिणामों के स्तर पर यह शैली परिणाम प्रदाय करने में सक्षम होती है इस शैली में नेतृत्व एवं समूह के मध्य सतत संवाद स्थापित होता है जिससे की परिवेश संबंधी निर्धारक तत्व धनात्मक रूप से प्रभावित होते हैं यहां प्रयोगों की स्वतंत्रता तथा आपसी सौहार्द को विशेष स्थान प्राप्त होता है। जिससे की सदस्यों के आत्म विश्वास तथा नवाचार की प्रवृत्ति विकसित होती है संगठन के सदस्य त्वरित तथा सकारात्मक फीडबैक प्राप्ति के विश्वास से प्रेरित होते है तथा संगठन के वृहद परिदृश्य में उनका अवदान किस

हद तक सार्थक है इसका आभास एवं प्रेरणा सतत अभिप्रेरण प्रदान करती है।

कोचिंग शैली के नेतृत्वकर्ता अपने कर्मचारियों में समाहित अद्वितीय विशेषताओं, सक्षमताओं एवं कमजोरियों को चिह्नित करते हैं। फिर उसमें सुधारात्मक प्रयास करते हैं। जिससे की कर्मचारी का व्यक्तिगत एवं व्यवसायिक उत्थान हो सके। वे कर्मचारियों को प्रोत्साहित करते हैं कि वे दीर्घ कालिक लक्ष्यों को स्थापित करें तथा इस संबंध में उनकी विचारशीलता, योजनाशीलता के संबंध में उन्हें सतत मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। इस शैली में नेतृत्व के द्वारा कर्मचारियों को विकास योजनाओं में उनकी भूमिका तथा जिम्मेदारियों के संबंध में प्रेरित करते हुए उन्हें लगातार निर्देश तथा फीडबैक प्रदान किया जाता है। कर्मचारियों को चुनौतीपूर्ण कार्य प्रदान कर उनमें विश्वास ज्ञापित किया जाता है तथा इसमें लक्ष्यपूर्ति में विलंब की परवाह तक नहीं की जाती। इस शैली का नेतृत्व कर्मचारियों की दीर्घकालीन कौशल उन्नयन के लिए लघु असफलताओं को भी सहज स्वीकार करता है। सतत संचार एवं संवाद के कारण इस शैली में कर्मचारी उनसे अपेक्षा के प्रति भली भांति परिचित होते हैं। साथ ही उनका कार्य किस प्रकार संगठन के वृहद लक्ष्यों एवं योजनाओं में उपयोगी है कि जानकारी भी उन्हें होती है इस प्रकार उत्तरदायित्व तथा स्पष्टता धनात्मक रूप से प्रभावित होती है। प्रतिबंद्धता की दृष्टि से यह शैली कर्मचारियों में विश्वास ज्ञापित करने तथा भविष्य के परिप्रेक्ष्य में उन्हें तैयार करने की भावना के कारण, सार्थक परिणाम प्रदान करती है। कर्मचरियों में विश्वास करने, उनसे उनके सर्वश्रेष्ठ प्रयासों की अपेक्षा करने तथा उनके भविष्य के प्रति सहानुभूति एवं सहयोग की भावना के कारण संगठन के सदस्य चुनौतियों को मन से, हृदय से, आत्मा के स्तर पर स्वीकार करते हैं तथा प्रेरित होते हैं।

कोचिंग शैली विशेष परिस्थितियों में सार्थक सिद्ध होती है। खासकर उस संगठन में जहां कर्मचारी अपनी कमजोरियों के प्रति सचेत होते हैं तथा अपने कार्य एवं गुणवत्ता वृद्धि उनकी रुचि के विषय होते हैं। संगठन के सदस्य नए कौशल के ज्ञान एवं सीखने की प्रक्रिया के द्वारा अपने विकास के प्रति प्रेरित होने की स्थिति में यह शैली अच्छे परिणाम प्रदान करती है। नेतृत्व के द्वारा प्रशिक्षण के प्रति रुचि होना तथा नेतृत्व के संवाद एवं प्रशिक्षण कौशल भी इस शैली की सफलता के निर्धारक तत्व होते है। परिवेश पर प्रभाव की दृष्टि से यह शैली धनात्मक प्रभाव परिवेश पर अंकित करती है। विभिन्न कारकों में लचीलापन .17, उत्तरदायित्व .08, प्रतिमान .39, पुरस्कार .43, स्पष्टता .38, प्रतिबद्धता .27, के रूप में सभी कारक धनात्मक रूप से परिवेश को प्रभावित करते हैं।

तथा परिवेश पर कुल प्रभाव .42 धनात्मक प्रभाव होता है। जो कि अन्य शैलियों की तुलना में संबंद्धता शैली एवं जनतांत्रिक शैली के बाद तृतीय स्तर पर धनात्मक प्रभाव अंकित करने वाली शैली के रूप में यह शैली स्थापित होती है।

पुलिस संगठन अनुशासनात्मक संगठन है तथा मैदानी, रणनीतिक, लक्ष्यों एवं कार्यों की अधिकता की स्थिति में इस शैली का प्रयोग एक मात्र शैली के रूप में नहीं किया जा सकता है। विभिन्न प्रशिक्षण इकाइयों में यह शैली सार्थक परिणाम प्रदाय कर सकती है, साथ ही पुलिस के नियमित कार्यों में अन्य शैलियों के साथ समाहित कर इस शैली का सार्थक उपयोग किया जा सकता है। पुलिस संगठन में पूर्व अधिकारियों के कौशल की चर्चाएं विभिन्न स्तरों पर की जाती हैं। साथ ही विभिन्न व्यक्तिगत कौशल जो कि केस स्टडी के रूप में अध्ययन का विषय नहीं बन पाते हैं। उनके क्रमबद्ध हस्तांतरण तथा संगठन के हित में सार्थक उपयोग को सुनिश्चित करने में इस शैली का उपयोग निश्चित ही अत्यधिक उपयोगी हो सकता है। सामान्यतः इस शैली का अभाव पुलिस संगठन में पाया जाता है जबकि इस शैली के प्रसार से प्रशिक्षण संबंधी संसाधनों की अल्पता का परिहार किया जा सकता है। विभिन्न विषयों पर प्रशिक्षण सत्र एवं कार्यशालाएं आयोजित की जाती है जो कि मानव एवं आर्थिक संसाधन के व्यपन की स्थिति निर्मित करती है जबकि विभिन्न स्तरों के नेतृत्व के द्वारा कोचिंग शैली के माध्यम से उनके संदेश को सरल तरीके से हस्तांरित कर संसाधन बचाए जाने का कार्य किया जा सकता है।

नेतृत्व की उपरोक्तानुसार वर्णित छः शैलीयां सामान्यतः नेतृत्व के वृहद परिवेश एवं प्रत्येक परिस्थिति को समाहित करती है। विचारको द्वारा नेतृत्व शैलियों के विविध प्रकार के वर्गीकरण प्रस्तुत किएं है जिनमें शैलियों को विभिन्न नामों से तथा नेतृत्व के लघु विन्यास के आधार पर व्याख्यायित करने का प्रयास किया गया है। कुछ शैलियां समाहित तथा कुछ शैलीयां अपेक्षाकृत कम उपयोग में आने वाली तथा कुछ शैलियां लघुतम विन्यास आधारित हैं। इस संबंध में उन्नीस नेतृत्व शैली वर्गीकरण महत्वपूर्ण वर्गीकरण है जहां नेतृत्व की उन्नीस शैलियों को वर्णित किया गया है।

1. निरंकुश नेतृत्व शैली (autocratic style) : इस शैली में नेतृत्व नियंत्रण प्रधान होता है तथा अधिकाधिक नियंत्रण स्तर को यहां स्थापित किया जाता है, विचार स्वतंत्रता, आदान प्रदान, तथा सहभागिता के तत्वों का सर्वथा अभाव होता है।

2. करिश्माई नेतृत्व शैली (charismatic style) : नेतृत्व अपने

करिश्माई प्रभाव से समूह को आकर्षित, प्रोत्साहित एवं अभिप्रेरित करता है।

3. कोचिंग शैली (coaching style) : इस शैली का नेतृत्व भविष्य के लिए कर्मचारी निर्माण एवं उनके व्यक्तिगत कौशल उन्नयन के आधार पर कार्य करता है।

4. पारसांस्कृतिक शैली (cross culture style) : संगठन राज्य या राष्ट्रीय परिवेश संबंधी कारकों से भिन्न पारसंस्कृति एवं परिवेश का निर्माण तथा लक्ष्य प्राप्ति हेतु उन्नयन इस शैली की प्रमुख विशेषताएं होती हैं।

5. आकस्मिक शैली (emergent style) : संगठन या इकाई के नेतृत्व परिवर्तन पर समूह सामान्यतः सरलता से नए नेतृत्व को स्वीकार्य नहीं कर पाता। इस प्रक्रिया में परिस्थिति अनुसार समय अपेक्षित होता है। आकस्मिक शैली इस प्रकार की परिस्थितियों में कारगर तथा त्वरित परिणाम प्रदान करती है। यहां परिवर्तन को आकस्मिकता के तौर पर स्थापित किया जाता है।

6. विनिमय शैली (exchange style) : यह शैली नेतृत्व एवं समूह के सदस्यों के बीच पारस्परिक विनिमय के आधार पर परिभाषित की जाती है। विनिमय पारस्परिक कार्य विचारों तथा प्राथमिकताओं के स्तर पर होता है। यह समान रूप में तथा उच्च अधिकारित्व की भावना को समाहित करते हुए भी किया जाता है।

7. अहस्तक्षेप शैली (laissez fairi style) : नेतृत्व के अहस्तक्षेप या अल्प हस्तक्षेप के आधार पर यह शैली परिभाषित होती है। यहां नेतृत्व के निर्देश एवं उनसे संपर्क को न्यूनतम स्थिति तक लाया जाता है। यह शैली उच्च प्रशिक्षित तथा अभिप्रेरण युक्त समूह में ही कारगर होती है।

8. स्थिति जन्य नेतृत्व शैली (situatioal style) : नेतृत्व शैलियों पर वृहद शोध के परिणाम स्वरूप स्थितिजन्य नेतृत्व शैली की अवधारणा प्रकाश में आई यहां यह निर्धारित किया गया कि नेतृत्व शैली स्थिति के आधार पर ही निर्धारित होती है जो कि एक परिवर्तनशील प्रक्रिया है।

9. सामरिक नेतृत्व (strategic style) : सामान्यतः सेना एवं सैन्य संगठनों में सामरिक नेतृत्व शैली के रूप में सामरीक नेतृत्व शैली प्रयुक्त की जाती है। यहां प्रतिस्पर्धा का कारक केंद्रीय होता है तथा प्रतिस्पर्धी लक्ष्य प्रप्ति योजना के आधार पर समूह कार्य करता है।

10. टीम नेतृत्व शैली (team style) : संगठन में सुपरवाईजर को टीम नेतृत्वकर्ता के रूप में तथा समूह को एक टीम के रूप में परिवर्तित कर लक्ष्य प्राप्ति हेतु टीम भावना तथा अभिप्रेरण का उच्च स्तर प्राप्त करने का प्रयास यहां

किया जाता है।

11. परिवर्तनकारी शैली (transformational style) : यहां प्राथमिक केन्द्र बिन्दु परिवर्तन होता है तथा नेतृत्व ध्येय स्वयं के स्तर पर, सदस्यों के स्तर पर, समूह के स्तर पर एवं संगठन के स्तर पर परिवर्तन निर्धारित कर उन्नयन का प्रयास का होता है।

12. सुविधा शैली (facilitative style) : नेतृत्व के द्वारा अनौपचारिक संवाद तथा सुविधापूर्ण माहौल में कार्य का निर्धारण इस शैली का केन्द्र होता है। नेतृत्व की भूमिका समूह को सुविधा प्रदाता के रूप में निर्धारित होती है।

13. प्रभाव शैली (influence style) : नेतृत्व समूह को किस प्रकार प्रभावित करता है तथा उच्च कार्य निष्पादन के लिए सदस्यों को पुरस्कार के आधार पर आकर्षित करना है। अथवा दंड के भय के आधार पर कार्य निष्पादन सुनिश्चित करना है। यहां समूह के सदस्यों के प्रभावित होने के आधार क्षमता, स्तर के आधार पर नेतृत्व प्रकिया का निर्धारण किया जाता है।

14. भागीदारी शैली (participative style) : किसी भी संगठन में नेतृत्व के द्वारा सदस्यों से रचनात्मकता, टीम भावना, समस्याओं के निदान, गुणवत्ता के उन्नयन, उत्कृष्ट उपभोक्ता सेवा के लिए आदेश देकर तत्काल इन लक्ष्यों की प्राप्ति आसान नहीं होती। इस परिप्रेक्ष्य में भागीदारी शैली का नेतृत्व सदस्यों को विभिन्न स्तरों पर भागीदारी का अवसर प्रदान कर अनुकूल माहौल में उन्नयन सुनिश्चित करता है।

15. सेवा शैली (servant style) : यहां नेतृत्व संगठन के सदस्यों की आवश्यकताओं को प्राथमिकता प्रदान करता है।

16. दूरदर्शी नेतृत्व (visionary style) : वर्तमान परिवेश तथा परिवर्तन एवं भविष्य में उनके स्वरूप के आधार पर संगठन के सदस्यों की भूमिका का निर्धारण तथा भविष्य के संकेतों पर आधारित कार्य प्रक्रिया का स्थापन्न इस नेतृत्व की प्रमुख विशेषता होती है।

17. व्यवहार शैली (transactional style) : संगठन के स्थापित संरचनात्मक तत्वों के दायरे में रहते हुए, संगठन के कार्य व्यवहार का परिवर्तन प्रक्रिया से परे स्वरूप निर्धारित कर कार्य करना इस शैली का केन्द्रीय तत्व है। इसे पुस्तकीय कार्य व्यवहार शैली भी कहा जाता है। जहां निर्धारित मापदंडों पर आधारित कार्य ही किए जाते हैं।

18. स्तर पांच शैली (level five style) : जिमकालेन्स ने अपनी पुस्तक 'गुड टू ग्रेड' में इस शैली की व्याख्या की तथा नेतृत्व शैली जो किसी कंपनी को

अच्छे से महानता के स्तर पर ले जाए के अभाव को चिह्नांकित किया।

19. मौलिक शैली (primal style) :- नेतृत्व शैलियों के विभिन्न स्वरूपों की प्राथमिकता एवं आवश्यकताओं की विश्लेषण करते हुए डेनियल गोलमन ने मौलिक नेतृत्व शैली को परिभाषित किया तथा बताया कि कोई भी नेतृत्वकर्ता परिस्थितियों एवं आवश्यकताओं के आधार पर नेतृत्व के नए स्तर स्थापित और निर्धारित करता है। यहां नेतृत्व शैली को पूर्व निर्धारित सीमाओं से भिन्न मौलिक तथा परिस्थिति अनुरूप परिवर्तनशील बताया गया।

इस प्रकार उपरोक्त शैलियों में व्यवहार शैली, स्तर पाँच शैली तथा मौलिक शैली को अल्प प्रचलित शैली के रूप में माना जाता है। इसी प्रकार कुछ शैलियों जैसे विनिमय अहस्तक्षेप एवं सुविधा शैली तथा सेवा शैली के मूल तत्व अंतर्समाहित प्रतीत होते हैं। नृतत्व की प्रक्रिया का सूक्ष्म वर्गीकरण उक्त उन्नीस शैलियों के माध्यम से किया गया है। सन् 1939 में कुर्तलेबिन के नेतृत्व में शोध कर्ताओं के समूह ने विभिन्न नेतृत्व शैलियों की निर्धारण कर व्याख्या तथा अवधारणा प्रस्तुत की इस शोध के आधार पर नेतृत्व की तीन प्रमुख शैलियां बताई गई तथा नेतृत्व के प्रक्रिया को मुख्य रूप से इन तीन शैलियों में समाहित बताया गया।

1. सत्तावादी या निरंकुाश (Authoritarina or Autocratic Style)

2. प्रतिभागी या जनतंत्रिय शैली (Participative or Democratic Style)

3. मुक्त शासन शैली (Delegative or Free Reign Style)

पूर्व में व्याख्यायित नेतृत्व शैलियों का समाहन उक्तानुसार शैलियों में सामान्यतः होता है। नेतृत्व की बलात् शैली, आधिकारित्व शैली, निरंकुश शैली की व्याख्या पूर्व में की गई, इनके मूल तत्वों को सत्तावादी नेतृत्व शैली समाहित करती है। इसी प्रकार संबद्धता शैली तथा जनतंत्रीय शैली, विनिमय शैली, भागीदारी शैली के तत्व प्रतिभागी शैली में विद्यमान हैं, उक्तानुसार तीन शैलियों का वर्गीकरण का आधार नेतृत्व की मूल भूत प्रक्रिया है तथा अन्य वर्गीकरण सूक्ष्म स्तर पर वर्गीकरण एवं निर्धारण की व्याख्या करते हैं। तीन शैली वर्गीकरण में दबाव की दिशा को भी विविध शैलियों वर्गीकृत किया गया है, जहां सत्तावादी या निरंकुाश शैली में दबाव की दिशा सदस्यों या कर्मचारियों की ओर होती है, वहीं लोकतंत्रीय शैली में दबाव कारक नेतृत्व एवं समूह को समान रूप से प्रभावित करते हैं तथा मुक्त शासन शैली में दबाव परिवेश के साथ नेतृत्व को प्रभावित करता है। इस प्रकार एक नेतृत्वकर्ता में उक्त तीनों शैलियों के समय एवं

परिस्थिति अनूरूप उपयोग पर बल दिया गया। नेतृत्व शैली के निर्धारण में नेतृत्वकर्ता एवं समूह के बीच किस प्रकार का दबाव या बल पारस्परिक प्रभाव डालता है, तथा परिस्थितियां किस प्रकार की शैली की मांग करती है, को प्रमुख आधार माना जाता है। जैसे निरंकुश शैली संगठन में आए किसी नए कर्मचारी के लिए जो कि कार्य सीख रहा है तथा नेतृत्वकर्ता सक्षम एवं प्रभावी प्रशिक्षक के तौर पर कार्य कर सकता है तब नए सदस्य को अभिप्रेरित करने जिससे कि वह कौशल विकास की ओर अग्रसर हो सके, का कार्य इस शैली के माध्यम से किया जा सकता है। यहां परिस्थिति नए कर्मचारी के लिए नए परिवेश के रूप में स्थापित होती है। प्रतिभागी शैली का उपयोग ऐसे समूह में जहां की सदस्य अपना कार्य बखूबी जानते हो तथा नेतृत्व समस्याओं को पहचानता हो लेकिन हर समय हर प्रकार की सूचना की उपलब्धता से वंचित हो। ऐसे में प्रतिभागी शैली के माध्यम से विचार एवं सूचना का आदान प्रदान तथा सदस्यों को टीम भावना से ओतप्रोत कर प्रतिभागी शैली कारगर परिणाम दे सकती है। यहां कर्मचारी कार्य के बारे में अधिक जानकारी रखते हों तथा कार्य स्वामित्त भावना से प्रभावित हों तब मुख्य शैली के माध्यम से न्यूनतम निर्देश तथा संलिप्तता कर्मचारियों को उत्तरदायित्व की भावना तथा अभिप्रेरण विकास प्रदाय करने में सक्षम होती है। एक ही संगठन में एक ही लक्ष्य के लिए एक साथ तीनों शैलियों का इस्तेमाल भी किया जा सकता है। अतः समग्र विश्लेषण पर यह कहा जा सकता है कि नेतृत्वकर्ता शैली के अधिकाधिक प्रयोग के आधार पर शैलीगत नाम से पहचाने जा सकते हैं, लेकिन सभी शैलियां अधिकांश नेतृत्वकर्ताओं में समाहित होती हैं। कोई भी नेतृत्वकर्ता एक निश्चित शैली के आधार पर ही अपने शत प्रतिशत नेतृत्व निर्वहन का कार्य नहीं करता है। यहां तक की एक ही मीटिंग में अलग अलग बिन्दुओं पर अथवा पृथक-पृथक कर्मचारियों पर दिए गए निर्देश में शैलीगत भिन्नता सरलता से देखी जा सकती है। नेतृत्वकर्ता कर्मचारी के प्रति स्थापित पूर्वाग्रह एवं उनकी कार्य निष्पादन क्षमता के आधार पर भिन्न व्यवहार का प्रदर्शन करते हैं। संगठन या इकाई परिवर्तन पर भी नेतृत्व शैली में परिवर्तन आसानी से देखा जा सकता है। नेतृत्व शैलियों के संबंध में नेतृत्वकर्ता को गुण दोंषों का ज्ञान होना तथा किसी समस्या के प्रति कौन सी शैली अपेक्षित है, तथा वह किस शैली से इस दिशा में प्रयास कर रहा है, का मूल्यांकन एवं विश्लेषण की क्षमता होना, शैली या व्यक्तित्व के आवरण में सीमित नहीं होकर परिवर्तनशीलता को समाहित करना अच्छे नेतृत्वकर्ता के वांछित लक्षण होते हैं। समय अनुकूल उपयुक्त शैली का निर्धारण नेतृत्व की सफलता एवं उसकी श्रेणी

की संभाव्यता का निर्धारक होता है।

नेतृत्व शैली के निर्धारण को प्रभावित करने वाले कारक :-

संगठन में समाहित तथा परिस्थितिजन्य कारक शैली निर्धारण को प्रभावित करते है। दूसरे शब्दों में नेतृत्वकर्ता को शैली निर्धारण कुछ कारकों एवं उन पर आधारित मूल्यांकन के द्वारा करना श्रेयस्कर होता है।

- कितना समय उपलब्ध है?
- क्या संगठन के आंतरिक सह संबंध विश्वास आदत की भावना पर आधारित हैं, या अविश्वास की भावना पर?
- सूचनाओं की उपलब्धता कहाँ है, नेतृत्व के पास, कर्मचारियों के पास या दोनों के पास?
- कर्मचारी किस स्तर तक प्रशिक्षित हैं तथा नेतृत्व किस स्तर तक लक्ष्यों को भलीभांति जानकारी में रखता है?
- आंतरिक द्वंद्वों की स्थिति क्या है?
- तनाव का स्तर क्या है?
- लक्ष्य किस प्रकृति का है, संरचनात्मक, जटिल या सामान्य?
- नियम तथा स्थापित प्रक्रिया किस प्रकार के हैं?

उक्तानुसार कारक हमें नेतृत्व के लिए शैली निर्धारण संबंधी चैक लिस्ट प्रदाय करते हैं। नेतृत्वकर्ता के रूप में नेतृत्वशैली विषयक अनिर्णय या निर्धारण के स्तर पर उक्त कारकों के आधार पर मूल्यांकन तथा विश्लेषण बेहतर विकल्प के चयन में सहायक की भूमिका सार्थक रूप से निभा सकते हैं। संगठन के आंतरिक सह संबंध उनके प्रकृति एवं स्तर तथा लक्ष्य प्राप्ति के लिए किस प्रकार का उन्मुखी करण लाभप्रद यह आधारभूत तत्व नेतृत्व शैली निर्धारण में दिशा प्रदाय करता है। नेतृत्व एवं समूह के बीच आंतरिक तनाव तथा अविश्वास एवं असम्मान की भावना के मध्य यदि चुनौती पूर्ण लक्ष्य निर्धारित समयावधि में पूर्ण करना हो तथा बेहतर टीम भावना अपेक्षित हो, तब ऐसी स्थिति में नेतृत्व प्रक्रिया सह संबंधों में सुधार प्रोत्साहन के माध्यम से कार्य की दिशा प्राप्त कर सकेगी। नेतृत्वकर्ता को अपना कार्य संगठन के नियम कानून तथा प्रक्रिया एवं निर्धारित संरचना के बीच ही निष्पादित करना होता है। अतः संगठन की संरचना उसमें नेतृत्व की स्थिति तथा सदस्यगत कारकों के मध्य बेहतर तारतम्य की वह परिस्थितियां जो उत्कृष्ट परिणाम प्रदान कर सकते है, का मूल्यांकन नेतृत्व शैली के निर्धारण का प्रमुख आधार होता है। परिवर्तन की अपेक्षा तथा परिस्थिति के संबंध में निर्धारण कर समयानुरूप शैली परिवर्तन के माध्यम से सार्थक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं।

नेतृत्व दृष्टिकोण

नेतृत्व शैलियों से परे नेतृत्वकर्ता का दृष्टिकोण कारक नेतृत्व को प्रभावित करता है, नेतृत्व के प्रति दृष्टिकोण धनात्मक ऋणात्मक या समरूप श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है। नेतृत्व के द्वारा अपने सदस्यों अथवा कर्मचारियों को इस दृष्टिकोण से देखा तथा संपर्क किया जाता है वह नेतृत्व का दृष्टिकोण होता है। धनात्मक दृष्टिकोण सकारात्मक सोच के साथ सुधार की बात को प्रोत्साहित करता है तथा इस प्रकार के दृष्टिकोण में पुरस्कार, प्रशिक्षण, स्वच्छन्दता के कारक प्रभावित होते हैं जो कि सदस्यों को अभिप्रेरित करते है। वहीं ऋणात्मक दृष्टिकोण या नकारात्मक सोच में दण्ड अपशब्दों का प्रयोग तथा सख्त मूल्यांकन प्रक्रिया का प्रमुख स्थान होता है तथा जोखिम एवं भय के माध्यम से सदस्यों को कार्य की ओर अग्रसर करने का प्रयास किया जाता है। ऋणात्मक दृष्टिकोण के नेतृत्वकर्ता अपने आप को सामान्य से अधिक तथा उच्च स्तरीय रूप में प्रस्तुत करते हैं तथा उनका विश्वास होता है कि केवल दण्ड के माध्यम से ही कार्य कराया जा सकता है। नौकरी से निकाले जाने का भय, बिना वेतन, अवकाश, अन्य के सामने अपमान जनक व्यवहार आदि वे माध्यम हैं जिनके द्वारा इस प्रकार का नेतृत्व अपने आप को अधिक प्रभावी महसूस करता है। जबकि यह स्थापित तथ्य है कि इस प्रकार के दृष्टिकोण का गलत तरीके से प्रयोग कर्मचारियों के मोराल को प्रभावित करता है तथा ऐसे दृष्टिकोण का सामान्य परिणाम संगठन की परिणाम उत्पादकता में अल्पता के रूप में सामने आता है। नेतृत्वकर्ताँ के तौर पर समदृष्टिकोण भी प्रकाश में आता है जहां ऋणात्मक या धनात्मक दृष्टिकोण के स्थान पर कार्य आधारित दृष्टिकोण जैसे कि अच्छे कार्य पर पुरस्कार एवं कार्य अल्पता पर दण्ड की प्रवृत्ति वैसे कोई भी नेतृत्वकर्ता निरपेक्ष रूप से धनात्मक या ऋणात्मक दृष्टिकोण वाला नहीं होता अपितु दृष्टिकोण आधारित प्रवृत्तियों की अधिकता या कमी विभिन्न स्तरों पर देखी जाती है। अधिक तथा लगातार ऋणात्मक दृष्टिकोण से प्रभावित नेतृत्वकर्ता बास के रूप में स्थापित होता है। वहीं अधिक एवं लगातार धनात्मक दृष्टिकोण युक्त नेतृत्वकर्ता वास्तविक नेतृत्वकर्ता के रूप में स्थापित होता है। धनात्मक दृष्टिकोण सुधारात्मक प्रक्रियाओं के संवर्धन के साथ उच्च अभिप्रेरक कारकों को समाहित करता है।

पुलिस नेतृत्व में नेतृत्व की विभिन्न शैलियों के परिवर्तन एवं सामयिक उपयोग की अपेक्षा प्रभावी होती है। नेतृत्व की शैली निर्धारण के संबध में डी.आई.एस.सी. (डिस्क) पद्धति वर्णित की जाती है। यहां नेतृत्व की विभिन्न चार शैलियों को विभिन्न प्रभावी रूपों में परिभाषित कर गुण दोष निर्धारित किए गए

है। डी से तात्पर्य डोमिनेंस से है जहां नेतृत्वकर्ता अपने प्रभाव एवं वर्चस्व के माध्यम से तात्कालिक परिणाम चाहता है। वहीं 'इन्फलुऐन्स' संबधित नेतृत्व अपने प्रभाव एवं छवि के प्रति भावनात्मक अभिरुचि प्रदर्शित कर व्यक्ति केन्द्रित कार्य प्रदर्शित करता है। एस संबधी नेतृत्व स्टेडीनेस से ओतप्रोत होकर सुरक्षा एवं विश्वास के प्रति अभिरुचि व्यक्त करता है। वहीं सी का संबध कम्पलाईन्स से होता है। जो कि पारंगतता तथा श्रेष्ठ परिणाम में अभिरुचि व्यक्त करता है तथा अपनी आलोचनाओं के प्रति अत्याधिक संवेदनशील होता है।

पुलिस नेतृत्व की शैली व्यक्ति केन्द्रित प्रभावों से परिपूर्ण एवं विशेष प्रभाव निर्धारित करती है। पुलिस नेतृत्व शैली का निर्धारण व्यक्तित्व एवं परिस्थिति से अनुकूलन के रूप मे निरूपित किया जा सकता है।

अध्याय 4

संचार : संचार के बाधक एवं सहायक तत्व एवं सफल संचार

एक अमेरिकन महिला यात्री श्रीलंका में छुटटी मनाने बाद वापस न्यूयार्क हवाई अड्डा पर कस्टम अधिकारियों के पास जाँच के लिए पहुँची। उसने एक विशेष प्रकार की वेशभूषा जिसे काफटन कहा जाता है पहनी हुई थी, यह ड्रेस उसने श्रीलंका से ली थी। कस्टम अधिकारी ने महिला से पूछा,

'आपका Occupation (व्यवसाय) क्या है?'

चूंकि महिला सामान्य घरेलू महिला थी अतः उसे यह प्रश्न कुछ अटपटा लगा तथा अचानक इस प्रकार पूछे जाने पर थोड़ा विचार उपरांत उसने जबाव दिया

'None.'

यहां महिला के जवाब देते ही कस्टम अधिकारी ने संदेह की दृष्टि से देखते हुए उक्त महिला के सामान की अत्याधिक गंभीरता पूर्वक चैकिंग की तथा आधे घंटे से अधिक समय इस चैकिंग में लगा तथा महिला की अगली उड़ान इसी कारण से छूट गई तथा महिला ने इस बावत नाराजगी भी व्यक्त की। चैकिंग में कुछ भी संदेह या आपत्ति जनक नहीं मिलने पर कस्टम अधिकारी द्वारा उक्त महिला को जा सकने के लिए कहा, महिला की चूंकि अगली फ्लाईट चूक गई थी, अतः उसने जाने से पहले कस्टम अधिकारी से प्रश्न किया कि उसकी इस प्रकार गंभीरता पूर्वक तलाशी क्यों की गई तथा किस आधार पर उसे अपराधी या असामाजिक तत्व के तौर पर चैक किया गया?

कस्टम अधिकारी ने चैकिंग करने पर कुछ भी विवादास्पद या संदेहजनक वस्तु उक्त महिला के सामान में नहीं पाई थी, ने झिझकते हुए जबाब दिया, "मैं

आपकी कही बात पर विश्वास नहीं कर पा रहा हूं कि आप 'नन' है।" यह सत्य घटना है तथा महिला द्वारा रीडर डाईजेस्ट में रिपोर्ट की गई है। यहां महिला तथा कस्टम अधिकारी दोनों एक ही देश के, एक ही भाषा बोलने वाले हैं। तथा दोनों के क्षेत्रीय उच्चारण भी लगभग समान हैं, फिर भी संचार कर्ता के रूप में महिला के द्वारा दिया गया संदेश और ग्राह्यकर्ता के रूप में कस्टम अधिकारी द्वारा सुनकर समझे गए संदेश में बाधा या भिन्नता के परिणामस्वरूप न केवल अर्थ परिवर्तन की स्थिति उत्पन्न हुई, अपितु महिला को परेशानी का सामना करना पड़ा और उसकी फ्लाईट भी छूट गई। अधिकारी द्वारा महिला के व्यवसाय के संबंध में पूछने पर जहां महिला का जबाव 'कुछ नहीं था' जिसका आशय यह था कि वह कुछ नहीं करती या गृहणी है जो कि कस्टम अधिकारी द्वारा इसका आशय यह समझा गया कि वह 'नन' है, जबकि अपनी वेशभूषा के आधार पर वह महिला किसी भी स्थिति में 'नन' नहीं होगी, यह अवधारणा उक्त अधिकारी की होने से उसके द्वारा संदेह मानकर उक्त महिला के सामान की गंभीर चैकिंग की गई।

यहां उक्त उदाहरण यह स्पष्ट करता है कि किस प्रकार सामान्य कार्य व्यवहार में संचार की भूमिका परिणाम को प्रभावित करती है। जीवन के सामान्य कार्य कलापों में तथा संगठन के रूप में विभिन्न कार्य उद्देश्यों के लिए अपने अधीनस्थों को निर्देशन, मार्गदर्शन दिए जाने में, साथ ही संगठन की कार्यदक्षता निर्धारित करने में भी संचार का महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व के रूप में स्थान है। 'संचार' शब्द संस्कृत की 'चर' धातु से व्युत्पन्न है। 'चर' का अभिप्राय चलने से लिया जाता है तथा व्यापक अर्थ में यह निरन्तर आगे बढ़ने या एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानापन्न की प्रक्रिया से संबद्ध होता है। संचार का अंग्रेजी पर्याय 'कम्यूनिकेशन' शब्द है, लेटिन के इस मूल शब्द का अर्थ 'टू शेयर', 'टू ट्रांसमिट', 'टू मेक कामन', या 'टू इंम्पोर्ट' से लिया जाता है। साधारण शब्दों में संचार को विभिन्न माध्यमों, जिनमें की हाव-भाव, शारीरिक संकेतों सहित वाणी एवं विभिन्न विकसित माध्यम सम्मिलित हैं, के द्वारा सूचना के साधारणीकरण या प्रेषण के रूप में परिभाषित कर सकते हैं। संचार वह प्रक्रिया है जिसमें विचारों एवं सूचनाओं का आदान प्रदान या संप्रेषण होता है संचार का सीधा संबंध विचार अभिव्यक्ति, जिज्ञासा समाधान, संवाद निर्माण या संबंध प्रोत्साहन से हैं। संचार उद्देश्य पूर्ण सार्थक एवं प्रभावी होने के साथ एक बहु आयामी दोहरी प्रक्रिया है। संचार की प्रक्रिया को मुख्य रूप से कोडिंग एवं डी कोडिंग के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जहां कोड किए गए संदेश की भाषा को अन्य के द्वारा डी कोड कर ग्राह्य किया जाता है तथा इस प्रकार कोड किए गए संदेश के संबंध में

ज्ञात या समझ की अल्पता संचार को दुष्प्रभावित करती है। संचार के मॉडल को सामान्यतः निम्न प्रकार से प्रदर्शित किया जा सकता है :–

एनकोडर - शोर - संदेश - शोर - डीकोडर - एनकोडर - शोर - फीडवेक - शोर - डीकोडर

संचार प्रक्रिया में प्रेषक द्वारा संदेश को एनकोड किया जाता है जो कि संचार माध्यम में समाहित शोर के साथ प्रभावित होकर प्राप्त कर्ता के पास पहुंचता है प्राप्तकर्ता संदेश को डी कोड कर उस पर अपनी प्रतिक्रिया फीडबैक के रूप में देता है पुनः फीडबेक माध्यम गत शोर के साथ प्रभावित होकर प्रेषक को प्राप्त होता है इस प्रकार सतत प्रक्रिया स्थापित होती है, यहां संदेश की भाषा प्रेषक के विचार उसका अभिप्रेरण, अभिव्यक्ति की भाषा तथा माध्यम और माध्यम में समाहित विभिन्न शोरकारक संचार प्रक्रिया को प्रभावित करते है। इसी प्रकार फीडवैक के स्तर पर पुनः उक्त तत्व प्राप्त फीडवैक को प्रभावित करते है। संदेश ग्राह्य कर्ता के स्तर पर उसके स्वयं के विचार संदेश में समाहित विचारों के प्रति उसकी आस्था संदेश के तत्वों के प्रति उसकी समझ तथा उसका व्यक्तिगत अभिप्रेरणा, माध्यम एवं भाषा संबंधी सामर्थ्य ग्राह्य संदेश के ग्राहकर्ता के स्तर पर प्रभाव डालते है, फीडवेक के स्तर पर पुनः संदेश ग्राह्यकर्ता प्रेषक की भूमिका में होकर प्रेषण को प्रभावित करने वाली कारकों से प्रभावित होता है वहीं प्रेषक की भूमिका ग्राह्यकर्ता की होकर उसी स्तर पर प्रभावित होती है।

संचार में प्राथमिक स्तर संदेश प्रेषक के द्वारा संदेश को गढा जाना होता है यह प्रेषक अपने व्यक्तिगत विचार आवश्यकता, कार्य संबंधी निर्देश, सूचना का आदान प्रदान, मनोरंजन आदि करने के उद्देश्य से संदेश को तैयार करता है, यहां संदेश ऊपरी स्तर से प्राप्त होकर नीचे स्तर पर प्रसारित करने की स्थिति सामान्यतः स्तरीकृत प्रशासनिक व्यवस्था में एवं पुलिस संगठन में भी विशेष रूप से दृष्टव्य होती है। संदेश गढने या तैयार करने या प्राप्त कर प्रसारित करने की स्थिति में प्रेषक के स्वयं के विचार, उसकी आस्था, उसका विवेक तथा उसे संदेश को प्राप्त करने में उसकी समझ भावी संचार को प्रभावित करती है। किसी भी स्तर पर व्यक्तिगत पूर्व आग्रह भी संचार प्रेषण में सहायक या बाधक होते है कंपनी प्रबंधन द्वारा उत्पादन घटने के संबंध में कर्मचारियों की कार्य अवधि आठ घंटे से बढाकर दस घंटे करने एवं कर्मचारियों की संख्या कम करके तीन की जगह दो शिफ्टों में काम लेने का संदेश, इकाई प्रबंधक द्वारा प्राप्त कर उसे विभिन्न उप इकाई प्रबंधको के माध्यम से प्रसारित करना तथा इसका पालन

कराना है। कंपनी की तीन इकाइयों में एक साथ दिया गया संदेश प्रथम इकाई 'अ' में यह अगले दिन से ही प्रभावी हो गया एवं प्रबंधन की मंशा अनुसार कार्यकारी समय के प्रथम दो घंटे में ही प्रत्येक कर्मचारी तक पहुंच गया वहीं, इकाई 'ब' में संदेश मिलने के प्रारंम्भिक तीन दिनों तक संदेश, समझ, एवं चर्चा के स्तर पर रहा, इसी प्रकार इकाई 'स' में उसी दिनांक समय को प्राप्त संदेश प्राप्ती के सातवें दिन प्रसारण के स्तर पर आ सका यहां एक ही संदेश एक ही प्रकार से प्रसारित कर कार्य रूप में परिणित होना था, संदेश की प्रति, पूर्वाग्रह, तथा आस्था और उत्प्रेरण की भिन्नता के चलते कार्यरूप परिणिती की विभिन्न अवस्थाएं दृष्टिगत हुई। यहां उल्लेखनीय है कि संचारगत माध्यम, भाषा, स्पष्टता, तथा सामान्य समझ संबंधी कोई भी कमी न होने के बावजूद आंतरिक तत्वों से भी संचार प्रक्रिया प्रभावित होती है। यदि प्राप्त संदेश के प्रति प्राप्तकर्ता का अनुभव धनात्मक है तथा उसके पूर्व आग्रह यह निर्धारित करते है कि संदेश में निहित तथ्य वास्तविक है तो ग्राहता एवं परिणिती तीव्र तथा सार्थक हो जाती है इसी प्रकार संदेश प्रेषक या उस संगठन के प्रति व्यक्तिगत आस्था तथा उत्पेरण भी संदेश परिणीती की प्रक्रिया को तीव्र करते है यदि संगठन के उद्देश्यों के प्रति स्वाभाविक या कृत्रिम उत्प्रेरण स्थित है तो संगठन की संचार प्रक्रिया सक्षम परिणाम स्थापित करती हैं, कई प्रकरणों में संगठन के मुखिया, या संगठन के प्रति अंधी आस्था संगठन के संचार को प्रभावी बनाती है। ऐसी स्थिति में संदेश का पालन बिना विचार विमर्श या सोच विचार के किए जाने से तीव्र प्रतिक्रिया प्रदर्शित होती है। उक्त तत्वों के समायोजन की स्थिति संगठन के संचार की प्रभावोत्तपादकता में अप्रत्याशित वृद्धि करती है तथा उक्तानुसार समायोजन जहां द्विपक्षीय, बहुपक्षीय या सर्वपक्षीय होती है वहां संबंधित संगठन प्रबंधन की उत्कृष्टता को प्राप्त करने में सफल होता है।

संचार का माध्यम मूल रूप से भाषा होता है जहां संबंधित सभी पक्षों की भाषिक एकरूपता तथा संदेश के शब्द एवं वाक्यों का सरलीकरण तथा संक्षिप्त एवं अर्थपूर्ण होना संदेश की डी कोडिंग आसान बनाता है तथा एक अर्थीय शब्दों का चयन तथा द्विअर्थीय या बहुअर्थीय होने के स्थिति में आगामी या पूर्ववर्ती वाक्य के द्वारा उस शब्द के तारतम्य की स्थापना इस प्रकार की प्रवत्ति से संदेश को ग्राहता प्रदान करती है। मूल भाषा या भाषा के क्षेत्रीय प्रकारों की विविधता यदि संचार के पक्षों में निहित है तो इसे डीकोडिंग के समय अनुवादक की सहायता से दूर किया जाना श्रेयष्कर होगा न कि भाषा एवं अर्थों में विविधता एंव अल्पज्ञता के बावजूद समझने का असफल प्रयास किया जाए ऐसी स्थिति अर्थ का अनर्थ

एवं संचार की विफलता को स्थापित करती है।

संचार एक पक्षीय द्विपक्षीय या बहु पक्षीय है, के आधार पर संचार के भौतिक माध्यम का निर्धारण किया जाता है इस रूप में संचार आपसी वार्तालाप, माईक से संदेश प्रसारण, टेलीफोन के द्वारा, ई-मेल के द्वारा, वीडियों कान्फ्रेसिंग, टेली प्रिंटर, या साधारण पत्राचार अथवा विभिन्न जन संचार माध्यमों, रेडियों, टी.वी., इंटरनेट, पत्र-पत्रिका, सिनेमा आदि के माध्यम से ही मुख्यतः प्रसारित किए जाते। संचार के भौतिक माध्यम साधारणतः परिस्थिति अनुसार चयनित किए जाते है तथा आवश्यकता एवं उपलब्धता इनकी निर्धारक होती है। संगठन में संभाव्यतानुसार आमने सामने की वार्तालाप के द्वारा संदेश प्रसारण अधिक प्रभावी होता है क्योंकि इसमें तत्काल फीडवैक एवं प्रश्न के द्वारा शंका पूर्ति की संभावना उपलब्ध होती है। इस प्रकार के संचार में वाचिक शब्दों के तार आवाचिक संकेत, हाव भाव तथा शारीरिक क्रियाकलाप के माध्यम से भी संदेश ग्राहय किया जाता है, संदेश को जोर देकर बोलना, बार-बार, पुनरावृत्ति करना, बोलने के दौरान भाषिक उतार चढाव, बोलते हुए हाथों एवं शारीरिक इशारे आदि वे कारक है जो इस प्रकार के संदेश ग्राहता को प्रभावी बनाते है। प्रशासनिक संगठनों में पत्राचार को स्थायित्व तथा उसके रिकार्ड में होने उसकी समय निर्धारित पावती होने के कारण प्रभावी माना जाता है इसका मुख्य कारण परिणाम प्राप्त नहीं होने की स्थिति में उत्तरदायित्व निर्धारण की संभावना मात्र है। दूर संचार माध्यम के रूप में वीडियों कान्फ्रेसिंग एक प्रभावी माध्यम है जहां प्रेषक और श्रोता ध्वनि एवं दृश्य रूप में संबद्ध होते है तथा संबंधित सभी पक्ष संदेश एवं प्रतिक्रिया से प्रभावित होते है, यह माध्यम कुछ सीमाओं के साथ आमने सामने की बातचीत जैसा संचार प्रभाव उत्पन्न करने में सक्षम है।

पुलिस संचार

पुलिस संगठन कम या अधिक लगभग सभी जगह एक अनुशासनिक एवं प्रशासनिक संगठन के रूप में अपना अस्तित्व स्थापित करता है। इस प्रकार की व्यवस्था में स्तरीकरण की अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका होती है। एक स्तर से दूसरे स्तर पर संदेश का प्रसारण होता है, तथा उच्च स्तर से निर्मित या सृजित संदेश विभिन्न स्तरों से होता हुआ। कार्यकारी बल तक पहुंचता है जहां संदेश के संबंध में कार्य किया जाता है। यहां फीडवैक एवं शंका समाधान जैसी संभावनाएं अल्प होने के साथ ही आदेश पालन अनिवार्य भी होता है। अनुशासनिक स्तर पर स्थापित

भय संचारग्राहता की पूर्णता को प्रभावित करता है। संदेश विभिन्न स्तरों पर व्यक्तिगत समझ के आधार पर संशोधित होता जाता है तथा कई बार संदेश सृजन से कार्यपालन की स्थिति में आते-आते मूल स्वरूप में आमूलचूक परिवर्तन के साथ मैदानी स्तर पर पहुंचता है।

(पुलिस संचार मॉडल)

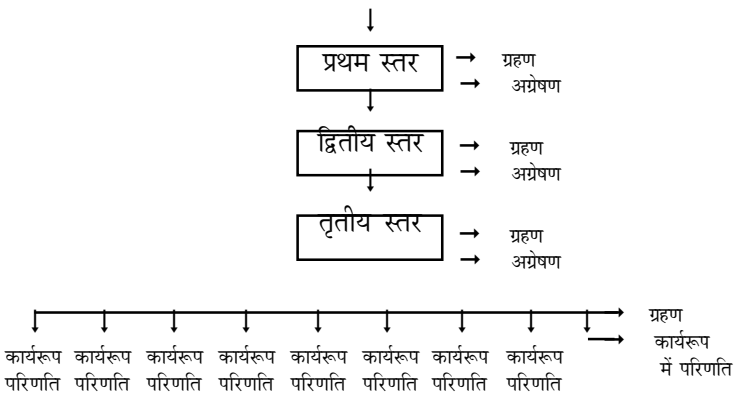

इस प्रकार पुलिस संचार मॉडल में एक दिशीय संचार उपर से नीचे की ओर होना, संदेश के विभिन्न स्तरों पर परिवर्तित, परिशोधित, परिवर्धित होना, मुख्य लक्षण है। यहां संगठन की अनुशासनिक स्थिति, संदेश पालन की बाध्यता, एक स्तर से दूसरे स्तर पर अल्प समय में स्थानान्तरण की अपेक्षा, इस प्रक्रिया को प्रभावित करती है।

प्रभावी संचार के बाधक

प्रभावी संचार नेतृत्व एवं संगठन की सफलता का मुख्य आधार है तथा जब हम प्रभावी संचार की बात करते हैं तो संचार को बहुत आसान तथा सहज प्रक्रिया के रूप में महत्व प्रदान करते हैं। जबकि वास्तव में संचार की प्रक्रिया उस श्रेणी में सहज न होकर किसी न किसी स्तर पर जटिलता को समाहित करती है। मानवीय संचार के बाधक वे कारक हैं जो कहीं न कहीं इस प्रक्रिया में निहित द्वंद्व के रूप में उपस्थित होकर संचार को जटिल बनाते हैं।

1. भौतिक बाधक

व्यक्ति के पर्यावरण या परिवेश में निहित कारकों को भौतिक बाधक के

रूप में परिभाषित किया जाता है। उदाहरणार्थ संगठन की विभिन्न स्तरों के कर्मचारियों के पृथक एवं दूर स्थित भवन, अपेक्षाकृत अल्प दक्षता युक्त पुराने उपकरण, नई तकनीको के उपयोग में विफलता, स्टाफ की कमी, आदि इन कारकों के रूप में प्रकाश में आती हैं। भवन में प्रतिध्वनि, प्रकाश एवं भवन के आसपास का परिवेश, तापमान एवं नमी संबंधी कारक भी भौतिक बाधक के रूप में स्थापित होते हैं। यहां उक्त कारकों का प्रभाव संचार की ग्राह्यता तथा निरंतरता को प्रभावित करता है। संचार की प्रक्रिया, सामयिक सापेक्षता की दृष्टि से अपनी श्रृंखला की पूर्णता की स्थिति में अपेक्षाकृत सार्थक प्रभाव उत्पन्न करती है।

2. संरचनागत बाधक

संगठन की संरचना तथा प्रक्रिया में निहित बाधको को इस रूप में प्रस्तुत किया जाता है। उदाहरणार्थ संगठन की संरचना में स्थिति स्पष्ट नहीं होना तथा संचार के संबंध में विभिन्न स्तरों पर किस स्थिति में कौन किससे संचार स्थापित करेगा के संबंध में स्पष्ट निर्धारण नहीं होना जिससे की भ्रम की स्थिति निर्मित हो। सूचना के आदान प्रदान के संबंध में अनुपयुक्त प्रक्रिया, पर्यवेक्षण एवं प्रशिक्षण का अभाव तथा भूमिकाओं की स्पष्टता का अभाव जिससे की विभिन्न स्तरों के संचार के दौरान अस्पष्टता की स्थिति संचार के प्रभाव उत्पादन में बाधक रूप में प्रस्तुत हो।

3. अभिवृत्ति कारक

संगठन में विभिन्न श्रेणियों के मध्य व्यक्तिगत द्वंद्व एवं संघर्ष की स्थिति परामर्श का अभाव जिससे की विभिन्न स्तरों पर संचार हतोत्साहित हो तथा इसे टालने की प्रवृत्ति सुनिश्चित हो इसी प्रकार कर्मचारियों के व्यक्तिगत अभिवृत्तियां जिसमें की कार्य के प्रति असंतोष तथा अभिप्रेरण की अल्पता संगठन के प्रबंधन के प्रति नकारात्मक सोच आदि जिनसे की संचार अल्पता, परिलक्षित हो अभिवृत्तिगत कारक मुख्य रूप से व्यक्तिगत प्रवृत्तियों के रूप में प्रकाश में आते हैं तथा परामर्श एवं व्यक्तिगत समस्याओं के समय पर निराकरण से इन कारकों को अल्प किया जा सकता हैं।

4. अनेकार्थी शब्द

शब्द एवं वाक्यों के एकाधिक अर्थ हो सकते हैं तथा संचार में प्रेषक के

द्वारा प्रस्तुत शब्द या वाक्य संचार के ग्राह्य करनेवाले व्यक्ति के द्वारा उसी अर्थ में स्वीकार किए जाएं जिस अर्थ में उन्हें संप्रेषित किया गया है, यह अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है। भाषा के प्रयोग एवं शब्दार्थों के चयन में निर्धारित कारक उसके अर्थ का निर्धारण करते हैं शब्द के तथा भाषा के अल्पविराम, पूर्णविराम आदि के उपयोग तथा भाषा को व्यक्त करने के तरीके के आधार पर मुख्य रूप से ग्राहय कर्ता अर्थ निष्पादन करता है। कई बार संदेश ग्राह्य करने वाले के ज्ञान में शब्द का अर्थ उस अर्थ से पृथक होता है जिस अर्थ में प्रेषक उसे प्रेषित कर रहा है। शब्दों के उपयुक्त चयन एवं भाषा के सार्थक प्रयोग के माध्यम से इस बाधा को दूर किया जा सकता है। प्रेषक संदेश के प्रभाव के बारे में विचार कर यदि शब्दों का चयन करे तो निश्चित ही इस दोष का निवारण किया जा सकता है।

5. व्यक्तिगत भाषाई क्षमता

भाषाई क्षमताएं प्रत्येक व्यक्ति की पृथक-पृथक मान्यताओं अनुभवों प्रशिक्षण एवं संस्कृति के आधार पर समाहित होती है। संचार में शब्दजाल अनुचित तथा अनावश्यक शब्दों का प्रयोग संदेश की स्वीकार्यता एवं ग्राहता को प्रभावित करता है तथा संचार का लक्ष्य नकारात्मक रूप में प्रभावित होता है। भाषाई दक्षता भाषा के उपयुक्त उपयोग सरल रूप तथा अर्थ से निकटतम रूप से संबंधित शब्द के प्रयोग की स्थिति में सर्वाधिक प्रभावोत्तपादक होती है। संगठन के परिप्रेक्ष्य में कई शब्दों के विशेष अर्थ तथा कई विशेष शब्दों का आधिक्य में प्रयोग भी किया जाता है। जो कि संगठन विशेष की भाषाई संस्कृति के रूप में पहचाना जाता है। संगठन के सदस्य के तौर पर संगठन की इस प्रकार की भाषाई, संस्कृति का ज्ञान तथा उसके अनुरूप भाषा का प्रयोग अपेक्षित होता है भाषा संबंधी ज्ञान के प्रदर्शन के लिए कई बार अतिरिक्त शब्दों का प्रयोग तथा प्रत्यय एवं उपसर्गो के माध्यम से ाब्दिक प्रयोगों की पहल का प्रयास भी भाषिक दृष्टि से संचार में बाधक रूप में प्रस्तुत होता है। भाषिक दृष्टि से दोषपूर्ण संदेश भ्रम की स्थिति प्रस्तुत करता है तथा भ्रम की स्थिति में संदेश की वैद्यता पर ही प्रश्नचिह्न अंकित हो जाता है जो कि नकारात्मक प्रभाव प्रस्तुत करता है।

6. शारीरिक बाधक

व्यक्ति के शारीरिक परेशानी, दुर्बलता आदि भी संचार के बाधक रूप में प्रकाश में आते हैं जैसे की सुनने, देखने, तथा स्पष्ट बोलने की क्षमता का अभाव

लगातार खडे रहने, बैठने, सुनने समझने में परेशानी का अनुभव आदि शारीरिक बाधक के रूप में प्रकाश में आते हैं। शारीरिक बाधक की स्थिति में संचार के दोनों पक्ष प्रेषक एवं प्रेष्य प्रभावित होते हैं तथा संदेश का निर्माण एवं प्रेषण तथा उसे प्राप्त करके समझने की प्रक्रिया भी बाधित होती है। शारीरिक बाधको के परिहार के संबंध में महत्वपूर्ण है कि शारीरिक क्षमताओं के संबंध में विश्लेषण एवं सुनिश्चपन किया जाए तथा शारीरिक अल्पता के परिप्रेक्ष्य में संचार के प्रकृति एवं साधन का चयन किया जाए जैसे की दृष्टिदोष संबंधी व्यक्ति का संचार दृश्य संबंधी अपेक्षाओं से रहित हो, सुनने संबंधी अक्षमता की स्थिति में निकटतम संचार की स्थिति निर्मित की जाए आदि। इन उपायों से शारीरिक बाधको के प्रभाव को अल्प किया जा सकता है।

7. प्रस्तुतिकरण

संचार में संदेश के निर्माण एवं सूचना के प्रेषण के पूर्व प्रेषक को संदेश ग्राह्य करने वाले व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के संबंध में अच्छी तरह विचार कर लेना चाहिए। संचार में संदेश में निहित सूचना, संदेश को ग्राह्य करने वाले के लिए ही तैयार की जाती है लेकिन अधिकांशतः ये विचार नहीं किया जाता की सूचना या संदेश की जटिलता व्यक्ति जो कि दूसरे छोर पर सुन रहा है की व्यक्तिगत सोच, ज्ञान, जानकारी एंव अनुभव के अनुरूप है या नहीं। इसका परिणाम यह होता है कि संदेश अपूर्ण रूप में समझा जाता है। यदि इस प्रकार श्रोता समूह के संबंध में पूर्व विचार किया जाना संभव न होने की स्थिति में कम से कम संदेश को सरलतम रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाना चाहिए। संचार की सफलता उसकी वास्तिक अर्थों में ग्राह्यता प्रतिशत के आधार पर निर्धारित होती है न की संदेश प्रेषित करने वाले के विषय विशेष के ज्ञान के आधार पर अतः यह अत्यधिक आवश्यक है कि सरलतम रूप में सूचना का प्रस्तुतिकरण किया जाए।

अशाब्दिक संचार

संचार मुख्य रूप से विचारों संदेश एवं सूचना के आदान-प्रदान की प्रक्रिया है यह बोलने के द्वारा वाचिक रूप में दृश्यों के द्वारा दृश्य रूप में संकेतों के माध्यम से सांकेतिक रूप में लिखित माध्यम से दस्तावेजी रूप में तथा विभिन्न प्रकार के व्यवहार प्रदर्शन के माध्यम से विभिन्न रूपों में पूर्ण की जाती है। संचार के विभिन्न रूपों में अशाब्दिक संचार का महत्वपूर्ण स्थान है जहां वाचिक,

लिखित, संचार रूपों में सूचनाओं का संचार प्रमुख रूप से किया जाता है वहीं उनमें निहित भावनाओं के संचार में अशाब्दिक संचार प्रभावी भूमिका निभाता है। संचार के विभिन्न रूपों पर प्रयास के बावजूद अशाब्दिक संचार साधनों पर व्यक्ति अधिक प्रयास नहीं करता है जिसका परिणाम उसकी संचारगत सफलता में परिणाम अल्पता के रूप में प्रकाश में आता है चूंकि संचार प्रत्यक्ष तौर पर व्यक्ति के नेतृत्व एवं कार्य कौशल से संबंद्ध है अतः व्यक्ति की नेतृत्व क्षमता तथा कार्य कुशलता भी प्रत्यक्ष रूप में प्रभावित होती है। अशाब्दिक संचार मुख्य रूप से बिना शब्दों के संदेश प्रेषित करने की प्रक्रिया है शोध परिणाम स्पष्ट करते हैं कि मानव का अधिकांश संचार अशाब्दिक रूप में ही व्यक्त होता हैं अशाब्दिक संचार को "शारीरिक भाषा" या "बॉडी लेग्वेज" के रूप में जाना जाता है। अशाब्दिक संचार में शारीरिक संकेत चक्षु संपर्क, शारीरिक स्थिति, उठने, बैठने, देखने का तरीका चेहरे के हाव-भाव बोलने का तरीका आदि के माध्यम से बिना शब्द संदेश विनिमय का निर्धारण होता है। व्यक्ति की आवाज तथा बोलने के तरीके में बोले गए शब्दों के अलावा अशाब्दिक संकेत भी समाहित होते हैं। इन्हें पराभाषाई संकेत के रूप में जाना जाता है। बोलने या आवाज में समाहित भावनात्मक पक्ष बोलने की शैली भाषाई उतार, चढाव, शब्दों पर जोर देने की प्रकृति वाक्यों में भाषाई पूर्ण विराम, अल्पविराम आदि के उपयोग इस रूप में संचार में प्रभावी होते हैं इसी प्रकार लिखित, दस्तावेज में भी अशाब्दिक तत्व निहित होते हैं। हस्तलिपि की शैली शब्दों के लिखित चित्र, वाक्यों में निहित भावनाएं विशेष प्रकृति के वाक्य विन्यास आदि अशाब्दिक संचार के तत्व लिखित संचार में विद्यमान होते हैं।

अशाब्दिक संचार या व्यवहार प्रभावी रूप में विद्यवान होकर संदेश प्रेषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अशाब्दिक संचार के महत्व को विभिन्न विशेषताएं समाहित करता है।

- अशाब्दिक व्यवहार शब्द एवं वाक्यों के पूरक के रूप में प्रभावी संचार रूप प्रस्तुत करता है।
- अशाब्दिक व्यवहार व्यक्ति के बोले गए शब्दों से विरोधाभास प्रस्तुत करने में संक्षम होता है।
- अशाब्दिक व्यवहार बातचीत के निरंतर प्रवाह को संचालित करने में सहयोगी होता है।
- अशाब्दिक व्यवहार प्रभावी रूप से शब्दों के स्थान ले सकता है।

इस प्रकार व्यक्ति की भावनाओं के संचार में शब्दों का मात्र सात प्रतिशत

भावनाओं का संचार

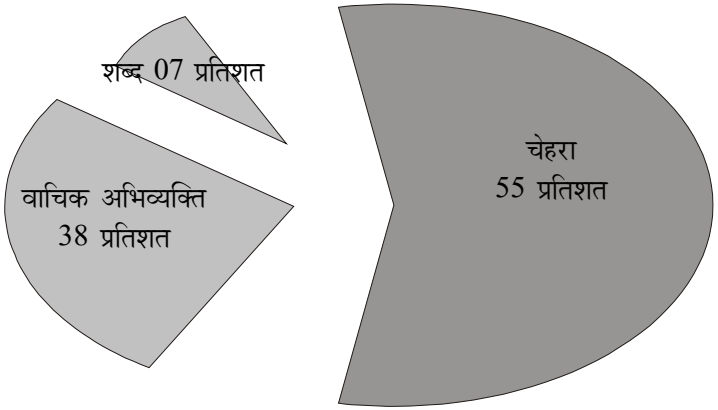

योगदान होता है जबकि वाचिक हाव भाव 38 प्रतिशत तथा चेहरे के माध्यम से 55 प्रतिशत भावनाओं की अभिव्यक्ति की जाती है। अतः यह कहा जा सकता है कि भावनाओं के प्रदर्शन एवं अभिव्यक्ति में तिरान्वे प्रतिशत भाग अशाब्दिक संचार का होता है तथा मात्र सात प्रतिशत भाग शाब्दिक संचार का अतः अशाब्दिक संचार की महत्ता स्वतः स्थापित होती है।

अशाब्दिक व्यवहार : कारक

व्यक्ति अपने सामान्य वार्तालाप में विभिन्न कारकों के माध्यम से अशाब्दिक संचार निष्पादित करता है अशाब्दिक व्यवहार के कारक स्वतःस्पूर्त रूप से संचार में समाहित होते हैं। इन कारकों के प्रति अनभिज्ञता की स्थिति में भी यह कारक विद्यवान होकर प्रभाव उत्पादन सुनिश्चित करते हैं। अशाब्दिक संचार के मुख्य कारक निम्न रूपों में प्रायः प्रकाश में आते हैं।

- चेहरे के हाव भाव
- आंखों की स्थिति
- हाथों का हिलना डुलना
- शारीरिक इशारे
- पैरों की स्थिति
- शारीरिक आकृति, प्रदर्शन
- अंतर्वैयक्तिक दूरी तथा अभिविन्यास

अशाब्दिक संचार में मुख्य रूप से चेहरे के हाव भाव प्रदर्शन के माध्यम से भावनाओं की अभिव्यक्ति संभव होती है वहीं आंखों के माध्यम से आत्म विश्वास तथा रुचि का प्रदर्शन संभव होता है व्यक्ति हाथों के हिलाने डुलाने तथा बातचीत के दौरान उनके प्रदर्शन से आदर सम्मान उत्कृष्टता आदि प्रदर्शित करता है। वहीं शारीरिक इशारों बाजूओं के प्रदर्शन एवं हिलाने डुलाने से व्यक्ति की पारंगतता तथा गर्मजोशी आदि प्रदर्शित होती है। व्यक्ति के पैरों की गति तथा स्थिति पुनः आत्म विश्वास तथा स्थायित्व की भावना को अभिव्यक्त करती है। व्यक्ति की समग्र रूप में शारीरिक आकृति विभिन्न रूपों में भावनाओं को व्यक्त करने में सक्षम होती है। शारीरिक आकृति का प्रदर्शित रूप व्यक्ति की शिक्षा संस्कार श्रृद्धा, भय, आतुरता, चेतना, जाग्रति, आदि को नियमित एवं निर्धारित कर व्यक्त करती है। बातचीत के दौरान सापेक्षिक दूरी तथा व्यक्ति का अभिविन्यास व्यक्ति की बातचीत के विषय एवं व्यक्ति में रुचि व्यक्त करती है साथ ही व्यक्ति के प्रति अंतरंगता सहृदयता की भावना भी इस रूप में अभिव्यक्त होती है। पारस्परिक गर्मजोशी या उत्साह भी इस रूप में प्रदर्शित होता है।

अशाब्दिक संचार व्यक्ति की विभिन्न अभिव्यक्तियों के माध्यम से प्रदर्शित एवं निर्धारित होता है। व्यक्ति की अंतर्व्यैतिक व्यवहार क्षमताएं अशाब्दिक संचार की सफलता निर्धारित करती हैं। अशाब्दिक संचार इस प्रकार की क्षमताओं के द्वारा दोनों ही रूपों में प्रभाव स्थापित करता है। इन अभिवृत्तियों एवं कारकों के आधार पर व्यक्ति एक तरफ जहां दूसरों के अशाब्दिक संचार को समझ पाने में सक्षम होता है वहीं स्वयं की अभिव्यक्ति प्रभावी रूप से कर पाता है। अंतर्व्यैतिक अभिवृत्तियों का प्रदर्शन विभिन्न रूपों में होता है। जो कि व्यक्ति के प्रभाव स्थापन्न में प्रभावी भूमिका निभाती है। इन अभिव्यक्तियों को मुख्य रूप में आत्मविश्वास अधीरता एवं निराशा के मुख्य प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है। अशाब्दिक संचार की सफलता की दृष्टि से इनमें निर्धारित हावभाव तथा प्रवत्तियों की जानकारी इस प्रकार के संदेश संप्रेषण एवं ग्राहय करने में प्रभावकारी सिद्ध होते हैं।

आत्म विश्वास

वैयक्तिकतौर पर संचार संपर्क के दौरान व्यक्ति का रवैया आत्मविश्वास से परिपूर्ण होने की स्थिति विभिन्न लक्षणों के माध्यम से निर्धारित होती है।

- हाथों की मीनारदार आकृति
- पीछे बंधे हुए हाथ

- ठोस बनाया हुआ पृष्ठ भाग
- कोट के जेब में हाथ एवं अंगूठे बाहर निकले हुए
- हाथ कोट की लीप पर बुलंद एवं स्पष्ट आवाज
- शरीर की सख्त सीधी बनावट
- बातचीत में पर्याप्त एवं संतुलित अंतराल

अधीरता

अधीरता की स्थिति आत्मविश्वास की कमी के रूप में प्रकाश में आती है तथा इस प्रकार के प्रदर्शन में व्यक्ति की प्रभावोत्तपादकता अत्यधिक अल्प हो जाती है। इस प्रकार के प्रदर्शन के लक्षण मुख्यतः अग्रानुसार होते हैं।

- बातचीत के दौरान मुंह पर हाथ ले जाना।
- हाथों से पैसे या चाबियों से खेलना।
- अकुलाहट
- सिगरेट आदि पीना
- आवाज में फुसफुसाहट या सीटी जैसी ध्वनि
- गले में लडखडाहट या अवरोध
- जल्दबाजी

निराशा

निराशा व्यक्ति के नकारात्मक, व्यवहार, प्रदर्शन, के रूप में व्यक्ति के निराशावादी दृष्टिकोण को प्रदर्शित करती है जो कि व्यक्तित्व की दृष्टि से अत्यधिक दोष पूर्ण होता है।

- लघु श्वांस
- कसकर बंधे हुए हाथ
- कंपन
- गर्दन के पीछे तरफ रगडन
- बंधी हुई शारीरिक क्रियाओं का प्रदर्शन
- तेज हृदय गति

अंतर्वैयक्तिक संपर्क में संचार की सफलता व्यक्ति के मित्रतावत समूह के रूप में आबद्ध होने से अत्यधिक सार्थक हो जाती है। संचार के दौरान विभिन्न अशाब्दिक कारकों के सार्थक प्रदर्शन के माध्यम से इस प्रकार के संचार में मित्रवत भावना विकसित होती है। अंतर्व्यैक्तिक भौतिक दूरी इस

प्रकार के सह संबंध निर्धारण में अत्यधिक प्रभावी होती है तथा शारीरिक निकटता के माध्यम से न केवल संचार में प्रतिरोधक या शोर कारक अल्प होते हैं बल्कि इस प्रकार के निकटता से मित्रवत समूह के रूप में संचार समूह स्थापित होता है तथा संचार की सार्थकता वृद्धि प्राप्त करती है। बातचीत के दौरान व्यक्ति के अभिविन्यास, (ओरिएन्टेशन) का अत्यधिक महत्व है यदि हम किसी व्यक्ति से बात करें और किसी अन्य व्यक्ति की तरफ उन्मुख हों तो निश्चित ही संदेश की ग्राहयता बाधित होगी तथा संदेश के ग्राहयकर्ता एवं वह व्यक्ति जिसकी ओर उन्मुखीकरण किया गया है दोनों ही सहज प्रतीत नहीं करेंगे। व्यक्तिगत तथा सामूहिक दोनों ही रूपों में उन्मुखीकरण की युक्तिसंगतता, वाछनीय होती है तथा समूह में समान रूप से महत्व रखने वाले तथ्यों में क्रमशः एवं विशेष तथ्य विशेष व्यक्ति से आधिक्य संबंधित होने की स्थिति में उस विशेष व्यक्ति के प्रति उन्मुख होकर व्यक्त किए जाने से इस प्रकार की सार्थकता प्राप्त की जा सकती है।आंखो के संपर्क के सार्थक उपयोग से व्यक्ति के प्रति सदाशयता व्यक्त कर उसे मित्रवत समूह में समाहित किया जा सकता है। व्यक्ति के चेहरे के हाव भाव यथा मुस्कुराना, व्यक्ति के प्रति समर्थन व्यक्त करना, उसकी स्थिति को समझने का प्रदर्शन करना आदि। चेहरे के हाव भाव के माध्यम से सहसंबंध स्थापन्न में सहयोगी होते हैं। व्यक्ति के शारीरिक इशारे एवं हाव भाव का प्रदर्शन तथा शारीरिक स्थिति जिन्हे समग्र रूप में शारीरिक भाषा भी कहा जाता है के माध्यम से व्यक्ति संचार के दौरान अपने मित्रवत समूह में लोगों को समाहित कर सकता है। संचार के दौरान स्पर्श व्यक्ति के प्रति सहृदयता एवं सहानुभूति के प्रदर्शन में सहायक होता है। बातचीत के दौरान बोलने की तीव्रता तथा बोले गए शब्दों से भावना प्रदर्शन के माध्यम से भी संचार के मित्रवत समूह का निर्धारण होता है। इस प्रकार के समूह में आबद्ध होने की स्थिति संचार के दोनों पक्षों को संचार सुगमता उपलब्ध कराने में प्रभावी भूमिका निभाती है।

अशाब्दिक संचार में व्यक्ति के समग्र प्रस्तुतीकरण की अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका होती है। व्यक्ति के समग्र प्रस्तुतिकरण को व्यक्ति के उस विशेष वार्तालाप या संचार के प्रति उसके सामान्य प्रदर्शन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। युक्तिसंगत प्रस्तुतिकरण जहां सार्थक परिणाम प्रस्तुत करने में सहायक होता है वहीं इस संबंध में अतिरेक या अल्पता संदेश के प्रभाव को प्रभावित करती है। शरीर मोड़ना या तिरक्षा करना, झुकाना, स्थानपरिवर्तन, निस्तब्दता, लगातार नीचे देखना, सिर को एक तरफ झुकाना एवं अतिरंजित कोणीय दूरी प्रदर्शित करना आदि संचार के दौरान

नकारात्मक प्रस्तुतिकरण के रूप में संचार के प्रभाव को अल्प करते है। इस प्रकार के प्रदर्शन से व्यक्ति की अरुचि प्रदर्शित होती है। साथ ही संचार के दोनों पक्षों के मध्य तारतम्य में अल्पता की स्थिति प्रकाश में आती है। इसी प्रकार व्यक्ति के हाव भाव की अनुकृति प्रस्तुत करना या दोहराना तथा अनुपयुक्त रूप से हंसना, संचार के विषय की गंभीरता को नकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं। कंधों को हिलाना डुलाना। उच्च तीव्रता से बोलना व्यक्ति के मूल्यांकन की प्रवत्ति प्रस्तुत कर अतिविश्वास की भावना प्रस्तुत करते हैं, अत्यधिक दूरी बनाने का प्रयास करना तथा आलस्य या जमहाई का प्रदर्शन संचार के व्यक्ति एवं विषय के प्रति उपेक्षा की भावना को प्रस्तुत करते है। इस प्रकार के प्रस्तुतिकरण न केवल संबद्धता के ह्रास के रूप में उपस्थित होते हैं बल्कि पूर्ण परिवेश को दोषपूर्ण कर संचार के प्रभाव को नकारात्मक रूप में प्रभावित करते हैं। इस प्रकार के अशाब्दिक प्रस्तुतिकरण के संबंध में जानकारी तथा जागरूकता हमारे संचार को अत्यधिक प्रभावी बना सकती है।

व्यक्तिगत संपर्क एवं संचार के दौरान व्यवहार प्रदर्शन में यदि परेशानी या अधीरता की प्रवत्ति मुख्य रूप से प्रस्तुत होती है तो इसे व्यक्ति के व्यक्तित्व एवं संचारगत दोष के रूप में माना जाता है। नेतृत्वकर्ता के तौर पर इस प्रकार के व्यवहार प्रदर्शन से व्यक्ति अपने व्यक्तिगत प्रभाव को नकारात्मक रूप में प्रस्तुत करता है। इस विषयक व्यवहारों में मुख्य रूप से हाथ की उंगली के नाखून दांतों से काटना, हथेलियों में पसीना आना, हाथ जोर से दवाना, हाथों को क्रास कर बांधना, पेन पेन्सिल आदि से खेलना, जेब के अंदर सिक्के घुमाना, कुर्सी पर असाधारण रूप से बैठना कान में खुजली करना, दूसरों से बात करते समय व्यक्ति को स्पर्श करना, संशय पूर्ण व्यवहार करना आदि। इस प्रकार के व्यवहारों के समावेश को अल्प या पृथक करने से व्यक्ति व्यवहार प्रदर्शन की सार्थकता प्राप्त कर सकता है लेकिन वास्तविक रूप में इस प्रकार की प्रवत्तियां मानसिक परेशानियों के प्रभाव के रूप में व्यक्त होती हैं तथा इनके वास्तविक कारण में निर्धारित तत्वों का निवारण करने के उपरांत ही निदान संभव होता है। व्यवहारगत अभ्यास अल्प या सामयिक निवारण ही प्रस्तुत करता है।

व्यक्ति के निराशाजन्य या कुंठित व्यवहार का स्त्रोत व्यक्ति की दमित इच्छाएं होती हैं। ये असफलता या अवसरों की अनुपलब्धता के कारण व्यक्तित्व में समाहित होती हैं। नेतृत्वकर्ता के रूप में इस प्रकार के व्यक्ति संगठन में कोई छवि प्रस्तुत करने में सक्षम नहीं होते हैं इस प्रकार के व्यवहार प्रदर्शन में लघु श्वास या सांस का टूटना हाथों को जकड के बांधना हाथों को बालों पर फेरना, गर्दन के पिछले भाग को रगडना, काल्पनिक वस्तु पर पैर से प्रहार, चेहरे को

हाथों से ढकना, आंखे मलना, चक्षु संपर्क नहीं करना, चेहरे को पृथक दिशा में मोडना, आदि इस प्रकार के व्यवहार प्रदर्शन के लक्षण है इन लक्षणों की उपस्थिति पर व्यक्ति को अपनी कुंठाओं के निर्धारण तथा उनके निराकरण का प्रयास करना अपेक्षित होता है व्यक्ति निराशा या कुंठा के मूल कारण के निदान के द्वारा ही इस प्रकार के नियंत्रण को सुनिश्चित कर पाता है।

अशाब्दिक संचार में निहित व्यक्ति के विभिन्न हाव भाव एवं क्रियाएं व्यक्ति के संदेहास्पद एवं गुप्त व्यवहार को प्रदर्शित करती हैं। व्यक्ति इस प्रकार के प्रदर्शन के माध्यम से अपने व्यक्तित्व को खुले उन्मुक्त व्यक्तित्व के स्थान पर एक गुप्त व्यक्तित्व के रूप में प्रदर्शित करता है। इस प्रकार का प्रदर्शन आपसी सहसंबंधों तथा सूचना के स्वतंत्र आदान प्रदान में बाधक होता है लेकिन विशेष संगठन जैसे पुलिस आदि के विशेष कार्यों में यह प्रभावी अवदान भी प्रस्तुत करता है। आंखों के संपर्क की उपेक्षा, सतही मुस्कान, कान के पृष्ठ भाग पर उंगली चलाना, नाक को स्पर्श करना एवं उंगली रगडना, चेहरे को हाथ से छिपाना, धीमी आवाज में आश्चर्यपूर्ण शैली में बातचीत अपूर्ण वाक्यों को बोलना आदि इस प्रकार के प्रवृत्ति के लक्षण हैं जो कि व्यक्ति की संदेहास्पद प्रवृत्ति व्यक्त करते हैं।

अशाब्दिक संचार में सामने वाले व्यक्ति के प्रति घृणा के भाव का प्रदर्शन भी भाव भंगिमाओं के आधार पर प्रदर्शित होता है। घृणा के प्रदर्शन के माध्यम से समक्ष व्यक्ति के प्रति असहमति उसके लिए अल्प समय की उपलब्धता तथा सिर्फ अति आवश्यक कार्य के संबंध में संक्षिप्त वार्तालाप की संभावना प्रदर्शित होती है। व्यक्ति के कार्य एवं प्रवृत्तियों के प्रति असंतोष उसके जीवन मूल्यों चरित्र आदि में निहित विसंगतियां इसके कारण होते हैं। नेतृत्वकर्ता के रूप में इस प्रकार की अभिव्यक्ति को दमित कर रोकने का प्रयास करना भी कई परिस्थितियों में वांछनीय होता है।

सक्रिय तथा अल्प खुली हुई आंखें, भू भृंग या चढी हुई भौंए सिकोडी गई नाक, फूले गाल एवं नाक, अगल बगल की तरफ सिर हिलाना, चढा हुआ उपरी ओंठ, सर को गर्दन से खींचना एवं झटके देना नकारात्मक ध्वनि या आवृत्ति आदि घृणा को प्रदर्शित करते हैं। व्यक्ति किस प्रकार से इस प्रकार के अभिव्यक्तियों को व्यक्त करता है के संबंध में जानकारी तथा अपेक्षानुरूप नियंत्रण एवं प्रदर्शन सार्थक संचार की दृष्टि से आवश्यक होता है।

गुस्सा या क्रोध अवांछित आवश्यकता के रूप में संगठन के कार्य कलापों में समाहित होता है। घृणा के जैसे ही क्रोध के प्रदर्शन को व्यवसायिक सफलता की दृष्टि

से अवरूद्ध कर नियंत्रित किया जाना आवश्यक होता है साथ ही परिस्थिति अनुसार इस प्रकार के प्रदर्शन सकारात्मक परिणाम भी प्रस्तुत करते हैं। तनावयुक्त जबड़े तथा दांत कटकटाना, हाथ नितंम्बो के उपर रखना, सिर को झटके देना, हाथ सिर के पीछे बांधना, चेहरे में तनाव, खुली हुई नाक, आवाज में गुस्से का प्रदर्शन, आंखों में रोष, बातचीत में असंतोष एवं असहमति, मुटठी बांधना आदि। इस प्रकार के प्रदर्शन के कारक होते हैं जो कि अशाब्दिक रूप से क्रोध या गुस्से की अभिव्यक्ति में सहायक होते हैं।

आपसी संपर्क में सामान्यतः वरिष्ठ के प्रति भय कारक विद्यमान होता है मुख्य रूप से अनुशासनिक संगठनों में कर्मचारी में इस प्रकार की भावना अधिक प्रकाश में आती है। भय के मुख्य कारण प्रमुखतः अधिकारी के क्रोध से बचने की भावना, किसी कार्य के प्रति सजा या दंड का भय, अपने किसी कार्यलोप या कमी से बचने का प्रयास अथवा व्यवसायिक दक्षता एवं कौशल की कमी या ज्ञान का अभाव होते हैं। संचार के दौरान इस प्रकार की प्रवत्ति की उपस्थिति संचार में संदेश के पूर्ण रूपेण प्रेषण में बाधक रूप से प्रकाश में आती है। व्यक्ति भय के लक्षणों की स्थिति में न तो सामने वाले व्यक्ति के संदेश को वास्तविक रूप में ग्रहण कर पाता है न ही अपना संदेश सार्थक रूप में प्रस्तुत कर पाता है। तेज सांस चलना, दांत कटकटाना, कांपना गला साफ करने का प्रयास करना, माथे पर झुर्रिया, खुला हुआ मुंह जिसमें की ऑट कुछ अंदर को हो, निचली पलको में तनाव, चीजों को पकडने चलने आदि में घबराहट का प्रदर्शन, चेहरे पर हवाइयां उडना, बातचीत व जल्दबाजी, आदि लक्षणों से भय की अभिव्यक्ति होती है। संचार के दौरान अशाब्दिक रूप से इस प्रकार के लक्षण व्यक्ति की संचारगत क्षमता में कमी के रूप में देखे जाते हैं। आत्म विश्वास तथा जानकारी एवं ज्ञान के पूर्णता के माध्यम से इन लक्षणों को अल्प किया जा सकता है।

चेहरे के भाव व्यक्ति के अशाब्दिक अभिव्यक्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं चेहरे के भावों का निर्धारण, चेहरे के विभिन्न उपांगों के प्रदर्शन के माध्यम से निर्धारित होते हैं। चेहरे के भावों के विश्लेषण की दृष्टि से चेहरे को चार भागों में विभक्त किया जा सकता है।

- **चेहरे का ऊपरी भाग**
- **मध्य भाग**
- **निचला भाग**
- **पार्श्व भाग**

चेहरे का ऊपरी भाग

इसमें भौंहे तथा माथे को शामिल किया जा सकता है। माथे की स्थिति उपर की ओर चढी हुई नीचे की ओर झुकी हुई तथा असंतोष युक्त सिकुडा हुआ रूप में प्रदर्शित होता है। इसी प्रकार भौंहे उपर की ओर खिंची हुई आपस में सिमटी हुई। एक भौंह उपर की ओर एवं एक नीचे की ओर आदि रूपों में अभिव्यक्त होती हैं। तथा क्रमशः जिज्ञासा गुस्सा एवं आश्चर्य को अभिव्यक्त करती हैं।

मध्य भाग

इस भाग में आंखे पलके तथा नाक को शामिल किया जाता है, पलके खुली हुई बंद या सकरी रूप में व्यक्ति की स्वीकार्यता एवं क्रोध प्रदर्शित करती हैं। तथा आंखों की पुतली व्यक्ति के उत्साह एवं नकारात्मक भावना का प्रदर्शन फैले एवं सिकुडे रूप में करती है। आंखें उपर की और नीचे की ओर, टकटकी लगाना एवं चक्षु संपर्क से बचने के रूप में व्यक्ति के ज्ञान एवं दक्षता की कमी निराशा घबराहट आदि को परिव्यक्त करती है। साथ ही आत्मविश्वास प्रदर्शन में अंतर्संबंध स्थापित एवं व्यक्त करने में प्रभावी भूमिका स्थापित करती है। व्यक्ति की नाक, सिकुडने की स्थिति में घृणा तथा नथुने फूलने की स्थिति में क्रोध व्यक्त करती है।

निचला भाग

इसमें मुख एवं टुडडी तथा ओंठ समाहित किए जाते हैं। ओंठों के माध्यम से मुस्कुराहट, संतोष, आश्चर्य, भय, घबराहट, क्रोध आदि भावनाओं को प्रदर्शित किया जा सकता है। मुख पूर्ण रूप से खुला हुआ, पूर्ण रूप से बंद तथा अर्ध खुला रूपों में आश्चर्य प्रसन्नता सांय असंतोष व्यक्ति करते हैं। दांतों की स्थिति क्रोध घबराहट भय आदि को व्यक्त करती है। चेहरे की मांसपेशियां भी विभिन्न स्थितियों में खिचाव शिथिलता आदि रूप में अभिव्यक्ति प्रस्तुत करते हैं।

पार्श्व भाग

इसमें गाल तथा जबड़ों के उभार शामिल हैं जो कि विभिन्न रूपों में भय क्रोध, सहजता के प्रदर्शन में सहायक होते हैं।

चेहरे के हाव भाव, चेहरे के उपांगों के विभिन्न प्रदर्शनों के माध्यम से अशाब्दिक संचार के महत्वपूर्ण कारक रूप में व्यक्ति को अभिव्यक्ति प्रदान कर संचार की सुगमता एवं सार्थकता बढाते हैं। एक ही वाक्य विभिन्न भाव भंगिमाओं

में बोला जाकर भिन्न भिन्न अर्थ प्रतिपादित करता है।

संचार एवं वार्तालाप के दौरान व्यक्ति का चक्षु संपर्क न केवल सह संबंध स्थापित करने में सहयोगी होता है। अपितु ज्ञान कौशल जानकारी के प्रदर्शन एवं रुचि को भी प्रदर्शित करता है। व्यक्ति की संचार दक्षता में चक्षु संपर्क की विशेष भूमिका होती है। इसकी संचार के दौरान सामयिक दृष्टि से प्रतिशतता के आधार पर व्यक्ति के कौशल एवं प्रवृत्तियों के संबंध में धारणा स्थापित की जा सकती है। चक्षु संपर्क की प्रतिशतता को दो भागों में विभाजित कर 30 प्रतिशत से अल्प एवं 60 प्रतिशत से अधिक रूप में व्यक्त प्रवत्तियों एवं व्यक्ति के लक्षणों के संबंध में धारणा निर्धारित की जा सकती है।

चक्षु संपर्क 30 प्रतिशत से कम

वार्तालाप के दौरान यदि चक्षु संपर्क 30 प्रतिशत से कम है तो व्यक्ति की निम्नवत प्रवृत्तियां व्यक्त होती हैं।

- सुरक्षात्मक
- अल्प विकसित
- धारणात्मक
- संवेदनशील
- सावधानीपूर्ण
- निराशावादी
- उत्साहहीन
- अल्पविशेषता
- पलायनवादी

चक्षु संपर्क 60 प्रतिशत से से अधिक

चक्षु संपर्क की प्रतिशतता 60 प्रतिशत से अधिक होने की स्थिति में व्यक्ति का आत्मविश्वास जानकारी, ज्ञान, रुचि, के साथ व्यक्ति की संचार दक्षता प्रदर्शित होती है। इस प्रकार के संचार में व्यक्ति अधिकतम प्रतिशतता में संदेश ग्रहण एवं प्रेषण करने में सक्षम होता है। चक्षु संपर्क की प्रतिशतता 60 प्रतिशत से अधिक होने पर निम्नवत् निर्धारण किए जा सकते है।

- मित्रतावत
- आत्मविश्वासी
- विकसित

- उत्तरदाई
- ईमानदार
- खुला हुआ या स्वछन्द
- सहज प्रकृति

इस प्रकार चक्षु संपर्क संचार की सफलता के निर्धारण में प्रभावी भूमिका निभाता है। अशाब्दिक संचार के प्रमुख कारक के रूप में इस प्रकार के संपर्क के आधिक्य की स्थिति संदेश के सार्थक संप्रेषण को निर्धारित करती है।

इस प्रकार अशाब्दिक संचार की समग्र संचार तथा खास तौर पर भावनाओं की अभिव्यक्ति में अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका होती है। व्यक्ति सामान्यतः अशाब्दिक संचार सहज रूप में करता है। तथा इस प्रकार की अपनी अभिव्यक्ति के प्रति सचेत नहीं होता नेतृत्वकर्ता के रूप में अशाब्दिक संचार एवं इसके विभिन्न कारकों के प्रति पूर्ण रूपेण सचेत रहकर तथा आवश्यकतानुसार इनके उपयोग के माध्यम से सार्थक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। पुलिस संगठन में इसकी महत्ता ओर अधिक बढ जाती है क्योंकि यहां नेतृत्व संख्यात्मक दृष्टि से अधिक लोगों को नेतृत्व करता है तथा शासकीय संगठन होने के कारण कर्मचारियों को साधारण तौर पर सेवा से पृथक नहीं किया जा सकता ऐसी स्थिति में नियंत्रण तथा निर्धारित रूप में कार्य निष्पादन की दृष्टि से अशाब्दिक संचार की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उदाहरणार्थ पुलिस फोर्स को ड्यूटी के संबंध में ब्रीफ किए जाने के दौरान कठोर कार्यवाही संबंधी निर्देश शाब्दिक रूप से दिए जाना कई बार विधि विपरीत हो सकता है ऐसे में मर्यादित शब्दों के साथ अशाब्दिक रूप से भावना प्रदर्शन के माध्यम से अभिव्यक्ति की जा सकती है। इसी प्रकार के कई उदाहरण विभिन्न अवसरों पर प्रकाश में आते हैं जहां शब्दों की विधिक सीमाएं विरोधाभास उत्पन्न करती हैं तथा अशाब्दिक संचार के माध्यम से सार्थक रूप में अभिव्यक्ति की जा सकती है। कर्मचारियों के साथ ही पुलिस नेतृत्व को जनता एवं उसके प्रतिनिधियों से संपर्क एवं संघर्ष भी करना होता है। विभिन्न कानून व्यवस्था की स्थितियों में जहां भीड के समक्ष पुलिस अधिकारी का एक भी अपशब्द घातक हो सकता है ऐसे में अशाब्दिक रूप से भावना अभिव्यक्ति सार्थक परिणाम तथा संदेश संप्रेषण सुनिश्चित करती है। अशाब्दिक संचार के संबंध में प्रशिक्षण, जानकारी, एवं परिमार्जन संबंधी निर्देश वांछनीय हैं।

संचार कौशल

सांचार कौशल में सार्थक उन्नयन कार्य शिक्षा संबंध एवं व्यक्तिव विकास के साथ ही समग्र रूप में व्यक्ति के कार्य निष्पादन की दृष्टि से महत्वपूर्ण होता है। नेतृत्वकर्ता के रूप में व्यक्ति की सफलता कई अर्थों में संचार सफलता पर निर्भर होती है। संचार कौशल का विकास किस प्रकार किया जाए यह प्रश्न सामान्यतः नेतृत्व कौशल विकास संबंधी विचार विमर्श पर प्रकाश में आता है। संचार कौशल व्यक्तिगत विशेषता के रूप में विद्यमान होता है, या अनुभव जन्य, या प्रशिक्षण के माध्यम से इसका विकास संभव है, इस संबंध में विविध मत व्यक्त किए जाते हैं। संचार कौशल जन्मजात प्रवृत्ति के विलक्षण रूप में, तथा अनुभव जन्य आधार पर विशेषीकृत रूप में विद्यमान पाया जाता है। लेकिन शिक्षण प्रशिक्षण एवं कारकों पर ध्यान केन्द्रित कर भी संचार कौशल में उनन्यन स्थापित किया जा सकता है। संचार कौशल के विकास को साथ प्रमुख कारकों या स्तरों के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। साथ ही इन कारकों पर प्रयास कर संचार संबंधी कौशल उनन्यन एवं सार्थक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं।

1. संचार के माहौल अथवा परिवेश का निर्माण

किसी भी कार्य बातचीत विचार विमर्श एवं सूचनाओं के आदान प्रदान के संबंध में परिवेश संबंधी कारक महत्वपूर्ण होते हैं। संदेश के आदान प्रदान तथा ग्राह्यता में परिवेशकृत कारक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। किसी महत्वपूर्ण कार्य के दौरान लगातार ड्यूटी कर रहे थके हुऐ कर्मचारियों को नए परिपत्र या मेन्युनल की जानकारी देना किसी समय व्यर्थ करने के साधन के अतिरिक्त कोई सार्थक परिणाम प्रदान नहीं कर सकता जवकि इसके विपरीत दिन की ुरुआत या लघु कार्य के दौरान इस प्रकार की जानकारी प्रदान करना सार्थक हो सकता है। परिवेश संबंधी कारकों को अग्रानुसार विभक्त किया जा सकता है।

अ - *सही समय का चयन* :- कोई भी वार्तालाप या आदान प्रदान विचार विमर्श आदि किसी उपयुक्त समय में ही सार्थक परिणाम प्रदान करता है। जब तत्काल इस प्रकार के संचार की बाध्यता न हो तो उपयुक्त समय का निर्धारण किया जा सकता है। यह निर्धारण सामने उपस्थित समूह की ग्राह्यता एवं उसकी स्थिति के आधार पर सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

ब - *उपयुक्त स्थान का चयन* :- सुनने वाले व्यक्ति के प्रति सहृदयता एवं आत्मसम्मान को ध्यान में रखते हुऐ उसे संदेश प्रदाय करना श्रेयस्कर होता है। किसी कर्मचारी की त्रुटि को सार्वजनिक स्थान पर बताया जाना निश्चित ही

नकारात्मक प्रभाव अंकित करता है। इसी प्रकार अच्छे कार्य निष्पादन वाले कर्मचारी की लघु त्रुटि को मीटिंग में सबके सामने सुनाना तथा संगठन के सामान्य निर्देशों को रहस्यमय तरीके से पृथक पृथक स्थान पर लोगों को बताना संदेश की ग्राह्यता एवं उद्देश्य को विपरीत रूप में प्रभावित करते हैं। इसी प्रकार सार्वजनिक सभा आदि में व्याख्यान के पूर्व स्थान पर प्रतिध्वनि सुनने बालों के अनुकूल बैठक एवं तापमान आदि को नियोजित किया जाना सार्थक परिणाम प्रदान करता है।

स - *अवरोधों का परिहार* :- संचार के दौरान अवरोध संचार की सार्थकता को विपरीत रूप में प्रभावित करते हैं। वार्तालाप या भाषण के दौरान मोवाइल फोन पर बात करना, पेपर या मैगजीन पढ़ना, बात बीच में रोककर किसी अन्य व्यक्ति से बात करना आदि शिष्टाचार के प्रतिकूल होने के साथ ही संचारगत केन्द्रीकरण को प्रभावित करता है। बातचीत के पूर्व फोन बंद करना अन्य अवरोधों का निराकरण करना तथा संपूर्ण संचार के दौरान अवरोध उपस्थित न हो यह निर्धारित करना इस दृष्टि से वांछनीय है।

2. संचार का संयोजन

वास्तव में किस प्रकार का संदेश प्रदान या प्राप्त किया जाना उसका मूल आशय या उद्देश्य क्या है उससे संबद्धता का निर्धारण किस प्रकार एवं किस रूप में निर्धारित होता है आदि के संबंध में निर्धारण एवं संयोजन संचार को सार्थकता प्रदान करता है।

अ - *वैचारिक स्पष्टता* :- संचार के विषय के संबंध में पूर्व से ही विचारों के संबंध में स्वयं की स्पष्टता हमें न केवल आत्मविश्वास पैदा करती है बल्कि संदेश को सुग्राह्यता भी स्थापित करती है। मुख्य विषय वस्तु के संबंध में विशेषताएं तथा मुख्य बिन्दुओं का निर्धारण उसके संबंध में पूछे जा सकने वाले प्रश्नों की पूर्व तैयारी इस दिशा में सार्थक होती है। किसी भी विषय पर मुख्य 3 बिन्दुओं को चिह्नित कर उन पर केन्द्रित अपनी बात प्रस्तुत करना विषय वस्तु की पूर्णता की दृष्टि से आसान हो जाता है विषय वस्तु वृहद होने पर उक्त 3 विन्दुओं का पुनः वर्गीकरण किया जा सकता है।

ब - *प्रभाव संबंधी स्पष्टता* :- संचार के दौरान हमारा उद्देश्य क्या है तथा किस प्रकार का प्रभाव हम श्रोता में उत्पन्न करना चाहते हैं। इस संबंध में स्थिति स्पष्ट एवं निर्धारित होना वांछनीय है। कई बार कोई तथ्य प्रस्तुत किया जाकर उस पर प्रतिक्रिया अपेक्षित होती है तथा कई बार हम कोई जानकारी देकर जानकारी

प्राप्त करना चाहते हैं। इन दोनो ही परिस्थतियों में सीधे तोर पर बातचीत अपेक्षित परिणाम प्रस्तुत नहीं कर सकती। इसी प्रकार कई बार बातचीत का उद्देश्य लोगों को साधारण शब्दों के द्वारा व्यक्त संदेश से अतिरिक्त व्यक्ति के मानसिक स्तर पर प्रभाव होता है। ऐसी स्थिति में भी उद्देश्य की अपेक्षा के अनुरूप प्रस्तुतिकरण प्रभावी होता है।

स - *विषय संवद्धता* :- सामान्यतः हमारे ज्ञान या अनुभव का प्रभाव हमारे वार्तालाप एवं संदेश संप्रेषण पर पड़ता है। संप्रेषण के दौरान विषय से भटकाव का मुख्य कारण भी इन्ही में निहित होता है। संवाद के दौरान इस प्रकार के विषयांतर संप्रेषण की पूर्णतः को विपरीत रूप में प्रभावित करते हैं। संप्रेषण का उद्देश्य विषय के प्रति संबद्धता तथा मूल विषय से संबंधित उप विषयों की सीमा तक विषयांतर के निर्धारण की स्थिति में ही सार्थक रूप में पूर्ण हो पाता है।

द - *धन्यवाद ज्ञापन* :- संप्रेषण एवं अपने संवाद को पूर्ण करते ही श्रोताओं के प्रति धन्यवाद ज्ञापित करना शिष्टाचार की श्रेणी में आता है। साथ ही इस प्रकार के धन्यवाद ज्ञापन का सकारात्मक प्रभाव श्रोताओं पर भी पड़ता है जो कि किसी न किसी रूप में संदेश ग्राह्यता की दृष्टि से सार्थक परिणाम प्रस्तुत करता है।

3. आकर्षण

संप्रेषण के दौरान श्रोताओं के मध्य आकर्षण उत्पन्न करना तथा उन्हें व्यस्त रखना अत्यधिक आवश्यक कारक है। विभिन्न अभिक्रियाओं के माध्यम से संप्रेषण के प्रति आकर्षण श्रोताओं की रुचि को स्थापित करता है। जो कि प्रभाव की दृष्टि से वांछनीय है। संप्रेषण के दौरान उत्पन्न हुऐ अंतराल विषय के प्रति नियमितता को वाधित करते हैं। साथ ही सतत प्रवाह के रूप में उत्पन्न प्रभाव की दृष्टि से नकारात्मक प्रभाव उत्पन्न करते हैं।

अ - *चक्षु संपर्क स्थापन* :- बातचीत के दौरान चक्षु संपर्क की अधिकता संचार की सार्थकता को बढ़ाती है साथ ही अच्छे सह संबंध का निमार्ण करती है। श्रोताओं के समूह की स्थिति में प्रत्येक व्यक्ति तथा हाल के प्रत्येक कौने से क्रमशः चक्षु संपर्क स्थापित कर हम संवाद के प्रति चेतना एवं जागृति की सत्तता के साथ ही संदेश में निहत मूल भावना के संप्रेषण में सक्षम हो पाते हैं।

ब - *शारीरिक इशारे* :- चेहरे एवं हाथों के द्वारा वार्तालाप के दौरान किए गए इशारे संदेश संप्रेषण में सहायक होते हैं। विभिन्न शारीरिक इशारों से न केवल समूह का आकर्षण स्थापित होता है बल्कि पूरा शरीर संप्रेषण के कार्य में सहयोगी

हो जाता है।

स - *एकरूपता* :- हमारे शब्द, शारीरिक इशारे, चेहरे को हावभाव तथा बोलने की टोन एकरूपीय होना अत्यधिक आवश्यक होता है, संचार के दौरान इनके मध्य एक रूपता का अभाव संदेश को हास्यास्पद बना सकता है। किसी को गलतियों पर नाराज होते समय चेहरे की मुस्कुराहट किसी के अच्छे कार्य की प्रसंशा के दौरान चेहरे पर रोष के भाव निश्चित ही संदेश को अप्रभावी बनाने के लिए पर्याप्त कारण हो सकते हैं।

द - *शारीरिक भाषा* :- संचार के दौरान व्यक्ति का पूरा शरीर, पहने हुए कपड़े, जूते, बैठना, चलना, मुड़ना आदि सभी संदेश प्रेषण में संलग्न होते हैं। व्यक्ति को अपनी शारीरिक भाषा के प्रति सचेत होना आवश्यक होता है। हमारा संदेश एवं परिवेश की मान्यता अनुरूप शारीरिक भाषा का प्रदर्शन संदेश संप्रेषण में वांछित सहयोग प्रदान करता है।

ई - *रचनात्मक अभिवृत्ति* :- संचार के प्रभाव में प्रस्तुतकर्ता की अभिवृत्ति या रवैये का महत्वपूर्ण योगदान होता है। आशावादी, ईमानदार, सहनशील, नियमित, ससम्मान तथा दूसरों के प्रति स्वीकार्यशील रवैये के प्रदर्शन से संप्रेषण प्रभावकारी रूप प्राप्त करता है। दूसरों की भावनाओं का सम्मान तथा उनके प्रति संवेदनशीलता एवं उनकी क्षमताओं में विश्वास के प्रदर्शन से संप्रेषण की ग्राह्यता भावनात्मक स्तर पर संबद्धता प्राप्त करती है।

फ - *सहनशील श्रोता* :- संचार के दौरान सिर्फ अच्छा बोलने के गुण से शत प्रतिशत प्रभाव उत्पादन नहीं किया जा सकता, अपितु व्यक्ति को उसी स्तर पर श्रेष्ठ श्रोता के गुणों का प्रदर्शन भी करना होता है। अच्छे श्रोता के गुण व्यक्ति की संदेश के रुचि एवं निरंतरता के निर्धारण में सकारात्मक परिणाम प्रस्तुत करते हैं।

4. - *शाब्दिक संचार*

संदेश प्रेषण के दौरान शब्दों के चयन, उच्चारण, टोन, पर्यायवाची, समानार्थी, विरोधाभाषी, आदि के संबंध में विचार विमर्श कर संप्रेषण किया जाना सकारात्मक प्रभाव की दृष्टि से महत्वपूर्ण होता है।

अ - *उच्चारण* :- शब्दों का उच्चारण सही रूप में किया जाना न केवल अर्थ प्रेषण की दृष्टि से महत्वपूर्ण होता है बल्कि सही उच्चारण कर हम वाक्यों को बार-बार दोहराए जाने एवं शोर की स्थिति से भी बच सकते हैं। एक जैसे उच्चारित होने बाले विविध अर्थ बाले शब्दों का चयन यथा संभव नहीं किया

जाए। तथा उच्चारण के प्रति सावधान एवं सचेत रहकर इस प्रकार के प्रभाव स्थापित किए जा सकते हैं।

ब - *शब्द चयन* :- अर्थ के अनुरूप सर्वाधिक सार्थक शब्द का चयन किया जाना संदेश की स्पष्टता की दृष्टि से महत्वपूर्ण होता है। समानार्थी शब्दों के उपयोग के भी पृथक पृथक निर्धारित परिप्रेक्ष्य होते हैं। इन परिप्रेक्ष्यों के अनुरूप उपयुक्त शब्द का चयन वांछनीय परिणाम प्रस्तुत करता है।

स - *बोलने की गति* :- अच्छे एवं सार्थक वाक्यों को तीव्र गति से बोले जाने पर प्रभाव अल्पता की स्थिति उत्पन्न होती है। साथ ही यह आत्मविश्वास की कमी का द्योतक भी होता है। अतः धीमी गति से स्पष्ट रूप में संप्रेषण अपेक्षाकृत अधिक प्रभावी होता है।

द - *रोचकता* :- लगातार एक रूपीय एक तरफा संभाषण संदेश के प्रति रुचि तथा ग्राह्यता को नकारात्मक रूप में प्रभावित करता है। अपने वाक्यों शब्दों को रोचक बनाना तथा संदेश को रोचकता से प्रस्तुत करना सार्थक परिणाम प्रस्तुत करता है।

5. आवाज

संचार के दौरान आवाज का विशेष प्रभाव स्थापित होता है। अधिक ऊंची अथवा अत्यधिक धीमी आवाज संवाद की गंभीरता को कम करती है। संदेश को उपयुक्त आवाज के साथ अर्थ एवं निहित भावना से तारतम्य स्थापित करते हुए प्रस्तुत करना श्रेयस्कर होता है। बोलने के दौरान उपयोग की गई आवाज उसकी गति तीव्रता आदि के प्रति सचेत रहकर प्रभावी संचार प्रस्तुत किया जा सकता है।

6. अशाब्दिक संचार

व्यक्ति की भावनाओं के प्रस्तुतिकरण में अशाब्दिक संचार शाब्दिक रूप से किए गए संचार से अधिक भूमिका प्रस्तुत करता है। अशाब्दिक संचार के विभिन्न कारक संदेश के संप्रेषण की पूर्णतः एवं मूल भावना की अभिव्यक्ति में प्रभावी होते हैं।

अ - *अभिस्वीकृति प्रदाय करना* :- श्रोताओं में उपस्थित व्यक्तियों को पूर्व से जानने अथवा नहीं जानने की स्थिति में भी उन्हें अभिस्वीकृति प्रदान करना तथा संवाद से जोड़ना आवश्यक होता है। इस प्रकार से संबद्ध व्यक्ति सार्थक रूप में संदेश ग्रहण कर पाने में सक्षम होता है।

ब - *शारीरिक भाषा से अर्थ संप्रेषण* :- हाव-भाव शारीरिक इशारे तथा

चलने बैठने बोलने में निहित अभिक्रियाएं संदेश को स्पष्टतः एवं संयोग प्रदान करते हैं। शाब्दिक भाग का अनुसरण यदि अशाब्दिक संचार भाग भी करता है तो निश्चित ही अर्थ पूर्णतः का उत्कृष्ट संप्रेषण सुनिश्चित होता है।

स - *श्वास एवं अंतराल का उपयोग* :- उपयुक्त स्थान पर अंतराल तथा पुनः संप्रेषण से संवाद की प्रभावशीलता में वृद्धि होती है। विभिन्न विन्दुओं पर जोर देना, श्रोता को समझने का मौका देना अंतराल के माध्यम से सरल हो जाता है। इसी प्रकार गहरी सांस लेना संचार के दौरान निरंतरता एवं स्थिरता तथा उर्जा प्रदान करने में सहायक होता है।

7. असहमति की स्थिति में संचार

संचारगत तथ्यों एवं विषय से प्रेषक एवं श्रोता के मध्य असहमति की स्थिति में प्रभावी संदेश निष्पादन चुनौती पूर्ण कार्य होता है नेतृत्वकर्ता के रूप में इस प्रकार की स्थिति में सफल संप्रेषण व्यक्ति को अत्यधिक प्रभावाली बनाता है।

अ - असहमति या विरोधाभाष की स्थिति में दोनों पक्षों को समान स्तर पर बैठना अथवा खड़े होना तथ्यों से विरोधाभास के बावजूद तारतम्य स्थापना में सहयोगी होता है।

ब - दूसरे पक्ष को बोलने का पूर्ण अवसर प्रदान कर उसे पूर्णतः में सुनना जिससे कि उसके मत तथा विरोधाभाष के स्तर एवं तीव्रता का ज्ञान हो सके।

स - ऐसी स्थिति में उत्तेजित अथवा उंचे आवाज में बात करने से विरोधाभाष में वृद्धि होती है। ऐसे में शान्त एवं गंभीर आवाज में बात करना बातचीत को निरंतरता प्रदान करने में सहयोगी होता है।

द - बातचीत को विवादित मुद्दों की चर्चा के बाद पूर्ण कर देना समाधान की संभाव्यता पर विराम लगाने जैसा होता है। अतः वार्तालाप की संभावना को जाग्रत रखते हुऐ लगातार सकारात्मक तथ्य प्रस्तुत करना श्रेयस्कर होता है।

ई - विरोधाभाष के विषय में दूसरे पर आरोप लगाने की अपेक्षा स्वयं की कमियां या उनकी संभावना को व्यक्त करना तथा परिस्थिति के उदाहरण के रूप में स्वयं को प्रस्तुत करना प्रभावी रूप से निराकरण की संभावनाओं को विद्यमान रखने में सहयोगी होता है।

संचार कौशल के उनन्यन के लिए सर्वप्रथम यह जानना आवश्यक है कि वास्तव में संचार क्या है। संचार संदेश एवं संकेतों के संप्रेषण की प्रक्रिया के रूप में प्रेषक एवं श्रोता के मध्य किसी न किसी माध्यम के आधार पर संपादित होती है। संचार लिखित एवं बोले गए शब्दों तथा अशाब्दिक संकेतों के रूप में

अभिव्यक्त किया जाता है। संचार को बास्तविक अर्थों में समझ कर तथा उसकी उपयोगिता एवं महत्व के बारे में स्पष्ठ मत निर्धारित कर उक्त अनुसार क्रमबद्ध तरीके से संचार कौशल उनन्यन सुनिश्चित किया जा सकता है। संचार के विषय एवं संदेश के प्रति आत्मविश्वास एवं अपनी बात कहने का साहस व्यक्ति को संचार सामर्थ्य प्रदान करता है। तथ्य एवं सूचनाओं के संबंध में जानकारी की अधिकता एवं विचार विमर्श तथा व्यक्तिगत मूल्यांकन एवं चिन्तन के माध्यम से इस प्रकार के आत्मविश्वास प्राप्त किया जा सकता है। संदेश प्रेषण के दौरान हिचकिचाहट एवं संदेह की स्थिति प्रभाव उत्पादन को नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है। संचार कौशल के विकास के लिए व्यक्तिगत स्तर पर प्रयास करना विभिन्न संचार कौशल एवं कारकों के संबंध में प्रभावी अभ्यास करना इस दिशा में उपयोगी होता है। संचारगत अल्पताओं या कमियों के संबंध में जानकारी तथा उनके निराकरण के संबंध में प्रयास एवं दर्पण अभ्यास जैसे प्रयासों के माध्यम से संचार कौशल में अपेक्षित परिणाम प्राप्त किए जा सकते है।

पुलिस संगठन में अनुशासन की भावना तथा पदक्रम संबधी मर्यादा एवं विभिन्न परिवेश शैक्षिक एवं सांस्कृतिक प्रवृत्तियां संचार की दृष्टि से बाधक परिवेश निर्मित करती है तथा पुलिस संचार में सुधार की अत्याधिक आवश्यकता विद्यमान पाई जाती है। अपने से वरिष्ठ अधिकारी की प्रतिक्रिया एवं क्रोध के भय से अपनी बात कहने में संकोच एवं डर के कारण जहां संचार बाधित होता है। वहीं एकपक्षीय संचार की संभावना के चलते सुन कर बिना विचार पालन की प्रवृत्ति पुलिस संगठन मे संचार बाधा का स्वरूप प्राप्त करती है। पुलिस संचार में सुधार की अति आवश्कता की पूर्ति नेतृत्व का दायित्व है तथा यह दायित्व द्विपक्षीय संचार सुलभता के माध्यम से बहुत हद तक पूर्ण किया जा सकता है। पुलिस संचार में सिर्फ स्वच्छन्दता की संभावना से ही कमी पूर्ति सम्भव है, क्योकि अधिकांशतः वरिष्ट स्तर पर प्रेषित संचार पर पुनरावृत्ति एवं प्रश्न की संभावना ही इस प्रकार की त्रुटि पूर्ति में अधिकाधिक योगदान प्रदान कर सकती है। स्तरीकृत संचार व्यवस्था में विभिन्न स्तरों पर संचार का संदेश दुषित या परिवर्तित होते हुऐ निचले स्तर पर मूल स्वरूप से परिवर्तित हो जाता है। इस प्रकार के परिवर्तन के संबध में तत्काल फीडबैक व्यवस्था एवं संदेश के बिन्दुवार एवं लिखित स्वरूप के माध्यम से सुधार किया जा सकता है। पुलिस संचार एवं संचार के प्रति पुलिस नेतृत्व की जागरूकता पुलिस संगठन की प्रभावोत्पादकता में अप्रत्याशित वृद्धि कर सकती है।

अध्याय 5

संवेदनात्मक दक्षता : अवधारणा एवं आवश्यकता

नेतृत्वकर्ता की दक्षता एवं कौशल के संबंध में विभिन्न शोधकर्ताओं द्वारा शोध कर निष्कर्ष प्रतिपादित किए गए। नेतृत्व की शैलियों के साथ नेतृत्व के निर्धारक तत्वों तथा नेतृत्वकर्ता के गुणों के संबंध में विभिन्न विश्लेषण एवं व्याख्याएं प्रस्तुत की गई। एक नेतृत्वकर्ता क्या चाहता है, वह क्या करता है, वह किस प्रकार सदस्यों को अभिप्रेरित करता है, उसकी शैली किस प्रकार विभिन्न परिस्थितियों में लोगों के संपर्क में आती है तथा किस प्रकार वह संगठन में प्रभावी परिवर्तन कर सकता है आदि के विषय में निर्धारण के प्रयास शोधकर्ताओं द्वारा भिन्न भिन्न माध्यमों से प्रकाशित किए गए। विभिन्न सिद्धांतों ने जहां नेतृत्व के संबंध में समझ का विकास किया तथा अवधारणा को स्पष्ट किया वहीं एक नेतृत्वकर्ता कैसे और क्यों संगठन के सदस्यों एवं संगठन पर सकारात्मक प्रभाव स्थापित करता है? के विषय में शोध जिज्ञासा पूर्ण नहीं हुई। नेतृत्वकर्ता विभिन्न वातावरण कारकों तथा नेतृत्वकौशल का उपयोग कर नेतृत्व प्रतिपादित करते हैं तथा कम या अधिक मात्रा में कौशल गुण या शैलियों का समावेश नेतृत्व में सामान्य तौर पर देखा जाता है। लेकिन परिणाम के स्तर पर वैविध्य तथा तथा उसका परिमाण में अंतर का कारण क्या है। नेतृत्व का वह कौन सा कारक है जो कि समान प्राधिकार, संसाधन, शारीरिक मानसिक योग्यता, शिक्षा एवं अनुभव के बावजूद नेतृत्व के प्रभाव तथा परिणाम में भिन्नता प्रदर्शित करता है। सदस्यों को संगठन के लक्ष्यों के प्रति या संगठन के प्रति भावनात्मक तौर पर संलग्न करने में किस प्रकार नेतृत्व सफल हो सकता है? प्रभावी नेतृत्व के कारक या गुण सामान्यतः बाह्य तकनीकी रूप में व्याख्यायित किए जाते हैं तथा नेतृत्व संबंधी व्याख्या में भावनात्मक तत्वों की उपेक्षा की जाती है या अपेक्षित स्तर पर उन्हें स्थान

नहीं दिया जाता। निर्णयन की प्रक्रिया में भावनात्मक अंश, सदस्यों के प्रति भावनात्मक समझ, जटिल परिस्थितियों में भी भावनात्मक साहनुभूति का प्रदर्शन, संगठन के उद्देश्यों के प्रति भावनात्मक लगाव, व्यक्तिगत तौर पर विभिन्न परिस्थितियों में उत्तेजना या अवसाद का स्तर, कार्य निष्पादन में सहानुभूति कारक का स्थान आदि वे तत्व हैं जो कि निर्णय प्रक्रिया एवं नेतृत्व की सफलता के प्रभावी निर्धारक होते हैं। इन्हीं निर्धारको की उपयुक्त एवं युक्तिसंगत स्थिति को भावनात्मक दक्षता (Emotional Intelligence) के रूप में निरूपित किया जाता है। साथ ही नेतृत्व की व्याख्या वर्तमान परिदृश्य में भावनात्मक दक्षता के बिना पूर्ण नहीं हो सकती। व्यक्तिगत महत्व तथा संगठन के सदस्यों की एक व्यक्ति के रूप में प्रतिष्ठा को स्थापित करने तथा नेतृत्वकर्ता की व्यक्तिगत प्रतिष्ठा को समाहित करते हुए संगठन के लिए उत्कृष्ट परिणाम निष्पादन करने की दृष्टि से भावनात्मक दक्षता का समावेश एवं उन्नयन आवश्यक हो जाता है न केवल व्यक्तिगत स्तर पर बल्कि सामूहिक एवं प्रभाव क्षेत्र तथा संगठन के स्तर पर इस प्रकार की दक्षता के व्यापक प्रभाव देखे जाते हैं।

भावनात्मक दक्षता के संबंध में अवधारणा तथा उस पर मत स्थापना का इतिहास, चार्ल्स डार्विन के अध्ययन में सर्वप्रथम प्रकाश में आए जहां डार्विन ने उपयुक्त की जीवन्तता तथा अनुकूलन की व्याख्या में भावनात्मक प्रदर्शन की महत्वता को रेखांकित किया, वर्ष 1900 के दशक में दक्षता की पारम्परिक व्याख्या में याददाश्त, समस्या निवारण आदि विचारगत पहलुओं को आधार माना गया, लेकिन कुछ शोधकर्ताओं ने जैसे की थ्रोन्डाइक ने वर्ष 1920 में व्यक्तियों के प्रति समझ तथा पारस्परिक क्षमता के रूप में सामाजिक दक्षता शब्द का प्रयोग किया। इसी प्रकार 1940 में डेविड वेसलर ने दक्षतापूर्ण व्यवहार को प्रभावित करने वाले पारम्परिक विचारगत कारकों से पृथक कारकों को स्थान दिया तथा बताया कि इन कारकों के बिना दक्षता की परिभाषा को पूर्ण नहीं कहा जा सकता। वर्ष 1983 में हावर्ड गार्डनर ने अपने अध्ययन 'फार्मस् आफ माइंड : द थ्योरी आफ मल्टीपल इंटेलीजेन्स' में दक्षता के विभिन्न कारकों की व्याख्या प्रस्तुत की इस अध्ययन में अंतर्व्यैक्तिक दक्षता जिसमें दूसरों के अभिप्राय, अभिप्रेरण तथा अपेक्षाओं की समझ समाहित है तथा अंर्तराव्यक्तिक दक्षता जिसमें स्वयं को समझना, भावनाओं को प्रोत्साहित करना, स्वंय के भय एवं अभिप्रेरण शामिल हैं, दोनों को समाहित किया गया। गार्डनर के अनुसार दक्षता के पारंम्परिक प्रकार दक्षता को पूर्ण रूप में परिभाषित करने में सक्षम नहीं है। इस प्रकार दक्षता के प्रकार एवं कारकों संबंधी नाम भले ही विविध रूप में निर्धारित किए गए लेकिन

विभिन्न शोध में सामान्य रूप से यह तथ्य स्थापित हुआ की दक्षता की पारंम्परिक परिभाषा विभिन्न कार्य निष्पादनों को पूर्ण रूप में व्यक्त करने में सक्षम नहीं थे। भावनात्मक दक्षता के लिए (Emotional Intelligence) शब्द का प्रथम प्रयोग वायने पायने ने अपने शोध प्रबंध 'ए स्टडी आफ इमोशन : डेवलपिंग इमोशनल इंटेलीजेन्स' में वर्ष 1985 में किया। यद्धपि इसके पूर्व लियुनर ने वर्ष 1966 में इस शब्द को इस रूप में प्रस्तुत किया था। स्टेनले ग्रीन स्पान ने वर्ष 1989 में भावनात्मक दक्षता संबंधी माडल प्रस्तुत किया। सालोवे एवं मायर वर्ष 1990 ने भी इस संबंध में व्याख्या प्रस्तुत की, वर्ष 1995 में डेनियन गोलमन का इस दिशा में अध्ययन प्रकाशित हुआ। इसी श्रृंखला में वर्ष 2000 में भावनात्मक दक्षता संबंधी विशेषता एवं योग्यता संबंधी अवधारणा एवं व्याख्या प्रस्तुत की गई।

भावनात्मक दक्षता को अंग्रेजी शब्द Emotional Intelligence के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इसे संक्षेप में E. I. से निरूपित करते हैं। भावनात्मक दक्षता किसी व्यक्ति की वह योग्यता है जो भावनाओं के समझ, नियंत्रण एवं मूल्यांकन का निर्धारण करती है। साधारण शब्दों में भावनाओं की समझ जिससे की उपयुक्त समय पर उपयुक्त रूप में किसी व्यक्ति की भावनाओं को समझा जा सके, परिस्थिति अनुरूप भावनात्मक नियंत्रण स्थापित किया जा सके तथा भावनात्मक मूल्यांकन परिस्थिति प्रकृति एवं व्यक्ति के अनुरूप किया जा सके जिसमें कि प्रभावों का मूल्यांकन भी शामिल हो को भावनात्मक दक्षता कहा जा सकता है। पीटर साल्वे तथा जान डी मेयर ने भावनात्मक दक्षता को सामाजिक दक्षता के तत्व के रूप में परिभाषित किया है जिसमें स्वयं की तथा अन्य लोगों की भावनाओं को नियमित करने की योग्यता तथा इसके आधार पर विभेद का निर्धारण तथा इसके निर्धारण एवं जानकारी का उपयोग करते हुए विचारों एवं कार्यों को दिशा प्रदान करने की योग्यता प्रभावी होती है। भावनात्मक दक्षता को परिभाषित करने में तत्वगत मतभिन्नता प्रकाश में आती है। तत्वगत आधार पर भावनात्मक दक्षता को परिभाषित करने के तीन मुख्य माडल प्रस्तुत किए गए हैं। ये माडल भावनात्मक दक्षता के विभिन्न कारकों के विकास तथा समाहित तत्वों के निर्धारण पर आधारित हैं।

1. योग्यता संबंधी माडल

सालोवे एवं मेयर ने भावनात्मक दक्षता को योग्यता के मानक के रूप में परिभाषित करने का प्रयास किया है यहां भावनात्मक दक्षता को भावनाओं की समझ, भावनाओं का संयोजन जिससे की विचारों को स्वीकार किया जा

सके, तथा भावनाओं को नियंत्रित करने की योग्यता जिससे की व्यक्तिगत विकास प्रोत्साहित हो को इस रूप में परिभाषित किया है। इस माडल में भावनाओं को जानकारी एवं सूचना के महत्वपूर्ण स्त्रोत के रूप में देखा जाता है। जिससे की व्यक्तिगत समझ तथा सामाजिक परिवेश को समझकर सार्थक दिशा प्राप्त की जा सके। व्यक्तिगत भिन्नता को इस माडल में स्थान दिया गया है तथा यह माना गया है कि भावनाओं को समझने, सूचनाओं को संयोजित करने तथा भावनात्मक योग्यता प्रदर्शन में की योग्यता में पर्याप्त व्यक्तिगत भिन्नता पाई जाती है। यह माडल भावनात्मक दक्षता संबंधी चार प्रकार की योग्यताओं की व्याख्या प्रस्तुत करती है।

• *भावनात्मक अनुमान* :- चेहरा, चित्र, आवाज, एवं सांस्कृतिक कारकों के माध्यम से भावनाओं की खोज की योग्यता तथा किसी व्यक्ति के भावनात्मक लक्षणों की पहचान करने की योग्यता।

• *भावनाओं का उपयोग* :- भावनाओं की समझ एवं प्रतिपादित सूचनाओं के आधार पर विभिन्न कार्यों का निष्पादन तथा सार्थक उपयोग जैसे कि समस्या निवारण, कार्य अवरोध या द्वंद्व का निवारण की योग्यता तथा भावनात्मक दक्षमा में समाहित वह योग्यता जिससे की व्यक्ति अपने परिवर्तित मनः स्थिति में उत्कृष्ट, कार्य निष्पादन करता है।

• *भावनाओं की समझ* :- भावनाओं को समझने तथा भावनाओं की समझ के माध्यम से जटिल संबंधो को सार्थक रूप में प्रोत्साहित करने की योग्यता तथा भावनात्मक परिवर्तनों को अपेक्षित परिणाम प्राप्ति की दिशा में अग्रसर करने की योग्यता।

• *भावना प्रबंधन* :- अपनी तथा दूसरों की भावनाओं को नियंत्रित एवं संचालित करने की योग्यता जिससे की ऋणात्मक भावनाओं एवं परिस्थितियों को भी भावनात्मक प्रबंधन के द्वारा सकारात्मक रूप में परिवर्तित किया जा सके।

इस प्रकार यह माडल भावनात्मक योग्यता को भावनात्मक दक्षता का मुख्य निर्धारक मानता है लेकिन इस माडल की आलोचना भविष्य संबंधी अनुमान की तथा व्यक्तिक विशेषताओं के सममूल्यांकन के अभाव के रूप में की जाती है। इस माडल में मेयर तथा सालोवे ने भावनात्मक दक्षता का मापने के लिए भावनात्मक दक्षता टेस्ट तैयार किया यह परीक्षण भावनात्मक समस्या समाधान पर आधारित है।

2. मिश्रित माडल

भावनात्मक दक्षता को परिभाषित एवं व्याख्यायित करने संबंधी मिश्रित माडल डेनियल, गोलमन द्वारा प्रतिपादित किया गया इस माडल में गोलमन ने बताया कि भावनात्मक दक्षता का प्रसार एक व्यापक योग्यता क्षेत्र को आच्छादित करता है। यह योग्यता एवं कौशल नेतृत्व निष्पादन को निर्धारित करता है, गोलमन ने अपने माडल में पांच मुख्य भावनात्मक दक्षता संबंधी तत्वों की व्याख्या प्रस्तुत की तथा यह तथ्य प्रतिपादित किया कि किसी भी व्यक्ति या नेतृत्वकर्ता में विभिन्न क्षेत्रों के कौशल जिनकी प्रकृति मिश्रित है ही भावनात्मक दक्षता के वांछनीय तत्व या कारक होते हैं।

• *जागरूकता* :- किसी व्यक्ति के भावनाओं की समझ उसकी सुदृढ़ता, उसकी कमजोरियों, अपेक्षा, मूल्य एवं लक्ष्यों की जानकारी तथा उनके प्रभावों का मूल्यांकन तथा उनसे परिवेश एवं अन्य के प्रति सार्थक परिणाम प्राप्ति की योग्यता। स्व जागरूकता व्यक्ति को दक्षता के आधार भूत विषय वस्तु प्रदान करती है।

• *स्व संचालन* :- स्वयं के विविध तथा नकारात्मक भावनाओं एवं उनके प्रभावों को नियंत्रित करना तथा परिवर्तित दिशा की ओर प्रवाह सुनिश्चित करना साथ ही परिवर्तित परिस्थितियों में अनुकूलन स्थापित करना।

• *सामाजिक कौशल* :- संबंधों को प्रोत्साहित एवं सार्थक रूप से स्थापित करना तथा लोगों को अपेक्षित दिशा की ओर ले जाना जिससे बेहतर सह संबंधों से निष्पादन क्षमता उत्कृष्ट स्तर को प्राप्त कर सके।

• *सहानुभूति* :- अन्य लोगों की भावनाओं के प्रति सहानुभूति रखना तथा निर्णयन के दौरान सदस्यों की भावनाओं का पर्याप्तता में ध्यान रखना।

• *अभिप्रेरण* :- उपलब्धि की दिशा में सार्थक प्रयास तथा अभिप्रेरण कारकों की स्थापना।

गोलमन ने भावनात्मक सामर्थ्य के विभिन्न कारकों को भावनात्मक दक्षता के आवश्यक तत्व के रूप में परिभाषित कर उक्त तत्वों को भावनात्मक दक्षता वर्धित करने वाले कारक भी बताया।

3. विशेषता माडल

मनोवैज्ञानिक के.वी. पेटरिड्स् ने योग्यता संबंधी माडल एवं विशेषता माडल में अवधारणा संबंधी विभेद की व्याख्या प्रस्तुत की तथा विशेषता माडल के रूप में भावनात्मक दक्षता को व्यक्ति की भावनात्मक क्षमताओं के स्व

निर्धारण के रूप में परिभाषित किया। भावनात्मक दक्षता को व्यवहारगत प्रवत्ति तथा स्वयं के द्वारा आंकलित योग्यताओं के रूप में मानते हुए इसका मूल्यांकन स्वयं की रिपोर्ट के आधार पर निर्धारित किया। योग्यता संबंधी माडल जहां वास्तविक योग्यताओं पर आधारित व्याख्या प्रस्तुत करता है। वहीं विशेषता संबंधी माडल भावनात्मक दक्षता को व्यक्तित्व के दायरे में समाहित मानता है। इस माडल को दूसरे शब्दों में भावनात्मक स्व दक्षता संबंधी माडल कहा जा सकता है।

इस प्रकार समग्र रूप में भावनात्मक दक्षता को विभिन्न भावनात्मक समझ संबंधी कारकों की उपस्थिति जिनसे की स्वयं के साथ अन्य की भावनाओं की वास्तविक समझ स्थापित हो साथ ही परिस्थिति विशेष में भावनात्मक प्रतिक्रिया संबंधी कारक जो कि सकारात्मक परिणाम निष्पादन में सक्षम हो तथा स्वयं की एवं अन्य की भावनाओं पर नियंत्रण, निर्देशन एवं नियमन संबंधी कारकों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। भावनात्मक दक्षता व्यक्ति के भावनात्मक स्तर को सक्षम एवं सकारात्मक बनाने वाले कारकों की उपलब्धता को कहा जा सकता है।

समाज में सामन्यतः विभिन्न सफल व्यक्तियों को आदर्श माना जाता है तथा उनके उदाहरण एवं अनुसरण संबंधी चर्चाएं जन सामान्य में व्यापक रूप से सुनी जाती हैं। किसी भी क्षेत्र में व्यक्ति की सफलता उसके कार्य विशेष के कौशल पर आधारित होती है। साथ ही कुछ व्यक्ति जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफल देखें जातें है, व्यक्ति अपने काम में सफल है उसके सामाजिक, आर्थिक एवं पारिवारिक सहसंबंध बेहतर हैं, वह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आदर्श व्यक्ति है, आदि बातें जब किसी व्यक्ति विशेष के बारे में कहीं जातीं है तब उस व्यक्तित्व के लक्षण एवं कौशल पर विचार किया जाना आवश्यक हो जाता है। यहां इस प्रकार के विश्लेषण का अधिकांश परिणाम विभिन्न तथ्यों के साथ यह तथ्य भी प्रकाशित करता है कि उक्त व्यक्ति के व्यक्तिगत सहसंबंध अपने उच्च एवं निम्न अधिकारी स्तर से लेकर परिवार, दोस्त, रिश्तेदार, परिवेश, सभी में बेहतर हैं। कई बार ऐसे उदाहरण प्रकाश में आते हैं जहां व्यक्ति अकादमिक रूप से अत्यधिक योग्य एवं विद्यवान होने के बावजूद सामाजिक रूप से असफल होता है वह अपने कार्य में एवं व्यक्तिगत संबंधों में व्यवहारिक सोच एवं सकारात्मक परिणाम निष्पादन नहीं कर पाता। यहां विचारणीय है कि व्यक्ति की बौद्धिक क्षमता या अकादमिक सफलता समग्र सफल व्यक्तित्व के निर्धारक नहीं होते अपेक्षाकृत भावनात्मक दक्षता

सफलता निर्धारण में अधिक अंश में भूमिका निर्वहन करती है। भावनात्मक दक्षता, भावनाओं के प्रबंधन से सकारात्मक सह संबंधों के निर्माण एवं तनाव प्रबंधन के माध्यम से सफलता की मुख्य कारक के रूप में स्थापित होती है। समाज या कार्य संगठन में अपेक्षा एवं उपेक्षा वे प्रमुख तथ्य या कारक हैं जो परिवेश की दिशा तथा कार्य की दशा निर्धारित करने में प्रमुख भूमिका निभातें हैं। पारस्परिक अपेक्षा सह संबंधों का आधार होती है एवं उपेक्षा इसे ऋणात्मक रूप से प्रभावित करती है। भावनात्मक दक्षता हमें अपेक्षा के मूल्यांकन एवं उसकी पूर्ति की दिशा में मार्ग प्रशस्त करने हेतु आधार प्रदान करती है। भावनात्मक दक्षता के महत्व को निम्न प्रभावों के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

1. *कार्य निष्पादन दक्षता* :- भावनात्मक दक्षता के माध्यम से सामाजिक एवं परिवेशगत जटिलताओं की समझ प्राप्त होती है जो कि कार्य स्थल पर कार्य अनुरूप वातावरण के निर्माण में सहायक है। इस प्रकार के कार्य परिवेश का सीधा संबंध अभिप्रेरण से होता है निश्चित ही अभिप्रेरित कर्मचारी बेहतर परिणाम प्रदान करता है।

2. *शारीरिक स्वास्थ्य* :- चिकित्सा विज्ञान पूर्ण रूप से प्रमाणित करता है कि तनावमुक्त रहकर कई गंभीर बीमारियों से बचा जा सकता है तथा अनियंत्रित तनाव उच्च रक्तचाप, प्रतिरोधक क्षमता की कमी, मधुमेह, नपुंसकता, तथा अधिक आयु के लक्षण आदि का मुख्य कारण होता है। भावनात्मक दक्षता प्रथम स्तर पर तनाव नियंत्रण एवं प्रबंधन को आवश्यक तत्व के रूप में स्थापित करता है। भावनात्मक स्तर पर अनियंत्रण की स्थिति मानव शरीर के विभिन्न अंगों को संचालित करने वाले हार्मोन्स के स्त्राव को कम या अधिक करता है तथा इन हार्मोन्स का अनियंत्रित प्रवाह विभिन्न शारीरिक गतिविधियों को भी बाधित करता है। भावनात्मक दक्षता, भावनात्मक नियंत्रण एवं प्रबंधन की स्थिति सुनिश्चित करती है। तथा व्यक्ति की द्वंद रहित सामाजिक जीवन की स्थापना में सहायक होती है। इस प्रकार शारीरिक स्वास्थ्य की अपेक्षाकृत उपयुक्त स्थिति का निर्धारण सुनिश्चित होता है।

3. *मानसिक स्वास्थ्य* :- तनाव एवं भावनात्मक अनियंत्रण की स्थिति गुस्सा, अवसाद, उत्तेजना आदि का कारण बनती है। लगातार तनाव की स्थिति में कार्य दक्षता एवं निर्णय क्षमता ऋणात्मक रूप से प्रभावित होती है। जैसे कि कहा जाता है खुला दिमाग व्यक्ति की सोच, कल्पना, निर्णय, आदि की क्षमताएं अपेक्षाकृत अधिक होती हैं। भावनात्मक दक्षता व्यक्ति के खुले दिमाग की

अवधारणा को सार्थक करती है। सामाजिक संबंधों एवं परिवेश कारकों की जटिलता की स्थिति व्यक्ति की सोच को सीमितता प्रदान करती है। इसके विपरीत भावनात्मक दक्षता इस प्रकार की जटिलताओं को प्रतिबंधित कर खुले दिमाग की स्थिति में पहुंचाने में सहायक होती है।

4. *सहसंबंध* :- भावनाओं की समझ एवं नियंत्रण की स्थिति में व्यक्ति कुशलता पूर्वक दूसरों की भावनाओं को एवं सोच को समझने में सक्षम होता है। इस प्रकार की क्षमता दूसरों से सफल एवं सार्थक संवाद स्थापित करने की दक्षता तथा आत्म विश्वास का निर्धारण करती है। इस प्रकार अपने एवं दूसरों की भावनाओं की समझ तथा सार्थक सफल संचार स्थापित करने की दक्षता सुदृढ़ संबंधों के निर्माण में सहायक होती हैं। व्यक्तिगत तथा व्यवसायिक स्तर पर मजबूत सहसंबंध व्यक्ति को आत्मविश्वास तथा सार्थक कार्य करने की क्षमता प्रदान करते हैं। सुदृढ़ सहसंबंध वाले व्यक्तियों को आकर्षित व्यक्तित्व के रूप में मान्यता प्राप्त होती है।

5. *प्रभावशीलता* :- सामान्यतः सभी व्यक्ति व्यक्तिगत एवं व्यावसायिक स्तर पर प्रभावशाली होने का प्रयास करते हैं। यह दायित्व व्यक्ति के किसी भी स्तर के नेतृत्वकर्ता होने की स्थिति में और बढ जाता हैं। नेतृत्व की सफलता उसके समूह पर प्रभाव के रूप में ही परिभाषित होती है। भावनात्मक दक्षता जहां अपनी भावनाओं की पहचान तथा दूसरों की भावनाओं के सम्मान की क्षमता निर्धारित करती है वहीं पारस्परिक पारदर्शिता एवं साहनुभूति का निर्माण होता है। इस प्रकार पारदर्शिता एवं सहानुभूति के माध्यम से वांछित प्रभाव स्थापित करने में सफलता प्राप्त होती हैं व्यक्ति की प्रभावित करने की क्षमता भावनात्मक दक्षता के समानुपातिक सहसंबंध प्रदर्शित करती है। जो कि नेतृत्वकर्ता का आवश्यक गुण है।

भावनात्मक दक्षता का उत्थान

मानव शरीर में मस्तिष्क को प्राप्त सभी सूचनाएं इन्द्रियों के माध्यम से प्राप्त होती हैं तथा तनावपूर्ण या भावनात्मकता से संबंधित निर्देश मस्तिष्क को प्राप्त होने पर मानव व्यवहार अनियंत्रित या आधारभूत प्रवृत्तियों का प्रदर्शन करने लगता है। इस प्रकार की परिस्थिति में व्यक्ति की कार्य क्षमता सीमित हो जाती है अतः वृहद स्तर की विचारशीलता तथा अच्छी निर्णय क्षमता के निधारित के लिए आवश्यक है कि भावनाओं को संतुलित करने करने की योग्यता व्यक्ति में हो व्यक्ति की याद रखने की क्षमता भी भावनाओं से संबंधित होती है, तथा

याददाश्त का भावनात्मक अंश व्यक्ति की निर्णयन क्षमता में सहायक होने के साथ ही गलतियों के दोहराने से बचाव की स्थिति निर्मित करने में सहायक होता है। इस प्रकार व्यक्ति के निजी एवं व्यवसायिक जीवन में भावनात्मक दक्षता की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। भावनात्मक दक्षता तथा निर्णयन क्षमता संबंधी योग्यताओं के उत्थान के लिए मस्तिष्क के भावनात्मक पक्ष को समझना एवं नियंत्रित करना आवश्यक है। इसके लिए पांच कौशल के विकास से भावनात्मक दक्षता के विकास की व्याख्या की जाती है। इन पांच विभिन्न कौशल का विकास भावनात्मक व्यक्तित्व का निर्माण करता है। प्रथम दो कौशल में दक्षता प्राप्त करने के उपरांत तीसरे चौथे एवं पांचवे कौशल को समझना एवं सीखना आसान हो जाता है।

भावनात्मक दक्षता कौशल 01 : त्वरित तनाव नियंत्रण

तनाव, व्यक्ति के मस्तिष्क की वह दशा होती है जबकि व्यक्ति का मस्तिष्क एक से अधिक लक्ष्यों, कार्यों या समस्याओं के दबाव से प्रभावित होता है। तनाव की स्थिति मस्तिष्क की सभी प्रकार की क्षमताओं के सार्थक उपयोग पर प्रतिकूल प्रभाव अंकित करती है। साथ ही तनाव व्यक्ति की मानसिक एंव शारीरिक बीमारियों का कारण भी होता है। उच्च तनाव की स्थिति व्यक्ति के शरीर एवं दिमाग पर अपना नियंत्रण स्थापित कर परिस्थिति को समझने की क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव अंकित करती है। व्यक्ति की तनाव को शीघ्रता से नियंत्रित एवं कम करने की योग्यता व्यक्ति को संतुलित, कार्य केन्द्रित बनाने के साथ ही कठिन चुनौतियों से सफलतापूर्वक निपटने की योग्यता का निर्धारण करती है। अतः तनाव नियंत्रण नेतृत्वकर्ता का आवश्यक गुण हो जाता है। यहां तनाव होना सार्वभौम तथ्य है लेकिन उपयोगी तथ्य यह है कि किस प्रकार एवं कितने समय में व्यक्ति तनाव रहित स्थिति को प्राप्त करता है। तनाव की स्थिति में भावनात्मक नियंत्रण एवं संतुलन स्थापित नहीं किया जा सकता अतः त्वरित तनाव नियंत्रण की दक्षता भावनात्मक योग्यता का आवश्यक अंग है तनाव नियंत्रण के लिए व्यक्ति को तीन स्तरों पर कार्य करना होता है।

• *प्रथम स्तर* :- सर्वप्रथम तनाव को कम करने के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति यह आभास करे कि वह कब तनाव की स्थिति में है। तनाव की स्थिति में किस प्रकार के लक्षण उत्पन्न होते हैं। व्यक्ति का शरीर तनाव की प्रतिक्रिया किस रूप में व्यक्त करता है। मांसपेशियों का शिथिल होना, घबराहट होना, हाथ पांव का ठीक से काम न करना, श्वास उथली होना आदि वे कौन से लक्षण है

जो तनाव की स्थिति में व्यक्त होते है। इस लक्षणों के आभास के माध्यम से व्यक्ति यह निर्धारित करने में सफल होता है कि वह तनाव में है या नहीं। तनाव नियंत्रण का पहला स्तर तनाव की जानकारी एवं उसके लक्षणों के आभास से प्रारंभ होता है।

• *द्वितीय स्तर* :- द्वितीय स्तर पर व्यक्ति की तनाव के प्रति प्रतिक्रिया की वास्तविक स्थिति को निर्धारित किया जाना आवश्यक होता है। व्यक्ति तनाव की स्थिति में गुस्सा या उत्तेजना प्रदर्शित करता है या अवसाद या पलायन की स्थिति को व्यक्त करता है। यदि व्यक्ति उत्तेजना या तनाव के प्रति उत्तेजित प्रतिक्रिया व्यक्त करने की प्रवत्ति रखता है तो उसे तनाव की स्थिति में शांति एवं धैर्य प्रदान करने वाली अभिक्रियाओं का प्रयोग करना श्रेयस्कर होता है। इसके विपरीत यदि व्यक्ति की प्रवृत्ति तनाव के प्रति अवसाद गुण या पलायनवादी प्रतिक्रिया व्यक्त करने की है तब उत्साहपूर्ण अभिक्रियाओं के प्रयोग तनाव के प्रति किया जाना उचित होगा इसी प्रकार यदि तनाव की परिस्थिति में व्यक्ति में जडता या स्थिरता की भावना व्यक्त होती हो तो किसी भी रूप में गतिशीलता प्रदान करने वाली अभिक्रियाओं के माध्यम से तनाव कम किया जा सकता है। इस प्रकार तनाव की स्थिति ज्ञात होना तथा उसके प्रति स्वभाविक प्रतिक्रिया एवं उससे परिलक्षित लक्षणों का वास्तविक ज्ञान होना तथा अपेक्षित अभिक्रिया के माध्यम से तनाव नियंत्रित करना इस दिशा में सहायक होता है।

• *तृतीय स्तर* :-तनाव की स्थिति में तनाव नष्ट करने वाली तकनीको की खोज एवं प्रयोग इस स्तर पर करना चाहिए। तनाव को त्वरित रूप से कम करने के लिए सरल तकनीक के रूप में आधार भूत पांच इंन्द्रियों यथा देखना, सुनना, सूंघना, स्वाद लेना, एवं स्पर्श करना में से एक या अधिक को तनाव कारक से विपरीत दिशा में व्यस्त किया जाकर तनाव कम किया जा सकता है। व्यक्ति इन इन्द्रियों के कार्य के प्रति पृथक पृथक प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। लेकिन सभी व्यक्ति इन्द्रियों के प्रति सुखदायक स्थिति की चाहत रखते हैं तथा इन इन्द्रियों के कार्य के प्रति इस प्रकार की वांछित स्थिति प्राप्त होने पर व्यक्ति मानसिक प्रसन्नता प्राप्त करता है क्योंकि तनाव नियंत्रण में महत्वपूर्ण अवदान प्रदान करती है। अच्छा एवं प्रिय संगीत सुनना, भावनाओं को प्रभावित एवं उत्थान करने संबंधी चित्र या दृय देखना, अच्छा तथा स्वादिष्ट भोजन करना आदि के द्वारा व्यक्ति प्रवृत्ति अनुरूप तनाव नियंत्रण कर सकता है। तनाव नियंत्रण संबंधी तकनीक व्यक्तिगत स्तर पर विकसित की जा सकती हैं तथा इनके वैविध्य पूर्ण स्तर एवं प्रकार भिन्न भिन्न रूपों में प्रकाश में आते हैं व्यक्ति के व्यक्तिगत शौक भी इस

तौर पर प्रभावी हो सकते हैं।

इस प्रकार तनावपूर्ण परिस्थिति का आंकलन उसके प्रति सामान्य प्रतिक्रिया का नियमन एवं तनाव नियंत्रण संबंधी तकनीकों का निर्धारण एवं उपयोग व्यक्ति के तनाव नियंत्रण एवं कौशल को स्थापित करता है।

भावनात्मक दक्षता कौशल 02 : भावनात्मक जागरूकता

व्यक्ति अपनी भावनाओं से सतत संबद्ध होता है तथा उसकी विभिन्न क्रियाओं पर इन भावनाओं का प्रभावी असर देखा जाता है। भावनाओं की दशा एवं दिशा के संबंध में समय दर समय जानकारी होना आवश्यक होता है साथ ही वे किस प्रकार व्यक्ति के विचारों और क्रियाओं को प्रभावित करते है इस संबंध में जागरूकता व्यक्ति को स्वयं को समझने की योग्यता प्रदान करती है। ऐसे कई उदाहरण प्रकाश में आते हैं जहां व्यक्ति अपने मूल भावनाओं जैसे क्रोध, उदासी, डर एवं आनन्द आदि से संबद्ध नहीं हो पाता है। तथा इसके परिणामस्वरूप व्यक्ति नकारात्मक अभिव्यक्ति प्रदर्शित करता है तथा भावनाओं को दबाने की परिणति को प्राप्त होता है। स्वीकार्य तथ्य यह भी है कि भले ही अपनी भावनाओं को अस्वीकार करे, दबाए अथवा उन्हें बाधित करने का प्रयास करे लेकिन भावनाएं प्रथक नहीं होतीं तथा किसी रूप में विद्यमान रहती हैं। भावनात्मक जागरूकता के अभाव में व्यक्ति अपने अभिप्रेरण एवं अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण रूपेण समझने में समर्थ नहीं हो पाता है तथा न ही वह दूसरों से प्रभावी रूप से संवाद स्थापित कर पाता है।

यहां व्यक्ति को यह ज्ञात होना अथवा दूसरे शब्दों में इस बात का सरोकार होना बेहद आवश्यक है कि विभिन्न भावनाओं से उसका व्यक्तिगत तारतम्य किस प्रकार का है। व्यक्ति के अनुभव के आधार पर क्या भावनात्मक परिवर्तन भी बार बार होता है? क्या व्यक्ति की भावनाएं शारीरिक क्रियाओं के साथ परिवर्तित होती हैं या अन्य शब्दों में भावनात्मक संवेदना का प्रभाव शारीरिक रूप में व्यक्त होता है? क्या व्यक्ति में भावनाओं का प्रवाह असतत रूप में होता है? क्या व्यक्ति की भावनाएं सक्षमता की दृष्टि से इस श्रेणी तक सामर्थ्य शील हैं कि वे स्वयं का तथा अन्य का ध्यान नियंत्रित करें? क्या व्यक्ति भावनाओं के प्रति सचेत है तथा उसकी निर्णयन क्षमता में क्या भावनाओं का प्रभावी स्थान है? उक्त प्रश्नों में यदि किसी भी प्रश्न का उत्तर नकारात्मक है तो यह इस बात का संकेत है कि व्यक्ति की भावनाएं कहीं न कहीं उपेक्षित होकर नकारात्मक दिशा में प्रवाहित हैं तथा व्यक्ति भावनात्मक रूप से स्वस्थ तथा दक्ष होने की स्थिति से विचलन की और

अग्रसर है। ऐसी स्थिति में आवश्यक है कि व्यक्ति मूल भावनाओं से पुनः संबद्ध हो तथा उन्हें स्वीकार कर सरलता एवं आसानी की स्थिति को प्राप्त करे।

भावनात्मक जागरूकता का विकास सरल तथा किसी भी स्तर पर सीखी जा सकने बाली प्रक्रिया हैं मूल भावनाओं तथा उनके प्रति प्रतिक्रियाओं को उपेक्षा से अपेक्षा के स्तर तक स्थापित करने तथा विभिन्न वैयक्तिक परिप्रेक्ष्यों में भावनात्मक स्तर को समाहित कर द्वंद्व परिहार की स्थिति इस प्रकार की जागरूकता सुनिश्चित कर सकती है पूर्ण मनःस्थिति से ध्यान के माध्यम से भी इस दिशा में अपेक्षित परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। इस संबंध में हेल्प गाईड टूल किट के माध्यम से जटिल भावनाओं को सहज संपर्क तथा भावनाओं को नियंत्रित किया जाना सुनिश्चित किया जा सकता है।

भावनात्मक दक्षता कौशल 03 : अशाब्दिक संचार

किसी भी दक्ष संचारकर्ता के लक्षणों में शाब्दिक संचार से अधिक अशाब्दिक संचार को महत्व दिया जाता है। अशाब्दिक संचार से आशय मुख्य रूप से क्या कहा गया? कि अपेक्षा किस प्रकार कहा गया? से लिया जाता है। अभिव्यक्ति के दौरान शारीरिक इशारे आंखों एवं हाथों से की गई अभिव्यक्ति तथा समग्र शारीरिक प्रतिक्रिया जैसे कि किस प्रकार व्यक्ति बैठा या खड़ा है वह कितनी तेजी से एवं कितनी उंची आवाज में वह बात कर रहा है। उसने बात करने वाले से कितनी दूरी बनाई हुई है आदि क्रियाओं को अशाब्दिक संचार के मुख्य कारक माने जाते हैं। सामने वाले व्यक्ति का ध्यान आकर्षित करने तथा सहसंबंध स्थापित करने एवं विश्वास अर्जित करने के लिए आवश्यक होता है कि व्यक्ति शारीरिक भाषा जो कि अशाब्दिक संचार के रूप में अभिव्यक्त होती है का नियंत्रित एवं युक्तिसंगत उपयोग करे। इसके साथ ही सामने वाले व्यक्ति की अशाब्दिक संकेतों को सटीक रूप में समझना और उनके प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करना भी समान रूप से महत्वपूर्ण होता है। सामान्यतः शाब्दिक संचार स्थिर होने पर भी अशाब्दिक संचार लगातार जारी रहता है। तथा व्यक्ति के यह शारीरिक संकेत समक्ष व्यक्ति के प्रति उसकी विभिन्न भावनाओं यथा आदर, निरादर, सम्मान, श्रृद्धा, प्रतिस्पर्धा, कटुता, आदि को व्यक्त करते रहते हैं। इन संकेतों से अनभिज्ञ व्यक्ति, अभिव्यक्ति के महत्वपूर्ण तथा अधिकांश प्रतिशत् माध्यमों से वंचित होता है साथ ही वह संचार के दौरान पूर्णता में समझ को स्थापित नहीं कर पाता। अशाब्दिक संचार में पारंगत व्यक्ति, सफल संचारकर्ता होने के साथ ही संकेतों में निहित भावनाओं को समझकर एवं प्रतिक्रिया देकर भावनात्मक दक्षता

की स्थिति को प्राप्त कर लेता है।

अशाब्दिक संचार मुख्य रूप से तनाव प्रबंधन की क्षमता, स्वयं की भावनाओं की समझ, विभिन्न संकेतों को समझने की सार्मथ्य पर निर्भर करता है। अशाब्दिक संचार कौशल के विकास के लिए सर्वप्रथम यह आवश्यक होता है कि व्यक्ति बातचीत के दौरान मन एवं मस्तिष्क से केन्द्रित हो। संचार के लक्ष्य के प्रति पूर्ण सचेत होकर अशाब्दिक संकेतों एवं उनमें छिपी हुई सूचनाओं एवं बारीकियों को समझना तथा शाब्दिक एवं अशाब्दिक संचार के विषय एवं लक्ष्यों की वास्तविक परख कर प्रतिक्रिया देना प्रथमतः आवश्यक तत्व हैं। द्वितीय स्तर पर संचार के दौरान आंखों से संपर्क स्थापित करना लाभप्रद होता है, इस प्रकार आंखों से संपर्क के माध्यम से व्यक्ति अपनी रुचि सरलता से प्रतिपादित कर सकता है साथ ही संचार की गति एवं प्रवाह भी इस प्रकार के संपर्क से निर्धारित होते हैं। संचार के दौरान आत्मविश्वास की अभिव्यक्ति के साथ ही व्यक्ति सामने वाले व्यक्ति की प्रतिक्रिया को भी समझने में सक्षम हो पाता है। अशाब्दिक संचार, कौशल विकास में तृतीय स्तर पर अशाब्दिक संकेतों के प्रति सचेत रहना तथा प्रेषित किए जाने वाले एवं ग्राह्य किए जाने वाले इन संकेतों क त्वरित मूल्यांकन करना आवश्यक होता है। चेहरे के भाव, आवाज की गति, लय, एवं उच्चता तथा भाव भंगिमाए, संचार का स्थान एवं समय तथा संपर्क आदि तथ्यों पर सचेत प्रतिक्रिया अशाब्दिक संचार कौशल उन्नयन में सहायक हो सकती है। अशाब्दिक संचार तथा उसका उत्कृष्ट उपयोग निश्चित ही व्यक्ति की नेतृत्व क्षमता के निर्धारण में महत्वपूर्ण होता है।

भावनात्मक दक्षता कौशल 04 : हास्य का प्रयोग

कहा जाता है कि जीवन की जटिलताओं एवं कठिनाईयों में हास्य सार्थक औषधि के रूप में कार्य करता है। हास्य के माध्यम से न केवल वैचारिक एवं मानसिक बोझ की स्थिति से निदान पाया जा सकता है बल्कि विभिन्न परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में समाधान की स्थिति को भी प्राप्त किया जा सकता है। हास्य के माध्यम से तनाव कम किया जा सकता है साथ ही अवसाद पूर्ण मनः स्थिति से बाहर आकर मस्तिष्क के संतुलन को भी स्थापित किया जा सकता है। सार्थक परिस्थिति अनुरूप हास्य का वार्तालाप संचार आदि में समय अनुकूल उपयोग भावनात्मक दक्षता के स्तर को मजबूत बनाने में सहायक होता है। हास्य के माध्यम से व्यक्ति अपनी कुंठाओं तथा असफलताओं को नए परिप्रेक्ष्य में देखने में सक्षम होता है तथा कठिन परिस्थितियों एवं बाधापूर्ण चुनौतियों को आसानी से निराकृत कर लेता है।

मर्यादित एवं युक्तिसंगत हास्य के माध्यम से व्यक्ति जटिल तथ्यों को आसानी से व्यक्त कर सकता है जो कि अन्यथा स्थिति में नहीं कर पाता। हास्यपूर्ण परिस्थिति जहां परिवेश को बोझिल होने से बचाती है वहीं व्यक्ति थकान दूर करने एवं शरीर को आराम दायक स्थिति प्रदान करने के साथ ही कार्य पूर्णता की स्थिति को सरलता से प्राप्त करता है। इस प्रकार प्रवत्ति व्यक्ति को असफलता से उबारने के साथ ही नई दिशा में सृजनामकता प्रदाय करने में सहायक होती है।

अपने संचार में हास्यपूर्ण परिस्थिति कारकों को समाहित करने के लिए कार्य के बीच समय का निर्धारण जिसमें की इस प्रकार की प्रक्रियाओं हंसी मजाक खेल आदि के लिए स्थान हो। सुखद गतिविधियां का चयन एवं निर्धारण करना जिससे की व्यक्ति अपने स्वभाव को सुखद एवं शांत प्रकृति का निर्धारित तथा व्यक्त कर सके। इस प्रकार का व्यक्ति संगठन में लोकप्रिय होता है तथा भावनात्मक स्तर पर लोगों से जुड़ने में भी सफल होता है। ऐसे व्यक्तियों से कठिन परिस्थितियों में भी कोई भी व्यक्ति वार्तालाप संचार के लिए सहज तैयार हो जाता है जो कि भावनात्मक दक्ष व्यक्ति या सफल नेतृत्वकर्ता के लिए आवश्यक है। अपनी नियमित गतिविधियों में बच्चों, जानवरों के साथ खेलना तथा बाहरी व्यक्तियों जो कि हसीं मजाक आदि के लिए सामान्य हों से संपर्क एवं इस प्रकार का व्यवहार सुखद अनुभूति के साथ ही भावनात्मक दक्षता में वृद्धि कारक होता है।

भावनात्मक दक्षता कौशल 05 : मतभेदों का सार्थक निराकरण

द्वंद्व संघर्ष, असहमति या मतभेद किन्ही भी मानवीय रिश्तों में अपरिहार्य होते हैं, कोई भी दो व्यक्यिों के बीच एक से मत आवश्यकता, अपेक्षा लगातार बने रहे यह संभव नहीं होता है तथा यही कारण मानवीय संपर्को एवं संबंधों में विभिन्न स्तरों पर मत भेद, असहमति के कारक पाए जाते हैं। सार्थक तथा त्वरित निराकरण नहीं होने पर यह मतभेद संघर्ष एवं विरोध के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। अतः मतभेद होना सामान्य प्रक्रिया है लेकिन समयानुरूप सार्थक निराकरण नहीं होना, हानिकारक स्थिति है। मतभेदों एवं द्वंद्व की स्थिति को सकारात्मक, विश्वास स्थापित करने वाली प्रक्रिया के माध्यम से निराकृत करने की योग्यता भावनात्मक दक्षता के उन्नयन की दिशा में आवश्यक योग्यता है। इस प्रकार पूर्व में भावनात्मक दक्षता संबंधी वर्णित चार कौशल यथा तनाव प्रबंधन भावनात्मक जागरूकता, अशाब्दिक संचार तथा हास्य का प्रयोग इस प्रकार के संघर्ष की स्थिति के निराकरण में सहायक होते हैं तथा परिस्थिति को बिगड़ने या ऋणात्मक

स्थिति में जाने के पूर्व संघर्ष का समाहार अतिआवश्यक होता है।

द्वंद्व, असहमति, या संघर्ष की स्थिति के निराकरण के लिए सर्वप्रथम यह आवश्यक है कि व्यक्ति वर्तमान के प्रति पूर्णतः संकेन्द्रित एवं जागरूक रहे। पूर्व के असंतोष तथा दूसरों के द्वारा पहुंचाए गए दुख या व्यक्तिगत भावनात्मक चोट संबंधी तथ्यों को उपेक्षित करते हुए वर्तमान में केन्द्रित रहने से व्यक्ति वर्तमान परिस्थितियों की वास्तविकता को समझ पाता है। तथा संबंधों को वर्तमान चुनौतियों के रूप में स्वीकार करते हुए असहमति एवं द्वंद्व संबंधी पूर्व भावनाओं के निराकरण में भी सक्षम हो जाता है। विभिन्न विषयों पर तर्क वितर्क एवं कुतर्क की स्थिति व्यक्ति की समय एवं उर्जा को क्षति पहुंचाती है तथा द्वंद्व संघर्ष या मतभेद के निराकरण पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। सामान्यतः व्यक्ति अनावश्यक विषयों पर भी तर्क वितर्क करता है, जिससे की संघर्ष की स्थिति स्थपित होती है तथा व्यक्तिगत स्तर पर तर्क व्यक्तिगत मतभेद स्थापित कर देता है जिसका परिणाम यह होता है कि दो व्यक्तियों के बीच आवश्यक विषयों में भी मतभेद उत्पन्न होने लगते हैं तथा इस प्रवत्ति की परिणति संगठन में आपसी विरोध पार्टीबंदी या संगठन के अघोषित छोटे समूहों में विभाजन की स्थिति तक पहुंच जाती है। जो कि नेतृत्व एवं संगठन के स्तर पर अत्यधिक नकारात्मक प्रभाव स्थापित करती है। भावनात्मक दक्ष व्यक्ति आवश्यक विषयों पर आवश्यक तर्क का चयन करते हैं तथा तर्क वितर्क संगठन एवं कार्य की दृष्टि से लाभप्रद है वहां तक ही तर्क वितर्क कर समय उर्जा तथा संबंधों की बचत करने में विश्वास रखते हैं। भावनात्मक दक्षता के लिए क्षमाशील स्वभाव उपयोगी होता है क्योंकि लोगों की पूर्व असहमतिपूर्ण एवं हानिकारक गतिविधियों को लगातार याद रखने तथा उन्हें उसके लिए दण्डित कराए जाने का प्रयास लगातार द्वंद्व या संघर्ष की स्थिति को न केवल बनाए रखता है बल्कि उसमें उत्तरोत्तर बृद्धि भी करता है। व्यक्ति को कमी या गलती का ज्ञान कराकर क्षमा कर देना द्वंद्व एवं संघर्षों के परिहार में अत्यधिक लाभ्रपद होता है। व्यक्तियों के मध्य तर्क वितर्क एवं द्वंद्व की स्थितियां कई बार सतत प्रकृति की होती है तथा उनका निराकरण निर्धारित किया जाना संभव नहीं हो पाता। ऐसी परिस्थिति में असहमत होते हुए भी इस प्रकार के तर्क या द्वंद्व का निराकरण सुनिश्चित करना सकारात्मक परिणाम प्रदान करता है।

इस प्रकार भावनात्मक दक्षता के उन्नयन के लिए पांच कौशल सिद्धांत की व्याख्या की जाती है यह कौशल आपस में अंतर्संबंध का प्रदर्शन करते हैं तथा समग्र रूप में भावनात्मक दक्षता की वृद्धि सुनिश्चित करते हैं भावनात्मक दक्षता

की वृद्धि या समझ की अवधारणा आयु, शिक्षा, कार्य, परिवेश, आदि से बाधित नहीं हैं इसे किसी भी व्यक्ति द्वारा किसी भी आयु में सीखा समझा एवं वर्धित किया जा सकता है। मुख्य रूप से व्यक्ति के अनुभव एवं अनुभव आधारित ज्ञान जिसे व्यक्ति के विवेक के रूप में परिभाषित किया जाता है। भावनात्मक दक्षता निर्धारण हेतु मुख्य कारक होता है। इस परिप्रेक्ष्य में किसी भी व्यक्ति के भावनात्मक दक्षता संबंधी कौशल गुण या तत्व भिन्न रूपों में भी स्थापित हो सकते हैं। यहां संबंधों का व्यक्तिगत एवं व्यावसायिक रूप भी वैविध्य प्रदर्शित करता है तथा व्यवसायिक भावनात्मक दक्षता में व्यवसायिक तत्वों की प्रबलता अधिक प्रभावी होती है। उपरोक्तानुसार वर्णित कौशल पर ध्यान केन्द्रित कर अनुभवों को समाहित करने की सतत प्रक्रिया इस प्रकार की दक्षता उन्नयन में सहायक हो सकती है। भावनात्मक नेतृत्व की अवधारणा व्यक्ति के समूह एवं अनुगामियों पर प्रभाव को रेखांकित करती है। भावनात्मक नेतृत्व प्रक्रिया में नेतृत्व के निर्देश, निर्णय, लक्ष्यों के प्रति हृदय से संबंद्धता, आंतरिक अभिप्रेरण एवं शत प्रतिशत अवदान के माध्यम से नेतृत्व की सफलता सुनिश्चित की जाती है यहां नेतृत्व के कार्य कलाप यांत्रिक न होकर भावनात्मक स्थिति को प्राप्त करते हैं। समूह एवं प्रबंधन के बीच सकारात्मक सह संबंध पारस्परिक सहयोग से आत्मविश्वास का विकास एवं स्वामित्व की भावना का संचार यहां निर्धारित होता है।

भावनात्मक दक्षता संबंधी अवधारणा के संबंध में विभिन्न विद्यवानों ने भिन्न भिन्न आधारों पर आलोचना भी प्रस्तुत की है। सर्वप्रथम तो भावनात्मक दक्षता को दक्षता के रूप में स्वीकार किए जाने पर ही प्रश्न चिह्न अंकित किए गए तथा शारीरिक मानसिक एवं अन्य दक्षताओं में भावनात्मक दक्षता का वस्तुनिष्ठ स्थान निर्धारित नहीं, संबंधी आलोचना की गई। तथा इसे कल्पनात्मक अवधारणा सिद्ध करने का प्रयास किया गया। भावनात्मक दक्षता को अनुमान आधारित परिकल्पना निर्धारित करते हुए इसके मूल्यों को अनुमान आधारित बताया गया तथा भावनात्मक दक्षता के मापन के संबंध में भी प्रश्न स्थापित करते हुए इसके मूल्यांकन परीक्षणों के माध्यम से योग्यता के परीक्षण नहीं होने तथा व्यक्तिगत एवं सामान्य दक्षता के ही परीक्षण होने के संबंध में आलोचना की गई। भावनात्मक दक्षता के स्वमूल्यांकन परीक्षण को सहजता से परे बताया गया, इसी प्रकार भावनात्मक दक्षता मूल्यांकन परीक्षण में महिलाओं की दक्षता पुरुषों से अधिक होने की सामान्य प्रवत्ति को भी चुनौती दी गई। उक्तानुसार विविध आलोचनात्मक तथ्यों के बावजूद भावनात्मक दक्षता संबंधी अध्ययन इसकी

अवधारणा, उपयोगिता एवं महत्ता के तत्वों को स्थापित एवं स्वीकार्य बनाते हैं। विभिन्न दक्षताओं के मध्य इस प्रकार की दक्षता का विशेष स्थान स्थापित होता है जिसे नकारा नहीं जा सकता। व्यक्ति के व्यक्तिगत जीवन में उसके कार्यकलाप में यदि अन्य दक्षताओं को शरीर एवं मस्तिष्क कहा जाए तो भावनात्मक दक्षता आत्मा या मन के रूप में परिभाषित की जा सकती है। जो कि व्यक्तिगत कार्यकलापों के निर्धारण में प्रत्यक्ष न होकर भी उनकी दिशा एवं स्वरूप का निर्धारण करती है।

भावनात्मक दक्षता : पुलिस

पुलिस संगठन के संबंध में सामान्य धारणा यह है कि इस संगठन में एवं इसके कार्य कलापों में संवेदनशीलता, भावनात्मकता, आदि प्रवत्तियों का सर्वथा अभाव है। यह धारणा अपना विस्तार इस श्रेणी तक करती है कि इस संगठन में इस प्रकार की प्रवत्तियां अपेक्षित भी नहीं हैं। विभिन्न अध्ययन शोध एवं केस स्टडी यह प्रमाणित करते हैं कि भले ही संगठन के स्तर पर इस प्रकार की प्रवृत्तियों का अभाव हो लेकिन अपेक्षा को नकारा नहीं जा सकता। संगठन की संरचना एवं ढांचा तथा जनता से लगातार संबद्धता पुलिस संगठन में सह संबंधों की अपेक्षा निर्धारित करती है। अच्छे सहसंबंध, सार्थक परिणाम प्रदान करते हैं तथा लक्ष्य प्राप्ति में सहायक होते हैं यह तथ्य भी सहज स्वीकार्य है तथा अच्छे सहसंबंध भावनात्मक दक्षता अथवा भावनात्मकता के बिना संचालित नहीं हो सकते अतः पुलिस संगठन में भावनात्मक दक्षता का स्थान निर्धारित होता है। पुलिस संगठन में भावनात्मक दक्षता की स्थिति के संबंध में विश्लेषण करने पर विभिन्न स्थितिया प्रकाश में आती हैं।

1. *भावनात्मक संबंधों का अभाव* :- पुलिस संगठन के कार्य की प्रवृत्ति एवं प्रकृति तथा पुलिस के कार्यों में सामान्य रूप से समाहित निषेध कारक भावनात्मक संबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। पुलिस के कार्य सृजनात्मक नहीं होने से तथा विभिन्न अवसरों पर लोगों को रोकने, अपराध की स्थिति में अपराधियों को निरोध करने, अपराध की स्थिति में ही आमजन से संपर्क में आने, विभिन्न विशिष्ट व्यक्तियों स्थानों के व्यवस्थापन में ड्यूटी के दौरान निषेधात्मक कार्य करने, जन उत्साह, जलसा, जुलूस कार्यक्रम आदि को विधि अनुरूप संचालित करने के लिए निषेधात्मक कार्य करने आदि के कारण पुलिस का कार्य सामान्यताः सृजनात्मक नहीं होकर निषेधात्मक होता है। यह परिस्थिति संगठन को दो रूप से प्रभावित करती है। प्रथम तो आम जनता पुलिस को क्रूर तथा रोकने

वाली शक्ति के रूप में देखती है तथा भावनात्मक संभावनाएं क्षीर्ण करती है, द्वितीय लगातार इस प्रकार के कार्य करने से पुलिस कर्मचारियों की मूल भूत प्रवृत्ति परिवर्तित होकर कठोर या जटिल स्वभाव में परिणीत हो जाती है जो कि भावनात्मकता से प्रवृत्तियों को पृथक करती है। अतः भावनात्मक संबंधों का अभाव संगठन की इस दिशा में मूल प्रवृत्ति का स्थान ग्रहण करता है।

2. *अनुशासन* :- पुलिस संगठन की कार्य प्रणाली आंतरिक सहसंबंधों के निर्धारण में अनुशासन की भावना महत्वपूर्ण कारक के रूप में स्थापित होती है। अनुशासन रैंक एवं स्तर के आधार पर व्यवहार को निर्धारित करता है तथा दण्ड का भय अनुशासन के सह कारक के रूप में अनुशासन को निर्धारित करता है। भावनात्मक संबंधों की दृष्टि से प्रथमतः अनुशासन की भावना एवं अनुशासन निर्धारित करने के उद्देश्य के कारण संगठन के सदस्यों में आपसी संचार की अल्पता पाई जाती है तथा वरिष्ठ को इस बात की आशंका प्रबल होती है कि कनिष्ठ अनुशासन की मर्यादा का उल्लंघन न करे। कनिष्ठ अपने कृत्यों को अनुशासन की सीमा के अतिरेक से बचने के प्रति सशंकित रहता है इस प्रकार दोनों ओर से संचार वार्तालाप की सीमाएं निर्धारित होती है जो कि भावनात्मक संबंध स्थापना में बाधा उपस्थित करती है।

3. *कठोर निर्णय* :- कार्य की प्रकृति के अनुसार पुलिस संगठन में कठोर निर्णय करने की कई परिस्थितियां उपस्थित होती हैं। इस प्रकार कठोर निर्णय संगठन में भावनात्मक आघात के रूप में सहसंबंधों को प्रभावित करते हैं किसी के अति आवश्यक भावनात्मक बिन्दु पर विभाग का सहयोग न मिलना अति आवश्यक परिस्थितियों में अवकाश नहीं देना, बीमारी की हालत में भी निर्धारण परीक्षण के उपरांत ही सीमित आराम देना शारीरिक रूप से अयोग्य व्यक्ति को विभाग के लिए अयोग्य निर्धारित करना आदि निर्णय संगठन के भावनात्मक पक्ष को कमजोर करते हैं।

4. *कार्य आधिक्य* :- पुलिस संगठन के कार्य की बहुमुखी प्रवत्ति तथा मानवीय संसाधनों की अपेक्षाकृत अल्पता संगठन में कार्य आधिक्य की स्थिति निर्मित करती है। कार्य आधिक्य व्यक्ति के असंतोष, कुंठा का कारण बनता है जो कि भावनात्मकता को प्रभावित करता है।

5. *अनियमितता* :- कार्यों की प्रकृति तथा विभिन्न कार्यों में विभिन्न समय एवं कार्य के समय का नियमित नहीं होना संगठन के विशेष लक्षण है। पुलिस 24 घंटे तथा सातों दिन उपलब्ध रहने की प्रवृत्ति के कारण संगठन के प्रत्येक कर्मचारी में नियमितता का अभाव होता है। तथा नियमित्ता के अभाव के कारण

गुणवत्ता पूर्ण समय तथा अपेक्षाकृत सामान्य परिस्थिति में संपर्क की स्थितियां अल्प होती हैं साथ ही नियमित अवकाश नहीं होने के कारण आपसी सह संबंधों के गुणात्मक समय के अभाव के कारण भावनात्मक दूरी बनी रहती है।

इस प्रकार पुलिस संगठन में परिस्थितियां भावनात्मकता की स्थिति के विपरीत होती हैं जिससे की संगठन में भावनात्मक दक्षता का अपेक्षित स्तर स्थापित नहीं हो पाता जबकि संगठन में भावनात्मक दक्षता प्रभावी परिणाम प्रदान करने में अत्यधिक उपयोगी हो सकती है। संगठन के कार्य एवं आंतरिक संरचना व्यक्तिगत सहसंबंधों पर आधारित होने के कारण इसके उन्नयन से सार्थक स्थिति प्राप्त की जा सकती है। पुलिस संगठन में भावनात्मक दक्षता के महत्व को निम्नानुसार देखा जा सकता है।

(अ) *ढांचागत मजबूती* :- पुलिस संगठन में संगठन एवं इकाइयों के स्तर में आपसी सहसंबंधों एवं संगठन के उददेयों एवं व्यवसायिकता के प्रति भावनात्मक लगाव के अभाव में संगठन पूर्णरूपेण एक टीम के रूप में कार्य निष्पादन नहीं कर पाता है। जो कि परिणामों के स्तर पर बाधा उत्पन्न करता है। भावनात्मक दक्षता के माध्यम से आपसी सहसंबंधों की कड़ी स्थापित कर संगठन की मजबूत संरचना निर्मित की जा सकती है। जो कि संगठन की व्यवसायिकता, गोपनीयता, एकसूत्रीय अग्रसरण में सहायक हो सकती है।

(ब) *जनआंदोलन एवं कानून व्यवस्था* :- जनआंदोलन तथा जनता की भीड़ के प्रदर्शन, उग्रता आदि की स्थिति में भावनात्मक दक्षता के माध्यम से क्षैत्र की पुलिस, क्षैत्र की जनता की अपेक्षाओं को कारगर रूप से समझने में सक्षम हो सकती है। इस प्रकार उदाहरण हैं जहां भावनात्मक दक्षता के माध्यम से बड़े एवं उग्र आंदोलनों में प्रभावी सफलता प्राप्त की गई है। भावनात्मक दक्षता के माध्यम से सामुदायिक पुलिस व्यवस्था एवं समुदाय से संबंद्धता एवं तारतम्य की स्थापना की जा सकती है जो कि प्रभावी परिणाम उत्पादित कर सकती है।

(स) *सकारात्मक छवि* :- पुलिस के कार्यों की मूल प्रवत्ति निषेधात्मक होती है जिससे की पुलिस विभाग जनता में छवि संबंधी समस्या से ग्रस्त होता है। ऋणात्मक छवि का नुक्सान कई मामलों में संगठन को भुगतना होता है। इस प्रकार की छवि का मुख्य कारण पुलिस कर्मचारियों का बोलचाल, स्वभाव, तथा निषेधात्मक ड्यूटीयों में ड्यूटी के संबंध में आम जनता को जानकारी नहीं होना होता है। भावनात्मक दक्ष कर्मचारी सार्थक संवाद स्थापित कर तथा अपेक्षित व्यवहार प्रदर्शित कर पुलिस विभाग की छवि सुधारने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

(द) *सूचना संकलन* :- पुलिस की सफलता का महत्वपूर्ण भाग सूचनाओं की प्राप्ति के द्वारा निर्धारित होता है। पुलिस विभाग में आंतरिक स्तर पर कर्मचारियों से सूचना प्राप्ति तथा बाह्य स्तर पर जनता से सूचना प्राप्ति के लक्ष्य एवं चुनौतियां विद्यमान रहती हैं। आपसी सहसंबंधों में लगाव तथा भावनात्मक जुड़ाव के अभाव में व्यक्ति हितबद्ध नहीं होने की स्थिति में सामान्यतः सूचना प्रदान नहीं करता है जबकि भावनात्मक दक्षता के माध्यम से सूचना प्राप्ति को सुलभ बनाया जा सकता है। आपसी सहसंबंध तथा झिझक या भय के कारक सूचना प्राप्ति के अवरोध होते हैं जिनका समाधान इस प्रकार किया जा सकता है।

(य) *पूछताछ* :- पीड़ित, आरोपी, संदेही आदि से विविध स्तरों पर पूछताछ पुलिस विभाग का महत्वपूर्ण पक्ष है। पूछताछ के दौरान सच नहीं बोलने तथा तथ्यों को प्रकट कराने की चुनौती लगातार पुलिस के समक्ष होती है तथा पूछताछ पुलिस की व्यवसायिकता का महत्वपूर्ण मूल्यांकन कारक होता है। थर्ड डिग्री एवं प्रताड़ना के माध्यम से तथ्यों को प्रकट कराना अब वर्तमान परिवेश में संभव, सार्थक एवं विधि अनुरूप नहीं है। ऐसे में भावनात्मक दक्षता के माध्यम से सहसंबंध एवं विश्वास स्थापित कर पूछताछ में सार्थक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। पूछताछ करने वाले अधिकारी एवं कराने वाले व्यक्ति के बीच भावनात्मक तारतम्य स्थापित होने उसकी भावनात्मक स्थिति एवं अपेक्षाओं की वस्तुस्थिति ज्ञात कर सत्य तथ्य उदघाटन की परिस्थितियों का निर्धारण सरलता से किया जा सकता है जो कि पूछताछ कौशल में वृहद परिणाम प्रदान कर सकता है।

(इ) *संचार* :- पुलिस संगठन में संचार की समस्या तथा आदेशो निर्देशो का एवं लक्ष्यों के संबंध में संचार संबंधी समस्या प्रमुख रूप से ज्ञापित होती है। जिसका परिणाम कार्य निष्पादन एवं लक्ष्य प्राप्ति में प्रत्यक्ष होता है। सदस्यों के आपसी जुड़ाव तथा भावनात्मक संबंधों के अभाव के कारण संचारगत समस्या प्रकाश में आती है जहां निर्देशो लक्ष्यों को पूर्णता में स्वीकार नहीं किए जाने के कारण कार्य निष्पादन प्रभावित होता है। भावनात्मक दक्षता के विकास के माध्यम से संचार की शत प्रतिशत सार्थकता स्थापित की जा सकती है। संगठन के विभिन्न स्तरों का आपसी तालमेल एवं प्रत्यक्ष संपर्क तथा वार्तालाप उन प्रवृत्तियों की जानकारी प्रदान करने में सहायक होता है जिनको व्यावसायिक पत्रों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। यह प्रवृत्तिया संदेश की निहित भावना एवं मूल लक्ष्य के ज्ञापन में सहायक होकर सार्थक परिणाम निष्पादन सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाहन करती हैं।

इस प्रकार पुलिस संगठन में भावनात्मक दक्षता महती उपयोगिता स्थापित करती है तथा निश्चित ही भावनात्मक दक्षता के उन्नयन से पुलिस संगठन के कार्य निष्पादन लक्ष्य प्राप्ति तथा छवि निर्धारण में उत्कृष्ठ परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। संगठन के परिस्थिति कारक जो कि पुलिस संगठन की परिस्थितियों को भावनात्मक संबंधों के विपरीत प्रभावित करते हैं, के होते हुए पुलिस में भावनात्मक दक्षता का प्रसार किस प्रकार किया जाए यह यक्ष प्रश्न है। लेकिन संगठन की वे प्रवृत्तियां जो कि इस प्रवृत्ति के विपरीत प्रतीत होती हैं को दिशा प्रदान कर सार्थक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। सर्वप्रथम प्रशिक्षण पाठक्रमों में इस अवधारणा की जानकारी परिभाषा एवं विशेषताओ को समाहित कर अवधारणा के प्रति सदस्यों को संवेदनशील बनाया जा सकता है। नियमित क्रियाकलापों में आपसी संवाद के बाधक तत्वों का परिहार करके स्वतंत्र आंतरिक परिवेश का निर्माण करना जिससे कि आपसी सामन्जस्य की स्थिति स्थापित हो। पुलिस कार्य प्रणाली में विभिन्न अवसरों पर विभिन्न माध्यमों से पुलिस का पक्ष जनता के सामने रखना तथा जन संवाद के अवसर स्थापित करना। समाज के कमजोर वर्ग तथा वृद्ध असहाय व्यक्तियों के प्रति सदभावना पूर्वक कल्याणकारी गतिविधियों के माध्यम से संपर्क स्थापित करना विभिन्न सफलताओं पर पुरस्कार के साथ कर्मचारियो से मीटिंग तथा सफलता को मनाया जाना व्यावसायिक गतिविधियों से परे गुणवत्ता पूर्ण समय पार्टी आदि में सभी स्तर के कर्मचारियों का शामिल होना पुलिस कर्मचारियों की व्यक्तिगत समस्याओं के प्रति संवेदनशील गतिविधियों एवं संवाद की स्थापना करना अनुशासन की भावना को दण्ड के स्थान पर श्रद्धा एवं प्रोत्साहन की भावना से प्रतिस्थापित करना आदि अनेक गतिविधियां हैं जिनके माध्यम से पुलिस में भावनात्मक दक्षता एवं सहसंबंधों का विकास किया जा सकता है।

चूंकि पुलिस नेतृत्व की भावनात्मक दक्षता का प्रभाव संगठन के साथ ही उन व्यक्तियों पर भी पडता है, जिनके लिए वास्तव में पुलिस संगठन का अस्तित्व निर्धारित किया गया है। पुलिस का व्यवसाय कार्य अपराध एवं अपराधियों से संघर्ष है। अतः स्वाभाविक है कि पीडित व्यक्ति पर घटित अपराध पुलिस अधिकारी के लिए रोजमर्रा का विषय हो, लेकिन पीडित व्यक्ति के लिए उसपर घटित अपराध प्रथम एवं जघन्यतम होता है। इसी प्रकार पुलिस अधिकारी के लिए अधिक समय कार्य करना एवं पुनः कार्य हेतु उपलब्ध हो जाना सरल होता है, क्योकि उनके स्तर पर अन्य व्यक्तिगत आवश्यकताएं पूर्ण करने सहयोगी स्टाफ, कर्मचारी आदि उपलब्ध होते है। जबकि एक पुलिस आरक्षक के लिए अपनी ड्यूटी के उपरान्त समस्त व्यक्तिगत कार्य स्वंय ही निष्पादित करने होते है,

अतः ऐसे मे तुलना एवं रोष व्यक्त करना उचित नहीं कहा जा सकता। उपरोक्त दोनो ही परिस्थितियों मे सहानभूति एवं स्वंय को दूसरे के स्थान पर रखकर परिकल्पना एवं उससे प्राप्त अनुभूति जिसें इम्पेथी भी कहा जाता है, के माध्यम से भावनात्मकता का विकास किया जा सकता है। पीडित व्यक्ति एवं अपने से निम्न रैक का कर्मचारी सहानभूति के विषय होते हैं, तथा उन्हें सुनने का पूरा समय प्रदान करना एवं संभव निदान करना नेतृत्व का स्वाभाविक दायित्व है। पुलिस नेतृत्व से भावनात्मक दक्षता की अपेक्षा है। जिससे की पुलिस कार्य परिवेश इस प्रकार की भावनाओं से परिपूर्ण हो। यह प्रवाह नेतृत्व के उच्च स्तर से सार्थक रूप में किया जा सकता है।

अध्याय 6

आत्म अवलोकन एवं आत्म विश्लेषण

वर्तमान परिवेश में संभावनाओं एवं अवसरों की बहुतायत के बीच व्यक्तिगत स्तर पर व्यक्ति की क्षमताएं यह निर्धारित करती हैं कि वह उनमें से कितने प्रतिशत चुनौतियों को अवसर के रूप में उपयोग करते हुए परिणाम तक पहुंच पाता है। मानव स्वभाव में महत्वकांक्षा के भिन्न-भिन्न स्तर सामान्य रूप में प्रकाश में आते हैं। साथ ही महत्वकांक्षा किस स्तर तक व्यक्ति के मूल्यों को प्रभावित करती है। यह भी व्यक्तिगत भिन्नता के रूप में देखा जाता है। व्यक्ति के विभिन्न सामाजिक एवं व्यवसायिक कौशल कहीं न कहीं व्यक्ति के अंतर में स्थापित प्रवृत्तियों से संचालित एवं नियंत्रित होते हैं। समान कौशल एवं योग्यता तथा प्रशिक्षण से परिपूर्ण व्यक्तियों की कार्य क्षमता एवं कार्य निष्पादन भिन्न स्तरों का होता है। इसी प्रकार सामाजिक स्तर पर व्यक्ति के संबंध तथा उनकी गुणवत्ता एवं उनके प्रति समर्पण की भावनाएं यहां तक की जुडवां भाईयों में भी भिन्न देखी जाती हैं। व्यक्ति के जन्मजात संस्कार, अनुभवजन्य विवेक, विभिन्न प्रतिक्रियाओं के प्रभाव एवं निष्कर्ष जिन्हे व्यक्ति की मूलप्रवत्तियों के रूप में परिभाषित किया जाता है, भी व्यक्तित्व निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। विशेष परिस्थितियों में व्यक्तिगत लक्षण क्रोध,भय,दया, सहनशीलता, समर्पण, सहिष्णुता, समन्वयशीलता, संतोष, वैमनस्य, स्वीकार्यता, क्षमा, व्यवहारकुशलता, धीरज, उत्साह, व्याकुलता आदि व्यक्ति के ऐसे गुण हैं जो कि स्वतः स्पूर्त रूप में विद्यमान होते हैं। इन्हें पढाया सिखाया जाना या तत्काल बढाया घटाया जाना सरल नहीं होता। इसके साथ ही व्यक्ति के समग्र व्यक्तित्व के निर्धारण में तथा व्यक्ति की व्यवसायिक सफलता सुनिश्चित किए जाने में इनकी प्रभावी भूमिका होती है। हम सभी अनभिज्ञ होते हैं कि हमारी प्रतिक्रिया किस प्रकार अतिरेक को प्राप्त कर रही है। हम यह जानने का प्रयास भी नहीं करते की

किन तथ्यों एवं विषयों के प्रति हमारी प्रतिक्रिया सहज या अपेक्षित नहीं हैं। कई बार तो बताए जाने के बावजूद व्यक्ति यह स्वीकार करने वास्तविक रूप में तैयार नहीं होता है कि उसकी प्रतिक्रिया दोषपूर्ण है। व्यवसायिक जीवन में एवं नेतृत्वकर्ता के तौर पर मूलभूत व्यवहारों प्रवत्तियों एवं लक्षणों की अपेक्षित प्रस्तुति अत्याधिक आवश्यक होती है। इस रूप में व्यक्ति के आंतरिक मूलभूत लक्षणों एवं प्रवत्तियों का वास्तविक मूल्यांकन भी संभव नहीं हो पाता है। क्योंकि व्यक्ति के समान कार्य निष्पादन एवं विभिन्न उपलब्धियों से अतिरिक्त प्रबंधन के स्तर पर उसका मूल्यांकन नहीं किया जाता है। इसी प्रकार समूह एवं कर्मचारी के स्तर पर अनुशासन या भय के कारण कोई इस प्रकार का प्रयास नहीं करता है। परिणाम स्वरूप मनौवैज्ञानिक दृष्टि से असामान्य एवं अनापेक्षित प्रवत्तियों एवं लक्षणों का समावेश होकर उनमें लगातार वृद्धि की स्थिति बनी रहती है। कई बार इस प्रकार की वृद्धि जब प्रत्यक्ष रूप में या बड़े परिणाम विफलता के रूप में प्रस्तुत करती है तब इन प्रवत्तियों का आभास व्यक्ति को होता है लेकिन यह स्थिति हानिकारक परिणामों के रूप में प्रत्यक्ष होती है। इसके विपरीत कई बार सकारात्मक प्रवत्तियां भी व्यवसायिक जीवन में व्यक्तित्व में परिलक्षित होती हैं, जो कि जानकारी में न होते हुए भी सहज व्यक्तित्व कौशल का विकास प्रस्तुत करती हैं। अन्य प्रकरण जहां इन प्रवृत्तियों और लक्षणों की समयानुरूप पहचान कर ली जाए तथा सकारात्मक प्रवृत्तियों के उत्थान एवं नकारात्मक प्रवत्तियों के दमन का क्रमिक प्रयास किया जाए, व्यक्ति के लिए सर्वाधिक श्रेयस्कर परिस्थिति मानी जा सकती है।

नेतृत्वकर्ता के रूप में व्यक्ति को अपने 'आत्म या स्व' की जानकारी महत्वपूर्ण होती है। व्यक्ति नेतृत्वकर्ता के तौर पर प्रत्यक्ष चुनौतियों का सार्थक संपादन तभी कर सकता है, जबकि वह 'स्व' के निर्धारण एवं आत्मावलोकन की स्थिति में हो। व्यक्ति के 'स्व' को चेतना के स्त्रोत के रूप में परिभाषित किया जाता है। व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्धारक उसके विचार एवं क्रियाएं इसी चेतना के द्वारा संचालित होती हैं। यह चेतना जीवन के साथ सतत प्रवाहशील तत्व है तथा व्यक्ति के विभिन्न समय एवं परिस्थितियों में विचार एवं क्रियाओं को भिन्न भिन्न रूपों में निरूपित करने का कार्य भी यही चेतना करती है। अध्यात्मिक दृष्टि से व्यक्ति के स्व को जहां आत्मा एवं पूर्ण जन्मों के संस्कार तथा इस जन्म के अर्जित कर्मो के रूप में देखा जाता है वही भौतिक दृष्टि से व्यक्ति के नैतिक मूल्य एवं श्रेष्ठ कार्यों को स्व कारक का परिणाम माना जाता है। मन मस्तिष्क एवं आत्मा के अस्तित्व विषयक वाद विवाद में जिस प्रकार मन एवं आत्मा के

अस्तित्व को आलोचको द्वारा चुनौती दी जाती है। उसी प्रकार स्व के अस्तित्व एवं रूप रेखा के संबंध में विभिन्न मत प्रस्तुत किए जाते है। नेतृत्वकर्ता के व्यवसायिक परिपेक्ष्य में स्व या आत्म के अस्तित्व को व्यक्तिगत मूलभूत गुणों एवं प्रवृत्तियों के निर्धारक के रूप में स्वीकार किया जा सकता है जैसा कि व्यक्ति के अन्य गुणों एवं व्यवसायिक दक्षताओं से पृथक मूल प्रवत्तियों एवं गुणों का अस्तित्व प्रकाश में आता है, अतः इस रूप में स्व कारक को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। स्व के स्वरूप निर्धारण के संबंध में विभिन्न सिद्धांत प्रस्तुत किए जाते हैं।

1. स्व : भ्रम के रूप में

आध्यात्मिक तथा अद्वैत एवं पूर्वी देशों में प्रचलित ध्यान योग आदि पद्धतियों में व्यक्ति के अस्तित्व को मृग मरिचिका या भ्रम के रूप में परिभाषित किया जाता है। व्यक्ति अपने अहम को समाप्त करने का संघर्ष जीवन में करता है जो कि उसके लक्ष्य प्राप्ति में सबसे बड़ा बाधक माना जाता है। व्यक्ति के अहम को ही स्व मानकर भ्रम की संज्ञा दी जाती है तथा इस भ्रम से मुक्ति को अंतिम सफलता की स्थिति माना जाता है। समय एवं अस्तित्व संबंधी अहम के निराकरण उपरांत व्यक्ति को आत्म ज्ञान होना तथा आत्म ज्ञान में स्व का निर्धारण मिथ्या तथ्य के रूप में होने की स्थिति को आलौकिक प्रकाश या निर्वाण की स्थिति माना जाता है। इस दृष्टि से स्व व्यक्ति के अहम का कारक तथा आध्यात्मिक लक्ष्य प्राप्ति में बाधक तत्व निरूपित किया जाता है तथा उसके वास्तविक अस्तित्व को ही भ्रम की स्थिति बताया जाता है।

2. स्व : ज्ञान के रूप में

दूसरों को जानना बुद्धिमत्ता है लेकिन स्वयं को जानना आलौकिक प्रकाश से प्रकाशित होने की स्थिति है। दूसरों को नियंत्रित करने के लिए बल आवश्यक है लेकिन स्वयं को नियंत्रित करने संबल की आवश्यकता होती है। इस प्रकार के वाक्यांशों में निहित भावना अनुरूप इस सिद्धांत में स्व को ज्ञान के रूप में प्रतिपादित किया जाता है। आध्यात्मिक दृष्टि से यह ज्ञान सभी प्रकार के विभ्रम की स्थिति का निवारक तथा उच्चतम ईश्वरीय अवदान का रूप है। स्व ज्ञान को योग्यता के उत्कृष्टतम् स्थल की अभिव्यक्ति के रूप में भी परिभाषित किया जाता है।

3. स्व : क्रिया के रूप में

प्लेटो एवं अरस्तु जैसे दार्शनिकों ने व्यक्ति के आत्म को अस्तित्व के मुख्य कारक के रूप में निर्धारित किया, लेकिन साथ ही उसके पृथक अस्तित्व को स्वीकार नहीं किया। व्यक्ति के स्व को उसकी अभिव्यक्ति के रूप में प्रस्तुत किया गया जैसे कि यदि चाकू को इकाई के रूप में माना जाए तो काटने का गुण उसका आत्म या स्व के रूप में निर्धारित होगा। क्योंकि चाकू होने का अस्तित्व जिस क्रिया के द्वारा निर्धारित होता है वह उसके काटने का गुण है। इस प्रकार व्यक्ति का स्व उसके अभिक्रियाओं के रूप में अपने आप को प्रमाणित करता है। इस सिद्धांत की आलोचना भी विभिन्न रूपों में की जाती है जैसे की क्रिया को व्यक्ति या वस्तु से पृथक नहीं किया जा सकता किसी व्यक्ति के अस्तित्व के साथ किसी क्रिया का अन्त नहीं होता है। शारीरिक रूप से प्रतिपादन में अक्षम व्यक्ति के स्व को इस प्रकार निरूपित किया जा सकेगा आदि। यहां व्यक्ति के कार्य या क्रिया उसके भौतिक जगत में अस्तित्व का निर्धारण करने में सक्षम होते हैं लेकिन उन्हें व्यक्ति के स्व के अंतिम एवं पूर्ण अस्तित्व के रूप में परिभाषित नहीं किया जा सकता।

4. स्व : चेतना की स्वछन्दता के रूप में

इस सिद्धांत में व्यक्ति की चेतना एवं प्रतिक्रिया तंत्र इंद्रिगत आभास से स्वछन्दता की स्थिति के रूप में स्व को निरूपित किया जाता है। व्यक्ति की मुक्ताकाश में विभिन्न प्रतिक्रियाओं आभासों एवं समग्र चेतना से मुक्त होने पर प्राप्त स्थिति व्यक्ति के स्व का आभास कराती है। यहां इस प्रकार उन्मुक्त अवस्था को स्व के आभास का साधन तो माना जा सकता है। लेकिन चेतना से परे उसके अस्तित्व को स्वीकार नहीं किया जा सकता।

5. वंडल सिद्धांत

इस सिद्धांत में व्यक्ति के व्यक्तित्व को विभिन्न धारणाओं के वंडल के रूप में प्रस्तुत किया गया, व्यक्ति की धारणाऐं सतत रूप से परिवर्तित होती हैं तथा एक का प्रतिस्थापन्न दूसरे के द्वारा किए जाने की प्रक्रिया सतत विद्यमान रहती हैं। व्यक्ति के इस प्रकार के परिवर्तन व्यक्तित्व में परिवर्तन भी स्थापित करते हैं लेकिन व्यक्ति में निहित आत्मा अपनी मूल स्वरूप या पहचान को यथावत् रखती है। इस सिद्धांत के प्रतिपादक डेविड ह्यूम व्यक्ति के स्व के संबंध में विवेचन मूल्यांकन को स्वीकार नहीं करते ह्यूम का सिद्धांत भारतीय बोद्ध

सिद्धांत से मिलती जुलती आत्म की अवधारणा प्रस्तुत करता है।

6. अभिव्यक्ति के केन्द्र के रूप में 'स्व' की अवधारणा

जैसा की पूर्व अवधारणाओं एवं सिद्धांतों में व्यक्ति के आत्म को व्याख्यायित करने का प्रयास किया गया है। व्यक्ति के आत्म या स्व की भौतिक उपस्थिति न होते हुए भी वह केन्द्र बिन्दु के रूप में विभिन्न विषयों एवं प्रवत्तियों को निर्धारित एवं संचालित करता है तथा इस रूप में वह आकर्षण या गुरूत्व शक्ति से ओतप्रोत होता है। इस सिद्धांत में स्व की अवधारणा को गुरूत्व केन्द्र की कल्पना के रूप में प्रस्तुत किया गया। यह अमूर्त रूप में भी विभिन्न भौतिक समस्याओं के निराकरण का आधार होता है। प्रकृति की विभिन्न व्याख्याओं में सुविधाजनक लेकिन काल्पनिक या वायु की पतली परत में गुरूत्व केन्द्र के बिन्दु के रूप में व्यक्ति के आत्म की व्याख्या यहां प्रस्तुत की गई।

सामान्यतः स्व या आत्म जिसे अंग्रेजी में सेल्फ कहा जाता है की व्याख्या भौतिक जगत से परे अवधारणाओं के रूप में की जाती है तथा इसे अंतिम लक्ष्य एवं अधिभौतिक शक्तियों से जोडने का प्रयास किया जाता है। नेतृत्व प्रक्रिया या व्यवसायिक क्षमताओं के मूल्यांकन की दृष्टि से भी स्व की अवधारणा महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करती है। मूल भूत प्रश्न किसी भी व्यवसायिक अधिकारी या नेतृत्वकर्ता के रूप में व्यक्तित्व के मूल्यांकन के समय प्रस्तुत होता है कि व्यक्ति संबद्धता का मूल स्त्रोत क्या है। यह संबद्धता व्यक्ति के विभिन्न कौशल एवं गुणों में अंतर्निहित प्रवत्तियों का निर्धारण करती है। साधारण रूप में व्यक्ति के व्यवसायिक एवं भौतिक परिप्रेक्ष्य को यदि भोजन समझा जाए तो व्यक्ति का स्व उसके स्वाद के रूप में प्रस्तुत होता है तथा इस भोजन के पोषक तत्व के रूप में व्यक्ति की भौतिक प्रवृत्तियों को प्रदर्शित किया जा सकता है। अतः व्यक्ति के कार्य कलापों का विश्लेषण तथा आकर्षण प्रत्यक्ष रूप में व्यक्ति के स्व के द्वारा निर्धारित होता है। जैसे कि भोजन का स्वाद अपने आप में उसके स्वरूप एवं खुशबू को भी नियंत्रित करता है तथा अप्रत्यक्षतः उसे ग्रहण करने वाले की मनः स्थिति की अनुकूलता के माध्यम से उसके प्रभाव की स्थापना में भी सहायक होता है। जिस प्रकार भोजन में स्वाद अंतर्निहित होते हुए भी उसके भौतिक अस्तित्व को रेखांकित नहीं किया जा सकता है, उसी प्रकार व्यक्ति के स्व को भी भौतिक रूप में रेखांकित नहीं किया जा सकता। भोजन का स्वाद जिस प्रकार विभिन्न प्रकार के समावेशों के आधार पर निर्धारित होता है तथा संतुलित समावेश की स्थिति में उत्कृष्ट स्थिति को प्राप्त करता उसी प्रकार व्यक्ति का स्व

विभिन्न संस्कारों के समावेश का संतुलित रूप होता है। जैसे भोजन के स्वाद को प्रथक किया जाना संभव नहीं है लेकिन असंतुलित अवयवी समावेश से उसे विकृत किया जा सकता है इसी प्रकार व्यक्ति के जीवनकाल में व्यक्ति से उसके स्व को पृथक नहीं किया जा सकता अपितु उसे परिष्कार की और ले जाया जा सकता है। व्यक्ति के बाहरी जीवन में व्यक्ति के स्व की उपादेयता के संबंध में विभिन्न मतभेद प्रस्तुत किए जाते हैं। जवकि प्रयत्यक्ष रूप में यह प्रमाणित किया जा सकता है कि व्यक्ति का आध्यात्मिक जीवन एवं भौतिक जीवन समानान्तर की अपेक्षा समावेशी अवधारणाऐं हैं। व्यक्ति के भौतिक लक्ष्यों की प्राप्ति तथा उनके प्रति नैतिक मूल्यों आत्मविश्वास सदाशपता निष्ठा ईमानदारी आदि का निर्धारण व्यक्ति के आत्मिक मूल्यों के आधार पर ही होता है। व्यक्ति की गंभीरता एवं विभिन्न विषयों के प्रति समझ तथा दूरदर्शिता का निर्धारण व्यक्ति के मूलभूत संस्कार करते हैं। शारीरिक एवं मानसिक आयु की अवधारणा में जब हम समान आयु, शिक्षा, परिवेश से संबंधित व्यक्तियों की मानसिक आयु में भिन्नता की स्थिति का परिशीलन करते हैं तव कहीं न कहीं व्यक्ति के संस्कार निर्धारक की भूमिका में प्रकाश में आते हैं। अतः व्यक्ति के स्वतत्व को व्यक्ति के व्यवहारिक एवं व्यवसायिक जीवन से पृथक नहीं किया जा सकता अपितु आत्म अवलोकन विश्लेषण एवं नियंत्रण के माध्यम से व्यक्ति के जीवन के सभी पक्षों में परिष्कार किया जा सकता है।

व्यक्ति के स्व को व्यक्ति के भौतिक जीवन के साथ समाहित करने के प्रयासों की स्थिति में मूख्य रूप से 3 अवधारणाएं या विचार प्रकाश में आते हैं।

1. आत्म अवलोकन।
2. आत्म विश्लेषण।
3. आत्म निरीक्षण।

व्यक्ति के अंतः में स्थापित चेतना के स्वरूप तथा विभिन्न प्रेरणाओं के 'स्त्रोत के परिप्रेक्ष्य में व्यक्ति को स्वयं की वास्तविक जानकारी व्यक्ति के आत्म अवलोकन का विषय होती है। आध्यात्मिक अर्थों जहां स्वयं को जानना अहम् के नष्टीकरण एवं सृष्टि के वृहद् परिदृश्य में अपने वास्तविक अर्थों की पहिचान कर सार्वभौम शक्ति के समक्ष समर्पण के रूप में परिभाषित होती है वहीं भौतिक अर्थों में व्यक्ति को स्वयं के ज्ञान से आशय से स्वयं की योग्यताओं गुणों प्रवृत्तियों क्षमताओं एवं संबंद्धताओं के वास्तविक स्थिति की जानकारी के रूप में प्रदर्शित की जाती है। व्यक्ति नियमित आत्म अवलोकन के माध्यम से स्वयं को वास्तविक अर्थों में जानने में सक्षम हो जाता है। तथा नियमित रूप से प्रकाश में आने बाली

अल्पताओं को समय पर परिष्कृत करने में भी सक्षम होता है। स्वयं के जानने की अवधारणा अतर्गत प्रमुख रूप से विभिन्न प्रवृत्तियों के मानक एवं प्रतिमान पर आधारित मूल्यांकन निर्धारित करना अपेक्षित होता है।

सामर्थ्य :- सामान्यतः अधिकांश व्यक्ति यह सोचते हैं कि वे यह भली भांति जानते हैं कि वे किन क्षेत्रों में सामर्थ्यवान हैं। एवं किन में नहीं लेकिन अधिकांशतः व्यक्ति की ऐसी समझ वास्तविक नहीं होती है। बल्कि व्यक्ति में अपनी क्षमताओं को अधिक आंकने एवं अल्पताओं को स्वीकार नहीं करने की प्रवृत्ति भी सामान्यतः प्रकाश में आती है। व्यक्ति का निष्पादन सामर्थ्य के आधार पर ही निर्धारित होता है। व्यक्तित्व निर्माण में अपेक्षित है कि व्यक्ति अपने सामर्थ्य के क्षेत्र निर्धारित करे। तथा अपेक्षित परिणाम प्राप्त करे। सामर्थ्य का विश्लेषण विभिन्न कार्यों निर्णयों के प्रति प्रतिक्रिया के रूप में सार्थक रूप में किया जा सकता है। अपने किए गए निर्णय या किसी भी अभिक्रिया जो कि महत्वपूर्ण है के संबंध में अपेक्षित परिणामों के संबंध में लिखित दस्तावेज तैयार किया जाकर तथा निर्धारित समय उपरांत पूर्ण किए गए कार्यों एवं प्राप्त किए गए लक्ष्यों का लेखा जोखा तैयार किया जाकर आसानी से अपनी क्षमताओं का मूल्यांकन किया जा सकता है यहां इस मूल्यांकन में व्यक्ति आश्चर्यजनक परिणामों से साक्षात होता है जहां अपेक्षित क्षेत्र में अनापेक्षित परिणाम व्यक्ति के सामर्थ्य निर्धारण एवं विश्लेषण में सहायक होते हैं। व्यक्ति की प्रतिक्रिया कहां नियति आधारित है, कहां अनुमान आधारित है तथा कहां तथ्य आधारित है के संबंध में वस्तु स्थिति की जानकारी व्यक्ति के प्रतिक्रिया स्वरूप को सार्थक एवं अपेक्षा अनुरूप बनाने में सहायक होती है।

विश्लेषण के आधार पर व्यक्ति सुधार की आवश्यकता तथा नवाचार की आवश्यकता को समझ पाता है तथा व्यक्ति के ज्ञान तथा सूचना आधारित अंतरालों की पूर्ति आसानी से संभव हो जाती है।

नियमित कार्य कलापों के बीच व्यक्तित्व में कुछ तत्वों एवं तथ्यों के प्रति उपेक्षा एवं हेकडी की भावना सामान्यतः देखी जाती है, यह प्रवत्ति व्यक्ति के विशेष कार्य कलापों में बाधक के रूप में विद्यवान रहकर क्षति कारित करती है। किसी क्षेत्र विशेष के विशेषज्ञ में अन्य विषयों के प्रति इस प्रकार की भावना सामान्यतः प्रकाश में आती है। दूसरे शब्दों में अपने ज्ञान एवं अनुभव संबंधी घमंड इसे कहा जा सकता है। इसका परिणाम संगठन के अन्य सदस्यों एवं समकक्षों के प्रति अभद्र व्यवहार तथा अपेक्षित सहसंबंधों की कमी के रूप में प्रकाशित होते हैं। साथ ही व्यक्ति का विकास एवं क्षेत्र सीमित हो जाता है जो कि

निश्चित ही निष्पादन की दृष्टि से क्षतिकारक होता है। अपेक्षित विषयों में जानकारी एवं समझ अर्जित कर कार्य निष्पादित करना तथा स्व मूल्यांकन में इस प्रकार के क्षेत्रों को चिह्नित कर उनके प्रति सकारात्मक व्यवहार स्थापित करना व्यक्तित्व एवं व्यवसायिकता की दृष्टि से वांछनीय होता है।

व्यक्तित्व में कुछ अनापेक्षित आदतों का समावेश व्यक्ति की सामर्थ्य को प्रभावित करता है। उदाहरणार्थ कई व्यक्ति अच्छे योजनाकार होकर बहुत अच्छी योजनाएं तो बनाते हैं। लेकिन वे योजनाएं सफल नहीं हो पाती क्योंकि योजनाओं के संचालन में सतत प्रयास की अपेक्षा उनकी आदत नई योजना बनाकर प्रस्तुत करने में अधिक होती है। इस प्रकार की आदतों का समावेश स्वतः स्पूर्त रूप में होता है तथा व्यक्ति के कार्य परिणामों की दृष्टि से अपेक्षित सफलता में बाधक रूप में विद्यवान रहता है। इस प्रकार की आदतों को विश्लेषण एवं मूल्यांकन के माध्यम से पृथक किया जा सकता है।

जैसे किसी मशीन में विभिन्न हिस्सों के बीच संचालन के दौरान घर्षण होता है तथा इसे दूर करने विभिन्न तेल आदि चिकने पदार्थों का उपयोग किया जाता है, उसी प्रकार मानवीय सह संबंधों के बीच व्यवहार कौशल संबंधी आचरण कार्य करते हैं। किसी भी संगठन में आंतरिक सह संबंध विभिन्न आचरण एवं व्यवहार कुशलता संबंधी तत्वों के आधार पर निर्धारित होते हैं। इस प्रकार नेतृत्वकर्ता के तौर पर सार्मथ्य के पूर्ण रूपेण उपयोग में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। कार्य पूर्ण होने पर धन्यवाद गलती पर क्षमा याचना तथा विभिन्न अवसरों पर कृतज्ञता प्रदर्शक शब्दों का इस्तेमाल नेतृत्व सामर्थ्य के निष्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

प्रदर्शन :- कार्य एवं प्रदर्शन के बीच अंतर के संबधं में सामान्यतः अनभिज्ञता की स्थिति प्रकाश में आती है, व्यक्ति किस प्रकार कार्य करता है तथा उसका प्रदर्शन किस प्रकार का है के बीच लघु परासीय प्रकृति का अंतर विद्यवान होता है। प्रदर्शन से तात्पर्य व्यक्ति के कार्य करने के तरीके के रूप में समझा जा सकता है। व्यक्ति अपने कार्य का निष्पादन अपने मौलिक तरीके से नहीं करता तथा इस दौरान उसे यह आभास भी नहीं होता की उसके कार्य में कहीं न कहीं अल्पता विद्यमान हैं। परिणाम स्वरूप वह सामर्थ्य के अनुरूप कार्य निष्पादन प्रस्तुत नहीं कर पाता। जिस प्रकार व्यक्ति अपने सामर्थ्य के क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य करने में सफल होता है ठीक उसी प्रकार किसी भी कार्य को करने के उत्कृष्ट तरीके को अंगीकृत कर श्रेष्ठ परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। व्यक्ति के व्यक्तिगत प्रकृति किस प्रकार के कार्य प्रदर्शन के प्रति सहज तथा प्रभावी है की

जानकारी तथा कार्य पद्धति के विश्लेषण के आधार पर श्रेष्ठ तरीके के चयन के माध्यम से बेहतर परिणाम प्राप्त किया जा सकता है। व्यक्ति स्वयं के कार्य तरीको या कार्य प्रदर्शन को वास्तिविक अर्थों में समझे तथा उनकी उपयुक्तता के संबंध में स्व मूल्यांकन करें यह आवश्यक होता है।

पढना या सुनना :- व्यक्ति की स्वयं के बारे में यह सामान्य अवधारणा होती है कि वह पढ़ने एवं सुनने–दोनों ही कौशलों में समान रूप से पारंग्गत है, जबकि यह सोच वास्तविक अर्थों में सत्य नहीं होती है। व्यक्ति दोनों में से किसी एक समझ संबंधी कौशल में अधिक पारंगत होता है। कार्य निष्पादन के दौरान विभिन्न विषयों पर निर्णयन एवं विषय वस्तु की समझ के दौरान जानकार व्यक्ति का मार्गदर्शन लिया जाए या मीटिंग में विचार विमर्श कर मत निर्माण किया जाए या संबंधित साहित्य का अध्ययन कर निष्पादन किया जाए। उक्त प्रश्नों के संबंध में निर्धारण इन कौशलों के वास्तविक विश्लेषण एवं निर्धारण के माध्यम से सुनिश्चित किया जा सकता है। व्यक्ति स्वयं के बारे में इन तथ्यों से अनभिज्ञ होकर विपरीत परिणामों से प्रत्यक्ष होता है।

सीखने की प्रवृत्ति :- किसी व्यक्ति के कार्य प्रदर्शन का निर्धारण इस बात पर भी निर्भर होता है कि उसकी सीखने की प्रवृत्ति किस प्रकार की है। सामान्यतः इस संबंध में धारणा प्रचलित होती है कि व्यक्ति सुन कर एवं पढ़ कर ही विभिन्न ज्ञान तथ्य आदि को सीखता है लेकिन इसके विपरीत ऐसे कई उदाहरण भी प्रकाश में हैं जहां व्यक्ति के सीखने की प्रवृत्ति विभिन्न प्रकार के तरीकों पर आधारित है। विंस्टन चर्चिल जो कि अपने आप में ख्यातिलब्ध नाम है, का उदाहरण इस दिशा में अत्यधिक महत्वपूर्ण है। चर्चिल का अपने स्कूल समय में प्रदर्शन अच्छा नहीं रहा क्योंकि चर्चिल की सीखने की प्रवृत्ति पढ़ने या सुनने के स्थान पर लिख कर सीखने की थी। इस प्रकार कार्य करके सीखने, लिख कर सीखने, विभिन्न नोट्स तैयार करके सीखने की भिन्न-भिन्न प्रवृत्तियां प्रकाश में आती हैं। विभिन्न लोगों से बातचीत कर उसके माध्यम से सीखने प्रवृत्ति भी प्रकाश में आती है। जिसमें व्यक्ति विभिन्न प्रकार के विषय विशेषज्ञों अधीनस्थों आदि से दीघ्र बातचीत के द्वारा विभिन्न तथ्यों एवं विषय वस्तुओं एवं परिस्थितियों की समझ विकसित करता है। विधि व्यवसाय में इस प्रकार की प्रकृति का प्रमुखतः उपयोग किया जाता है। नेतृत्वकर्ता के रूप में नए तथ्यों तकनीको को अंगीकृत कर कार्य निर्धारण के दौरान मुख्य रूप से यह प्रश्न उपस्थित होता है कि नेतृत्वकर्ता तथ्यों तकनीकों की वस्तुस्थिति को स्वयं में किस प्रकार समाहित करे। स्वयं के सीखने के तरीके की उपयुक्तता की जानकारी के अभाव में सार्थक

परिणाम प्राप्त नहीं हो पाते हैं। व्यक्ति अपने बचपन से ही सीखने की प्रक्रिया प्रारम्भ करता है तथा अनवरत रूप से चीजों को सीखता है। अतः इस प्रकार सीखने में वह सुविधापूर्ण है यह निर्धारण जटिल नहीं होता है अपितु व्यक्ति विभिन्न महत्वपूर्ण कार्य तथ्य आदि जो कि उसके द्वारा परिवर्तन के रूप में अल्प समय में सार्थक रूप से सीखे गए हैं, के संबंध में विश्लेषण एवं विचार करके निर्धारण कर सकता है।

व्यक्ति निर्णयन में सफल है या कि वह एक अच्छा सलाहकार है, इस तथ्य का निर्धारण भी अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है। बहुत अच्छे सलाहकार जो कि अन्य लोगों को सार्थक सलाह देकर प्रभावी निर्णयन में सहयोगी होते हैं लेकिन वे खुद अपने स्तर पर सलाह एवं उस पर आधारित निर्णयन की उत्तरदायित्व स्वयं नहीं निभा पाते निर्णय निर्धारण कर रणनीति एवं योजना अनुरूप उस पर अमल प्रथक व्यक्तिगत विशेषताएं हैं। दोनों एक साथ तथा प्रथक रूप में व्यक्तित्व में समाहित हो सकती हैं। स्वयं के व्यक्तित्व में विशेषता की पहचान एवं उसके आधार पर कारण निर्धारण एवं निष्पादन सार्थक परिणाम प्रदान करने में सहायक होता है।

इसी प्रकार व्यक्ति के तौर पर कार्य निष्पादन की उत्कृष्ट स्थिति की तनाव संबंधी परिस्थिति का निर्धारण भी महत्वपूर्ण होता है। कुछ व्यक्ति तनाव की स्थिति में अच्छा कार्य निष्पादन प्रस्तुत करते हैं तथा कुछ व्यक्ति कार्य के उन्मुक्त एवं तनाव रहित परिवेश में ही कार्य निष्पादन कर पाते हैं। इसी प्रकार कुछ व्यक्ति बड़े संगठन या इकाई में अच्छा कार्य निष्पादन करते हैं जबकि कुछ व्यक्ति छोटी संगठन इकाई में अच्छा कार्य निष्पादन कर पाते हैं। इस प्रकार व्यक्तित्व में विद्यमान इन प्रवृत्तियों को वास्तविक अर्थों में निर्धारित कर सर्व श्रेष्ठ व्यक्तिगत प्रदर्शन प्रस्तुत किया जा सकता है। इस प्रकार के मानकों के आधार पर स्वयं का विश्लेषण एवं स्वयं की पहचान अपेक्षाकृत महत्वपूर्ण परिणाम प्रस्तुत करती है। व्यक्तित्व की मूलभूत प्रवृत्तियों को आसानी से परिवर्तित किया जाना संभव नहीं होता है लेकिन उनके संबंध में वास्तविकता की जानकारी तथा उसके आधार पर कार्य की प्रवृत्तियों में परिवर्तन संभव होता है। तथा इस प्रकार के चयन के माध्यम से व्यक्ति निष्पादन में सुधार स्थापित कर सकता है।

व्यक्तिगत मूल्य :- व्यक्ति के मूल्य नैतिक मान्यताओं के रूप में व्यक्तित्व में समाहित होते हैं। तथा संगठन के जिसमें कि व्यक्ति कार्य करता है से व्यक्ति के मूल्यों की स्वीकार्यता आवश्यक होती है। जब व्यक्तिगत मूल्य एवं संगठन के मूल्य तंत्र के मध्य तारतम्य या स्वीकार्यता की स्थिति नहीं होती है तो ऐसी स्थिति में व्यक्ति कुंठित भावना का शिकार होता है साथ ही उसका कार्य प्रदर्शन भी

नकारात्मक रूप से प्रभावित होता है। संगठन की अपेक्षा अपने सदस्यों से सामान्य रूप में यही होती है कि वे संगठन के मूल्य प्रक्रिया के अनुरूप संचालित हों। व्यक्ति संगठन के सदस्य के तौर पर अपने व्यक्तिगत मूल्यों की सुरक्षा के साथ कार्य प्रदर्शित करना चाहता है। यहां नैतिक रूप से मूल्यों की गुरुता प्रभावी होती है। यदि व्यक्ति के नैतिक मूल्य संगठन के सामान्य नैतिक प्रचलन की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली हैं तो व्यक्ति का सामंजस्य यथार्थ स्थिति में सुनिश्चित नहीं हो पाता है इसके विपरीत यदि संगठन के मूल्य व्यक्तिगत मूल्यों से उच्च नैतिक स्थिति को प्राप्त करते हैं तो व्यक्ति का सामंजस्य अपेक्षाकृत सरलता से हो जाता है। व्यक्ति की सामर्थ्य एवं मूल्यों के बीच भी संघर्ष की स्थिति प्रकाश में आती है। तथा अच्छे कार्य निष्पादन एवं प्रदर्शन करने वाले नेतृत्वकर्ता कई बार कार्य में निहित नैतिक भावनाओं से सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाते हैं। इस प्रकार मूल्य तंत्र में परिवर्तन निश्चित तौर पर जटिल प्रक्रिया है लेकिन इस दिशा में वास्तविक स्थिति की जानकारी एवं स्वीकार्यता सार्थक परिणाम प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत कर सकती है।

व्यक्तिगत संबद्धता :- अपनी आयु के प्रथम द्वितीय पक्ष में व्यक्ति अपने व्यवसाय या किए जाने वाले मुख्य कार्य का निर्धारण कर लेता है। उसकी सामर्थ्य उसका कार्य प्रदर्शन तथा व्यक्तिगत मूल्य के आधार पर व्यक्ति की संबद्धता निर्धारित होती है। मूल भूत प्रवृत्तियां संबद्धता निर्धारण में प्रभावी भूमिका निभाती हैं। तथा इस प्रकार के निर्धारण की सार्थकता व्यक्ति को उच्चकोटी के व्यवसायिक के रूप में स्थापित करती है। यदि व्यक्ति की संबद्धता के संबंध में सही अर्थों में निर्धारण किया जाए तो निश्चित ही साधारण व्यक्ति को भी उच्च दक्षता प्राप्त परिश्रमी व्यक्ति के रूप में परिवर्तित किया जा सकता है। अन्यथा स्थिति में कलात्मक संबद्धता वाले व्यक्ति को वैज्ञानिक बनाने का प्रयास कला, विज्ञान एवं व्यक्ति तीनों को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर सकता है।

व्यक्तिगत योगदान :- संगठन में तथा उसकी नियमित कार्य प्रक्रिया में नेतृत्वकर्ता का व्यक्तिगत योगदान कार्य निष्पादन एवं लक्ष्यों की पूर्ति से पृथक व्यक्ति के विशेष अवदान के रूप में परिभाषित होता है। निर्धारित लक्ष्यों के दायरे में परिमार्जन की स्थिति तथा किस प्रकार संगठन की सेवाओं एवं मूल्यों में उन्नयन स्थापित हो आदि को इस दिशा में कारक रूप में समाहित किया जा सकता है। व्यक्ति अपने योगदान की सीमाओं एवं परिस्थितियों के वस्तुपरक निर्धारण के माध्यम से संगठन में अपनी अमिट छाप स्थापित कर सकता है। साथ ही इस प्रकार की भावना के उन्नयन के माध्यम से संगठन के कार्य परिमार्जन एवं

संगठन के द्वारा प्रदाय की जा रही सेवाओं में श्रेष्ठता की स्थिति को प्राप्त किया जा सकता है।

व्यक्तिगत कार्य निष्पादन सामान्य तौर पर किसी भी व्यक्ति की भौतिक एवं परिवेशकृत कारकों से प्रभावित सामान्य प्रक्रिया प्रतीत होती है। इसे दृश्य जगत के कारकों एवं अदृश्य मानसिक क्षमताओं के आधार पर सामान्य रूप में विश्लेषित किए जाने का प्रयास किया जाता है। वास्तविक अर्थों में व्यक्ति का व्यवहार एवं कार्य निष्पादन भौतिक एवं दृश्य कारकों के अतिरिक्त बड़ी मात्रा में समाहित जटिल मानसिक कारकों की परिणति के रूप में प्रस्तुत होता है। मानसिक स्तर पर प्रत्येक क्रिया की मानसिक प्रतिक्रिया तथा उसके परिणाम के रूप में उत्पन्न हुई विभिन्न विकृतियां मानसिक पटल पर लगातार विद्यमान रहती हैं। विभिन्न अनुभव कुंठा, पूर्वाग्रह, मनोरचनाएं एक साथ व्यक्ति के कार्य एवं व्यवहार में अपना अस्तित्व उपस्थित कर प्रभाव स्थापित करती हैं। व्यक्ति के अवचेतन में उपस्थित ये कारक व्यक्ति की आयु के साथ वृद्धि प्राप्त करते हैं। तथा वृद्धि के साथ प्रभाव की मात्रा भी अधिक होती जाती है। व्यक्ति के इदम, अहम, एवं पराअहम कारक भी उसकी प्रवृत्तियों एवं मूल्यों के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उदाहणार्थ हम प्रतिदिन कम्प्यूटर पर कार्य करें एवं इंटरनेट पर विभिन्न वेबसाइट खोल कर अवलोकन करें तथा विभिन्न फाइलों को यदि नष्ट न करें तो जैसे जैसे संग्रहीत फाइलों की संख्या बढ़ती है। वैसे ही वैसे इंटरनेट की गति धीमी होती जाती है। व्यक्ति आत्मविश्लेषण के माध्यम से इस प्रकार के मानसिक दोषों का निवारण तथा सार्थक रूप में नियोजन कर सकता है। जो कि निश्चित ही उसके कार्य निष्पादन एवं विभिन्न सामर्थ्य के उन्नयन में सहायक हो सकते हैं। यदि हम समूह के रूप में बेहतर कार्य निष्पादन के भौतिक तथा परिवेशगत मानकों के निर्धारण का प्रयास करते हैं। तव यह अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है कि हम अपने आंतरिक परिश्दृय को समझने का प्रयास करें यह जानने का प्रयास करें कि किस प्रकार हमारी सामर्थ्य उतकृष्ठ रूप में परिवर्तित एवं परिमार्जित होकर संगठन में वेहतर निष्पादन प्रस्तुत कर सकती है।

आत्म विश्लेषण के साधनों के रूप में विभिन्न सिद्धांत प्रस्तुत किए गए हैं। इन्हे आत्म विश्लेषण के तरीके के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है।

1. गालुप का सामर्थ्य मापन संबंधी सिद्धांत :- इस सिद्धांत में पांच प्रमुख सामर्थ्यों के आधार पर आत्म विश्लेषण की व्याख्या प्रस्तुत की जाती है।

अनुकूलन क्षमता।

प्रक्रिया।

सीखना।

विचार।

निवेश।

परिवेश के परिवर्तनशील युग में विभिन्न मानकों के प्रति परिवर्तनशील व्यवहार तथा परिवर्तन को समाहित करते हुऐ आगे बढ़ने की प्रवृत्ति अनुकूलन के रूप में परिभाषित की जाती है।

आत्म विश्लेषण

अनुकूलन व्यक्ति के परिवर्तन से समायोजन की प्रक्रिया एवं दक्षता होती है। व्यक्ति अपने विश्लेषण पर अपनी अनुकूलन दक्षता का निर्धारण कर सुधार कर सकता है। विभिन्न अवसरों पर सुधार की संभावना से हीन व्यक्ति प्रकोष मे आते है। ऐसे व्यक्तियों को देख कर स्वाभाविक रूप से यह व्यक्त हो जाता है कि व्यक्ति अपनी धारणाओं एवं क्षमताओं में न केवल सीमित है बल्कि उसके सुधार की संभावनाएं एवं सुधारवादी प्रवृत्तियों की स्वीकार्यता शून्य है। व्यक्ति से व्यवसायिक क्षेत्र मे इस प्रकार की स्थिति अत्याधिक नकरात्मक प्रभाव डालती है। संगठन के लिए ऐसे व्यक्ति अयोग्य, अकारक एवं बोझ से अधिक की छवि प्रस्तुत नहीं कर पातें। आवश्यक है कि व्यक्ति सतत परिवर्तन एवं धनात्मक प्रवृत्तियों को आत्मसात करें तथा सतत विश्लेषण के माध्यम से नकरात्मक प्रवृत्तियों को पृथक भी करें। व्यक्ति के जीवन एवं कौशल के संचालन एवं प्रदर्शन की प्रक्रियाऐं तथा व्यक्तिगत तौर पर किस प्रकार की प्रक्रिया सरलता पूर्वक आत्मसात एवं समाहित की जा सकती है पर विश्लेषण एवं निर्धारण अपेक्षित होता है। व्यक्ति जडता के मूलभूत सिद्धांत के प्रभाव में एक ही प्रकार की प्रक्रियाओं को आत्मसात करता है। इन्हें प्रक्रिया समूह भी कहा जा सकता है, सामान्यतः इस प्रकार के स्थित अधिकांश व्यक्तियों में प्रकाश मे आती है। व्यक्ति की सीखने की अभिरुचियां तथा गुण भी व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्धारण में मूल भूत भूमिका निभाते है। किस प्रकार तथा कितने कम समय में व्यक्ति सीखने की प्रांरभिक स्थिति से परागंत या अभ्यस्त स्थिति में आता है। कितनी आसानी से वह नए ज्ञान, कौशल एवं तकनीको को सीखता है। यह व्यक्तित्व की सफलता के निर्धारण का महत्वपूर्ण विषय होता है। व्यक्ति के विचार तथा उनकी दशा एवं दिशा तथा परिवर्तनशीलता के मानक व्यक्ति के प्रत्येक कार्य को न केवल प्रभावित करते है बल्कि संचालित एवं नियमित भी करते है। विचारों के आधार पर ही व्यक्तित्व के प्रकार का निर्धारण किया जाता है। प्रत्येक व्यक्तित्व के

व्यक्तिगत निवेश भिन्न भिन्न होते है। जैसे कि व्यक्ति भौतिक क्षेत्र में आर्थिक निवेश जिस रूप में तथा जिस मात्रा में करता है। उसी रूप में मात्रा के अनुरूप परिणाम उसे प्राप्त होते है। यहां यह विचारणीय एवं महत्वपूर्ण है कि सही समय पर, सही दिशा में किया गया निवेश बेहतर परिणाम प्रदान करता है। वहीं इस प्रकार की चूक व्यक्ति को आर्थिक नुकसान प्रदान करती है। इसी प्रकार व्यक्तिगत निवेश कारक भी व्यक्तित्व के निर्धारण एवं प्रदर्शन में परिणाम प्रदान करते है।

आत्मविश्लेषण की प्रक्रिया अत्याधिक जटिल होती है क्योकि व्यक्ति अपने स्वंय के निर्धारण मानक एवं पूर्वाग्रह से ग्रसित होता है तथा अपने इन निर्धारणों में त्रुटि या सुधार स्वंय के स्तर पर सोच पाना भी आसानी से संम्भव नहीं हो पाता। सामान्यतः व्यक्ति अपने आप में परिपूर्ण एवं अपने निर्धारणों के प्रति दृढ़ होता है। इसी कारण उसे प्रयास पर भी वास्तविक स्थिति स्वीकार योग्य नहीं लगती है। अतः आवश्यक है कि व्यक्ति सतत प्रयास कर सार्थक विश्लेषण एवं निर्धारण सुनिश्चित करें।

व्यवसायिकता एवं आत्म

व्यक्ति के व्यवसायिक जीवन में आत्म विश्लेषण, आत्म मूल्याकंन एवं आत्म निरीक्षण का अत्याधिक महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है तथा एक व्यवसायिक के तौर पर श्रेष्ठ परिणाम प्राप्त करने में इन अवधारणाओं का अत्याधिक महत्व निर्धारित किया जा सकता है। अधिकांश व्यक्ति अपने आप से परिचित नहीं होते है। यह कहना सही नहीं है कि ऐसे व्यक्ति सफल व्यवसायिक नहीं हो सकते, लेकिन यह कहना भी सही नहीं है कि वे अपनी संभावनाओं का पूर्ण प्रदर्शन एवं विस्तार करने में सक्षम हो पाते है। व्यक्ति नेतृत्वकर्ता के रूप में अपने कौशल, ज्ञान तकनीक अनुभव के साथ समग्र व्यक्तित्व के प्रदर्शन से अपने समूह पर प्रभाव स्थापन करता है। समग्र व्यक्तित्व से आशय व्यक्तित्व के मूल भूत गुणों से होता है। अपने व्यक्तित्व के परिमार्जन के लिए स्वंय को जानना अत्याधिक आवश्यक होता है। अध्यात्मिक क्षेत्र में स्वंय के ज्ञान को परम ज्ञान की संज्ञा दी जाती है। व्यवसायिक क्षेत्र में इसे मूल भूत दक्षता कहां जा सकता है। व्यक्तित्व के आतंरिक एवं बाह्य स्तर के विभिन्न निर्धारण स्व के आधार पर निर्धारित किए जा सकते है। यह निर्धारण यदि सार्थक एवं श्रेष्ठ होते है तो सर्वांग सफलता आसानी से प्राप्त की जा सकती है। शंका एवं संदेह आत्मविश्वास के लिए अत्याधिक घातक होते है। व्यक्तित्व में इन कारकों को स्वंय की अवधारणा

से न्यून किया जा सकता है। व्यक्ति की वस्तुगत चिंता, स्नायु विकृत चिंता एवं नैतिक चिंता के कारक कष्टदायक भावनात्मक दशा के रूप में व्यक्ति को विभिन्न मानसिक एवं शारीरिक नकारात्मक प्रभाव कारित करते है। चिंता की प्रवृत्ति लगातार अपने प्रभाव में वृद्धि करती है, यह वृद्धि आत्म मूल्याकंन एवं विश्लेषण से सीमित की जा सकती है।

व्यक्ति अपने व्यक्तित्व के स्तर पर स्थापित संरचनाओं एवं उनमें समाहित जटिलताओं को तथा उनके गंभीर प्रभावों को समझने में सामान्यतः सक्षम नहीं होता है। व्यक्ति के स्व को समझने के लिए स्व के प्रत्यय रूप को जानना जरूरी होता है। इससे व्यक्ति के व्यवहार मे स्थायित्व और संगठन दिखलाई पडता है। मनोवैज्ञानिक कटेल ने स्व स्थाई भाव का जिक्र किया है। स्व की उसकी धारणा मनोविश्लेषण में अहम् (ego) और परा अहम (super ego) की धारणाओं पर आधारित है। मनोवैज्ञानिक मैग्डुगल की आत्म गौरव के स्थाई भाव की धारणा से भी उसका घनिष्ट संबंध है। स्व की धारणा से संकलन की व्याख्या होती है। व्यक्ति में स्व उसके अनुभवों को संगठित करता है। इस प्रकार गतिशील लक्षणों को संगठित करने वाला तत्व स्व की संरचना है। इसे स्व स्थाईभाव या आत्मस्थाईभाव (Self sentiment) कहा जाता है। किसी भी गतिशील लक्षण की क्रिया में आत्म स्थाईभाव शामिल होना आवश्यक है और जहां तक वह आत्म स्थाईभाव में भाग लेता है वहां तक उसकी क्रिया प्रभावित होती है। यह ठीक है कि कुछ लक्षण स्व से अलग होते है, किन्तु फिर ये मानसिक रोग की अवस्था दिखलाते है। संरचनात्मक स्व के अतिरिक्त कटेल ने आदर्श स्व (Ideal self) और वास्तविक स्व (Real self) की भी धारणा प्रस्तुत की है। इस प्रकार यह धारणाएं आत्मनिरीक्षण पर निर्धारित होती है। वास्तविक स्व वह व्यक्ति है जैसा कि वह अपने को सबसे अधिक विवेक के क्षणों मे कल्पना करता है। आदर्श स्व वह व्यक्ति है, जैसा कि वह अपने आप को दिखना पसंद करता है। इस प्रकार विकास के आरंभ में वास्तविक स्व आदर्श स्व की एक अपूर्ण प्रतिछाया है। कालान्तर मे इन दोनों स्व में आत्म स्थाई भाव के अन्तर्गत संकलन हो जाता है।

पुलिस संगठन के कार्यों की प्रकृति तथा उसमें निर्धारित विशेषताओं की दृष्टि से पुलिस नेतृत्व में स्व के निर्धारण एवं आत्म विश्लेषण, आत्म मूल्याकंन तथा आत्म निरीक्षण को प्रभावी रूप से रेखाकित किया जा सकता है। पुलिस के कार्य तथा सामान्य कार्यों में तनाव कारक नेतृत्व के लक्षणों के अनुरूप प्रभाव

कारित करते है। ऐसे में पुलिस नेतृत्व के प्रभावी स्वरूप के लिए इन अवधारणाओं की आवश्यकता अत्याधिक हो जाती है। व्यक्तित्व में विरोधाभासी एवं असामंजस्य पूर्ण अभिव्यक्ति नेतृत्व के प्रभाव को अत्याधिक नकारात्मक रूप में प्रभावित करती है। नेतृत्वकर्ता अपने विश्लेषण, मूल्याकंन एवं सुधारात्मक निरीक्षण से न केवल अपना बल्कि संगठन का परिष्कार कर सकता है। पुलिस संगठन में इन अवधारणाओं के कारकों को सामान्य रूप में निम्नवत बिन्दुओं के माध्यम से समाहित किया जा सकता है।

- कार्य आधारित स्वंय का मूल्याकंन
- प्रतिक्रिया आधारित मूल्याकंन
- समूह में भूमिका आधारित मूल्याकंन
- स्वंय की त्रुटियों एवं पूर्वाग्रहों का निर्धारण
- कार्य की विफलता में स्वंय की भूमिका का निर्धारण
- मूल्यों एवं मानकों के आधार पर तुलनात्मक निर्धारण
- पूर्वाग्रहों पर विश्लेषण
- स्वंय में सुधार की संभावनाओं के प्रति संवेदनशीलता
- परिवर्तित परिस्थिति एवं भूमिका के संबध में निर्धारण
- स्वंय के वास्तविक मूल्य का निर्धारण
- समय अनुरूप परिवर्तन की रूपरेखा निर्धारण

इस प्रकार स्वंय के प्रति जागरूकता एवं चेतना इस दिशा में कारगर परिणाम प्रदान कर सकती है। पुलिस विभाग अधिकारी की हठधर्मिता एवं एकांगिता से नकारात्मक रूप से प्रभावित न हो सकें। इस के लिए आवश्यक है कि पुलिस नेतृत्व के स्तर पर तथा प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों में एवं सर्विस प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भी इस संबध में प्रयास सुनिश्चित किए जावें।

अध्याय 7

समय प्रबंधन

समय के संबंध में विभिन्न कहावतों का सामान्यतः हम सभी प्रयोग करते हैं यथा "समय ही धन है ", 'समय मूल्यवान है', 'समय एक बार निकलने पर वापस नहीं लौटता', समय का सदुपयोग बुद्धिमानी है 'समयबद्धता व्यवसाय की आत्मा है' आदि। समय के संबंध में विभिन्न विद्वानों, प्रबंधको ने भी अपने अनुभवों में महत्ता स्थापित करते हुए समय की गति पुनरावृत्ति उपयोगिता एवं प्रबंधन संबंधी तत्वों को रेखांकित किया है। वर्तमान परिवेश में कार्य दक्षता व्यवसायिकता के परिप्रेक्ष्य में समय अभाव को विशेष रूप से प्रचलित अवधारणा के रूप में देखा जाता है। व्यक्ति के जीवन तथा सक्षमता, कार्य एवं अन्य परिप्रेक्ष्यों में समय की निर्धारित मात्रा तथा निर्धारित समय परिमाण के साथ बेहतर सामंजस्य स्थापित करते हुए विविध कार्यों का उसी निर्धारित परिमाण में कार्य संपादन व्यक्ति की प्रबंधकीय योग्यता निर्धारित करते हैं। चूंकि समय की उपलब्धता निर्धारित परिमाण से संबंधित है अतः उपलब्ध समय का बेहतर उपयोग आवश्यक हो जाता है। व्यक्ति के समय के संबंध में विचार विमर्श करने पर, इस दिशा में प्रभावी कारक तथा अवधारणा के मूलभूत कारक के रूप में विशेषताएं परिलक्षित होती हैं।

- समय अपनी सभी इकाइयों, सेकेंड से मिनट, मिनट से घंटा, घंटा से दिन, सप्ताह, माह, वर्ष, आदि में निर्धारित परिमाण का होता है। इसे इकाइयों में कम या अधिक नहीं किया जा सकता।
- वर्ष का माह, माह का सप्ताह, एवं सप्ताह का दिन, एवं दिन का घंटा, मिनट,सैंकेंड कभी भी पुनः उपस्थित नहीं होता।
- चूंकि समय पुनर्रावृत्त नहीं होने वाली अवधारणा है अतः किसी समय किए गए कार्य की त्रुटि उसी समय में पूर्ण नहीं की जा सकती अपितु त्रुटि पूर्ति के लिए पृथक समय का उपयोग करना होता है।

• विभिन्न कार्यों के संपादन के लिए, समय की विशेष महत्ता है कि कार्यों को समय अनुसार विनियोजित किया जा सकता है। समय में कार्य अनुरूप प्रबंधन किया जा सकता है। लेकिन समय को अपनी गति एवं दिशा से किसी भी स्थिति में प्रभावित नहीं किया जा सकता।

समय प्रबंधन की अवधारणा में प्रबंधन पक्ष प्रभावी होता है तथा इसी पर अधिक जोर दिया जाता है। समय प्रबंधन सिद्धांत अभिक्रिया एवं तकनीको पर आधारित अवधारणा है जो कि संसाधनों की प्रति इकाई मूल की महत्ता को रेखांकित करती है। संगठन में किसी भी स्तर पर समय प्रबंधन एवं नियंत्रण के प्रथम पायदान पर व्यक्ति को तीन मूल भूत प्रश्न निर्धारित करने होते हैं।

अ. किस प्रकार हम अपने समय का उपयोग करते हैं?

ब. किस प्रकार हम अपने समय का दुरूपयोग करते हैं?

स. हम कैसे अपने समय का सदुपयोग सुनिश्चित कर सकते हैं?

संगठन में नेतृत्व के स्तर पर समय प्रबंधन की महती आवश्यकता लगभग सभी संगठनों में देखी जाती है। पुलिस संगठन में यह आवश्यकता और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है यहां कार्यों की वैविध्यपूर्ण प्रकृति तथा कार्यों की निर्धारित समय में पूर्ण किए जाने की अपेक्षा तथा कार्याधिक्य के परिणाम स्वरूप समय की कमी कार्यों एवं लक्ष्यों को भूलने की प्रवृत्ति आदि प्रकाश में आती हैं। समय प्रबंधन का महत्व रेखांकित करने से पूर्व यह आवश्यक है कि नेतृत्व के स्तर पर किस प्रकार समय का दुरूपयोग या अनुत्पादक गतिविधियों में समय खर्च होता है, को रेखांकित किया जाए। प्रबंधन के स्तर पर विभिन्न कार्य मदों में समय के दुरूपयोग कारक निहित होते हैं। यह कारक नियमित दिनचर्या का भाग होकर व्यक्ति की रोजमर्रा के कार्यों में समाहित हो जाते हैं। नियमित दिन चर्या के भाग होने के कारण इन्हे आसानी से चिह्नित एवं निराकृत किया जाना संभव नहीं हो पाता है। समय के दुरूपयोग संबंधी कारकों की पहचान एवं उनका निराकरण किया जाना समय प्रबंधन का अत्यावश्यक भाग है। विभिन्न प्रबंधन कार्यों में निर्धारित दुरूपयोग कारकों को निम्नवत् प्रस्तुत किया जा सकता है।

• प्रबंधन कार्य • योजना	• समय दुरूपयोग कारक • अनिर्धारित योजना सीमा • काल्पनिक उपलब्धियां • प्राथमिकताओं का परिवर्तन • लक्ष्य को अपूर्ण छोडा जाना • संघर्ष प्रबंधन
• संघटनात्मक	• एकाधिक अधिकारी • उत्तरदायित्व संबंधी भ्रम पूर्ण स्थिति • कार्यों प्रयासों को दोहराया जाना • व्यक्तिगत असंगठन
• निर्देशात्मक	• परिवर्तनों के प्रति अनुकूलन नहीं होना • द्धंद एवं संघर्ष का उपयुक्त प्रबंधन नहीं होना • समूह कार्य का अभाव • कार्यों का स्वकेन्द्रण • अप्रभावी कार्य वितरण • रोजमर्रा की गतिविधियों में संलग्नता
• नियंत्रण	• अपूर्ण सूचना • गलतियां एवं अप्रभावी निष्पादन • कमजोर निष्पादन पर ध्यान न देना • मना करने या न कहने की क्षमता में कमी • आगन्तुक एवं टेलीफोन
• संचार	• मीटिंग • विभिन्न स्तरों पर अस्पष्ट संचार • सुनने की क्षमता का अभाव • सामाजिकता
• निर्णयन	• बिलंम्बित निर्णय • समिति के द्वारा निर्णय • निर्णयपूर्व सभी तथ्यों की वांछा

इस प्रकार योजनागत् कार्यों में समय सीमा निर्धारित नहीं करने तथा दिवास्वप्न जैसे काल्पनिक उपलब्धियों की योजना बनाने लक्ष्यों को अधूरा छोडने प्राथमिकताओं में परिवर्तन एवं योजना के स्तर पर द्वंद्व की स्थिति के निराकरण के रूप में समय संबंधी दुरूपयोग सामान्यतः देखा जाता है। एकाधिक अधिकारी की स्थिति में दो प्रकार के लक्ष्य या तरीके संसाधनों के दुरूपयोग एवं एक ही प्रकृति के प्रयास दोहराने जैसी स्थिति निर्मित करते हैं। संगठन में व्यैक्तिक असंगठन के कारण कार्य की दिशा भ्रमित होने की स्थिति उत्पन्न होती है। संगठन में परिवर्तनों के प्रति अनुकूलन का अभाव उत्पादकता या समय की दृष्टि से हास्यकारी परिस्थिति उत्पन्न करता है। संगठन में व्याप्त संघर्ष एवं द्वंद्वों की स्थिति

इनके निराकरण के संबंध में अत्यधिक समय की अपेक्षा प्रदर्शित करती है। नेतृत्व के स्तर पर समूह कार्य एवं अधीनस्थ में विश्वास की अपेक्षा स्वयं करने की प्रकृति समय की क्षति का कारण बनती है। इसी प्रकार कार्य वितरण का निर्धारण प्रभावी नहीं होने की स्थिति में कार्य की पुनरावृत्ति एवं पुनरावलोकन तथा त्रुटिपूर्ति जैसी स्थितियां निर्मित होती हैं, जो कि कहीं न कहीं समय के अनुत्पादक उपयोग को निर्धारित करती हैं। नेतृत्व की रोजमर्रा की जानकारी तथा उनके विस्तार के प्रति रुचि या हठ भी समय के दुरूपयोग का कारण बनती है। नियंत्रण के स्तर पर अपूर्ण सूचना या निर्देश कार्य की निर्धारित से भिन्न दिशा में प्रगति अथवा अपूर्ण मनोयोग से कार्य आरंभ का कारण बनती है। वहीं कार्य में त्रुटियां कमजोर निष्पादन के प्रति उपेक्षा भी पुनरावृत्ति एवं त्रुटि सुधार आदि रूपों में समय का दुरूपयोग का कारण बनती है। नेतृत्व के स्तर पर उपयुक्त स्थिति में मना करने की प्रवत्ति वांछनीय होती है इस प्रवृत्ति के अभाव में व्यक्ति अवांछित कार्यों को भी स्वीकार कर लेता है जो कि न तो प्राथमिकता की दृष्टि से एवं न ही उत्पादकता की दृष्टि से श्रेयस्कर होते हैं। इस प्रकार आवश्यक एवं इच्छित नहीं होने के बावजूद समय का दुरूपयोग होता है। मिलने वालों के प्रति सदाशयता एवं विनम्रता भी समय की क्षति का कारण होती है। यहां व्यक्ति जो कि मिलने आया है उसका व्यक्तिगत ऐजेन्डा होता है तथा वह पूरा समय लेकर अपनी बात प्रस्तुत करना चाहता है, तथा वह अपने आप में अकेला होता है। इसके विपरीत आपके पास उसके जैसे कई मिलने वाले आते है तथा इनसे मुलाकात आपके कार्य ऐजेन्डा में शामिल नहीं होती है। इस प्रकार विलंब एवं समय अभाव की स्थिति निर्मित होती है। संचारगत अस्पष्टता की स्थिति पुनः पुनरावृत्ति एवं अस्पष्टता को स्थापित करती है। व्यक्ति को सुनने एवं पूर्ण रूप में समझने का अभाव तथा व्यवसायिक स्तर पर सामाजिकता का प्रदर्शन समय की दृष्टि से क्षति कारक होते हैं। संगठन में निर्णय लेने में विलंब विभिन्न मतों एवं सभी तथ्यों की जानकारी के उपरांत निर्णय लेने की प्रवत्ति कार्य अवरोध का कारण बनती है तथा कार्य की गति को ऋणात्मक तौर पर प्रभावित करती है। नेतृत्व के स्तर पर त्वरित निर्णयन क्षमता का अभाव संसाधनों के दुरूपयोग की स्थिति निर्मित करता है। इस प्रकार कार्य की निरंतरता में नियमित कार्य कलापों में निहित समय संबंधी दुरूपयोग कारकों की जानकारी होना तथा व्यक्तिगत तौर पर उन कारकों का निर्धारण करना जो कि समय के दुरूपयोग के लिए उत्तरदाई हैं। इस प्रकार निर्धारित कारकों का उन्मूलन या अल्पप्रभाव का सुनिचयन समय प्रबंधन की दृष्टि से वांछनीय होता है। नियमित रूप से विभिन्न कार्य मदों में समय

दिया जाना निश्चित तौर पर अपेक्षित होता है लेकिन कितना समय दिया जाना है एवं कितना समय बचाया जा सकता है के संबंध में वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन अपेक्षित परिणाम कि दिशा में सार्थक हो सकता है। संगठन में नेतृत्व के विभिन्न स्तरों पर किस प्रकार की गतिविधियों में कितने प्रतिशत समय का उपयोग सामान्यतः किया जाता है के संबंध में अध्ययन किया गया जो कि सामान्य तौर पर एक व्यवसायिक या प्रबंधन अग्र अनुसार समय प्रतिशतता में उपयोग करता है।

गतिविधियां	समय खर्च प्रतिशत में
मीटिंग	35
फोन पर बातचीत	14
पढ़ना विभिन्न पत्र, निर्देश आदि	16
लिखना, लिखने हेतु बोलना	14
अन्य सचिवीय कार्य	05
अवलोकन	07
व्यक्तिगत आराम	03
योजना बनाना एवं सोच-विचार	06
योग	100

इस प्रकार गतिविधिवार समय का वितरण सामान्यतः देखा जाता है व्यक्तिगत तोर पर यदि व्यक्तिवार समय के वितरण संबंधी प्रतिशतता चार्ट निर्मित किया जाए तो व्यक्ति के उत्पादक समय एवं अनुत्पादक गतिविधियों पर खर्च समय के मध्य विभेद स्थापित कर सकता है तथा समय के खंड को आवश्यकतानुरूप अनुत्पादक से उत्पादक अप्रभावी से प्रभावी एवं दुरूपयोग से सदुपयोग की श्रेणी में समाहित कर समय प्रबंधन सुनिश्चित कर सकता है।

समय प्रबंधन की उपयोगिता के संबंध में प्रश्न अंकित करने वाले विचारको का मत है कि व्यक्ति अपने अनुभवों, पूर्वाग्रहों, क्षमताओं, सफलताओं, विवेक, ज्ञान तथा प्रकृति एवं संसकारों के निर्धारित आवरण में समाहित होता है तथा प्रत्येक व्यक्ति अपने आप में पृथक प्रवत्तियों एवं कारकों की सीमा में कार्य करता है। ऐसी स्थिति में व्यक्ति के कार्य एवं समय प्रबंधन को विनियोजित या परिवर्तित नहीं किया जा सकता है। इसके विपरीत विकासवादी एवं सुधारवादी सोच व्यक्ति की प्रवत्तियों दक्षताओं, उत्पादकता, आदि को प्रत्येक स्थिति में सुधार योग्य मानती हैं। प्रत्येक परिस्थिति में सुधार की कुछ न कुछ संभावनाएं विद्यवान रहती हैं। समय प्रबंधन की अवधारणा सुधारवादी संभावनाओं पर आधारित है तथा सर्वमान्य तथ्य के रूप में स्थापित भी है। समय प्रबंधन क्यों

आवश्यक है इस संबंध में 09 बिन्दुओं पर आधारित व्याख्या प्रस्तुत की जाती है:

1. *प्राथमिकता निर्धारण में सहायक* :- समय प्रबंधन के द्वारा व्यक्ति अपने विभिन्न कार्यों को प्राथमिकता क्रम में निर्धारित करता है तथा समय की दृष्टि से आवश्यक एवं संवेदनशील विषयों पर अधिक केन्द्रित होकर कार्य करने में सक्षम होता है। कार्य की प्राथमिकता के निर्धारण के साथ ही प्राथमिकताओं की पूर्ति की दिशा एवं तरीका भी निर्धारित करता है।

2. *कम समय में अधिक कार्य निष्पादन* :- योजनाबद्ध तरीके से समय के उपयोग के माध्यम से व्यक्ति समय के मूल्य की समझ के साथ ही अपेक्षाकृत कम समय में अधिक कार्य निष्पादन प्रस्तुत करता है। समय की योजना के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति यह निर्धारित करे कि उसे कितना कार्य करना है तथा इसी आधार पर उसके समय की अपेक्षा उसे ज्ञात होती है तथा समय की किसी भी इकाई को वह बिना काम नहीं छोडने के प्रति अग्रसर होता है। तथा इस प्रकार उसके कार्य की मात्रा अपेक्षाकृत वृद्धि प्राप्त करती है।

3. *कार्य की गुणवत्ता में सुधार* :- समय प्रबंधन के माध्यम से व्यक्ति अत्यधिक सीमित संसाधन समय के बुद्धिमत्ता पूर्ण उपयोग की योजना बनाता है तथा क्या करना है, कब करना है, एवं कार्य के लिए कितना समय उपलब्ध है पर विचार कर व्यक्ति कार्य के प्रति अधिक केन्द्रित होकर कार्य निष्पादन करता है। इस प्रकार कार्य गुणवत्ता में सुधार परिलक्षित होता है।

4. *संतुलन एवं समन्वय* :- कई बार किसी व्यक्ति के जीवन में विभिन्न विषयों के प्रति संतुलन या संतुलित प्रतिक्रिया का अभाव देखा जाता है। समय प्रबंधन के माध्यम से व्यक्ति कार्यों की सूची, क्या किसी विषय में या जीवन के किस क्षेत्र में करना है कि जानकारी सतत रूप से रखता है। जिसके परिणाम स्वरूप व्यक्ति जीवन के एवं संदर्भित सभी क्षेत्रों के प्रति संवेदनशील प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। साथ ही वह निर्णयन के प्रति उद्धरत होता है। इस प्रकार विभिन्न क्षेत्रों के प्रति संतुलित एवं समन्वित व्यवहार प्रदर्शन करने में वह सक्षम हो जाता है।

5. *अप्रिय कार्य करने के प्रति प्रोत्साहन* :- सामान्यतः प्रकाश में आता है कि व्यक्ति अपने पसंद के कार्यों को प्राथमिकता से करता है। एक दिन के इस प्रकार के कार्य पूर्ण होते ही अगले दिन पुनः प्रिय कार्यों का प्राथमिकता से चयन कर उनका प्रतिपादन व्यक्ति करता है। इस प्रकार समय अभाव में कई बार जरूरी आवश्यक कार्यों को भी टालने की प्रवृत्ति प्रकाश में आती है। जिसका मुख्य कारण यह होता है कि वह कार्य व्यक्तिगत पसंद या प्रिय नहीं है। समय प्रबंधन निर्धारित

समय में सभी आवश्यक कार्यों के निष्पादन को निर्धारित करता है। कार्यों एवं समय की सापेक्ष सूची व्यक्ति को सभी कार्यों को करने बाध्य करती है इस प्रकार कार्यों की प्राथमिकता प्रिय अप्रिय के मापदण्डों के स्थान पर आवश्यक, अनावश्यक के मापदण्डों पर निर्धारित होते हैं।

6. *निरन्तरता* :- दिन प्रतिदिन के कार्यों की योजना हो या दीर्घ अवधि के कार्य लक्ष्यों की योजना व्यक्ति समय प्रबंधन के माध्यम से कार्यों की निरन्तरता को प्राप्त करता है। विभिन्न लक्ष्यों एवं उनके सापेक्ष समयावधि जीवन में एवं व्यक्तिगत प्रवृत्तियों में विलंब कारक के प्रति सचेत बनाती है। तथा व्यक्ति की ऐसी प्रवृत्तियों के प्रति प्रतिरोध का कार्य करती है व्यक्ति लक्ष्य एवं कार्यों के नियमित प्रतिबिम्ब के समक्ष उत्तरदाई होकर सतत कार्यशील बना रहता है।

7. *निष्पादन का सुनिश्चयन* :- अपनी इकाई में अपने हिस्से का कार्य पूर्ण नहीं कर पाने के कारण अक्सर निराशा की स्थिति का सामना करना पड़ता है। संगठन के प्रति वचनबद्धता को पूर्ण नहीं कर पाने से भी व्यक्ति में आत्मविश्वास की कमी दिखाई देती है। संगठन में वरिष्ठ एवं कनिष्ठ स्तर पर भी उसकी छवि का अवमूल्यन होता है। भविष्य के प्रोजेक्ट में उसकी भूमिका के निर्धारण में भी यह प्रवृत्ति नकारात्मक प्रभाव डालती है। इसके विपरीत समय प्रबंधन कार्यों की प्राथमिकता सूची उनकी समयबद्ध तरीके से पूर्ण किए जाने का निर्धारण सुनिश्चित करती है। व्यक्ति को महत्वपूर्ण एवं त्वरित लक्ष्यों के प्रति लगातार सचेत रहना चाहिए तथा वचनबद्धता एवं अतिआवश्यक स्तर के कार्यों को समय अवधि में पूर्ण करने में सक्षम होना चाहिए।

8. *समय की सीमितता* :- समय अपने आप में सतत क्षयशील अवधारणा हैं समय की गति में परिवर्तन रोक या विराम का कोई स्थान नहीं होता है तथा समय के स्वतंत्र प्रभार के प्रति व्यक्ति की जिम्मेदारी होती है कि वह समय का सदुपयोग करे। चूंकि समय का प्रभार सतत है। अतः उसका अधिकतम उपयोग समय प्रबंधन के माध्यम से सुनिश्चित किया जा सकता है। जो कि समय की सतत प्रवाह के प्रति उत्कृष्ट प्रदर्शन निर्धारित करता है।

9. *स्वअनुशासन* :- व्यक्ति का अनुशासित नहीं होना व्यक्ति के व्यवसायिक जीवन में उसके विकास का मुख्य अवरोधक माना जाता है। इसी प्रकार अनुशासित नहीं होने का आक्षेप या छवि भी नकारात्मक प्रभाव स्थापित करती है। अनुश्शासनहीनता की व्यक्तिगत प्रवृत्तियां समय पर उपस्थित नहीं होना, कार्यों में लेट लतीफी करना, तथा प्रत्येक विषय वस्तु के प्रति विलंबित प्रतिक्रिया प्रस्तुत करना मुख्य रूप से समय आधारित प्रवृत्तियां हैं। व्यक्ति समय

प्रबंधन के माध्यम से न केवल अपने समय का सदुपयोग करता है बल्कि व्यक्तिगत जीवन में स्वअनुशासन की प्रवत्तियों में भी वृद्धि करने में समर्थ हो जाता है। दैनंदनी में समयबद्ध कार्यों की रूपरेखा एवं प्रत्येक काल सीमा में निर्धारित कार्यों की पूर्णता स्वतः ही अनुशासित व्यक्तित्व के मुख्य लक्षण के रूप में व्यक्तित्व को स्थापित करती है।

इस प्रकार समय प्रबंधन आवश्यक है या नहीं इस प्रश्न का समाधान सुदृढ़ रूप में प्रस्तुत होता है तथा जीवन में समय प्रबंधन उपयोगी अवधारणा का रूप ग्रहण करता है। व्यक्तिगत एवं व्यवसायिक जीवन में समय प्रबंधन की उपयोगिता स्पष्टतः देखी जा सकती है। कोई भी व्यक्ति समय प्रबंधन के मानकों एवं तकनीको के आधार पर स्वतः परीक्षण एवं परिणाम को जान सकता है।

इस प्रकार समय की अवधारणा में निर्धारित मूल भूत विशेषताओं तथा निर्धारित समय में अधिक से अधिक कार्य संपादन की चेष्टा के कारण समय प्रबंधन की अवधारणा प्रकाश में आई। समय प्रबंधन वह प्रक्रिया या कला है, जिसमें समय के संबंध में योजना तैयार कर विशेष कार्य कलापों में खर्च होने वाले समय का नियमन एवं उसकी बचत, प्रभावशीलता, दक्षता एवं उत्पादकता बढानें की दृष्टि से की जाती है। समय प्रबंधन विभिन्न कौशल, तकनीको को समाहित करता है। जब किसी विशेष लक्ष्य प्राप्ति के संबंध में कार्य किसी प्रोजेक्ट या विशेष उद्देश्य को समय सीमा में पूर्ण करना होता है तब समय प्रबंधन की महती उपयोगिता स्थापित होती है। समय प्रबंधन में बहुत सारी अभिक्रियाएं समाहित होती हैं। जिसमें योजना, लक्ष्य निर्धारण, कार्य वितरण, खर्च किए गए समय का विश्लेषण, कार्यक्रम निर्धारण, संगठन अथवा संरचना का विकास, प्राथमिकता निर्धारण, एवं मानिटरिंग, आदि शामिल हैं। प्राथमिक रूप से समय प्रबंधन व्यवसाय संबंधी एवं कार्य संबंधी प्रक्रिया के निर्धारित होता है। तथा पश्चातवर्तीय स्थिति में यह प्रक्रिया विस्तार प्राप्त करते हुए व्यक्तिगत अभिक्रिया के रूप में स्वरूप ग्रहण करती है। समय प्रबंधन का तंत्र, प्रक्रिया तकनीक विभिन्न पद्धति एवं सुधारात्मक क्रियाओं को समाहित करता है। तथा इन सभी के उपयोग के माध्यम से किसी भी कार्य में समय का संसाधन की उत्कृष्टता को प्राप्त किया जाता है, वर्तमान में समय प्रबंधन आवश्यक तत्व है। जिससे कि व्यवसायिक दक्षता को उन्नत कर उत्पादकता में वृद्धि प्राप्त की जा सकती है। इस रूप में समय प्रबंधन प्रभावी नेतृत्व का आवश्यक लक्षण बन जाता है। नेतृत्व स्वयं के कार्य निष्पादन में तथा सदस्यों के अनुगमन की दिशा निर्धारित करने में समय प्रबंधन के माध्यम से श्रेष्ठ उदाहरण प्रस्तुत कर सकता है।

समय प्रबंधन के सिद्धांत

समय प्रबंधन के संबंध में विभिन्न विचारको के विचार एवं इस संबंध में उपलब्ध साहित्य के अनुशीलन के आधार पर समय प्रबंधन के सिद्धांत निम्नवत् प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

- प्रभावशील परिवेश का निर्माण
- प्राथमिकताओं का निर्धारण
- प्राथमिकताओं पर आधारित अभिक्रियाओं का चयन
- अनुत्पादक समय की बचत

1. *प्रभावशील परिवेश का निर्माण* :- समय प्रबंधन के संबध में प्रभावी परिवेश निर्माण संबंधी सिद्धात समग्र रूप में परिवेश के कारकों के समय प्रबंधन में प्रभावी उपयोग को समाहित करता है। इस सिद्धांत में परिवेश को संगठन के लक्ष्यों के अनुरूप संयोजित करना जिसमें कि कागजी कार्यकलाप एवं लक्ष्य संबंधी तथ्यों का निर्धारण, इसके उपरांत समय व्यर्थ होने से बचाने संबंधी प्रावधान जिन्हें प्रवाह, वितरण, पृथक्करण के माध्यम से निर्धारित किया जाता है। प्रवाह के अंतर्गत लक्ष्यों कार्य कौशल तथा समयगत् कार्यकलापों के संबंध में एक से दूसरे एवं अन्य तक सूचनाओं का प्रवाह जिससे कि सभी का कार्य अवदान सुनिश्चित हो तथा पुनरावृत्ति संबंधी दोष से समय की बचत की जा सके। पृथक्करण अवांछित एवं अनुपयोगी कार्य कलापों से स्वयं एवं इकाई के पृथक्करण है। पृथक करण के माध्यम से उपयोगी समय की बचत के साथ ही कार्य संकेन्द्रण की स्थिति प्राप्त की जाती है। समय प्रबंधन में वितरण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है दूसरे लक्ष्यों की महत्ता को देखते हुए प्राथमिक लक्ष्य के कार्यों उपयोगिता के आधार पर उपयुक्त व्यक्ति को वितरित कर दिया जाता है। इस सिंद्धांत में लक्ष्य प्रंबंधन एवं लक्ष्य संकेन्द्रण के सिद्धांत को स्थान दिया जाता है यहां विभिन्न लघुकालिक एवं दीर्घ कालिक लक्ष्यों को प्राथमिकता एवं उपयोगिता के आधार पर क्रमबद्ध, समाहित, प्रबंधित, किया जाता है तथा लक्ष्य प्रबंधन से समय प्रबंधन की स्थिति को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। इस प्रक्रिया में अभिप्रेरण कारकों पर अधिक जोर दिया जाता है। समय संबंधी नकारात्मक आदतों जैसे कि लेट लतीफी, अनावश्यक कार्य विश्राम आदि के कारण न केवल कार्य निष्पादन प्रभावित होता है बल्कि अत्यधिक उपयोगी समय भी व्यर्थ होता है। परिवेश संबंधी सिंद्धांत इस प्रकार के कार्य में सुधार की व्याख्या प्रस्तुत करता है, इस प्रकार की आदतें मनोवैज्ञानिक स्तर पर स्थापित होकर प्रसार प्राप्त करती हैं। तथा संगठन के परिवेश में समाहित होकर कार्य निष्पादन को ऋणात्मक रूप में प्रभावित

करती हैं।

इस प्रकार प्रभावी परिवेश संबंधी सिद्धांत समग्र परिवेश के प्रभाव को समय प्रबंधन के रूप में निरूपित करता है। मनोविज्ञान में सचेत अवस्था के अभाव तथा अति सक्रियता संबंधी रोग या सिंएौम की व्याख्या की गई है जिसे दूसरे शब्दों 'अटेन्शन डेफिसिट डिसआर्डर' भी कहा जाता है। इसके लक्ष्णों के विषय में शोध तथा विभिन्न ग्रसित व्यक्तियों के लक्षणों यथा अल्पनिष्पादन कार्य प्रारंभ करने में परेशानी विभिन्न कार्यों के एक साथ संचालन की स्थिति में उनका मूल्यांकन आदि में परेशानी के रूप में प्रकाश में आती हैं। कुछ विचारको ने प्रीफ्रंटल (Prefrontal) कार्टेक्स नामक मस्तिष्क के भाग को इसके लिए उत्तरदाई माना है। यह मनुष्य के आवेग एवं संवेदना के नियन्त्रण, मनुष्य की सचेत अवस्था के विस्तार, संगठन क्षमता, अनुभवों से सीखने की शक्ति तथा स्वयं की कार्य समीक्षा मूल्यांकन आदि को नियन्त्रित करता है। इसके संबंध में यह भी कहा जाता है कि प्रीफ्रंटल कार्टेक्स के परिवर्तन की स्थिति में कार्य एवं समाधान की सुलभता निर्धारित होती है।

2. *प्राथमिकताओं का निर्धारण* :- समय प्रबंधन संबंधी रणनीति सामान्यतः व्यक्तिगत लक्ष्य निर्धारण एवं प्राथमिकताओं के चयन पर आधारित होती है। कार्य को प्राथमिकता के क्रम में किया जाए। जिसमें कि लक्ष्य निर्धारण एवं प्राथमिकताओं का चयन महत्वपूर्ण है। साथ ही आकर्षक लक्ष्यों का निर्धारण किया जाए जिससे कि कार्य स्वतः स्पूर्त रूप में आकर्षित होकर निष्पादित हो। लक्ष्यों एवं प्राथमिकताओं का निर्धारण सामान्यतः सूचीबद्ध किया जाकर, कार्ययोजना के रूप में, परियोजना के रूप में या उसके आधार पर किया जा सकता है। व्यक्तिगत लक्ष्य या उद्देश्य की स्थिति में प्राथमिकता आधारित श्रेणियन किया जा सकता है। साथ ही प्राथमिकताओं एवं कार्यों की सामयिक दृष्टि से अन्तिम सीमा का निर्धारण किया जा सकता है। इस प्रकार लक्ष्य अनुरूप सूची या कार्यक्रम या कैलेण्डर तैयार होता है। जिसके आधार पर समय के मूल्यांकन एवं लक्ष्यों के निष्पादन तुलनात्मक रूप से सहगामी रूप में किया जा सकता है। दैनिक, साप्ताहिक, मासिक या अन्य कालक्रम अनूरूप योजना एवं पुनर्रावलोकन मूल्यांकन की व्यवस्था को इस दिशा में कारगर माना जाता है। प्राथमिकता निधारण के संबंध में विभिन्न तकनीको की व्याख्या प्रस्तुत की गई है।

ए.बी.सी. विश्लेषण :- यह व्यवसाय प्रवंधन में प्रयोग की जाने बाली पुरानी पद्धति है। इसमें विभिन्न कार्यों लक्ष्यों, उद्देश्यों को ए, बी, सी 3 श्रेणियों में विभक्त किया जाता है। इन्हे कार्यों एवं लक्ष्यों की श्रेणी भी कहा जा सकता है।

ए - इस श्रेणी में लक्ष्य तात्कालिक तथा महत्वपूर्ण प्रकृति के होते हैं।

बी - इस श्रेणी में लक्ष्य महत्वपूर्ण किन्तु तात्कालिक प्रकृति से परे, एवं

सी - इसमें लक्ष्य न तो महत्वपूर्ण और न ही तात्कालिक प्रकृति के शामिल किए जाते हैं।

इस प्रकार कार्यों/लक्ष्यों को तीनों श्रेणियों में क्रमानुसार वर्गीकृत किया जाता है। तथा कार्यों लक्ष्यों की तात्कालिकता एवं महत्ता के आधार पर प्राथमिकता क्रम में निष्पादन सुनिश्चित किया जाता है। इस आधार पर महत्वपूर्ण एवं तात्कालिक कार्यों के प्रति समयाभाव से बचा जा सकता है।

परेटों विश्लेषण : ए.बी.सी. विश्लेषण को इस प्रक्रिया के साथ समाहित किया जाता है। यहां माना जाता है कि 80 प्रतिशत कार्य 20 प्रतिशत समय में पूर्ण किए जाते हैं तथा 20 प्रतिशत कार्य या लक्ष्य 80 प्रतिशत समय का व्यय करते हैं। इसी प्रकार 80 प्रतिशत परिणाम कुल 20 प्रतिशत कार्यों से निष्पादित होते हैं। इस प्रकार यदि निष्पादन लक्ष्य है तो निश्चित ही समय के आधार पर प्राथमिकता निर्धारित की जानी चाहिए। कार्य निष्पादन एवं उसमें वांछित समय कार्य के लिए चुनी गई पद्धति पर निर्भर करता है प्रत्येक स्थिति में कार्य की सरल एवं आसान पद्धति का चयन श्रेयस्कर होता है, वहीं यदि कार्य की जटिल प्रक्रिया का चयन किया जाता है, तो यह अधिक समय खर्च करने के साथ ही अधिक संसाधन के उपयोग को भी समाहित करता है। इस प्रकार प्रत्येक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वैकल्पिक पद्धति का चयन लाभ प्रद हो सकता है।

ईशनहावर सिद्धान्त : कार्यों को महत्वपूर्ण, अमहत्वपूर्ण, तात्कालिक, अतात्कालिक श्रेणियों में विभक्त कर निर्धारित वर्गाकार आकृति में प्रदर्शित किए जाते हैं।

	तात्कालिक	**अतात्कालिक**
महत्वपूर्ण	**प्राथमिक, तत्काल**	**तत्काल (उपयुक्त समय पर)**
अल्पमहत्वपूर्ण	**तत्काल**	**समयावधि**

ईशनहावर बाक्स चार छोटे वर्ग आकृतियों को समाहित करता है। वांए से उपर प्रथम बाक्स में महत्वपूर्ण तथा तात्कालिक कार्य लक्ष्यों को लिखा जाता है

इसी प्रकार उपरी दाहिने तरफ बॉक्स क्रमांक 2 में महत्वपूर्ण कार्य जिनकी प्रकृति तात्कालिक नहीं है को लेखबद्ध किया जाता है। वांए नीचे बाक्स क्रमांक तीन में वे कार्य समाहित होते हैं जो तात्कालिक हैं। लेकिन महत्वपूर्ण नहीं हैं एवं नीचे दाहिने बॉक्स क्रमांक चार में वे कार्य लक्ष्य लेख किए जाते हैं। जो कि न तो महत्वपूर्ण हैं। न ही तात्कालिक हैं इस प्रकार बॉक्स क्रमांक चार के कार्य जो कि न तो महत्वपूर्ण हैं न तात्कालिक को छोड़ दिया जाता है। बॉक्स क्रमांक एक के कार्य जो कि महत्वपूर्ण भी हैं और तात्कालिक भी को तत्काल पूर्ण किया जाता है। तथा व्यक्तिगत रूप से उनकी पूर्णतः सुनिश्चित की जाती है। बाक्स क्रमांक तीन के तात्कालिक तथा अमहत्वपूर्ण कार्यों को अपने अधीनस्थ या प्रतिनिधि को सौंप दिया जाता है। तथा बॉक्स क्रमांक दो में निर्धारित महत्वपूर्ण कार्य जिनकी प्रकृति तात्कालिक नहीं है को उपयुक्त समय पर स्वयं पूर्ण किया जाता है। इस प्रकार महत्वपूर्ण कार्य स्वयं प्राथमिकता क्रम में पूर्ण किए जाते हैं तथा जिन कार्यों की प्रकृति महत्वपूर्ण नहीं है उनका भी समयानुरूप क्रियान्वयन निर्धारित किया जाता है। इस पद्धति का मूल वाक्य जो महत्वपूर्ण है वो कभी कभी तात्कालिक होता है तथा जो तात्कालिक है वह कभी कभी महत्वपूर्ण होता के रूप में देखा जाता है।

पोसेक पद्धति : यह अंग्रेजी के प्रायोटाइज वाई ओरगेनाइजिंग ईकोनो माइजिंग एण्ड कन्ट्रीव्यूटिंग का परिवर्णी शब्द है। यह पद्धति व्यक्ति के तात्कालिक भावनात्मक एवं आर्थिक सुरक्षा संबंधी मापदण्डों पर जोर देती है। व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत जिम्मेदारियों के निर्वाह के उपरांत ही सामूहिक उत्तर दायित्वों के प्रति पूर्ण मनोयोग से कार्य करने हेतु तैयार हो पाता है। यहां प्राथमिकता को व्यक्ति के व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनूरूप अनुक्रम निर्धारण किया जाता है। इस सिद्धांत में प्राथमिकता निर्धारण को सामयिक दृष्टि से प्राथमिकता एवं लक्ष्यों पर आधारित जीवन की प्राथमिकता के रूप में संगठन संबंधी तथ्यों को व्यक्ति के नियमित रूप से पारिवारिक एवं आर्थिक सफलता के लिए किए गए उपक्रमों के रूप में सरलीकरण को उन कार्यों के रूप में जो कि व्यक्ति को न चाहते हुऐ भी करना होता है। आर्थिक तथ्य को उन कार्यों के रूप में जो कि व्यक्ति अपने स्तर पर करना पसंद करता है लेकिन वे तात्कालिक अथवा महत्वपूर्ण नहीं होते तथा योगदान संबंधी तथ्यों को उन तथ्यों के रूप में जो कि व्यक्ति को पृथक रूप में स्थापित करते हैं, व्याख्यायित किया जाता है। इस प्रकार यह सिद्धांत समय प्रबंधन के लिए प्राथमिकता का निर्धारण व्यक्ति के व्यवसायिक के साथ निजी जीवन से संबद्धता के रूप में व्यक्ति की प्राथमिकताओं

के अपेक्षाकृत रुचिपूर्ण विन्यास को सुनिश्चित करता है।

3. *प्राथमिकताओं पर आधारित अभिक्रियाओं का चयन* :- समय प्रबंधन के संबंध में परिवेश निर्धारण एवं प्राथमिकताओं के चयन के उपरान्त लक्ष्यों के कार्यान्वयन के सिद्धांत को स्थान प्रदाय किया जाता है। लक्ष्यों के त्वरित क्रियान्वयन का सीधा संबंध लक्ष्य सूची के प्रवंधन एवं निर्माण पर निर्भर करता है। समय प्रबंधन के संबंध में क्रियान्वयन संबंधी दृष्टिकोण बहाव एवं लय के अनुरूप क्रियान्वयन तथा अपरम्परागत तकनीक के रूप में समय की गति के अनुरूप क्रियान्वयन तथा अल्प ही अधिक है आदि को सिद्धांत वाक्य के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। परम्परागत समय प्रबंधन की योजना व्यक्ति के समय के प्रत्येक मिनिट को निचोड़ने संबंधी धारणा को स्वीकार नहीं करती है। लक्ष्यों के क्रियान्वयन के संबंध में लक्ष्य सूची का निर्धारण प्राथमिक स्तर पर किया जाता है। यह सूची पूर्ण किए जाने वाले लक्ष्यों कार्यों की सूची होती है। इसमें लक्ष्य के प्रति प्रत्येक स्तर पर पूर्णतः के लिए किए जाने वाले कार्यों को निर्धारित किया जाता है। यह सूची वैकल्पिक या पूरक याददाश्त का कार्य करती है। तथा इसका उपयोग स्वयं के प्रवंधन व्यवसायिक प्रबंधन परियोजना प्रबंधन एवं साफ्टवेयर विकास में किया जाता है। यह सूची एकाधिक भी हो सकती है। जैसे ही कोई कार्य या लक्ष्य पूर्ण होता है उसे सूची में काट दिया जाता है। यह सूची सामान्य कागज नोटपेड या क्लिप बोर्ड पर तैयार की जा सकती है। लेखक जूली मोर्गेन्स्टीम ने समय प्रबंधन के संबंध में क्या करें क्या न करें संबंधी सुझाव प्रस्तुत किए हैं जो कि लक्ष्य सूची निर्माण में भी महत्वपूर्ण हैं।

क - सुखद तथा सृजनात्मक समय का निर्धारण

ख - अनावश्यक बातों के लिए नहीं कहने की प्रवृत्ति

ग - प्राथमिकताऐं निर्धारित करना

घ - सभी चीजें नहीं छोड़ना

ड - ऐसा सोच नहीं रखना कि, कोई भी जटिल कार्य एक ही बार में पूर्ण हो जायगा।

लक्ष्य सूची का प्रबंधन

लक्ष्य सूची सामान्यतः अनुक्रम आधारित होती है। सरलतम सूची कार्यकरण फाइल के रूप में होती है जिसमें व्यक्ति को कौन से लक्ष्य एवं कार्य पूर्ण करना है का रिकार्ड समाहित किया जाता है। इसके साथ ही प्रतिदिन की कार्य सूची प्रथक से तैयार की जाती है जिसमें सामान्य सूची से दिवस में पूर्ण किए जाने

वाले लक्ष्य एवं कार्यों को समाहित किया जाता है। यह सूची प्राथमिकता क्रम में तैयार की जाती है। इस सूची में ए बी सी के आधार पर अति महत्वपूर्ण, महत्वपूर्ण, कम महत्वपूर्ण श्रेणी में विभक्त किया जा सकता है। वर्गीकरण के संबंध में विभिन्न मत प्रचलित हैं। जिनमें प्राथमिकता के आधार पर लक्ष्यों की पूर्ति का समय भी निश्चित किया जाता है। जैसे कि ए श्रेणी के लक्ष्य उसी दिन, बी श्रेणी के लक्ष्य सप्ताह में तथा सी श्रेणी के लक्ष्य माह में पूर्ण किए जावें। इसी प्रकार प्रतिदिन के लक्ष्यों की प्राथमिकता के संबंध में अंको के आधार पर वर्गीकरण भी किया जाता है। जिसमें एक नंबर सर्वोच्च प्राथमिकता दो नंबर उससे कम प्राथमिकता आदि अंकन किया जाता है। प्राथमिकता निर्धारण की एक अन्य पद्धति में लक्ष्यों कार्यों का समूह में विभक्त किया जाता है। जैसे समूह ए में सर्वाधिक अरुचिकर कार्यों एवं लक्ष्यों को समाहित किया जाता है तथा यह माना जाता है कि प्रथम श्रेणी में यदि अरुचिकर अप्रिय कार्यों को पूर्ण कर लिया जाएगा तो शेष रुचिकर कार्य आसानी से पूर्ण किए जा सकेंगे। इस प्रकार समूह 'बी' एवं सी में क्रमशः मध्यम एवं उच्चतम श्रेणी के प्रिय एवं रुचिकर कार्यों को समाहित किया जाता है। इस प्रकार कार्य की रुचि एवं प्रिय, अप्रिय प्रकृति के आधार पर वर्गीकरण प्राथमिक तौर पर जटिलता से सरलता की ओर कार्य उन्मुखीकरण पर बल देता है लेकिन इस वर्गीकरण में व्यक्ति दूसरे एवं तीसरे श्रेणी के रुचिकर कार्यों की और अभिप्रेरित होना स्वभाविक हो जाता है। जबकि प्राथमिक अप्रिय कार्य की उपेक्षा की संभावना विद्यमान रहती है। इसी आधार पर इस सिद्धांत की आलोचना भी की जाती है। लक्ष्य सूची में लक्ष्य एवं कार्यों की सीमितता निर्धारण के संबंध में भी आलोचना की जाती है कि सूची अपने आप में लक्ष्यों की सीमितता निर्धारित करती है साथ ही शेष रहे लक्ष्य एवं कार्यों के संबंध में एवं त्वरित रूप से प्रकाश में आए एवं तत्काल पूर्ण किए जाने वाले लक्ष्यों के संबंध में यह सूची पूर्ण निरूपण नहीं कर पाती है।

इसी प्रकार विभिन्न विचारकों ने लक्ष्य सूची के संबंध में अन्य आलोचनात्मक विचार जैसे कि नियमित लक्ष्यों को सूचीबद्ध करना समय की बर्बादी है। तथा सूची निर्धारण में सामयिक आपदाओं का स्थान निर्धारित नहीं होता, नियमित रूप से दीर्घ लक्ष्यों की प्राप्ति से व्यक्ति लघु योजनाओं एवं क्रियान्वयन में अवरोध महसूस करता है आदि। लक्ष्य सूची का निर्धारण कार्य एवं परिस्थिति अनुरूप किए जाने तथा सूची के प्रति परिवर्तनशील एवं लचीला व्यवहार व्यक्त करने से उक्त आलोचनात्मक तथ्यों का परिहार संभव हो जाता है।

4. *अनुत्पादक समय की बचत* :- समय प्रबंधन का सिद्धांत किसी

कर्मचारी के निर्धारित समय में निष्पादित कार्य पूर्णता पर आधारित है। यह कर्मचारी को आंतरिक रूप से कार्य के प्रति प्रतिबद्धता एवं निष्पादन दक्षता के प्रति प्रेरित करने को समाहित करता है। प्रबंधन या नेतृत्व संगठन में आंतरिक स्तर पर कार्य मूल्यांकन करता है। तथा कर्मचारियों के समक्ष योजना एवं उनके समय आधारित निष्पादन की समीक्षा प्रस्तुत कर कर्मचारियों के समय प्रबंधन को प्रेरित करता है। समय प्रबंधन के माध्यम से प्रबंधन नियंत्रण स्थापित कर उत्पादन मूल्य सीमित करने तथा उत्पादकता में वृद्धि करने का प्रयास करता है। समय प्रबंधन स्वतः स्फूर्त प्रक्रिया के रूप में लक्ष्य एवं कार्यों को अपेक्षाकृत सरलीकृत करने में भी सहायक है।

समय प्रबंधन के लक्ष्यों की प्राप्ति सामान्य रूप से जटिलता से सरलता की ओर उन्मुखी करण की प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में प्राथमिकताओं के निर्धारण के साथ ही यह भी समकक्ष रूप से आवश्यक होता है कि अनुत्पादक तथा संगठन एवं लक्ष्यों की दृष्टि से मूल्यहीन कार्यों एवं लक्ष्यों को चिह्नित कर उनका पृथक्करण किया जाए। यह प्रक्रिया वस्तुनिष्ठ चयन तथा संगठन के लिए प्राथमिकताओं की वृहद् जानकारी के आधार पर सुनिश्चित की जा सकती है। परम्परागत मान्यताओं एवं संगठन की दिनचर्या में समाहित ऐसे कार्यकलाप सामान्यतः औसत रूप में बीस से पच्चीस प्रतिशत तक होते हैं जिन्हे पृथक कर लक्ष्यों के लिए बीस से पच्चीस प्रतिशत अतिरिक्त समय अर्जित किया जा सकता है। व्यक्तिगत एवं संगठन के स्तर पर प्रति 2 घंटे में किए जाने वाले कार्यों की सूची यथा 6 से 8, 8 से 10, 10 से 12 वजे तक आदि तैयार की जाती है। समय अंतराल के समक्ष किए गए कार्यकलापों एवं किस प्रकार समय व्यतीत किया, को लेख किया जाता है तथा उसके समक्ष समय अंतराल में निष्पादन का मूल्य अंकित किया जाता है। इस प्रकार व्यक्तिगत एवं सामूहिक लक्ष्यों के निष्पादन मूल्य के आधार पर अनुत्पादक या मूल्यहीन क्रियाकलापों लक्ष्यों का निर्धारण हो जाता है। मूल्यांकन में शून्य से बीस तक के मूल्यांकन को महत्वहीन या अल्प महत्वपूर्ण श्रेणी में मानकर पृथक्करण किया जा सकता है।

इस प्रकार समय प्रबंधन के क्रमबद्ध सिद्धांतों के आधार पर समय प्रवंधन प्रक्रिया को साकार किया जा सकता है।

समय प्रबंधन तकनीक

समय प्रबंधन के कौशल के संबंध में भिन्न भिन्न मत प्रस्तुत किए जाते है। समय प्रबंधन व्यक्तिगत विशेषताओं कार्य प्रकृति, परिवेश एवं भूमिका के आधार

पर निर्धारित होता है। इस प्रकार समय प्रबंधन के कौशल परिस्थिति अनुरूप भिन्न हो सकते हैं। इस प्रकार के कौशल उन्नयन के लिए सामान्य तकनीको की व्याख्या की जा सकती है। समय प्रबंधन की तकनीकों से आशय उन प्रवृत्तियों एवं प्रक्रियाओं से है जिनके माध्यम से एवं जिनका प्रभावी उपयोग कर व्यक्ति अपने अपने समय प्रबंधन कौशल में सुधार या वृद्धि कर सकता है। व्यक्ति में स्वभाविक रूप से इस प्रकार की प्रवृत्तियां निहित होती हैं तथा अत्यधिक रूप में वह इनका प्रयोग भी करता है। लेकिन सभी तकनीको की जानकारी एवं उनके प्रभावी उपयोग के माध्यम से समय प्रबंधन की सार्थकता स्थापित करना मुख्य ध्येय है। समय प्रबंधन की तकनीको के सार्वभौम प्रभाव के आधार पर वर्णित किया जाता है।

1. लक्ष्य एवं उद्देश्यों के प्रति स्पष्टता

समय प्रबंधन की प्राथमिक सीढ़ी लक्ष्य एवं उद्देश्यों की स्पष्टता को कहा जा सकता है। व्यवसायिक या व्यक्तिगत जीवन में व्यक्ति को अपने दीर्घकालिक एवं लघु लक्ष्यों की जानकारी होना वह किस प्रकार क्या कार्य कर रहा है तथा उसका परिणाम क्या है के संबंध में स्पष्ट जानकारी होना अत्यधिक आवश्यक है। उद्देश्य के संबंध में स्पष्ट जानकारी के अभाव में कार्य के प्रति पूर्ण संकेन्द्रण तथा समय का अपेक्षित उपयोग नहीं हो पाता है। इस प्रकार की अस्पष्टता की स्थिति में कार्य के प्रति आत्मविश्वास का अभाव, अपूर्ण मनः स्थिति से कार्य निष्पादन, एक ही कार्य को बार बार दोहराए जाने की स्थिति निर्मित होती है जो कि समय के सदुपयोग को नकारात्मक रूप में प्रभावित करती है। अतः लक्ष्य एवं उद्देश्यों की स्पष्ट जानकारी समय प्रबंधन के प्राथमिक स्तर पर अपेक्षित है।

2. समय की योजना सूची

बिना केलेन्डर या योजना सूची के कार्य करके व्यक्ति कार्य को दिशा विहीन स्थिति में संचालित करता है। यह त्रुटिपूर्ण परिस्थिति है क्योंकि यहां क्या कब पूर्ण किया जाना है तथा कब तक पूर्ण किया जाना है। एवं प्राथमिकता क्या है, प्राथमिकताओं का प्रवाह क्या है कि कोई जानकारी तथा सतर्कता का पूर्ण अभाव है। कार्यों की समय सापेक्ष सूची का निर्माण तथा मासिक साप्ताहिक एवं दैनिक अनुसूची तैयार करना। समय प्रबंधन की दृष्टि से आवश्यक है। इस प्रकार टाइम टेबल तैयार कर कार्य निष्पादन तथा समयबद्ध मूल्यांकन की प्रक्रिया के माध्यम से व्यक्ति न केवल समय के प्रति संवेदनशील प्रतिपादन प्रस्तुत कर पाता

है अपितु समय में कार्य पूर्णता के साथ अतिरिक्त समय की उपलब्धता भी निर्धारित होती है।

3. आवश्यकता एवं संभाव्यतानुसार कार्य वितरण

व्यक्ति स्वयं कितना काम कर सकता है इसकी सीमा निर्धारित होती है तथा उपयुक्त समय पर आवश्यकता एवं संभाव्यता अनुसार अपने प्रतिनिधि को कार्य वितरण किया जाना अत्यधिक आवश्यक होता है। वह कार्य जिनकी महत्ता एवं तात्कालिकता की दृष्टि से उपयुक्त परिस्थिति प्रदर्शित हो तथा प्रतिनिधि के द्वारा सफल निष्पादन का विश्वास हो वहां कार्य सौपां जाना श्रेयस्कर विकल्प होता है। समय पर प्रतिनिधित्व निर्धारित नहीं करने एवं कार्य वितरित नहीं करने की स्थिति लक्ष्य अपूर्णता एवं समय अल्पता के रूप में प्रत्यक्ष होती है। कई बार व्यक्ति अपने स्वयं के महत्वपूर्ण एवं त्वरित रूप से अपेक्षित कार्य नहीं कर पाता तथा मूल्यवान समय में उन कार्यों को निष्पादित करता है जो कि सौपें जाने योग्य थे। इस प्रकार समय पश्चात वह कार्य अपूर्ण रह जाते हैं जो कि वास्तव में व्यक्ति विशेष के द्वारा ही किए जाने आवश्यक थे।

4. समय के उपयोग की निगरानी

समय प्रबंधन के लिए स्वयं के समय के उपयोग एवं खर्च के प्रति जागरूक होना अत्यधिक आवश्यक है। दिन प्रतिदिन प्रत्येक घंटा, मिनट का क्या उपयोग किया गया तथा यह सार्थक रहा या अनुपयोगी के संबंध में सतत मूल्यांकन की प्रक्रिया इस दिशा में कारगर हो सकती है। इस दिशा में मानिटरिंग प्रोग्राम जैसे आफिस मैटरिक्स या रेस्क्यू टाइम का उपयोग किया जा सकता है। यह प्रोग्राम कम्प्यूटर के माध्यम से समय की निगरानी निर्धारित करते हैं तथा यह प्रदर्शित करते हैं कि कितना समय व्यक्ति ने ई-मेल, इंटरनेट, या सोशल, मीडिया पर खर्च किया। इसके अलावा दैनिक समय निगरानी डायरी या सूची का संधारण भी किया जा सकता है। जो कि व्यक्ति को समय के उपयोग की वास्तविक स्थिति से अवगत कराने के साथ ही सचेत करती है। समय की निगरानी के माध्यम से व्यक्ति स्वतः स्पूर्त रूप में सदुपयोग के प्रति अग्रसर होता है।

5. एकाधिक कार्यों का निषेध

व्यक्ति एक साथ एक से अधिक कार्यों को करने को अपनी विशेष योग्यता के रूप में देखता है जबकि मानव मस्तिष्क न तो अनेक बल्कि दो लक्ष्यों या कार्यों

को भी एक साथ करने में सहज नहीं होता है। मानव मस्तिष्क एक साथ दो विषयों पर केन्द्रित नहीं हो सकता, यही कारण है कि जब व्यक्ति एकाधिक कार्य लक्ष्यों पर एक ही समय में कार्य करता है तो वह कार्य के प्रति पूर्ण रूप से केन्द्रित नहीं हो पाता तथा दोनों विषयों में मनः स्थिति के केन्द्रण में लगा समय दोनों कार्यों को पृथक पृथक करने में लगने वाले समय की अपेक्षा अधिक हो जाता है। इस प्रकार एक समय में एक कार्य को प्रारंभ करना उसे पूर्ण कर दूसरा कार्य प्रारंभ करना उपयुक्त होता है। एक साथ एक से अधिक कार्य करने का प्रयास समय के दुरूपयोग या क्षति के रूप में प्रस्तुत होता है।

6. मनः स्वच्छता के नियमित प्रयास

कार्यों के ताना वाना तथा पूर्ण अपूर्ण लक्ष्यों से उत्पन्न आंतरिक मनः कारक तथा विचारों के आपसी अधिरोपण के कारण व्यक्ति के मानसिक स्तर पर जटिलता की स्थिति उत्पन्न होती है यह स्थिति प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप में व्यक्ति की कार्य निष्पादन तीव्रता को नकारात्मक रूप में प्रभावित करती है। ऐसे में अपेक्षित है कि व्यक्ति प्रतिदिन इस दिशा में प्रयास कर सार्थक परिणाम प्राप्ति हेतु अग्रसर हो, क्या कार्य शेष है उन्हें सूचीबद्ध करना तथा विभिन्न कार्यों को श्रेणीयों में विभक्त न करते हुए कार्य एवं व्यक्तिगत जीवन में विभेद न करना इस दिशा में प्रभावी हो सकता है। व्यक्ति के मस्तिष्क की रचना में व्यवसायिक व्यक्तिगत जीवन के पृथक पृथक स्थान नहीं होतें हैं, अतः इस प्रकार की सूची निर्मित कर वांछित प्राथमिकता के कार्य पूर्ण करना तथा शेष रहे कार्यों को भावी सूची में स्थानांतरित कर उत्पादक मनः स्थिति का निर्माण करना व्यक्ति के निष्पादन एवं समय प्रबंधन की दृष्टि से श्रेष्ठ परिणाम प्रस्तुत करने में प्रभावी भूमिका निभाते हैं।

7. व्यायाम

नियमित व्यायाम के माध्यम से व्यक्ति सकारात्मक उर्जा का संचय कर तनाव मुक्ति की स्थिति को प्राप्त करता है। तथा कार्य के प्रति रुचि एवं लक्ष्य केन्द्रण की भावना का प्रसार होता है। व्यायाम व्यक्ति के शारीरिक विकारों को पृथक करने तथा आत्मविश्वास बढाने में सहायक होता है। अतः इस प्रकार व्यक्ति के निश्चित समय में कार्य निष्पादन की दर को बढाता है। शारीरिक व्यायाम, योग अभ्यास, प्राणायाम, आदि को शारीरिक स्थिति के अनुरूप नियमित रूप से किए जाने पर अपेक्षित परिणाम प्राप्त किए जा सकते है।

8. अच्छा एवं स्वास्थ्यवर्धक खानपान

व्यक्ति का पोषण उसके भोजन एवं उससे संबंधित प्रवत्तियों पर निर्भर करता है। व्यक्ति को दिन भर उर्जावान एवं कार्य के प्रति सचेत रखने के लिए उपयुक्त भोजन ग्रहण किया जाना आवश्यक है। कम मात्रा में कई बार भोजन ग्रहण करना एक बार में अधिक मात्रा में भोजन ग्रहण करने की अपेक्षा अधिक उपयुक्त होता है। इस प्रकार थोडे समय अंतराल पर थोड़ा थोड़ा खाद्य पदार्थ ग्रहण कर व्यक्ति का मस्तिष्क सचेत अवस्था में बना रहता है। लंबे समय तक कुछ नहीं खाने की अवधि व्यक्ति में थकान एवं मानसिक दुर्बलता का कारण बनती है। इसी प्रकार शुद्ध पानी भी समय अंतराल पर पीने से व्यक्ति शरीर में जल की कमी से बचता है। ताकि लगातार पानी पीने से मस्तिष्क की सक्रियता बनी रहती है। इस दिशा में चाय, काफी, के ब्रेक भी प्रभावी भूमिका निभाते हैं।

9. आराम एवं श्वास

लगातार कार्य करने से मानसिक सक्रियता का स्तर लगातार बना रहना संभव नहीं हो पाता है। निश्चित समय अंतराल के बाद अल्प अवधि के लिए आराम लेना या क्षणिक मनोरंजक गतिविधियों का समावेश करना, व्यक्ति को सुस्त होने से बचाता है, यथा संभव लंबी श्वांस लेना तथा धीरे धीरे वांस छोडकर पुनः श्वांस लेना आक्सीजन के स्तर को बढाता है आक्सीजन की कमी व्यक्ति को धीमा तथा सुस्त बनाती है। तथा लगातार कार्य करने के दौरान श्वास पर ध्यान केन्द्रित नहीं होने के कारण आक्सीजन की कमी की स्थिति निर्मित होती है अतः लंबी श्वांस लेकर आक्सीजन की कमी पूर्ण कर प्रभावी कार्यशीलता बनाए रखी जा सकती है। जो कि समय के प्रभावी उपयोग को सुनिश्चित करती है।

उक्तानुसार समय प्रबंधन की 09 तकनीको को समय प्रबंधन कौशल वृद्धि में सहायक के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जिनके माध्यम से समय प्रबंधन को अपनी नियमित कार्य कलापों में समाहित किया जा सकता है। समय प्रबंधन की अवधारणा समय के दुरूपयोग या प्रभावी उपयोग नहीं होने की स्थिति के प्रतिपक्षी रूप में स्थापित होती है। व्यक्ति अपने समय से अपेक्षित निष्पादन नहीं दे पाता तथा समय अल्पता की स्थिति को प्राप्त करता है। इसी स्थिति में समय प्रबंधन की आवश्यकता स्थान प्राप्त करती है। दिशाविहीन दैनन्दनी तथा अनिर्धारित कार्यक्रम व्यक्ति को अल्प निष्पादन की स्थिति में ले जाते है। जबकि समय प्रबंधन के माध्यम से इन स्थितियों का समाहार किया जा सकता है। चूंकि समय प्रबंधन की अवधारणा व्यक्ति की निष्पादन या कार्य उत्पादकता से प्रत्यक्षतः

संबद्ध है। अतः व्यक्ति के निष्पादन अवरोधो की प्रवत्तियों की जानकारी एवं उनके कारणों का निदान इस दिशा में अपेक्षित परिणाम प्रदान कर सकता है। व्यक्ति की कार्य उत्पादकता या निष्पादन के अवरोधों को व्यक्तित्व में निहित प्रवृत्तियों के माध्यम से परिभाषित किया जाता है।

निष्पादन अवरोध

A. विलंब की प्रवृत्ति

B. अनिर्णयन

C. कार्य आधिक्य

A. विलंब की प्रवत्ति :- कार्यों में विलंब की प्रवृत्ति का मुख्य कारण असफलता का भय, तंत्र के प्रति परिवर्तनवादी भावना, एवं विशेष उपलब्धियों की आकांक्षा मुख्य रूप से होते हैं विलंब की प्रवृत्ति, प्रारंम्भिक तौर पर लघु प्रकृति के कार्य को टालने की प्रवत्ति के रूप में स्थापित होकर दीर्घ रूप में व्यक्ति की मूल भूत प्रवृत्ति बन जाती है। तथा समय एवं कार्य निष्पादन दोनों ही दृष्टि से अत्यधिक हानिप्रद होती है। यह प्रवत्ति कुछ विशेष कार्यों या विशेष प्रकृति के कार्यों के प्रति स्थापित होकर भी प्रभावित करती है।

प्रतिदिन की कार्य प्राथमिकता सूची का उपयोग कर, सर्वाधिक अरुचिकर कार्य, पहले पूर्ण कर तथा पूर्णता पर उत्साह एवं जश्न की स्थिति निर्मित कर इस प्रवत्ति का निराकरण किया जा सकता है। निराशाजनक एवं खतरनाक कार्य एवं लक्ष्यों को खेल, प्रतिस्पर्धा, मनोरंजनपूर्ण तरीके में परिवर्तित करना। अनुशासन की परिधि निर्मित कर अनुशासन तंत्र की स्थापना करना भी इस दृष्टि से प्रभावी हो सकता है।

B. अनिर्णयन :- अनिर्णयन की प्रवत्ति विभिन्न स्तरों पर देखी जाती है। कई बार अत्यधिक सफल प्रबंधक या नेतृत्वकर्ता भी इस प्रवत्ति से प्रभावित देखे जाते हैं। इस प्रवृत्ति का मुख्य कारण आत्मविश्वास की कमी होती है तथा कई बार व्यक्ति असफलता के भय के कारण भी निर्णय लेने की स्थिति में नहीं पहुंच पाता। उत्कृष्टतम विकल्प के निर्धारण के प्रयास में भी व्यक्ति अनिर्णयन का शिकार होता है। साथ ही असफलताओं के अनुभव एवं उनके पूर्वाग्रह भी इस स्थिति के उत्तरदाई होते हैं। यह स्थिति संगठन के सदस्यों एवं नेतृत्व के बीच विश्वासहीनता के रूप में घातक परिणाम प्रस्तुत करती है। साथ ही निष्पादन तीव्रता एवं लक्ष्य केन्द्रण को भी नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है। यह प्रवृत्ति नेतृत्वकर्ता के रूप में व्यक्ति के ऋणात्मक प्रभावी कारकों में मुख्य स्थान

प्राप्त करती है।

अनिर्णयन की स्थिति से बचाव का प्रमुख साधन निर्णय के संबंध में सकारात्मक सोच के रूप में स्थापित होता है। सफलता तात्कालिक एवं त्वरित प्रयासों का प्रभाव है, तथा ये प्रयास तभी संभव है जबकि समय पर निर्णयन सुनिश्चित किया जाए। प्रत्येक कार्य एवं निर्णय में उत्कृष्ट गुणवत्ता की अपेक्षा कई बार अवरोध का कारण बनती है। अतः इस संबंध में प्रारंम्भिक दस्तावेज या कार्य योजना पत्र तैयार कर उसमें सुधार हेतु हर संभव प्रयास एवं सुझाव प्राप्त कर उसे अंतिम रूप प्रदान किया जाना इस प्रकार के अवरोध के निराकरण में सहायक हो सकता है। अधिक निर्णायक बनने का निर्णय करना तथा विभिन्न लिए गए निर्णयों पर यथा संभव कायम रहना, इस दिशा में सहायक हो सकते है।

C. कार्य आधिक्य :- विभिन्न संगठनों में महत्वपूर्ण प्रबंधक या नेतृत्व कार्य आधिक्य से ग्रसित होता है जो कि कार्य विलंब एवं निष्पादन अल्पता के रूप में प्रभाव प्रदर्शित करता है। कार्य आधिक्य का मुख्य कारण स्वयं पर अतिविश्वास एवं अन्य पर अविश्वास होता है जबकि एक व्यक्ति अपनी सीमा से अधिक कार्य स्वयं नहीं कर सकता।

कार्य आधिक्य की स्थिति में स्वयं कार्य करने से बेहतर विकल्प कार्य के उपयुक्त प्रतिनिधि तैनात कर कार्य उपयुक्त समय पर उपयुक्त कार्य सौंपा जाना होता है। नेतृत्वकर्ता का मूल्यांकन मुख्य रूप से कार्य करने की अपेक्षा कार्य करवाने की क्षमता के रूप में किया जाता है। व्यक्ति अपनी उर्जा को कार्यों लक्ष्यों एवं महत्वपूर्ण व्यक्तियों के प्रति केन्द्रित करे तथा यदि कोई कार्य या लक्ष्य महत्ता स्थापित नहीं करता है तो उसे नहीं किया जाना। अपने प्रभावी प्रयासों को मूल्य आधारित अभिक्रियाओं में संलग्न करना। विभिन्न गतिविधियों के प्रति परिवर्तनशील रूख प्रदर्शित करना, निर्धारित कार्य समय अवधि में पूर्ण नहीं होने पर नए रूप में योजनाबद्ध प्रयास प्रारंभ करना। समय की प्रकृति के अनुसार कार्य कार्य करते हुए स्व प्रबंधन की परिवर्तनशील प्रक्रिया को समाहित करना इस दिशा में सहायक हो सकते हैं। उक्तानुसार निष्पादन अवरोधों की वस्तुनिष्ठ पहचान एवं उनके निराकरण के सार्थक प्रयास व्यक्ति के निष्पादन एवं समय प्रबंधन में प्रभावी भूमिका निभाते हैं।

पुलिस एवं समय प्रबंधन :-

पुलिस नेतृत्व की दृष्टि से समय प्रबंधन की अवधारण अत्याधिक महत्वपूर्ण हो जाती है,क्योकि पुलिस कार्य आधिक्य एवं विभिन्न प्रकृति के कार्यों

की बारम्बारता से लगातर संघर्ष करती है। पुलिस के मानव एवं भौतिक संसाधन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं होते है, यही कारण है कि उपलब्ध मानव संसाधन अधिक समय ड्यूटी के लिए बाध्य होता है। इस दृष्टि से पुलिस संगठन में समय प्रबंधन की भूमिका अत्याधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। पुलिस के विभिन्न स्तर के नेतृत्व का यह महत्वपूर्ण दायित्व है कि वे स्वंय तथा अपने कर्मचारियों के समय प्रबंधन के प्रति सचेत रहें तथा अनुत्पादक समय संबधी गतिविधियों पर प्रभावी नियंत्रण सुनिश्चित करें। कई बार पुलिस नेतृत्व के स्तर पर ही इस प्रकार की गतिविधियां निर्धारित की जाती है, जिससें की अनावश्यक समय एवं संसाधनों का दुरुपयोग होता है। पुलिस अधिकारी अपने बेहतर प्रदर्शन के लिए विभाग के कार्य समय एवं संसाधनों का अनुत्पादक उपयोग करते है। यह प्रक्रिया न केवल समय प्रबंधन बल्कि तनाव प्रबंधन की दृष्टि से भी अत्याधिक हानिकारक होती है। सफल पुलिस नेतृत्वकर्ता का मानक सफल कार्यनिष्पादन के साथ ही यह भी है कि वह कितने अल्प समय एवं संसाधन के उपयोग एवं सदुपयोग से ही कार्य परिणाम प्रदान करें। पुलिस संगठन विभिन्न स्तरों पर समय प्रबंधन के अपेक्षाओं एवं सम्भावनाओं को समाहित करता है।

अध्याय 8

द्वंद्वात्मक परिस्थिति एवं निवारण

मानव विचारशील प्राणी होने के नाते समाज एवं समूह के रूप में जीवन निर्वाह करता है। जहां मानव समूह है वहां विचार हैं और जहां विचार हैं वहां असहमति या द्वंद्व या संघर्ष स्वभाविक रूप से विद्यमान हो जाते हैं। इस प्रकार के द्वंद्व, संघर्ष एवं असहमति की स्थितियां जहां विचारशीलता एवं विचार वैविध्य को व्यक्त करती हैं। वहीं कहीं न कहीं कार्य निष्पादन में बाधक परिस्थितियों का स्थापन्न भी करती हैं। किसी भी संगठन में संगठन के आंतरिक स्तर पर अंतर वैयक्तिक रूप में, संगठन की विभिन्न इकाइयों एवं अन्य संगठनों की सामूहिक स्तर पर तथा प्रतिस्पर्धी रूप में भी इस प्रकार की स्थितियां विद्यमान पाई जाती हैं।

एक अध्ययन के आधार पर निष्कर्ष प्रतिपादित किया गया कि संगठन में सुपरवाईजर स्तर पर 25 प्रतिशत से अधिक समय तथा प्रबंधन के स्तर पर 18 प्रतिशत से अधिक समय इस प्रकार के कर्मचारी संबंधी द्वंद्व एवं संघर्ष के निराकरण में व्यय होता है। यह स्थिति वर्ष 1980 से पूर्व की हैं जबकि वर्तमान परिस्थितियों में व्याप्त जटिलताएं एवं वैयक्तिक स्तर पर मतभेदों के आधिक्य तथा भावनात्मक अंतर संबंधों के हास की स्थित में यह प्रतिशत और अधिक बढ़ जाता है। संगठन में नेतृत्वकर्ता के रूप में द्वंद्व की नकारात्मक परिस्थितियों का निराकरण एवं प्रबंधन अत्यधिक आवश्यक होता है।

द्वंद्व या संघर्ष सामान्य तौर पर स्थापित असहमति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो कि व्यक्तिगत या समूह के स्तर पर विश्वास, मूल्य आवश्यकता अथवा अभिव्यक्ति के अंतर के कारण उत्पन्न होता है। साधारण शब्दों में जब कोई एक पक्ष यह निर्धारित करता है कि दूसरा पक्ष उसे नकारात्मक रूप से प्रभावित कर रहा है, या कर सकता है। जिसमें की प्रथम पक्ष के हित

मूल्य अथवा भावनाएं आहत होंगी तो इस स्थिति को द्वंद्व के रूप में व्यक्त किया जाता है। किसी भी स्तर पर द्वंद्व या संघर्ष में असहमति एवं विरोधाभास के तत्व विद्यमान होते हैं। सामूहिक स्तर पर अंतहीन बहस एवं अंतवैयक्तिक मतभेद की स्थितियां लगातार विद्यमान रहती हैं तथा विभिन्न स्तरों पर इन विरोधाभासों को स्वीकृति प्रदाय नहीं किए जाने के तथ्य भी बार बार प्रकाश में आते हैं। लेकिन वैचारिक स्तर पर इनका परिहार सामान्यतः नहीं देखा जाता इस प्रकार के अंतर्विरोध एवं विरोधाभास व्यक्ति की सामान्य प्रवृत्ति है लेकिन व्यवसायिक स्तर पर एवं संगठन कार्य निष्पादन की दृष्टि से यह अनुत्पादक समय व्यर्थ करने के रूप में निष्पादन पर नकारात्मक प्रभाव अंकित करते हैं।

विभिन्न स्तरों पर व्याप्त द्वंद्व या संघर्ष की परिस्थितियां विविध रूपों में स्थापित होती हैं। परिस्थिति अनुरूप इनके स्वरूप स्तर एवं प्रकृति में वैविध्य पाया जाता है। सामान्य रूप से इस प्रकार की परिस्थितियों के कारकों पर विचार किए जाने पर मूल भूत कारकों का विश्लेषण प्रस्तुत किया जा सकता है। द्वंद्व के कारकों से आशय उन मूल भूत कारणों से है जो प्रत्येक द्वंद्व या संघर्ष की स्थिति में केन्द्रीय रूप में विद्यमान रहते हैं।

- आवश्यकता
- निर्धारण
- शक्ति
- मूल्य
- भावनाएं

• आवश्यकता :- संघर्ष या द्वंद्व की परिस्थिति व्यक्तिगत या समूहगत आवश्यकताओं के विरोधाभास के स्थिति में उत्पन्न होती है। समान आवश्यकताओं या अपेक्षित आवश्यकता पूर्ति में गतिरोध द्वंद्वात्मक परिस्थिति के प्रमुख कारक के रूप में स्थापित होता है। संगठन के कर्मचारी अपने वेतन वृद्धि को वांछनीय मानते हैं जबकि प्रबंधन इसे स्वीकृति प्रदान नहीं करता यह स्थिति आवश्यकता संबंधी द्वंद्व के रूप में देखी जा सकती है। आवश्यकता को अपेक्षा के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है। व्यक्तिगत अपेक्षाएं आवश्यकता के रूप में परिणीत होने पर पूर्ति की भावना एवं महत्ता ओर अधिक गहन हो जाती है। ऐसे में निराशापूर्ण प्रतिक्रिया द्वंद्व का कारण बनती है।

• निर्धारण :- व्यक्ति की मान्यताएं विचार तथा विभिन्न तथ्यों के प्रति निर्धारण स्वभाविक रूप में पृथक पृथक होते हैं। इस प्रकार के निर्धारण के पीछे व्यक्ति की तर्क शक्ति एवं विचार होते हैं। व्यक्ति इस प्रकार तर्क एवं विचार के

आधार पर इन निर्धारणों का पक्ष पोषण करता है तथा उनके विपरीत तथ्यों एवं तर्कों को स्वीकृति प्रदान नहीं करता न ही करना चाहता है। ऐसी स्थिति में व्यक्तिगत निर्धारण के विपरीत तथ्य प्रकाश में आने पर वह न केवल अपना पक्ष प्रस्तुत करता है बल्कि कई बार गंभीर प्रतिक्रिया भी व्यक्त करता है। दोनों पक्षों के अपने तर्क एवं विश्वास तथा उनके प्रति पक्ष पोषण की भावना संघर्ष स्थापित करती है। विभिन्न वाद-विवाद तर्क-वितर्क की स्थितियां व्यक्ति की धारणाओं विश्वासों में विभेद एवं अपने पक्ष प्रति तर्क प्रस्तुत करने एवं दूसरे पक्ष के तर्क स्वीकार नहीं करने के कारण निर्मित होती हैं।

• शक्ति :- संगठन में विभिन्न स्तरों पर शक्ति संघर्ष व्याप्त देखा जाता है। अपने आप को शक्तिशाली प्रदर्शित करने की व्यक्ति की मूल भावना लगातार विधमान रहती है। यह भावना अंतर्व्यैक्तिक प्रतिस्पर्धा एवं सामूहिक वर्चस्व के संघर्ष के रूप में भी देखी जाती है। नेतृत्वकर्ता के रूप में व्यक्ति अपनी सामर्थ्य एवं अपनी इकाई के निष्पादन का लोहा मनवाने के मुहावरे को चरितार्थ करने सतत प्रयास करता है। यह स्थिति द्वंद्व एवं संघर्ष का कारण बनती है।

• मूल्यः- वैयक्तिक जीवन मूल्यों में विभिन्नता स्वाभाविक होती है, व्यक्ति के जीवन मूल्यों का निर्धारण उसकी शिक्षा, संस्कार, अनुभव, ज्ञान आदि के आधार पर होते हैं। तथा मूल्यों में भिन्नता व्यक्ति की मूल प्रवृत्ति में भिन्नता के रूप में स्थापित होती हैं। एक ही संगठन एक ही शिक्षा, तथा परिवेश के व्यक्ति वैयक्तिक मूल्यों के आधार पर व्यक्तिगत विशेषताओं में पृथक हो जाते हैं। नेतृत्व के प्रति सम्मान, संगठन के प्रति निष्ठा, सत्य, ईमानदारी, प्रतिबद्धता, निष्ठा, आदि भावनाएं मूल्य संचालित होती हैं तथा मूल्यों में वैविध्य की मात्रा एवं स्तर के आधार पर द्वंद्व या संघर्ष की गंभीरता एवं स्तर को परिभषित किया जा सकता है।

• भावनाएं :- व्यक्तिगत प्रवृत्तियों में भावनात्मक पक्ष अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है। व्यक्ति अपनी भावनाओं के प्रति स्वभाविक रूप में सचेत होता है तथा प्रत्येक कार्य उद्देश्य, तथ्य एवं व्यक्ति के प्रति उसका भावनात्मक स्तर परिवर्तनशील रूप में स्थापित रहता है। उदाहरणार्थ एक नेतृत्वकर्ता जहां अपने उद्देश्य लक्ष्य एवं कार्यों के प्रति समर्पित एवं अग्रसर होकर केवल परिणाम की अपेक्षा करता है। वहीं यदि उसका सहकर्मी उद्देश्य पूति के साथ भावनात्मक सह संबंधों को भी महत्व देता है तब विरोधाभास कर्मचारियों के कार्य समय, अवकाश, सुविधाओं के संबंध में स्थापित हो जाता है यहां दोनों भावनात्मक पक्ष का अंतर द्वंद्व के मूल में विद्यमान होकर प्रभाव उत्पन्न करता है।

विभिन्न कारकों से उदभूत द्वंद्व की परिस्थितियां सार्वभौम विद्यमान रहती हैं प्रत्येक द्वंद्व या संघर्ष की परिस्थिति में सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों संभावनाएं विद्यमान रहती हैं। द्वंद्व प्रभाव, ज्ञान, सीखने, तथा अनुभव के आदान प्रदान एवं विकास का कारण भी हो सकता है। और नकारात्मक रूप में यह भय विरोधाभास गतिरोध, प्रतिरोध एवं शर्मनाक स्थितियों का कारक भी हो सकता है। द्वंद की स्थितियां हमेशा नकारात्मक नहीं होती बल्कि यदि द्वंद्व को सार्थक रूप में प्रतिबंधित किया जाए तो सकारात्मक परिणाम भी प्राप्त किए जा सकते हैं। इस प्रकार के सार्थक द्वंद्व प्रबंधन एवं प्रयासों के माध्यम से द्वंद्वात्मक परिस्थितियों को लाभप्रद रूप में परिणत किया जा सकता है। इनके माध्यम से—

- विकास एवं नवाचार
- विचार की नई दिशाएं
- प्रबंधन एवं प्रशासन के स्तर पर अतिरिक्त विकल्प

आदि धनात्मक प्रभाव अर्जित किए जा सकते हैं। द्वंद्व एवं संघर्ष की स्थिति को मूल कारकों एवं स्वरूप में समझना आवश्यक होता है। इस प्रकार की परिस्थिति के मूल में निहित कारक तथा उस कारक के स्वरूप एवं दोनों पक्षों तथा परिवेश पर पड़ने वाले प्रभाव एवं इसके उपरांत विरोधाभास की सीमाएं निर्धारित की जाकर सहमति के बिन्दु निर्धारित किए जा सकते हैं। इस प्रकार की प्रक्रिया के परिणाम सार्थक द्वंद्व प्रबंधन के रूप में प्रकाशित होते हैं। द्वंद्व एवं असहमति की स्थितियों की जानकारी एवं समझ उनके कारकों के आधार पर निर्धारित होती हैं।

द्वंद्वात्मक परिस्थितियों के विभिन्न कारण

- वैयक्तिक विभेद
- सूचना का अभाव
- भूमिका संबंधी अस्पष्टता
- परिवेशगत तनाव
- संसाधनों की प्रतिस्पर्धा
- लक्ष्य निर्भरता
- कार्य क्षेत्र संबंधी अस्पष्टता
- स्तर संबंधी संघर्ष

विभिन्न स्तरों पर द्वंद्व के कारण पृथक पृथक होते हैं, तथा कारण के अनुरूप ही द्वंद्व का स्वरूप स्थापित होता है। द्वंद्व के वैयक्तिक स्वरूप में

वैयक्तिक विभेद मूल रूप से अधिकतम द्वंद्वात्मक परिस्थितियों का कारण होता है। वयैक्तिक विभेद संपर्क में आने साथ रहने एवं प्रतिस्पर्धी रूप में काम करने वाले व्यक्तियों के मध्य वैचारिक मतभेद अथवा प्रतिस्पर्धा की भावना के कारण, प्रारंभ होते हैं तथा तात्कालिक निराकरण नहीं होने की स्थिति में व्यक्ति के अहम का विषय बन जाते हैं। इस प्रकार के कारण स्थापित द्वंद्व की परिणति स्वाभाविक विरोध, खैमेबाजी एवं अस्वीकार्यता के रूप में होती है। व्यक्ति दूसरे पक्ष की सत्य सार्थक एवं लाभप्रद बात को भी स्वीकार करना नहीं चाहता व्यक्तिक विभेद को प्रारंम्भिक स्तर पर विचार या तर्क के स्वरूप तक ही सीमित रखा जाना श्रेयस्कर होता है।

सूचना संबधी अभाव अथवा भ्रामकता भी द्वंद्वात्मक परिस्थिति का कारण बनती है। पूर्ण रूप से जानकारी के अभाव में धारणा का निर्धारण इस प्रकार के कारण स्वरूप में द्वंद्वात्मक परिस्थिति के रूप में स्थापित होता है। संगठन में विभिन्न स्तरों पर प्रभावी तंत्र का निर्माण तथा सूचना के संबंध में चैक करने एवं आवश्यकतानुसार पुनः जानकारी प्राप्त करने की व्यवस्था इस दिशा में श्रेयस्कर हो सकती है।

संगठन में व्यक्तिगत भूमिकाओं के विरोधाभास एवं अस्पष्टता की स्थिति द्वंद्व के रूप में परिणत होती है। भूमिका संबंधी अतिक्रमण एवं अधिकारों में हस्तक्षेप इस प्रकार के कारण के मूल में विद्यमान होता है व्यक्ति की सामान्य प्रवृत्ति अपनी योग्यताओं के प्रदर्शन की रहती है। तथा इस भावना के कारण वह अपनी भूमिका के विस्तार का प्रयास सुनियोजित या अनायास रूप में करता है। इस प्रकार के प्रयास अतिक्रमित होने वाले व्यक्ति की भूमिका संबंधी अस्तित्व पर प्रश्न चिह्न लगाते है। तथा व्यक्ति उद्धेलित होकर प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। जिन संगठनों में पर्यवेक्षण के स्तरों की अधिकता एवं व्यक्तिगत कार्य निष्पादन का स्पष्ट निर्धारण नहीं होता है वहां इस प्रकार के संघर्ष अधिकता में देखें जाते हैं। प्रबंधन के स्तर पर प्रत्येक सदस्य की कार्य एवं भूमिका का स्पष्ट निर्धारण तथा अधिकारों के अतिक्रमण के संबंध में नीति निर्धारण इस दिशा में प्रभावी हो सकते हैं।

कार्य परिवेश में विद्यमान तनाव की स्थिति स्वाभाविक तौर पर द्वंद्वात्मक परिस्थिति के रूप में परिणीत होती है। व्यक्ति तनाव की स्थिति में व्यक्त प्रतिक्रियाओं में स्वभाविक एवं स्वनियंत्रित नहीं रह पाता है तथा विरोधाभास एवं व्यक्तिक विभेद की स्थिति उत्पन्न हो जाती है संगठन के कार्य परिवेश में यदि तनाव कारक विद्यमान हैं तो समानुपातिक रूप में द्वंद्व की विद्यमानता सुनिश्चित हो जाती है। लगातार असफलता तथा अपेक्षा से कम निष्पादन मुख्य

रूप से परिवेशगत तनाव के कारण होते हैं। इस प्रकार की असफलता अल्पनिष्पादन की परिस्थियों कारकों पर समय पूर्व विचार विमर्श तथा निराकरण के प्रयास एवं संगठन के प्रत्येक स्तर को इस प्रकार के विचार विमर्श में स्थान प्रदान करना प्रभावी निराकरण प्रस्तुत कर सकते हैं।

वर्तमान परिवेश में प्रतिस्पर्धा का स्तर अत्यधिक उच्च है, प्रतिस्पर्धी वातावरण में एक दूसरे से आगे निकलने की भावना तथा कुत्सित रूप में दूसरे को पीछे छोडने की भावना द्वंद्वात्मक परिस्थिति का वृहद कारक बनती है। विभिन्न अंतर्संगठन तथा विभिन्न संगठनों के मध्य संसाधनों की प्रतिस्पर्धा वर्तमान समय में द्वंद्वात्मक परिस्थितियों के लिए मुख्य उत्तरदाई स्थान प्राप्त करती है। प्रतिस्पर्धा स्वस्थ्य रूप में जहां विकास का कारण है वहीं आगे निकलने के लिए अनुचित साधनों का प्रयोग एवं दूसरे पक्ष को विभिन्न स्वरूपों में पीछे करने की प्रवृत्ति के रूप में घातक हो जाती है तथा जटिल प्रकृति के द्वंद्व की स्थापना करती है। अपने लक्ष्यों का निर्धारण एवं लक्ष्य केन्द्रण इस दिशा में प्रभावी हो सकता है। संगठन में अन्य का उदाहरण प्रस्तुत कर दूसरे को अक्षम बताने की प्रवत्ति को नियंत्रित करना भी इस दिशा में प्रभावी निदान प्रस्तुत कर सकता है।

समूह के रूप में कार्य के दौरान विभिन्न कार्यों एवं लक्ष्यों की अंतर्निर्भरता स्वभाविक होती है इस प्रकार की निर्भरता में व्यक्ति अपने कार्य को पूर्ण मनोयोग से प्रतिपादित करने के बावजूद अंतिम परिणाम तक तब तक नहीं पहुंच पाता जब तक की कार्य का दूसरा अंश दूसरे पक्ष द्वारा प्रतिपादित नहीं कर दिया जाता। ऐसी स्थिति में व्यक्ति स्वभाविक तौर पर त्रुटि कमी एवं विलंब का भार द्वितीय पक्ष पर रखना चाहता है तथा ऐसी किसी भी ऋणात्मक परिस्थिति का उत्तरदायित्व स्वयं स्वीकार नहीं करता। इस प्रकार के अंतर संबंध एवं निर्भरता द्वंद्व एवं विरोधाभास के रूप में परिणत होती है। सह संबंधी इकाइयों के मध्य सार्थक तारतम्य तथा संपर्क के उचित अवसर ऐसी स्थितियों के निराकरण में सहयोगी हो सकते हैं।

द्वंद्व के संगठनगत संरचनात्मक कारण के रूप में कार्यक्षेत्र संबंधी अस्पष्टता की स्थिति संघर्ष एवं विरोधाभास स्थापित करती है। एक ही कार्यक्षेत्र के संबंध में एकाधिक्य प्रबंधक या इकाई अपना दावा प्रस्तुत करती हैं तथा इसकी परिणति द्वंद्व के रूप में स्थापित होती है। इस प्रकार के विरोधाभास कार्यक्षेत्र के स्पष्ट निर्धारण एवं इनके संबंध में स्पष्ट निर्देश के द्वारा निराकृत किए जा सकते हैं।

व्यक्ति के अहम की भावना उसमें अपनी हैसियत के प्रदर्शन की प्रवत्ति

जागृत करती है। व्यक्ति अपनी शक्तियों एवं अपने संसाधनों के आधार पर समूह में अपने स्तर के अपेक्षा निर्धारित करता है। यह स्तर सामान्य शब्दों में हैसियत के रूप में परिभाषित होता है। समूह में प्रत्येक व्यक्ति की शक्तियां संसाधन एवं कौशल पृथक पृथक होते है लेकिन इनके प्रदर्शन के अतिरेक की प्रवत्ति एवं इस प्रकार के प्रदर्शन में प्रतिस्पर्धा का भाव संघर्ष का कारण बनता है। इस प्रकार के संघर्ष अंतर्व्यैक्तिक विरोध के रूप में परिणीत होकर द्वंद्व की स्थिति उत्पन्न करते हैं। व्यक्तिगत स्तर निर्धारण एवं प्रतिस्पर्धा अपेक्षाकृत व्यक्तिगत भावना से संबंधित होती हैं। अतः इस प्रकार के द्वंद्व का निराकरण व्यक्तिगत स्तर पर परिमार्जन के प्रयास एवं परामर्श,कोचिंग,मैंटरिंग के माध्यम से किया जा सकता है।

द्वंद्व की प्रकृति के आधार पर मुख्य रूप से तीन स्वरूपों में वर्गीकरण किया जाता है।

- मूल प्रकृति के द्वंद्व
- व्यक्तिगत द्वंद्व
- राजनैतिक द्वंद्व

जब व्यक्ति के विचार निर्णय अभिक्रिया के संबंध में विरोधाभास व्यक्ति के मुख्य व्यवसाय से सीधे रूप में संबंध हो तो द्वंद्व को मूल प्रकृति के द्वंद्व के रूप में परिभाषित किया जाता है। संगठन में व्याप्त अधिकांश द्वंद्व इसी प्रकृति के होते हैं। इसी प्रकार जब द्वंद्व की सीमा व्यक्तिगत संघर्ष के रूप में निर्धारित होती है तथा दो व्यक्ति व्यक्तित्व संबंधी कारकों के कारण संपर्क नहीं हो पाते तब इनके मध्य द्वंद्व, व्यक्तिगत द्वंद्व के रूप में जाना जाता है। राजनैतिक द्वंद्व से आशय सामूहिक हितों, संबंधी विरोधाभास से होता है।

द्वंद्वात्मक परिस्थितियों का प्रबंधन एवं निवारण

द्वंद्वात्मक परिस्थितियों के प्रबंधन एवं निवारण से आशय उन रणनीतियों एवं कार्य विधियों के प्रयोग से है। जो कि इस प्रकार की परिस्थितियों के नकारात्मक पक्ष को सीमित करने एवं सकारात्मक पक्ष में वृद्धि करने की दृष्टि से उपयोग में लाई जाती हैं। इनके माध्यम से सीखने की प्रवृत्ति का विकास एवं सामूहिक निष्पादन में वृद्धि का प्रयास किया जाता है। द्वंद्व प्रबंधन वैचारिक साधनों, संवेदनशीलता एवं अभ्यास के माध्यम से सुनिश्चित होता है। द्वंद्व के मूल कारण की पहचान तथा उसके प्रति सचेत होकर संवेदनशील प्रतिक्रिया एवं वैचारिक तौर पर सहमति अपेक्षित होती है। द्वंद्वात्मक परिस्थियों का प्रबंधन एवं

निवारण नकारात्मक तथ्य को सकारात्मक रूप में परिणत करने की प्रक्रिया होने के कारण व्यक्तिगत एवं संगठन स्तर पर लाभप्रद होती है। द्वंद्व या विरोधाभास अपने मूल स्वरूप में अंतर्संबधों के हास, समय के अनुत्पादक उपयोग एवं कार्य निष्पादन में क्षति के रूप में प्रस्तुत होता है। वहीं सकारात्मक रूप में द्वंद्व की परिस्थितियों का प्रबंधन इन दोषों के निवारण से उच्चतर स्थिति इनके सार्थक अवदान के रूप में प्रस्तुत करता है। इस रूप में द्वंद्वात्मक परिस्थितियों के प्रबंधन की महत्ता स्वतः स्थापित हो जाती है।

द्वंद्वात्मक परिस्थितियों के निवारण एवं प्रबंधन के संबंध में ब्लेक एवं मोटर्न ने वर्ष 1964 में पांच कारकों संबंधी माडल प्रस्तुत किया था। इसी प्रकार किन्डलर ने वर्ष 1994 में शोध के आधार पर नौ रणनीति संबंधी मॉडल इस संबंध में प्रस्तुत किया। मूल प्रकृति के द्वंद्व के निराकरण के संबंध में साधारण तौर पर निम्नवत् सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

• व्यवसायिक मुद्दों पर वार्तालाप एवं आदान प्रदान में मुख्य विषय पर केन्द्रित रहना। विषयांतर की दृष्टि से श्रेयस्कर होता है साथ ही सामने वाले व्यक्ति को भी इसी प्रकार मूल विषय पर केन्द्रण के लिए प्रोत्साहित करता है।

• दूसरे व्यक्ति के विभिन्न विचारों को स्वीकृति एवं प्रसंशा प्रदान करना तथा यह विचार अपने विचारों से भिन्न होने की स्थिति में भी उन्हें स्वयं के विचार की तरह सम्मान प्रदान करना।

• मुख्य लक्ष्य समस्या का निराकरण है न कि दूसरे व्यक्ति से वाद विवाद में या तर्क में विजय हासिल करना इस रूप में कार्य पूरा होने एवं समस्या के निराकरण होने की स्थिति में तर्क संबंधी समझौते के लिए तैयार रहना। इन परिस्थितियों के निवारण की दृष्टि से श्रेयस्कर होता है।

• दूसरों के प्रति अपनी भावनाओं एवं अपने निर्धारण को पृथक कर लोगों के विचार एवं भावनाओं को सुनने, समझने के लिए तत्पर रहना तथा दूसरे के विचारों को लक्ष्य सुनिश्चित करने की दिशा तक अभिस्वीकृति प्रदान करना। पूर्वाग्रह एवं पूर्वकटुअनुभवों को इस प्रकार के संपर्क के पूर्व ही पृथक करना।

• आवश्यकतानुसार मध्यस्तता को स्थान प्रदान करना।

• यह निर्धारित करना की मुख्य विषय वास्तव में स्वयं से संबंधित है या नहीं एवं अनावश्यक एवं असंबद्ध विषयों पर तर्क एवं विवाद से बचना।

इसी प्रकार व्यक्तिगत द्वंद्वों का निवारण व्यक्तित्व में निर्धारित कारकों के माध्यम से ही संभव होता है। व्यक्ति की स्वीकार्यता एवं अनुकूलन क्षमता इस दिशा में प्रभाव एवं दक्षता निर्धारित करती है। शिष्टाचार संबंधी मान्यताओं को

व्यक्तिगत जीवनचर्या में शामिल किया जाकर भी इस प्रकार के द्वंद्व एवं संघर्ष की स्थिति से न केवल बचा जा सकता है बल्कि सार्थक निराकरण भी किया जा सकता है।

• व्यक्तिगत द्वंद्व के निवारण की दृष्टि से सर्वप्रथम व्यक्ति विभेदों को स्वीकार करना वांछनीय होता है। प्रत्येक व्यक्ति अपने आप में एक पृथक व्यक्तित्व को समाहित करता है, यह तथ्य भी सार्वभौम सत्य है।

• यह विचार करना कि हम अपनी कितनी उर्जा दूसरों के प्रति स्पर्धा एवं उनकी कमियों के संबंध में व्यर्थ करते हैं, तथा यह भी निर्धारित करना की उस उर्जा को सकारात्मक रूप में किस प्रकार उपयोग में लाया जा सकता है।

• दूसरों के बारे में किसी व्यक्ति से व्यर्थ वार्तालाप या शिकायत नहीं करना।

• तर्क संगत एवं विनम्र अथवा दूसरों के प्रति तटस्थ बनना।

• व्यक्तिगत विरोधाभास एवं द्वंद्व प्राथमिक स्तर पर किसी विषय संबंधी लघु प्रकृति के द्वंद्व के ठीक तरीके से निराकरण एवं निर्धारण नहीं करने के परिणाम स्वरूप उत्पन्न होते हैं। अतः प्रारंम्भिक स्तर पर द्वंद्व का सार्थक निराकरण व्यक्तिगत द्वंद्व के निराकरण एवं स्थापन्न की दृष्टि से श्रेयस्कर होता है।

द्वंद्व प्रबंधन संबंधी नौ स्तरीय मॉडल :- केन्डलर ने वर्ष 1994 में शोध आधारित व्यापक नौ रणनीति संबंधी द्वंद्व प्रबंधन मॉडल प्रस्तुत किया। इसमें विरोधाभाष की स्थिति पर क्रमबद्ध रणनीति का निर्धारण प्रस्तुत किया गया है। किस प्रकार परिस्थिति अनुरूप विभिन्न माध्यमों से द्वंद्वात्मक परिस्थिति का निराकरण किया जा सकता है। इस सबंध में व्यापक मॉडल केन्डलर ने प्रस्तुत किया। इस माडल को आरेख रूप में (पृष्ठ 193) प्रस्तुत किया जा सकता है।

द्वंद्व एवं असहमति का प्रभावी निर्धारण प्रबंधन विभिन्न रणनीतिक प्रयासों के आधार पर किया जा सकता है। जब किसी व्यक्ति के विचार किसी महत्वपूर्ण कार्य के संबध में दूसरे व्यक्ति से भिन्न हो जो कि उस कार्य से संबंद्ध है। ऐसी स्थिति में इस प्रकार विरोधाभास को प्रभावी रूप से निराकृत किया जाए? किस प्रकार की रणनीति एवं सोच तथा प्रयास इस दिशा में किए जाएं? किस प्रकार का व्यवहार प्रदर्शन सार्थक परिणाम प्रस्तुत कर सकता है? इन बिन्दुओं का निर्धारण द्वंद्व प्रबंधन प्रक्रिया के रूप में प्रकाश में आता है। द्वंद्व प्रबंधन के तीन मूलभूत सिद्धांत नौ रणनीतियां एवं चार स्तरीय प्रक्रिया इस दिशा में कारगर निदान प्रस्तुत करती हैं।

नौ स्तरीय द्वंद्व प्रबंधन

तटस्थता ← बातचीत संपर्क → संबद्धता

मेरे अनुसार करों **(हावी होना)** निर्देशित करना, नियंत्रित करना,	विवाद पर डील **(सौदा)** मध्यम मार्ग, डील, सौदा कर विरोध कों	साथ मिलकर काम करें **(समागम)** समस्याओं का
प्रयास करो, यह उपयुक्त है। **(सहजता)** समानताओं पर बल	विरोध पर सहमति **(सह-अस्तित्व)** विरोधाभासों पर	**(स्वयं आप करें)**
(इन्तजार) **(बनाए रखना)** विरोधाभासी परिस्थितियों	निष्पक्षता **(नियमानुसार निर्धारण)** नियम, विधि अनुसार	मैं सहमत हूं **(निष्पादन)** सहमति प्रदान करना अनुकूलन, स्वीकार्यता

कठोर ← दृष्टिकोण → लचीला (परिवर्तनशील)

द्वंद्व एवं असहमति की स्थितियों के निराकरण प्रबंधन के संबंध में तीन मूल भूत सिंद्धातों को प्रस्तुत किया जाता है। यह सिद्वांत द्वंद्व के प्रति प्रतिक्रिया के प्रभावी स्वरूप के निर्धारण को सुनिश्चित करते हैं।

1. सर्वप्रथम यह आवश्यक होता है कि व्यक्ति आपसी सदभावना एवं आदर भाव को सुनिश्चित करे। व्यक्ति की गरिमा को बचाए रखते हुए उसके स्वाभिमान एवं आत्म सम्मान को स्वीकार्यता प्रदान करते हुए विरोधाभासों पर विचारविमर्श करना। दूसरे व्यक्ति को बदनाम करने, उसे नीचे दिखाने की प्रवत्ति को अपने से दूर रखना इस प्रकार की नकारात्मक प्रवत्तियों को व्यक्तित्व एवं सोच से पृथक कर हम किसी भी व्यक्ति को सहज स्वीकार्यता प्रदान करने तथा विरोधाभास की स्थिति में भी विचार विमर्श की संभावना बनाए रखने में समर्थ होते हैं।

2. विरोधाभास की स्थिति में दोनों पक्षों की सहमति एवं स्वीकार्यता के आधार चिह्नित कर उन्हें प्रत्यक्ष करना दोनों पक्षों के मध्य व्यापक लक्ष्यों मूल्यों एवं उददेयों का पता लगाना जिससे की असहमति के मध्य सहमति की व्यापकता

स्थापित हो सके जब व्यापक अर्थों में सहमति निर्धारित होकर प्रकाश में आती है तो असहमति के लघु बिन्दुओं के बारे में एवं उनकी महत्ता के बारे में स्थिति स्पष्ट होती है। यह स्थिति विरोधाभास के कारण को पार्श्व में स्थापित करने में सहायक होकर द्वंद्वात्मक परिस्थति के निराकरण में महत्वपूर्ण भूमिका स्थापित करती है। चीजों को सामने वाले व्यक्ति के परिप्रेक्ष्य में देखना उसकी संस्कृति, प्रजाति, लिंग, शिक्षा, परिवेश, जीवन अनुभव आदि के आधार पर स्वयं को उसकी जगह रखकर देखने की प्रवृत्ति से हम व्यक्ति की सोच को सकारात्मक रूप से स्वीकार करने में सफल होते हैं। व्यक्ति के परिप्रेक्ष्य में उसके विचार एवं प्रतिक्रिया को देखने से हम उसके प्रति नकारात्मक रवैये को सकारात्मक रूप में परिवर्तित कर पाते हैं। सामान्यतः किसी भी व्यक्ति के विचारों को हम अपने परिप्रेक्ष्य में ग्रहण करते हैं तथा यही असहमति एवं विरोधाभास का कारण बनता है। स्वयं को प्रतिकूल तथा ध्रुवीकृत स्वरूप में बंधने से बचाने का प्रयास करना श्रेयस्कर होता है।

3. भागीदारी एवं लचीलेपन के उपयुक्त स्तर का चयन कर असहमति एवं विरोधाभास से उभरने का प्रयास सार्थक परिणाम प्रस्तुत करता है। जितना अधिक हम दूसरे व्यक्तियों को समझेगें, हम उतना ही अधिक सरल एवं कोमल रवैया स्थापित कर पाएंगे। इसी प्रकार जितना अधिक कार्य संबंधी सह संबंधों की अपेक्षा या प्रयास हम करेंगे। उतना ही अधिक व्यक्ति हमारे सकारात्मक संपर्क में होंगे।

इस प्रकार मूल सिंद्धातों को समाहित करते हुए विरोधाभास एवं असहमति की परिस्थितियों का निवारण एवं प्रबंधन सुलभ हो जाता है। ऐसी परिस्थितियों के सकारात्मक निराकरण के संबंध में रणनीतियों की व्याख्या किन्डलर द्वारा प्रस्तुत की गई थी। इस संबंध में प्रदर्शित रेखाचित्र अनुसार नौ रणनीतियों में व्यक्ति के व्यवहार संबंधी दो प्रवृत्तियां थीम के रूप में निर्धारण सुनिश्चित करती हैं। ये दो प्रवृत्तियां बातचीत या संपर्क में तटस्थ अथवा संबद्धता के प्रदर्शन तथा व्यक्तिगत दृष्टिकोण, कठोर है या लचीला एवं परिवर्तनशील के रूप में प्रभाव निष्पादित करती हैं। नौ रणनीतियों में अंतर्निहित यह प्रवृत्तियां परिस्थिति अनुसार आवश्यकता एवं उपयोग की अपेक्षा तथा उपयुक्त परिस्थिति पर सार्थक प्रभाव अंकित करने में प्रभावी होती हैं। जैसा की चित्र में प्रदर्शित है, नौ रणनीतियों में उपर से नीचे की ओर संबद्धता कम होकर तटस्थता में वृद्धि होती है। तथा दाहिने से बांए लचीलापन कम होकर कठोरता की स्थिति स्थापित होती है। यदि दोनों प्रवृत्तियों के सह संबंधों पर प्रकाश डाला

जाए तो तटस्तता एवं कठोर प्रवृत्ति का प्रदर्शन समानुपातिक तथा संबंद्धता एवं लचीलेपन की प्रवत्तियां, आंतरिक सह संबंध एवं समानुपाति वृद्धि प्रदर्शित करती हैं। दृष्टिकोण एवं बातचीत संपर्क संबंधी प्रवत्तियों को चिह्नित करने के उपरांत रणनीतियों के आधार पर द्वंद्व प्रबंधन सुनिश्चित किया जाता है। यह रणनीतियां द्वंद्वात्मक परिस्थिति में सार्थक परिणाम की दृष्टि से उपयोग किए जाने वाले औजार के रूप में परिभाषित किए जा सकते हैं। परिस्थिति एवं प्रकृति के आधार पर रणनीतिक निर्धारण तथा द्वंद्वात्मक परिस्थितियों का निवारण सार्थक परिणाम प्रस्तुत करता है।

1. नियंत्रण

शक्ति एवं दबाव का उपयोग कर दूसरे पक्ष को निर्देशित एवं नियंत्रित करना तथा असहमति के बिन्दु पर प्रत्यक्ष एवं विरोध प्रस्तुत करना इसमें शामिल है। इस प्रकार की रणनीति का उपयोग विषय की त्वरित महत्ता एवं गोपनीयता की स्थिति में प्रभावी होता है। सामने वाले पक्ष के द्वारा शक्ति के गलत इस्तेमाल एवं दुर्व्यवहार की स्थिति में भी यह स्वप्रतिरक्षी के रूप में उपयोग की जा सकती है। इस प्रकार की रणनीति में मूल वाक्य 'मेरे हिसाब से करो' प्रभावी रहता है।

2. सहजता

दूसरे पक्ष के विचारों को स्वीकार्यता प्रदान करना तथा समानताओं पर बल देना एवं विरोधाभास पर उसके दुष्प्रभावों के आधार पर हतोत्साहित करना। इसके मुख्य कारक हैं। इस रणनीति का मूल वाक्य" प्रयास करों यह उपयुक्त है होता है। दूसरे पक्ष के विचारों को स्वीकार कर गुण दोषात्मक विश्लेषण तथा सहमति का बिन्दु प्रस्तुत करना इसका मुख्य लक्ष्य है।

3. बनाए रखने

विचारों के विरोधाभास की स्थिति में प्रतिक्रिया को नियंत्रित कर स्थिति को बनाए रखना ताकि समय प्राप्त किया जा सके जिससे की विभिन्न सूचनाओं को संग्रहित किया जा सके एवं भावनात्मक तीव्रता को शांत किया जा सके। इस रणनीति में मूल शब्द 'इंतजार' होता है। विवाद के त्वरित मामलों में जहां संभावनाएं सिर्फ समय अभाव के कारण नष्ट हो जाती हैं, यह रणनीति कारगर परिणाम प्रस्तुत करती है। सोचने समझने का मौका देना विभिन्न परिणामों का पूर्वानुमान लगाना। सूचना या तथ्य प्राप्त कर प्रस्तुत करना, सोच विचार का

निर्णय लेना एवं आवश्यकतानुसार मध्यस्थता को स्थान प्रदान करना इसके प्रमुख लक्ष्य होते हैं।

4. सौदा

विवाद एवं विरोधाभास के विषयों पर आपसी डील कर परिस्थिति का निराकरण किया जाता है। दूसरे पक्ष से उसकी अपेक्षाओं के अनुरूप स्वीकार्यता आदि प्रदान करना तथा आपसी लेनदेन के आधार पर सहमति स्थापित करना इस रणनीति में समाहित होता है। इस प्रकार के आदान प्रदान में मध्यस्थता को भी स्थान प्रदान किया जा सकता है। समय की मांग तथा विरोधाभास के दुष्परिणाम एवं तीसरे पक्ष के लाभ एवं इस प्रकार की परिस्थिति के प्रति उत्पेरण की स्थिति में इस प्रकार की रणनीति सार्थक निदान प्रस्तुत करती है। इस रणनीति का मूल वाक्य 'विवाद पर डील' होता है।

5. सह अस्तित्व

विरोधाभास या असहमति की स्थिति में समय विशेष के लिए पृथक रास्तों का निर्धारण एवं सहमति तथा सहअस्तित्व स्थापित करना इसमें शामिल होता है। जब दोनों पक्ष अपनी बात पर अडे हों एवं दोनों के विचारों में निहित मार्ग की श्रेष्ठता के संबंध में स्थिति स्पष्ट न हो तब इस प्रकार की रणनीति का उपयोग किया जा सकता है। सहमति एवं सह अस्तित्व की स्थिति वैचारिक मतभेद एवं विविध कार्यविधि के बावजूद आपसी सहमति के आधार पर विरोधाभास के निलंबन एवं अप्रसार को सुनिश्चित करती है। इस रणनीति का मूल वाक्य वैचारिक सह अस्तित्व होता है। सह-अस्तित्व की रणनीति वैचारिक परिष्कार एवं उच्च कोटि की स्वीकार्यता को प्रदर्शित करती है। तथा इस प्रकार की स्वीकार्यता की स्थिति में अपने विचार एवं कार्य विधि पर प्रतिस्पर्धी वातावरण निर्मित होता है।

6. नियमानुसार निर्धारण

विवाद एवं असहमति के संबंध में नियम निर्धारित करना या प्रचलित नियमों का पालन करना इस रणनीति में शामिल है। दोनों पक्षों की नियम एवं उसकी प्रक्रिया के संबधं में सहमति स्थापित कर उद्देश्य पूर्ण नियम जैसे की मतदान लाटरी, वरिष्ठता के आधार पर निर्धारण तथा पक्षपात रहित निर्णय प्रतिपादन इसमें समाहित होते हैं। जब विवाद या विरोध की स्थिति में अपने आप

को पक्षपात रहित रूप में प्रस्तुत करना हो एवं नियमों के प्रति आस्था की भावना दोनों पक्षों में विद्यमान हो जब यह श्रेयस्कर रणनीति होती है। इस रणनीति का मूल वाक्य 'निष्पक्षता' होता है। जिन संगठनों में नियम रेग्युलेशन एवं स्पष्टकारण निर्धारित होते हैं वहां द्वंद्वात्मक परिस्थितियों के निवारण के अधिकांश प्रकरण इस प्रकार की रणनीति से निराकृत किए जा सकते हैं।

7. समागम

विवाद के विषय पर दोनों पक्षों को समाहित करते हुए सकारात्मक निराकरण प्राप्त करना जिससे की सभी संबंधित पक्षों के मुख्य व्यक्ति संतुष्ट हो सके, जब विषय अत्यधिक महत्वपूर्ण हो तथा समझौता करना आवश्यक हो अथवा निराकरण के साकार या विस्थापन के संबंध में संबद्धता अत्यधिक संवेदनशील हो तब इस प्रकार की रणनीति महत्वपूर्ण परिणाम प्रदान करती है। इसका मूल वाक्य 'साथ में मिलकर काम करें' होता है।

8. स्वछन्दता

सम्यक एवं सामयिक महत्व की दृष्टि से लघु प्रकृति के विवाद जिनमें दूसरों को कार्य के अवसर सीखने की चुनौती प्रदान करने की संभावना व्याप्त हो तथा विवाद या असहमति का विषय अत्यधिक संवेदनशील न हो, तब निराकरण एवं अन्य पर छोड़कर किया जा सकता है। जिस रणनीति में दूसरे पक्ष को पूर्ण अवसर प्राप्त कर सभी प्रकार के नियंत्रण शिथिल करते हुए स्वछंदता प्रदान की जाती है। इसका मूल वाक्य 'आप स्वयं करें' होता है।

9. निष्पादन

दूसरे पक्ष के विचार आदि से सहमत होने की स्थिति में उन्हें स्वीकार्यता प्रदान करना तथा प्रोत्साहन देना, एवं विरोधाभास के विषय पर सकारात्मक परिणाम निष्पादन को स्वीकृति प्रदान करना इस रणनीति का मुख्य बिन्दु होता है। द्वंद्व की उच्च स्तरीय निराकरण प्रक्रिया एवं विरोधाभास को समाप्त करते हुए। दूसरे पक्ष को सहमति एवं उसके विचार बिन्दु के प्रति अनुकूलन उत्पन्न कर सहज स्वीकार्यता का निर्धारण इसमें किया जाता है। जब विरोधाभास का मुद्दा स्वयं से महत्वपूर्ण हो तथा स्वीकृति से सकारात्मक संभावनाएं निर्धारित हो तब यह रणनीति कारगर परिणाम प्रस्तुत करती है। इसका मूल वाक्य 'मैं सहमत हूं' होता है।

इस प्रकार रणनीति व्यक्तिगत स्तर पर भी अभ्यास में समाहित होती है तथा विभिन्न अवसरों पर व्यक्ति विभिन्न रणनीतियों का अनायास या सप्रयास उपयोग करता है। इस दिशा में सार्थक विकल्प परिस्थिति के अनुरूप रणनीति परिवर्तन एवं निर्धारण के रूप में प्रकाश में आता है। एक ही परिस्थिति में भिन्न भिन्न व्यक्तियों के प्रति भिन्न-भिन्न रणनीति का सार्थक प्रयोग भी किया जा सकता है।

द्वंद्व निवारण की प्रक्रिया (चार स्तर)

द्वंद्व प्रबंधन के सकारात्मक परिणाम निष्पादन एवं असहमति की मूल धारणा पर सार्थक निराकरण के संबंध में सुनियोजित प्रक्रिया का निर्धारण इस प्रकार के प्रबंधन के लिए सार्थक परिणाम प्रदान करता है। द्वंद्व प्रबंधन के मूल सिद्धांत सामान्य निर्देश या सुझाव एवं विभिन्न रणनीतियों के साथ इस प्रकार की परिस्थितियों के प्रबंधन की चार स्तरीय प्रक्रिया निर्धारित की जाती है। द्वंद्वात्मक परिस्थितियों के निवारण तथा द्वंद्व विरोधाभास एवं असहमति के सार्थक दिशा में सुनिश्चयन की दृष्टि से व्यवस्थित एवं सुनियोजित प्रक्रिया अत्यधिक महत्वपूर्ण परिणाम प्रदान करती है। इस प्रक्रिया में चार पदीय व्यवस्था प्रस्तुत की जाती है।

- परीक्षण
- योजना निर्माण
- कार्यान्वयन
- मूल्यांकन

• *परीक्षण* :- विरोधाभास एवं द्वंद्व की स्थिति के संबंध में निर्धारण तथा कारणों की खोज एवं निर्धारण इस प्राथमिक स्तर पर किया जाता है। इस बात का निर्धारण कि विरोधाभास एवं असहमति के बीच सहमति के कौन से बिन्दु विद्यमान है तथा किस प्रकार द्वंद्व की परिस्थति को घातक होने के पूर्व नियंत्रित किया जाए। द्वंद्व एवं विरोधाभास के मुख्य स्त्रोत क्या हो सकते हैं। इनके संबंध में जानकारी तथा प्राथमिक स्तर पर विद्यमान कारण की पहचान अत्यधिक महत्वपूर्ण होकर द्वंद्व प्रबंधन में नीव की भूमिका निभाती है।

द्वंद्व के मुख्य कारण निम्नवत रूप में प्रकाश में आते हैं।

1. तथ्य या सूचना की समझ में अंतर।
2. लक्ष्य अपूर्णता की संभावना।
3. सीमाओं का अतिक्रमण।
4. पूर्व के विरोधाभास एवं आघातों का सार्थक निराकरण न होना।

5. करण कारण एवं लक्षणों के संबंध में संदेहास्पद परिस्थिति।

• *योजना निर्माण* :- प्रथम स्तर पर द्वंद्वात्मक परिस्थिति के कारण का निर्धारण तथा उसमें निहित समानताओं पर केन्द्रीयकरण एवं परीक्षण किया जाकर दीर्घ स्तर पर रणनीति एवं कार्य योजना का विकास एवं निर्धारण किया जाता है। द्वंद्व की परिस्थिति के अनुरूप वर्णित नौ रणनीतियों में से किसी एक रण्रण्रणनीति अथवा रणनीतियों के समूह का चयन इस प्रकार के चयन के साथ उसके प्रभावों की योजना तथा रणनीति के सफल नहीं होने की परिस्थिति में उपयोग की जाने वाली पूरक योजना का निर्धारण दूसरे पक्ष के साथ विरोधाभास के संबंध में निर्धारण के लिए समय एवं स्थान का आपसी सहमति के आधार पर निर्धारण एवं कितनी समयावधि में कार्य को अंतिम परिणति प्रदान करना है। इस संबंध में निर्धारण एवं योजना का निर्माण इस स्तर पर किया जाता है। तैयार की गई योजना की मानीटरिंग किस प्रकार की जाएगी इस विषयक निर्धारण भी इस स्तर पर किया जाता है।

• *कार्यान्वयन* :- द्वितीय स्तर पर तैयार की गई योजना को इस स्तर पर कार्य रूप में परिणत किया जाता है। निर्धारित रणनीति समय स्थान एवं योजना अनुसार द्वंद्वात्मक परिस्थिति के निवारण एवं प्रबंधन को आपसी सामंजस्य पारस्परिक सम्मान एवं सदाशयता के माहौल में साकार किया जाता है। इस स्तर पर विचारों को सम्मान प्रदान करना एवं सहमति के विभिन्न बिन्दुओं को लिखित रूप में तैयार करना अपेक्षित होता है।

• *मूल्यांकन* :- सहमति तैयार होने एवं असहमति के बिन्दुओं पर स्थिति निर्धारित होने के बाद सत्त मूल्यांकन आवश्यक होता है। सहमति के पश्चात उसके परिणामों का मूल्यांकन करना तथा यदि सहमति उपरांत भी परिणाम निष्पादन नहीं हो पा रहा है तो उसके कारणों पर विचार कर प्रक्रिया निर्धारित करना। इस प्रक्रिया के मुख्य बिन्दु होते हैं। इस स्तर पर सहमति के पक्ष में व्यवहार का निर्धारण तथा विभिन्न परिणामों से शिक्षा प्राप्त कर नई दिशाओं की स्थापना भी की जाती है। जिससे की सतत सार्थक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। उक्तानुसार चार स्तरीय प्रक्रिया क्रमिक रूप में इस प्रकार की परिस्थितियों के प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

इस प्रकार द्वंद्व प्रबंधन के मूल भूत सिद्धांतों एवं रणनीतियों को विभिन्न स्तरों पर उपयोग कर सार्थक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। जैसा की द्वंद्वात्मक परिस्थितियों के संबंध में स्थापित तथ्य है कि यह परिस्थितियां न केवल नकारात्मक बल्कि सकारात्मक परिणाम प्रस्तुत करने में भी समर्थ होती हैं। द्वंद्व

असहमति एवं विरोधाभास का निवारण एवं प्रबंधन इन परिस्थितियों से उद्भूत नकारात्मक प्रभावों को कम करने एवं सकारात्मक प्रभावों को विस्तार प्रदान करने की प्रक्रिया है। विरोधाभास के निवारण की प्रक्रिया में उसका अग्रगामी नियंत्रण भी समाहित होता है। द्वंद्व विरोधाभास के निवारण एवं प्रबंधन से सकारात्मक परिणाम के लिए अपेक्षित प्रयास किए जाते हैं। इस प्रकार की प्रक्रिया में योजना के स्तर पर अपेक्षित प्रभाव का निर्धारण एवं उसकी ओर अग्रसरण हेतुं प्रयास अपेक्षाकृत सार्थक परिणाम प्रस्तुत कर सकते हैं। सामान्यतः द्वंदात्मक परिस्थितियों के प्रबंधन से अग्रानुसार सकारात्मक प्रभाव प्राप्त किए जा सकते है।

• समूह के आकार, विशेषता एवं संरचना की दृष्टि से सुधार एवं उससे संबंधित विचार इस प्रकार की परिस्थिति के सार्थक निवारण एवं प्रबंधन के परिणाम स्वरूप प्रकाश में आते हैं। द्वंद्व प्रबंधन के लिए सहभागी रणनीति, सह अस्तित्व, समागम, संबंधी रणनीतियों के माध्यम से समूह विभिन्न स्वरूपों में नया एवं प्रभावी आकार ग्रहण करता है। समूह की विशेषज्ञता के क्षेत्र निर्धारित होते हैं। तथा अपेक्षित क्षेत्रों में विशेषज्ञता की अपेक्षा एंव आाकांक्षा में वृद्धि होती हैं। इसी प्रकार संरचनागत त्रुटि संबंधी सुझाव एवं विचार भी प्रकाश में आते हैं।

• इस प्रकार की परिस्थितियों के सार्थक प्रबंधन एवं निवारण का एक सार्थक परिणाम समूह में प्रतिभागिता की भावना के प्रसार के रूप में प्रकाश में आता है। विरोधाभासी परिस्थितियां समुचित प्रबंधन की स्थिति में संगठन में अंतर्व्यैक्तिक सामंजस्य एवं सभी सदस्यों की प्रतिभागिता को बढाती है। स्वछन्दता एवं निष्पादन संबंधी रणनीतियों के उपयोग की स्थिति प्रत्येक सदस्य के प्रति विश्वास एवं उन्हें कार्य अवसर प्राप्ति के रूप में परिणत होती है।

• जैसा की सर्वविदित है कि मतभेद से ही विभिन्न मतों का उदय होता है। विभिन्न विरोधाभास एवं असहमति की स्थितियां मतभेद एवं पक्षपोषण के कारण प्रकाश में आती हैं। तथा विभिन्न क्षेत्रों एवं विषयो के संबंध में विभिन्न मतों के प्रतिपादन से लक्ष्यों की विविधता की स्थिति उत्पन्न होती है। समूह में द्वंद्वात्मक परिस्थितियां धनात्मक रूप में विभिन्न स्तरों पर अभिव्यक्ति के अवसर के रूप में प्रस्तुत होती हैं तथा यह अभिव्यक्ति नए सार्थक एवं विविधमुखी लक्ष्यों के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

• समूह में उत्तरदाायित्व एवं कार्यविधियों की अस्पष्टता की स्थिति समान रूप से पाई जाती है तथा कई नकारात्मक प्रभावों के बावजूद यह स्थिति लगातार विद्यमान भी रहती है। कई बार संगठनों में व्यक्ति दीर्घ अवधि, सेवा, प्रदान करने

के उपरांत भी उत्तरदायित्व की स्पष्टता को नहीं जान पाता है। द्वंद्वात्मक परिस्थितियों में इस प्रकार की अस्पष्टता का कारण रूप में महत्वपूर्ण स्थान होता है। तथा द्वंद्वात्मक परिस्थियों के निवारण एवं प्रबंधन की प्रक्रिया के दौरान विचारण एवं मंथन इस संबंध में किया जाता है। इस प्रकार की परिस्थितियों के सकारात्मक प्रबंधन की स्थिति में उत्तरदायित्वों के निर्धारण एवं कार्य प्रणाली की स्पष्टता भी प्रस्तावी रूप में साकार हो जाती है।

• विभिन्न संगठनों में पुरस्कार की व्यवस्था में दोषपूर्ण परिस्थितियां कर्मचारियों में अभिप्रेरण संबंधी समस्या व्याप्त करती हैं। किसी और के कार्य पर किसी ओर को पुरस्कृत होना इस प्रकार की परिस्थिति का मुख्य कारण होता है। द्वंद्व एवं विरोधाभास की परिस्थिति में उत्तरदायित्व संबंधी निर्धारण के साथ ही पुरस्कार प्रक्रिया में निर्धारित दोष की पूर्ति भी सुलभ हो जाती है। विरोधाभास के कारणों में निहित इस प्रकार की त्रुटि के अभिव्यक्ति एवं प्रबंधन की स्थिति में सार्थक व्यवस्था का सुनिश्चयन संभव हो जाता है।

• द्वंद्व प्रबंधन एवं निराकरण में किसी भी पक्ष एवं किसी भी रूप में शामिल व्यक्ति, व्यक्तिगत, रूप में लाभांवित स्थिति को प्राप्त करता है। असहमति एवं विरोधाभास के पक्ष एवं उनके मध्य मध्यस्थ सभी इस प्रकार के प्रबंधन के दौरान आपसी वार्तालाप सामंजस्य तथा विभिन्न मतों में सहमति के तत्व एवं सहानुभूति प्रदर्शित करने का प्रयास करते हैं। व्यक्तिगत वैचारिक स्तर पर कारण एवं निदान पर विचार तथा तथ्यों के संबध में त्रुटिपूर्ण स्थिति का वास्तविक ज्ञान इस प्रक्रिया में सभी पक्षों को होता है। इस प्रकार व्यक्तिक दोषों का परिहार तथा सार्थक गुणों की उपलब्धि इस प्रक्रिया में प्राप्त होती है।

• विभिन्न वाद विवाद एवं तर्क वितर्क की स्थिति प्रतिस्पर्धा को स्थापित करती है। प्रतिस्पर्धी माहौल में व्यक्ति अपने पक्ष को प्रभावी रूप से प्रस्तुत करता है। यह प्रक्रिया तथ्य एवं रहस्य उदघाटन के रूप में जानकारी से अवगत कराने में सहायक होती है। एक तरफ जहां इस प्रकार की परिस्थितियों से कर्मचारियों को अभिव्यक्ति का अवसर मिलता है वहीं प्रबंधन अंतर्निहित एवं अदृश्य भावनाओं से परिचित हो पाता है।

• नवाचार की दृष्टि से द्वंद्वात्मक परिस्थितियां नई सोच विचार एवं तर्क प्रस्तुत करने में सार्थक भूमिका निभाती हैं। संगठन की पुरानी परिपाटी में निहित दोषों का प्रकाशन तथा नई पद्धतियों, विचारों एवं नवाचारों का उदघाटन इस प्रकार की परिस्थितियों के प्रबंधन के दौरान प्रकाश में आते है।

द्वंद्व के स्तर

द्वंद्वात्मक परिस्थिति अपनी तीव्रता के ग्राफ रूप में प्रदर्शित किए जाने पर निम्न उच्च निम्न ग्राफ प्रदर्शित करता है। मध्यम स्थिति में निष्पादन एवं प्रभाव उत्कृष्ट स्तर को प्रदर्शित करता है। ग्राफ एवं प्रभाव को निम्न ग्राफ एवं चार्ट के माध्यम से प्रदर्शित किया जा सकता है।

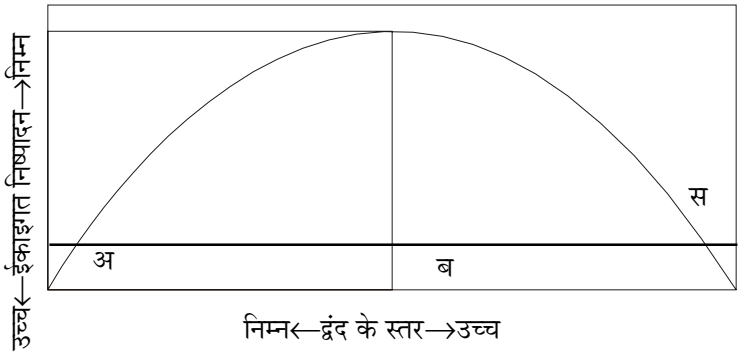

क्रमांक	द्वंद्व का स्तर	द्वंद्व का प्रकार	इकाई का आंतरिक लक्षण	इकाई की निष्पादन
अ	अल्प या नहीं	बेकार	उदासीन स्थित परिवर्तन के प्रति उदासीन नये विचारों का अभाव	निम्न
ब	उपयुक्त	कार्य के अनुरूप	व्यवहारिक महत्वपूर्ण नवाचार	उच्च
स	उच्च	बेकार	हानिकारक निराशाजनक असहयोगात्मक	निम्न

इस प्रकार द्वंद्व एवं विरोधाभास की परिस्थिति सामान्यतः नकारात्मक रूप में देखी जाती है। सही समय एवं माध्यम से सार्थक प्रबंधन पर सकारात्मक परिणाम प्रस्तुत करने में समर्थ हो जाती है। असहमति एवं विरोधाभास की परिस्थितियां स्वभाविक तथा सार्वभौम है। संगठन के प्रारूप एवं कार्य लक्ष्यों के अनुसार संगठन में अधिकांशतः व्याप्त इस प्रकार की परिस्थितियों की प्रवृत्तियों की रूपरेखा तैयार की जा सकती है। संगठन की द्वंद्वात्मक रूपरेखा में संगठन में आंतरिक एवं बाह्य स्तर पर सामान्यतः पाई जाने वाले द्वंद्व की परिस्थितियों, प्रवृत्तियों उन पर मानव संसाधन के क्षय एवं प्रबधंन स्तर पर व्यय अनुत्पादक समय के अनुमान शामिल किए जाते हैं। इन परिस्थितियों के मूल कारण एवं उनके संबंध में व्यापक विश्लेषण संगठन में इनके निवारण एवं प्रबंधन की प्रक्रिया निर्धारित करने में दिशा प्रदान करते हैं। जैसा कि कई उदाहरण इंगित करते हैं कि सिर्फ द्वंद्व एवं विरोधाभास की परिस्थितियों एवं आपसी अहम के टकराव के कारण न केवल उत्पादकता क्षीण हुई बल्कि सफल कंपनी डूबने के स्तर तक पहुंची। अतः पूर्वानुमानों एवं अनुभवों के आधार पर सप्रयास एवं प्रारंम्भिक अवस्था में ही निदानात्मक उपाय श्रेयस्कर होते है।

पुलिस एवं द्वंद्वात्मक परिस्थितियां

विभिन्न संगठनों की भांति पुलिस संगठन भी द्वंद्वात्मक परिस्थितियों का सामना करता है। तथा विभिन्न परिणाम भी दोनों ही रूपों में लगातार प्रकाश में आते हैं। शासकीय संगठन के तौर पर संगठन में व्यक्तिगत भिन्नता का कारक मुख्य रूप से विद्यमान होता है जो कि व्यक्तिक विभेद के रूप में इस प्रकार की परिस्थितियों का कारण बनता है। द्वंद्वात्मक परिस्थितियों के मूल कारणों में लक्ष्य प्राप्ति संबंधी अपूर्णता प्रमुख मानी जाती है तथा पुलिस संगठन की कार्य विधि एवं लक्ष्य लगातार परिवर्तित एवं परिवर्धित होते रहते हैं, लगातार विभिन्न प्रकार की चुनौतियों का सामना पुलिस संगठन को अपने इकाई स्तर पर करना होता है। पुलिस विभाग अपने नियमित कार्यकलापों में आम जनता एवं जन राजनीति से सतत संपर्क एवं संघर्ष की स्थिति में क्रियाशील रहता है। अनुशासनिक संगठन होने के कारण पुलिस संगठन में अंतर्व्यैक्तिक आंतरिक द्वंद्व लगातार विद्यमान रहते है तथा अधिकांश मामलों में उनकी अभिव्यक्ति को स्थान प्राप्त नहीं हो पाता पुलिस संगठन में विभिन्न स्तरों पर व्याप्त द्वंद्व एवं असहमति की स्थितियों का कार्य निष्पादन एवं लक्ष्य प्राप्ति पर अत्यधिक विपरीत प्रभाव पड़ता है। पुलिस विभाग में खेमेबाजी तथा आपसी खींचतान आपसी तनाव एवं एक दूसरे के कार्य

को नकारात्मक रूप में प्रभावित करने के स्तर तक देखने में आती है। इसके विपरीत विरोधाभास की परिस्थितियों के संस्थागत प्रयासों एवं प्रक्रिया की संभावनाएं एवं उपलब्धता अल्प रूप में ही विद्यमान पाई जाती है।

पुलिस नेतृत्व संगठन की विभिन्न चुनौतियों के साथ द्वंद्वात्मक परिस्थितियों एवं उनके प्रभावों से संघर्षरत् रहता है। संस्थागत प्रयासों की संभावना के अभाव में पुलिस नेतृत्व की महती आवश्यकता के रूप में द्वंद्वात्मक परिस्थितियों का प्रबंधन एवं निवारण अपना स्थान प्राप्त करता है। पुलिस संगठन में मुख्य रूप से • अंतर्व्यैक्तिक, • अंतर-इकाई, • बाह्यस्तरीय द्वंद्व एवं विरोधाभास की परिस्थितियों को देखा जाता है। इनमें अंर्तव्यैक्तिक द्वंद्व विभिन्न स्तरों पर कर्मचारियों के मध्य, नेतृत्व एवं कर्मचारियों के मध्य एवं विभिन्न स्तरों के मध्य मुख्य रूप से देखा जाता है। इस प्रकार के द्वंद्व के कारक व्यक्तिक विशेषताओं एवं अंतविरोधों में निहित होते हैं। इस प्रकार के अधिकांश द्वंद्व एवं विरोधाभास संगठन के कार्य परिवेश एवं छवि को नकारात्मक रूप में प्रभावित करते हैं। सामान्यतः इस प्रकार के द्वंद्वों का निराकरण साम्यिक परिप्रेक्ष्य में किया जाता है। स्थान परिवर्तन एवं कार्य परिवर्तन के माध्यम से तथा कई प्रकरणों में संवादहीनता की स्थिति के निर्माण से इस प्रकार के द्वंद्वों का निराकरण किया जाता है।

पुलिस की विभिन्न इकाइयों के मध्य लक्ष्यों, कार्यों, सफलताओं एवं समस्याओं के परिप्रेक्ष्य में द्वंद्व संघर्ष विरोधाभास की स्थिति प्रकाश में आती है। विभिन्न इकाइयों के मध्य वर्चस्व के संघर्ष को भी इसी श्रेणी में समाहित किया जाता है। इस श्रेणी के संघर्ष मूल रूप में संगठन की छवि एवं कार्य निष्पादन को नकारात्मक रूप से प्रभावित करते है। इकाई के स्वरूप एंव संरचना के आधार पर इस प्रकार के द्वंद्व की परिणति निर्धारित होती है। यदि इकाईयां एक ही अधीक्षक के अधीन कार्यरत हैं तब निराकरण के प्रयास एवं संभावनाएं बढ जाती है तथा वृहद रूप में विभिन्न जिलों, रेंज, जोन एवं प्रादेशिक इकाइयों के मध्य इस प्रकार के संघर्ष अत्यधिक ऋणात्मक प्रभाव स्थापित करते है।

पुलिस संगठन का कार्य समाज एवं जनता के प्रति प्रत्यक्ष रूप से संबद्घ होता है तथा पुलिस संगठन समाज एवं जनता के साथ द्वंद्वात्मक परिस्थितियों का सामना भी करता है। इस प्रकार के द्वंद्व एवं संघर्ष न केवल समाज एवं व्यवस्था के लिए घातक होते हैं बल्कि पुलिस नेतृत्व के लिए अत्यधिक गंभीर चुनौती प्रस्तुत करते हैं। पुलिस नेतृत्व एक समय में तीनों प्रकारों के द्वंद्व एवं संघर्ष का सामना करता है तथा इनके सार्थक एवं समुचित निराकरण एवं प्रबंधन पर उसकी सफलता अत्यधिक निर्भर करती है।

असहमति एवं विरोधाभास जीवन की वास्तविकता के रूप में दृष्टव्य तथा सतत प्रभावशील रहते हैं। संगठन में इनकी विद्यमानता संगठन के जीवन्त होने का प्रमाण प्रस्तुत करती है। सृजनात्मक द्वंद्वों की आधिक्य की स्थिति संगठन के बहुमुखी होने को भी इंगित करती है। पुलिस विभाग अनुशासनात्मक विभाग है या अन्य शब्दों में इस प्रकार होने का दावा करता है तथा इसमें अंतर्निहित द्वंद्वात्मक परिस्थितियों को समझकर उनके लक्षणों की पहचान एवं उनका विकासात्मक निदान, संगठन की दृष्टि से लगातार अपेक्षित है।

पुलिस में परेड ग्राउंड, अनुशासन, कहीं न कहीं सह संबंधों के विकास को अवरूद्ध करता है, न की द्वंद्वात्मक परिस्थितियों को। स्वतंत्रता के पूर्व की पुलिस धारणाएं एवं उनके आधार पर निर्धारित अनुशासन के मापदंड वर्तमान परिप्रेक्ष्य में परिवर्तन की मांग प्रस्तुत करते हैं। जनता को सेवा प्रदाय करने वाले विभाग के रूप में पुलिस संगठन में आपसी सहसंबंधों की सजीवता बेहद आवश्यक हो जाती है। ऐसे में परेड ग्राउंड के समय के उपरांत शेष समय में परेड ग्राउंड अनुशासन से बाहर आकर वर्ताव अपेक्षित प्रतीत होता है। समझदार लोगों को यह कहते हुए भी सुना जाता है कि पुलिस विभाग में सुधार की संभावना विद्यमान नहीं है। खासकर पुलिस कर्मचारियों के व्यवहार में, इसका कारण कठोर अनुशासनात्मक नियम विभिन्न विभागीय जांच अत्यधिक मात्रा में दण्डात्मक कार्यवाही शारीरिक प्रशिक्षण का आधिक्य आदि बताए जाते हैं।

इस प्रकार सकारात्मक द्वंद्व की संभावना, नगण्य प्रायः होकर सबकुछ निर्धारित प्रक्रिया में ही गतिमान रहता है। इस प्रकार की अवधारणा में वर्तमान परिवेश में न केवल परिवर्तन आया है, बल्कि अपेक्षानुरूप पुलिस संगठन विभिन्न स्तरों पर सकारात्मक परिवर्तन एवं उत्तरोत्तर विकास भी प्रदर्शित करने में सक्षम हुआ है।

सकारात्मक द्वंद्व, नकारात्मक द्वंद्व से श्रेयस्कर होता है, जहां नकारात्मक द्वंद्व सहसंबधों को नष्ट करता है। वहीं सकारात्मक द्वंद्व सह-अस्तित्व के साथ विकास को प्रस्तुत करता है। नकारात्मक द्वंद्व संगठन की लक्ष्य संबंधी उपलब्धियों में विलंब एवं अवरोध प्रस्तुत करता है। वहीं सकारात्मक द्वंद्व की स्थिति लक्ष्यों के बेहतर विकल्प एवं प्रतिस्पर्धा को स्थापित करती है। लगातार लंबे समय तक दो व्यक्तियों के बीच द्वंद्व एवं विरोधाभास की स्थिति भी संगठन को अत्यधिक क्षतिग्रस्त करती है। पुलिस विभाग में दो अधिकारियों के बीच इस प्रकार के लगातार चलने वाले द्वंद्वों के कई उदाहरण प्रकाश में आते हैं। जहां न केवल संगठन की छवि एवं कार्य पर बल्कि उन अधिकारियों के केरियर पर भी

अत्यधिक विपरीत प्रभाव परिलक्षित हुए हैं। इसी प्रकार द्वंद्व के सकारात्मक स्वरूप एवं उसके प्रभाव ही पुलिस संगठन में विद्यमान हैं जहां अभिप्रेरण उर्जा में वृद्धि व्यक्तिगत नवाचार एवं पारस्परिक समझ का विकास होकर संगठन एवं व्यक्तिगत प्रभाव सकारात्मक रूप में प्राप्त किए गए हैं। इसी प्रकार एक ही प्रकरण में द्वंद्वात्मक परिस्थिति के दोनों प्रकार के प्रभाव के उदाहरण भी है जहां भारतीय पुलिस सेवा के दो अधिकारियों के मध्य द्वंद्वात्मक परिस्थिति का सार्थक परिणाम दो इकाइयों के प्रतिस्पर्धी दस्यु उन्मूलन अभियान में दोनों इकाईयो ने अपेक्षा से अधिक सफलता प्राप्त की तथा द्वंद्वात्मक परिस्थिति नकारात्मक स्तर तक पहुंचकर एक दूसरे की कार्यवाही को फर्जी सिद्ध करने तक पहुंच गया तथा बाद में दोनों पक्षों को नकारात्मक परिणामों का सामना करना पड़ा। इसी प्रकार द्वंद्वात्मक परिस्थिति के सकारात्मक निराकरण एवं प्रबंधन के कई प्रकरण प्रकाश में आए हैं। पुलिस नेतृत्व के विभिन्न स्तर पुलिस अधीक्षक हों या उपाधीक्षक, उप निरीक्षक या उच्च स्तर पर पुलिस महानिरीक्षक या पुलिस महानिदेशक सभी की तैनाती कुछ सप्ताह, कुछ माह, या कुछ वर्षों के लिए ही होती है तथा इस सीमित समय अवधि में नियमित कार्य कलापों का संचालन एवं भौगोलिक तथा कार्यगत परिस्थितियों की समझ एवं निर्धारण ही पुलिस अधिकारियों की प्राथमिकता होती है। ऐसी स्थिति में नेतृत्वकर्ता के रूप में अपना विकास एवं संगठन की द्वंद्वात्मक परिस्थितियों पर कार्य हेतु समय अभाव की स्थिति प्रत्यक्ष होती है। अतः द्वंद्वात्मक परिस्थितियों के निवारण एवं प्रबंधन के संबंध में संस्थागत एवं स्थाई प्रयास संभव नहीं हो पाते हैं। पद पर अधिकारी के परिवर्तन की स्थिति में आगामी अधिकारी की प्राथमिकताएं पूर्व अधिकारी से भिन्न होती हैं। ऐसी स्थिति में प्राथमिकताओं के परिवर्तन एवं सततता के अभाव में पुलिस नेतृत्व के वास्तविक मानकों की स्थापना संभव नहीं हो पाती।

इसी प्रकार पुलिस विभाग में विभिन्न परिवेश से आए हुए व्यक्ति विभिन्न रैंक पर कार्य करते हैं। पुलिस विभाग का स्वरूप एक विभाग के रूप में न होकर एक लघु संसार के रूप में होता है। जहां विविध रैंको पर विविध परिवेश से आए हुए व्यक्ति काम करते हैं। सीधी भर्ती के आरक्षक, सीधी भर्ती के उप निरीक्षक, उप पुलिस अधीक्षक, पुलिस अधीक्षक तथा विभिन्न श्रेणीयों में पदोंन्नत अधिकारी विविधमुखी प्रतिभा एवं सोच के साथ विभाग को विस्तृत रूप प्रदान करते हैं। विभिन्न अध्ययन इंगित करते हैं कि पुलिस के विभिन्न रैंक, पुलिस एवं पुलिसिंग को पृथक पृथक रूप में सोचते एवं देखते है। ऐसी स्थिति में विभिन्न क्षेत्रों में असहमति एवं मतैक्य के अभाव को सामान्य रूप से देखा जा सकता है।

यहां तक की पुलिस फोर्स है या सेवा इस विषय में भी विभिन्न रैंको पर विभिन्न मत प्रस्तुत किए जाते हैं।

कोई भी दो व्यक्तियों के विभिन्न क्षेत्रों में मत निर्धारण एक जैसे नहीं होते इसी प्रकार पुलिस में भी दो रैंको के मध्य सोच एवं निर्धारण का दायरा समान नहीं होते हैं। जो कि भ्रम द्वंद्व एवं समझ के अभाव के कारण होता है। पुलिस का एक उच्च अधिकारी एक आरक्षक को आर्डरली के रूप में देखता है तथा वहीं आरक्षक अपने अकादमिक रिकार्ड या मूल्यों के आधार पर अपने आप को उस वरिष्ठ अधिकारी से उच्च समझता है। यहां प्रत्येक व्यक्ति सह संबंधों को अपने नजरिए से देखता है। पुलिस या किसी भी संगठन में कोई व्यक्ति तब तक वास्तविक अर्थों में नेतृत्वकर्ता नहीं बन सकता जब तक की संगठन के लोग उसे इस रूप में स्वीकार करने के लिए तैयार न हों। संगठन के सदस्य किसी व्यक्ति को नेतृत्वकर्ता के रूप में तभी स्वीकार करते हैं जबकि उसमें नेतृत्वकर्ता के वास्तविक गुण विद्यमान हो पुलिस पदक्रम किसी को वास्तिविक अर्थों में नेतृत्वकर्ता नहीं बनाता है न ही बना सकता है। पदक्रम नियंत्रण एवं प्रशासन की शक्ति एवं पद में निहित अधिकार प्रदान करने में तो समर्थ होता है। लेकिन व्यक्ति को नेतृत्वकर्ता के रूप में स्वीकृती प्रदान कराने में समर्थ नहीं होता। यहां नेतृत्वकर्ता के वास्तिविक गुण तथा पदक्रम के अनुरूप मूल निर्धारण अपेक्षित होते हैं, इस प्रकार की असहमति एवं संघर्ष की स्थिति द्वंद्वात्मक परिस्थितियों का निर्धारण करती है। तथा नेतृत्वकर्ता के रूप में वास्तविक स्वीकृत संगठन एवं इकाई में इस प्रकार की द्वंद्वात्मक परिस्थिति के निवारण में सहयोगी होती है।

अनुशासनिक संगठन में अनुशासन एवं आदेश पालन की प्रतिक्रिया तथा पदक्रम के अनुरूप सम्मान की व्यवस्था सुनिश्चित की जाती है। व्यक्तिगत स्तर पर मूल्य संबंधी विविधता विरोधाभास की स्थिति उत्पन्न करती है। यह आवश्यक नहीं है कि उच्च पद पर बैठे व्यक्ति के मूल्य एवं आदर्श निम्न पद वाले कर्मचारी से उच्च श्रेणी के हों, इस प्रकार विभिन्न नैतिक मूल्यों के व्यक्ति एक लक्ष्य या उद्देश्य के लिए कार्य करते है। इसी प्रकार प्राथमिकताओं के विभेद भी पुलिस संगठन में पाए जाते हैं। यहां एक अधिकारी की प्राथमिकता कानून पालन तथा आपराधिकता पर कार्यवाही होती है। वहीं अन्य अधिकारी न्याय आधारित प्रशासन के लिए कार्य करता है तो एक अन्य अधिकारी अपने व्यक्तिगत लाभ एवं संबंधों की पूर्ति को प्राथमिकता में लेकर कार्य करता है। नेतृत्वकर्ता के रूप में नैतिक मूल्यों के उच्चकोटी का आदर्श प्रस्तुत करना अपेक्षित होता है तथा नेतृत्वकर्ता की प्राथमिकताएं नैतिक मूल्यों को समाहित करें, एवं संगठन के उच्च

लक्ष्यों की ओर अग्रसर हों। संगठन में प्राथमिकता संबंधी अंतर एवं मूल्यों की विविधता द्वंद्वात्मक परिस्थिति का कारण बनती है। पुलिस विभाग में प्रशासन एवं पर्यवेक्षण के विभिन्न स्तर होते हैं। तथा विभिन्न स्तरों पर पदस्थ अधिकारियों में उनकी श्रेणी के नेतृत्वकर्ता की भूमिका समाहित होती है तथा संगठन के कर्मचारियों पर उनके अपने प्रभाव भी होते हैं। विभिन्न नैतिक मूल्यों एवं प्राथमिकताओं के अधिकारियों के प्रभाव विरोधाभासी होने की स्थिति में कर्मचारियों के स्तर पर आंतरिक द्वंद्व की स्थिति निर्मित होती है, वे यह निर्धारित नहीं कर पाते के किस प्रकार के नैतिक मूल्यों को स्वीकार किया जाए। पुलिस संगठन में नैतिक मूल्यों एवं न्याय प्रिय सिद्धांतों को ही नेतृत्वकर्ता के रूप में वास्तविक मान्यता प्राप्त होती है।

पुलिस के कार्य एक व्यक्ति के द्वारा किया जा सकने वाला कार्य नहीं होता, अपितु यह पूर्णतः टीम भावना पर निर्भर करता है। पुलिस संगठन के कार्य में विभिन्न रैंक के व्यक्तियों की विविध अपेक्षाएं तथा भूमिकाएं होती हैं। सामान्यतः निम्न रैंक के प्रति अवहेलना एवं अस्वीकार्यता की भावना पुलिस विभाग में देखी जाती है। जबकि पुलिस संगठन के प्रत्येक सदस्य की भूमिका अपना पृथक महत्व रखती है। कई बार निम्न रैंक के कर्मचारी की भूमिका कार्य एवं परिस्थिति के अनुरूप उच्च रैंक के अधिकारी से भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। ऐसे में प्रत्येक स्तर को सम्मान एवं दायित्व के महत्ता का आभास कराना नेतृत्वकर्ता की प्राथमिक जिम्मेदारी होती है।

पुलिस विभाग में आत्मसम्मान एवं स्तर संबंधी विरोधाभास अनेक प्रकरणों में प्रकाश में आता है। विभाग की विभिन्न रैंक, आरक्षक, निरीक्षक, पुलिस अधीक्षक एवं पुलिस महानिदेशक आदि के स्तर क्या हैं तथा उनका सामाजिक स्तर उन्हें किस प्रकार की अपेक्षाएं एवं अधिकार प्रदान करता है? व्यक्ति का सामाजिक स्तर समाज की उसके बारे में सोच एवं स्वयं के निर्धारण पर आधारित होता है। कई बार रैंक में निम्न कर्मचारियों को भी उच्च रैंक से अधिक महत्वपूर्ण कार्य प्रदान किए जाते है। यह स्थिति उनकी नेतृत्व क्षमताओं के कारण उत्पन्न होती है। पुलिस संगठन में स्तर एवं अन्य व्यक्तिगत लाभ के आधार पर कुछ पद आकर्षक माने जाते हैं, तथा इन पदों के लिए अधिकारी अत्यधिक प्रयास एवं समर्पण तक करने के लिए तैयार हो जाते है। ऐसी स्थिति में संगठन के आदर्श, मूल प्रतिमान तक की चिंता किए बगैर समझौते किए जाने की स्थिति प्रकाश में आती है। ऐसी स्थिति में क्या वास्तविक नेतृत्व क्षमता के रूप में स्वीकृति उन्हें प्राप्त होती है, यह यक्ष प्रश्न सामान्यतः अनुत्तरित रह जाता है, तथा संगठन के

द्वंद्व कारक में वृद्धि कारित करता है।

व्यक्तिगत प्रतिद्वंद्वता की स्थिति पुलिस संगठन में अनावश्यक रूप से विद्यमान पाई जाती है। विभिन्न इकाइयों एवं स्थलों पर पुलिस अधिकारियों का कार्यकाल सीमित होता है तथा समयावधि अनुसार स्थान परिवर्तन, पदोन्नति आदि की सतत प्रक्रिया होती है। ऐसे में व्यक्तिगत संपर्क की सीमितता भी निर्धारित होती है। अतः व्यक्तिगत प्रतिद्वंद्वता की संभावना नहीं होनी चाहिए लेकिन विभिन्न अहंकारक इस प्रकार की स्थिति निर्मित करते हैं, अनावश्यक जांच एवं दोषार्पण तथा दण्डात्मक कार्यवाहियां एवं खैमेवाजी इस रूप में प्रदर्शित होती है। इस प्रकार की प्रतिद्वंद्वता न केवल विभाग के अभिप्रेरण कारक को शिथिल करती है अपितु विभाग की छवि को भी ऋणात्मक रूप सें प्रभावित करती है। नेतृत्वकर्ता के तौर पर सफलता के लिए आवश्यक है कि इस प्रकार की पारस्परिक प्रतिद्वंद्वता की स्थिति से बचा जाए तथा शेष नेतृत्वकर्ता के प्रभावी गुणों को विकसित किया जाए।

द्वंद्व की तीव्रता एवं प्रतिक्रिया

द्वंद्व एवं विरोधाभास में तीव्रता के अनुरूप प्रक्रिया व्यक्त होती है। इसे निम्नवत रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है।

- गंभीर या भारिक
  - ◊ दूसरे पक्ष को नष्ट करने के प्रत्यक्ष प्रयास
  - ◊ भौतिक आक्रमण
  - ◊ धमकी एवं चेतावनी
  - ◊ मौखिक आरोप अपशब्द
  - ◊ प्रत्यक्ष रूप से प्रश्न करना एवं चुनौती देना
- द्वंद्वहीनता
  - ◊ मामूली असहमति एवं समझ संबंधी अल्पता

द्वंद्वात्मक परिस्थिति से निष्पादन

असहमति, विरोधाभास एवं द्वंद्व की परिस्थिति मुख्य रूप से व्यवहार की प्रतिक्रिया के रूप में परिणाम प्रदान करती है। इस परिस्थिति के निवारण की प्रक्रिया विभिन्न स्वरूपों में निवारण व्यवहार के रूप में प्रदर्शित होकर सार्थक परिणाम प्रदान करती है।

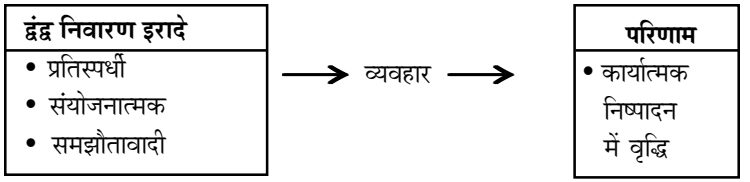

द्वंद्व निवारण के आयाम

द्वंद्व निवारण के विभिन्न आयाम ग्राफिक प्रवृत्तियों की दृष्टि से निम्न रूप में प्रदर्शित की जा सकती है। यहां निवारण संबधी गतिविधि एवं प्रदर्शित व्यवहार के स्वरूप के अनुरूप परिणाम एवं निवारण की सार्थकता का स्तर सुनिश्चित होता है। प्रत्यक्ष, असहयोग संबधी व्यवहार प्रतिस्पर्धा के रूप में परिणत हो विरोधाभास बढाता है। वही सहयोगात्मक प्रत्यक्ष प्रवृत्ति समायोजन एवं सार्थक परिणाम प्रदान करती है।

द्वंद्व निवारण के आयाम

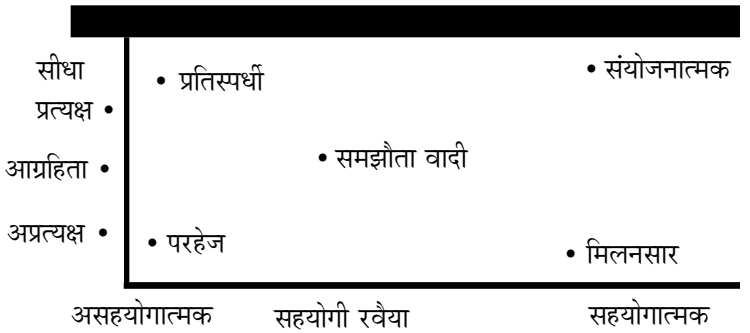

द्वंद्व, असहमति एवं विरोधाभास स्वाभाविक तथ्य है, इनका विद्यमान होना सहज है। लेकिन प्रभावी नेतृत्वकर्ता की स्थिति में इनका सार्थक समायोजन एवं निवारण अपेक्षित होता है। प्रभावशाली नेतृत्व न केवल इस प्रकार की परिस्थितियों का निवारण सुनिश्चित करते हैं, बल्कि इनसे सकारात्मक परिणाम प्राप्ति भी सुनिश्चित करते है। नेतृत्वकर्ता इस प्रकार के निवारण गतिविधियों के संवहन में भी प्रभावी भूमिका निभाते है। जिससे की संगठन के परिवेश मे इस प्रकार की परिस्थितियों के निवारण संबधी कारक स्वतः विद्यमान हो जाते है।

अध्याय 9

तनाव प्रबंधन

मानव जीवन को प्रभावित करने वाले कारकों में तनाव को गत समय में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है। तनाव व्यक्ति की दिन प्रतिदिन की कार्य उत्पादकता के साथ शारीरिक एवं मानसिक क्षमताओं को अत्याधिक प्रभावित करता है। वर्तमान परिवेश में कार्य आधिक्य भावनात्मक संबंधों एवं उनके संचालन के लिए समय का अभाव भौतिक वादी मानसिकता अत्याधिक महत्वाकांक्षा एवं प्रतिस्पर्धा आदि को तनाव का प्रमुख कारक कहा जा सकता है। तनाव एक मानसिक असंतुलन की स्थिति है जहां व्यक्ति मानसिक रूप से परिस्थितियों, कार्यों, अपेक्षाओं आदि के संबंध में साम्य स्थापित करने में सफल नहीं हो पाता है। तनाव की स्थिति में व्यक्ति दवाब में कार्य करता है तथा स्वतंत्र दवाब पूर्ण स्थितियां कई नकारात्मक परिणाम व्यक्ति के ऊपर स्थापित करती हैं। प्रारंम्भिक स्तर पर व्यक्ति अनिच्छा एवं अंसतोष की प्रतिक्रिया व्यक्त करता है तथा धीरे-धीरे तनाव की अन्य विभिन्न प्रतिक्रियाएं स्थापित होती हैं। तनाव मानसिक साम्य का अभाव है जहां व्यक्ति एकाधिक कार्य लक्ष्य आदि के प्रति आकर्षित होता है तथा अपेक्षित स्थिति प्राप्त नहीं कर पाने की स्थिति में दवाब ग्रस्त हो जाता है इसी प्रकार कार्य का आधिक्य एवं संसाधनों तथा पूर्ति के मूलभूत संभावना में विद्यमान अल्पता की स्थिति भी व्यक्ति को तनाव ग्रस्त करती है। व्यक्ति अनुकूल परिस्थिति तथा परिणाम चाहता है एवं हमेशा अनुकूल परिणाम प्राप्त हो पाना संभव नहीं हो पाता जो कि भय की स्थिति या असुरक्षा की भावना के रूप में प्रतिपादित होता है। इस भय या असुरक्षा की भावना का सतत प्रवाह व्यक्ति को तनाव की स्थिति के प्रति प्रेरित करता है। व्यक्ति कार्य की अपेक्षित कौशल या शारीरिक योग्यताओं के अभाव के कारण भी तनाव ग्रस्त होता है। यहां

मानसिक स्तर पर वह अपनी योग्यता को स्थापित करना चाहता है लेकिन कौशल या शारीरिक सामर्थ का अभाव परिणाम प्राप्त में बाधक होता है। अतः तनाव की स्थिति निर्मित होती है। कई बार व्यक्ति की निराशापूर्ण प्रवृत्ति अनुवांशिक लक्षण एवं हार्मोनल विकृति भी तनाव का कारण बनती है। ऐसे लक्षणों से युक्त व्यक्ति अकारण तनाव में देखे जाते हैं तथा उनके तनाव का निदान सामान्य रूप में संभव नहीं हो पाता है।

तनाव वर्तमान परिवेश या आधुनिक जीवन का मुख्य लक्षण बन चुका है, पूर्व में जहां शारीरिक स्थितियों का परिणाम मानसिक असंतुलन के रूप में अभिव्यक्त होता था वहीं वर्तमान में मानसिक तनाव विभिन्न शारीरिक बीमारियों का नियंत्रक होता है। तनाव संबंधी समस्या पुलिस संगठन में सर्वाधिक विद्यमान पाई जाती है पुलिस में कार्य आधिक्य, अवकाश का अभाव विभिन्न उत्साह, पर्व त्यौहार आदि पर ड्यूटी तथा कार्य के सामान्य स्वरूप में विभिन्न दबाव सतत विद्यमान रहकर पुलिस कार्य को तनाव पूर्ण बनाते है। पुलिस कर्मचारियों में तनाव एवं तनावजन्य बीमारियों का स्तर अत्यधिक पाया गया है तथा विभिन्न स्तरों पर यह अत्यधिक चिंता का विषय है पुलिस कर्मचारियों पर कार्य के दौरान तनाव को पी-7 सिद्धांत के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। पी-7 सिद्धांत उन सात प्रकार के दबाव की व्याख्या प्रस्तुत करता है जो कि एक पुलिस कर्मचारी पर लगातार विद्यमान रहते हैं। पुलिस कर्मचारी या अधिकारी को लगातार इन सात दबाव कारकों से संघर्ष करना होता है जिसका परिणाम तनावपूर्ण परिस्थितियां होती हैं।

पी-7 सिद्धांत

1. जनता
2. परिवार
3. न्यायालय
4. प्रेस
5. राजरणनीति
6. वरिष्ठ अधिकारी
7. कार्य

इस प्रकार पुलिस संगठन लगातार सात प्रकार के दबाव महसूस करता है तथा इनके संघर्ष में वह स्वयं, स्वयं की रुचियां एवं अपने शरीर मन आस्था आदि पर ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाता, जिसका परिणाम तनावपूर्ण परिस्थतियां के रूप में प्रकट होती हैं। पुलिस के कार्यों में जनता से सीधा संपर्क तथा जन अपेक्षाओं की चुनौती लगातार प्रत्यक्ष होती है। अपने बीट थाना जिला, क्षेत्र में जनता की

पुलिस से अत्यधिक अपेक्षाएं होती हैं जिनमें तत्काल पहुंच त्वरित कार्यवाही तथा व्यक्ति विशेष के द्वारा बताए अनुसार कार्यवाही आदि ये अपेक्षाएं इस स्तर की होती हैं कि इनकी पूर्ति किसी भी स्थिति में नहीं की जा सकती है। पुलिस कर्मचारी अपने आप में अपने स्तर पर उत्कृष्ठ प्रयास प्रस्तुत करे तब भी पुलिस के कार्य टीम कार्य होने से एक कर्मचारी के प्रयासों की सीमा निर्धारित होती है। व्यक्ति अपनी रिपोर्ट एवं अपने पक्ष को ही अंतिम एवं सत्य मानकर चलता है जबकि कई बार उसका पक्ष विधि सम्मत नहीं होता अतः अपेक्षा पूर्ति संभव नहीं हो पाती वी.आई.पी. व्यवस्था के दौरान रुके हुए यातायात में वाहन निकालने की अनुमति, त्यौहार बंदोवस्त में प्रवेश की अनुमति आदि अपेक्षाएं भी पुलिस के समक्ष उपस्थित होती हैं जिनका समाधान नहीं किया जा सकता। अतः जन अपेक्षाओं का दबाव लगातार विद्यमान रहकर तनावपूर्ण परिस्थिति उत्पन्न करता है। पुलिस कर्मचारी अधिक डयूटी के दबाव में परिवार के प्रति अपेक्षित व्यवहार प्रदर्शित नहीं कर पाता, समय अभाव तथा महत्वपूर्ण अवसरों पर डयूटी के कारण परिवार अपेक्षा की अनुभूति करता है तथा लगातार परिवार जनों की अपेक्षाएं अभिव्यक्त होकर दबाव निर्मित करती हैं। जिनकी पूर्ति पुलिस कर्मचारी सार्थक रूप में नहीं कर पाता है तथा यह दबाव तनाव के रूप में परिणित होता है। बच्चों की शैक्षिक स्थिति तथा उनके शैक्षणिक क्षमताओं के प्रदर्शन के प्रति सामान्य व्यक्ति की तरह प्रत्येक पुलिसकर्मी संवेदनशील होता है। लेकिन कहीं न कहीं अपेक्षित परिणामों के अभाव के प्रति स्वयं के द्वारा एवं परिवार के द्वारा उत्तरदाई ठहराया जाता है तथा यह स्थिति तनाव का महत्वपूर्ण कारण प्रस्तुत करती है। अपराधी न्याय प्रणाली में पुलिस का दायित्व अपराधी एवं साक्षियों को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करना होता है तथा न्यायालय द्वारा अपराधी के दोष का निर्धारण किया जाता है। यह प्रक्रिया दिन प्रतिदिन के कार्यों में समाहित होकर सतत संपर्क के रूप में व्यक्त होती है। न्यायालयीन अपेक्षाओं की पूर्ति एवं अभाव की संभावना तथा ऐसी स्थिति में न्यायालय की विपरीत टिप्पणी का भय पुलिस तनाव का महत्वपूर्ण कारक है। विवेचनागत संसाधनों का अभाव तथा एक ही फोर्स द्वारा विवेचना, कानून व्यवस्था, बंदोवस्त, अपराध नियंत्रण आदि कार्यों का निष्पादन किया जाना आदि वे कारक हैं जो विवेचनागत कमी प्रस्तुत करते हैं तथा इस प्रकार के आत्मविश्वास का अभाव पुलिस कर्मचारी में न्यायालय के प्रति भय एवं दबाव को अभिव्यक्त करता है।

पुलिस के कार्यों पर वर्तमान में सूचना संचार के कारण मीडिया की सतत प्रतिक्रिया विभिन्न रूपों में व्यक्त होती है। सामान्य रूप में प्रतिक्रिया का

नकारात्मक पक्ष अधिक व्यक्त होता है तथा मीडिया की नकारात्मक प्रतिक्रिया कहीं न कहीं विभाग की छवि को प्रभावित करती है एवं वरिष्ठ स्तर पर इसको चुनौती के रूप में ग्रहण किया जाता है जो कि कहीं न कहीं नए निर्देश मानक, कार्य की सख्त प्रक्रिया ड्यूटी के अधिक घंटो एवं अनुशासनात्मक विभागीय कार्यवाही के निर्देशों के रूप में वापस पुलिस कर्मचारियों तक पहुंचती है। अतः संचार माध्यमों की प्रतिक्रिया को दबाव के कारण के रूप में स्थान प्राप्त होता है। विभिन्न जन प्रतिनिधि पुलिस कार्यों की सतत समीक्षा करते हैं तथा व्यवस्था के जनता से जुड़े महत्वपूर्ण पक्ष होने के कारण वे समय समय पर विभिन्न जनकार्यों के लिए पुलिस अधिकारी कर्मचारियों के संपर्क में रहते हैं। विभिन्न जनप्रतिनिधियों की अपेक्षाएं तथा उनकी पूर्ति नहीं होने पर नकारात्मक परिणामों का भय विरोधाभास की स्थिति एवं तनाव का कारण बन जाता है। अनुशासनिक बल होने के कारण पुलिस कर्मचारी को अपने वरिष्ठ अधिकारी का निर्देश पालन सकारात्मक रूप में ही करना होता है। इसमें तर्क सुझाव की संभावना अल्प होती है। इस प्रकार वरिष्ठ अधिकारी का स्वभाव एवं व्यवहार पुलिस कर्मचारी के लिए भय एवं दबाव का कारण होता है तथा वरिष्ठ अधिकारी के असामंजस्य का भुगतान कर्मचारी को तनाव के रूप में करना होता है। प्रत्येक पुलिस कर्मचारी अपने आप में मानव होने के नाते विभिन्न व्यक्तिगत अपेक्षाओं से प्रभावित होता है तथा ये अपेक्षाएं पूर्ति के लिए उसके पास समय एवं संसाधनों का अभाव ही पाया जाता है। व्यवसायिक कार्यों के साथ व्यक्तिगत स्तर का उन्नयन समाज में व्यक्तिगत स्थिति एवं अपेक्षाओं के कारण भी पुलिस कर्मचारी तनाव ग्रस्त होता है तथा इस प्रकार के दबाव लगातार उस पर क्रियाशील होते हैं एक साथ कई प्रकार के दबाव लगातार विद्यवान होने एवं अवकाश के अभाव के कारण पुलिस कर्मचारियों का तनावग्रस्त हो जाना सामान्यतः प्रकाश में आता है।

यद्धपि तनाव के नकारात्मक प्रभाव अधिक है लेकिन तनाव सर्वथा नकारात्मक हो यह कहना सही नहीं है बल्कि तनाव का नियंत्रित स्तर व्यक्ति को कार्य के प्रति सचेत बनाकर प्रेरित करता है तथा परिष्कृत कार्य परिणामों का कारण बनता है। तनाव के इस रूप में यू स्ट्रेस कहा जाता है तथा इस स्थिति के उपरांत तनाव वृद्धि पर डी स्ट्रेस के रूप में परिणित होता है जो कि सर्वथा नकारात्मक प्रभाव उत्पन्न करता है। तनाव के नियंत्रित स्वरूप की उपस्थिति व्यक्ति के परिणाम उत्पादन की दृष्टि से महत्वपूर्ण होती है। अन्यथा स्थिति में व्यक्ति कार्य के प्रति उदासीन, असंवेदनशील, अथवा अरुचि पूर्ण बन जाता है। जो कि व्यवसायिक दृष्टि से व्यक्तित्व पर नकारात्मक प्रभाव अभिव्यक्त करता

है। तनाव तथा कार्य निष्पादन के मध्य ग्राफ यह प्रदर्शित करता है कि अल्प तनाव एवं अत्यधिक तनाव की स्थिति में निष्पादन न्यूनतम स्तर का होता है तथा तनाव की नियंत्रित संतुलित स्थिति निष्पादन की श्रेष्ठता को प्रदर्शित करती है।

तनाव एवं कार्य निष्पादन ग्राफ

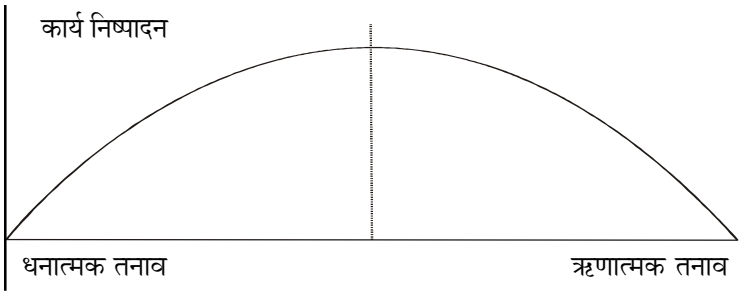

तनाव के प्रभाव विभिन्न कारकों के आधार पर परिलक्षित होते है, इन तनाव कारक के विभिन्न स्वरूप के आधार पर तनाव का वर्गीकरण किया जाता है। विभिन्न तनाव प्रकारों को निम्नवत रूपों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

1. वाह्य तनाव
2. आंतरिक तनाव
3. सामाजिक तनाव
4. सागठनिक तनाव

व्यक्ति के परिवेश मे निर्धारित कारक एवं उनके प्रभाव रूप में उदभूत तनाव, बाह्य तनाव की श्रेणी में आता है। व्यक्ति अपने परिवेश के इन कारकों के संबध में स्वमूल्याकंन एवं निर्धारण कर इस प्रकार के तनाव कारकों को नियंत्रित कर सकता है। तनाव के आंतरिक स्वरूप मे व्यक्ति की व्यक्तिगत विशेषताएं एवं आंतरिक ताना बाना तनाव कारक कि मुख्य भूमिका निभाता है। आंतरिक तनाव कारक विभिन्न विषयों एवं क्षेत्रों के संबध में व्यक्ति के निर्धारण एवं उनके सम्बन्ध में विरोधाभासी, द्वन्दात्मक स्थितियों के कारण आंतरिक स्तर पर स्थापित होते है। व्यक्ति इस प्रकार के तनाव के संबध में लक्षण एवं कारक निर्धारण प्रारंभिक स्तर पर नहीं कर पाता है। परिणाम स्वरूप तनाव के आंतरिक कारकों का प्रबंधन विलंबित एवं कठिन हो जाता है। व्यक्ति की सामाजिक भूमिका एवं पारस्परिक सहसंबध तथा उनके प्रति अपेक्षाएं एवं उनकी पूर्ति का अभाव तनाव की स्थिति के रूप में प्रत्यक्ष होता है। व्यक्ति के आंतरिक एवं वाह्य संगठन में निधार्रित संगठन

कारक तथा उनका बैविध्यपूर्ण प्रदर्शन भी तनाव कारक के रूप में प्रकाश मे आता है। इस प्रकार विभिन्न प्रकारो के तनाव एवं उनके कारकों के विश्लेक्षण एवं मूल्याकंन पर तनाव के विभिन्न सामान्य कारण प्रकाश मे आते है।

- कार्य आधिक्य एवं कार्य की विविधमुखी अपेक्षाएं
- समय अभाव एवं समय के लिए संघर्ष
- व्यक्तिगत कुंन्ठाएं एवं अन्तर मे स्थापित आकाक्षाएं
- शारीरिक दुर्बलता जो कि व्यवसायिक दृष्टि से अपेक्षित है
- पारस्परिक संबधों में संघर्ष
- परिवेश मे निर्धारित तथ्यों से विरोधाभास
- व्यवसायिक दक्षता एवं कौशल का अभाव
- प्रबन्धन के स्तर पर विरोधाभासी लक्ष्य
- व्यक्तिगत धारणाओं का स्वंय के समूह से विरोधाभास
- मान्यताओं, मूल्यों एवं अपेक्षाओं में निहित संघर्ष
- कार्य के स्वरूप एवं लक्ष्यों में परिवर्तन
- सामंजस्य एवं अनुकुलन दक्षता का अभाव
- संसाधन एवं तकनीकि अलपताएं
- तनाव प्रबंधन एवं गुणवत्ता पूर्ण गतिविधियों का अभाव
- जागरूकता एवं चेतना का अभाव
- अत्याधिक उत्तरदायित्व की भावना
- स्वंय निष्पादन की अपेक्षा

व्यक्ति के आंतरिक तनाव उत्प्रेरको में व्यक्ति की जीवनचर्या संबधी रुचियाँ प्रमुख होती है। अत्याधिक कार्यभार के कारण नीद के पर्याप्त समय का अभाव, प्रतिदिन के लिए संभावना से अधिक कार्य एवं लक्ष्यों का निर्धारण एवं अत्याधिक कार्यभार तथा विभिन्न मादक पदार्थों चाय,कॉफी आदि के संबध में अनियंत्रित एवं अति प्रयोग की रुचियां व्यक्ति के जीवनचर्या संबधी तनाव कारक के रूप में स्थापित होते है। व्यक्ति अपने आप से वार्ता करता है यह आंतरिक वार्ता व्यक्ति के जीवन एवं कार्यों के संतुलन में महत्वपूर्ण होती है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने स्ववार्ता के संबध में सचेत रहकर सतत मूल्याकंन करना अपेक्षित होता है। व्यक्ति नकारात्मक भावनाओं से ग्रसित होकर निराशाजनक चितंन, स्वंय की आलोचना एवं स्वंय के अतिरेकपूर्ण विश्लेक्षण के कारण स्वंय से नकारात्मक बातचीत करता है तथा यह प्रवृत्ति व्यक्ति के तनाव का महत्वपूर्ण कारण बनती है। व्यक्ति न केवल अपनी संभावनाओं के प्रति नकारात्मक हो जाता है। बल्कि अपनी क्षमताओं के

सार्थक दोहन को भी सुनिश्चित नहीं कर पाता। अतः आवश्यक है कि स्वंय से की गई बातचीत जो कि अत्याधिक महत्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत करती है के संबध में व्यक्ति जागरूक रहकर समायोजन एवं संयोजन प्रस्तुत करें तथा निराशाजनक भावनाओं से बचने का प्रयास करें। व्यक्ति के मानसिक स्वरूप में निधार्रित कारक भी तनाव स्थापन का कार्य करते है। इन में मुख्य रूप से अव्यवहार, अपेक्षाएं, विभिन्न तथ्यों एवं विषयो को व्यक्तिगत रूप में लेना एवं विभिन्न विषयो एवं क्षेत्रों में जटिल तथा सुधार एवं परिवर्तन की संभावनाओं से रहित होना शामिल है। अव्यवहारिक अपेक्षाएं, असंम्भव लक्ष्यों की स्थापना का कारण होती है तथा असंम्भव लक्ष्य पूर्ण नहीं होनें की स्थिति में निराशा का कारण बनते है। विभिन्न व्यवसायिक एवं सामूहिक तथ्यों को व्यक्तिगत रूप में स्वीकार्य करना तथा इस आशय के निर्धारण करना व्यक्ति को अतिसंम्बद्धता की प्रवृत्ति में निरूपित करता है तथा यह स्थिति बार बार निराशा का कारण बनती है। व्यक्ति विभिन्न तथ्यों एवं व्यक्तियों से आहत होता है तथा यह परिस्थितियां तनाव के प्रमुख कारण के रूप में प्रभाव डालती है। व्यक्ति अपनी सोच के प्रति अत्याधिक जटिल एवं अपरिवर्तनशील व्यवहार के प्रदर्शन से न केवल अपनी सुधारात्मक संभावनाओं को विराम लगाता है। बल्कि अपने परिवेश की स्वंय के प्रति नकारात्मक प्रतिक्रियाओं को आमंत्रित करता है। इस प्रकार कि सोच व्यक्ति में सामंजस्य का अभाव प्रत्यक्ष करती है तथा व्यक्ति तनावग्रस्त हो जाता है। व्यक्ति के व्यक्तिगत विशेषताओं में भी तनाव कारक निहित होते है। अत्याधिक पूर्णता एवं परिमार्जन से कार्य निष्पादित करने की भावना तथा स्वंय को अत्याधिक दक्ष प्रमाणित करने कि सोच व्यक्ति को तनावग्रस्त अवस्था में स्थापित करती है। व्यवहारिक रूप से कोई व्यक्ति प्रत्येक कार्य को पूर्ण एवं परिमार्जित रूप मे निष्पादित नहीं कर सकता, व्यक्ति कि सीमाएं उसें इस दिशा में अवरोध कारित करती है। लेकिन व्यक्ति यदि प्रत्येक कार्य में पूर्ण परिमार्जन को स्थापित करने का प्रयास करता है तो वह स्वंय के प्रति अति अपेक्षा एवं निराशा की स्थिति में पहुचा जाता है क्योकि उसके द्वारा स्वंय के प्रस्तुतिकरण के अनुरूप परिणाम प्राप्त नहीं हो पाते है। कुछ व्यक्तियों में स्वंय को अत्याधिक दक्ष एवं किसी भी कार्य को करने में सक्षम एवं तत्पर रूप में स्थापित करने की प्रवृत्ति पाई जाती है। विभिन्न संगठनों में कार्य को आमंत्रित करते हुऐ अधिकारी कर्मचारी विभिन्न स्तरों पर देखे जाते है। व्यक्ति की स्थिति कार्य के सफल संचालन तक ठीक कही जा सकती है। लेकिन अतिरेक की स्थिति में न केवल व्यक्ति निराशा एवं तनाव से ग्रसित होता है। बल्कि उसके प्रति संगठन एवं परिवेश की सोच बड़बोला एवं अतिरेकपूर्ण प्रदर्शन करने वाले की हो जाती

है। जो कि कही न कही व्यक्तित्व को नकारात्मक रूप मे प्रभावित करती है।

तनाव के प्रारंभिक स्तर पर लक्षणों का अभास संम्भव नहीं हो पाता है तथा त्वरित प्रबंधन एवं नियंत्रण के अभाव में तनाव जटिल रूप में स्थापित होकर व्यक्ति को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है। तनाव के प्रारंभिक लक्षण व्यक्ति के व्यवहार में शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तन अंकित करते है। यह आवश्यक है कि व्यक्ति तनाव के लक्षणों को पहचानने का प्रयास करें तथा सही समय पर निदानात्मक प्रकियाओं को सुनिश्चित करें ताकि नकारात्मक प्रभावों से बचा जा सकें। तनाव के लक्षण चिंता, थकान, अरुचि, क्रोध, निराशा आदि के रूप में प्रत्यक्ष होते है। व्यक्ति अपने कार्य से संतुष्ट न होकर कार्य के प्रति शिथिल एवं अरुचि पूर्ण अभिव्यक्ति प्रदर्शित करता है। शारीरिक परिवेश में दूरियां निर्धारित करने का प्रयास तथा सहसंबधों में उत्साह का अभाव इस रूप में देखा जाता है। व्यक्ति तनावपूर्ण परिस्थितियों में अपने अधिकार एवं आधिपत्य के प्रदर्शन एवं अतिरेक वर्णन का प्रयास करता है। वह आक्रामक भूमिका में नियम-कानून निर्धारण एवं विभिन्न जटिल प्रतिमान आदि को अधिरोपित करने का प्रयास करता है। नियमित दिनचर्या में बदलाव एवं सुसंचालन का अभाव, अनिद्रा, भूख न लगना आदि प्रभाव परिलक्षित होते है। यह लक्षण बाद में घातक एवं स्थाई मानसिक एवं शारीरिक विकृतियों के रूप में स्थापित हो जाते है। तनाव के लक्षणों को विभिन्न रूपों में वर्गीकत किया जा सकता है।

1. *शारीरिक लक्षण* - इन लक्षणों में प्रमुख रूप से निद्रा संबधी,परिवर्तन पाचन तंत्र संबधी परिवर्तन, सिर दर्द, लैंगिक गतिविधियो का अभाव, विभिन्न शारीरिक दर्द, संक्रमण, कंपन एवं पसीना निकलना, श्वास फूलना, हदयगति अनियंत्रित होना, अकारण थकान होना, हाथ पॉव का हिलना आदि रोग लक्षण है। शारीरिक लक्षणों को प्रारंभिक लक्षण भी कहा जा सकता है। इस रूप में तनाव नियंत्रण एवं प्रबन्धन की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण होते है।

2. *मानसिक लक्षण* - इन लक्षणों में एकाग्रता का अभाव, याददाश्त संबधी कमियां, निर्णय क्षमता में कठिनाई, भ्रम की स्थिति, लक्ष्य की ओर संकेन्द्रण का अभाव, मानसिक स्तर पर घात आदि लक्षण तनाव के मानसिक लक्षण प्रमुख रूप से प्रकाश मे आते है। इन्हें तनाव कि द्वितीयक श्रेणी कहा जा सकता है। मानसिक लक्षण विभिन्न शारीरिक एवं मानसिक बीमारियों के सूचक कहे जा सकते है।

3. *व्यवहारगत लक्षण* - नशा एवं नशीले पदार्थो का सेवन में असामान्य वृद्धि, धुम्रपान मे वृद्धि, आराम करने की प्रवृत्ति का अभाव, नाखुन हाथों से काटने

की प्रवृत्ति, घबराहट, आत्मविश्वास का अभाव, असामान्य व्यवहार प्रदर्शन आदि होते है। यह लक्षण व्यक्ति को अपने परिवेश में असामान्य रूप में चिह्नित होने का कारण बनते है तथा सहसंबधों में गिरावट को प्रेरित करते है।

4. *भावनात्मक लक्षण* - इन लक्षणों में व्यक्ति निराशा के भावों को प्रदर्शित करता है। वह अधीरता एवं जल्दबाजी अभिव्यक्त करता है। व्यक्ति के स्वंय के अशुद्धिकरण एवं व्यक्तिगत स्वच्छता के प्रति प्रत्यक्ष न होने की भावना जिससे कि वह अपने आप को विभिन्न अवसरों पर प्रस्तुत नहीं होने देने का प्रयास करता है। तथ्यों के प्रति भय एवं रोने जैसे भाव का प्रदर्शन विभिन्न अवसरों पर व्यक्त होता है। भावनात्मक लक्षण व्यक्ति के व्यक्तित्व को मूलभूत रूप से पृथक रूप में स्थापित कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

इस प्रकार अपने अपने आप में तनाव के लक्षणों को चिह्नित कर त्वरित निदानात्मक प्रक्रिया प्रारंभ किया जाना इस दृष्टि से लाभप्रद हो सकता है। तनाव विभिन्न बीमारियों का कारण बनता है। जिनमें प्रमुख बीमारियां हैं :

- हदयरोग
- प्रतिरक्षा तंत्र संबधी बीमारियॉ
- अस्थमा
- मधुमेह
- पाचन तंत्र संबधी अनियमिता
- त्वचा रोग
- सिर दर्द एवं माइग्रेन
- कुंठा

तनाव की घातकता के संबध में तथ्य स्थापित करते हैं कि मानव को होने वाली आधुनिक बीमारियों में से 80 प्रतिशत बीमारियों का मूल कारण तनाव होता है। यू.के. में 40 मिलियन कार्य दिवसों का नुकसान प्रतिवर्ष सिर्फ तनाव संबधी बीमारियों के कारण होता है। इसी प्रकार ब्रिटिश उद्योग में अनुमानतः 1.5 बिलियन पौण्ड का नुकसान तनाव संबधी कारणों से कर्मचारियों की अनुपस्थिति के कारण होता है।

तनाव प्रबंधन

पुलिस संगठन में तनाव के तथ्य एवं उन पर वृहद चर्चा स्वभाविक रूप से विभिन्न रैंक के अधिकारियो के मध्य सुनी जा सकती है। पुलिस संगठन में तनाव के विभिन्न कारक सतत विद्यमान रहते है। लेकिन तनाव को यह भी

जीवंतता के नजरिए से देखा जाएं तो मृत व्यक्ति एवं वस्तु में तनाव नहीं होता तथा जीवंत एवं सक्रिय व्यक्ति में ही तनाव होता है। इस प्रकार पुलिस संगठन को एवं इसकी कार्य प्रक्रिया में समाहित तनाव को संगठन की जीवंत स्थिति के रूप में देखा जाएं तथा पुलिस अधिकारी के प्रति समाज के आदर भाव, विभाग के अनुशासन तथा ग्लैमर के रूप में स्वीकार्य किया जावें, तो तनाव परेशानी के स्थान पर कार्य की स्वभाविक प्रतिक्रिया के रूप में निधार्रित किया जा सकता है। व्यवसाय एवं कार्य संबधी तनाव के संबध में सोच को बदलना आवश्यक है। व्यक्ति कार्य क्यों करता है? क्योकि कार्य व्यवसाय न केवल आमदनी का माध्यम होता है, बल्कि व्यक्ति की मानसिक, समाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी करता है। समाजिक सम्पर्क स्वंय के मूल्यांकन एवं स्तर का निर्धारण भी कार्य एवं व्यवयास के माध्यम से ही होता है। अतः कार्य के तनाव को परेशानी एवं पीडा के स्तर पर निर्धारित करने से पूर्व यदि व्यक्ति कुछ क्षणों के लिए यह विचार करें कि कार्य को छोड दिया जायें या परिवर्तित कर दिया जाए तो तनाव की स्थिति भिन्न रूप में प्रस्तुत होगी। व्यक्ति कार्य छोडने या परिवर्तन की स्थिति में अपने भविष्य मे आवश्यकताओं, सुख सुविधाओं के प्रति आशंकित होगा एवं कार्य के तनाव को आपेक्षित रूप से सरल मानकर स्वीकार करेगा। इस प्रकार कार्य स्थल के तनाव को सोच के परिवर्तन पर भिन्न स्थिति में अभिव्यक्त पाया जाता है। कार्यस्थल पर तनाव के विभिन्न कारक होते है।

कार्य परिस्थितियां
अधिक कार्य
अल्प कार्य
अनिश्चितता
उत्तरदायित्व
कार्य स्थल पर संबध
कार्य प्रक्रिया मे परिवर्तन

शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, तनाव कार्य स्थल की परिस्थिति के द्वारा प्रभावित होता है, जहां कार्य की परिस्थितियां अनुकूल एवं सुखदायक नहीं होती है। वहां व्यक्ति लगातार कार्य कर तनाव की स्थिति को प्राप्त होता है। अत्यधिक शोर, प्रकाश, तापमान एवं कार्य के अमानवीय समय से इस प्रकार की परिस्थिति उत्पन्न होती है। जो कि कार्य स्थल पर तनाव का कारण बनती है। कार्य आधिक्य एवं कार्य के अपेक्षित तकनीकि एवं बौद्धिक स्तर का अभाव भी व्यक्ति को तनाव की स्थिति में स्थापित करता है। दक्षता के अनुरूप कार्य की अल्पता भी

दूसरे रूप में तनाव का कारण बनती है तथा व्यक्ति उसकी क्षमताओ के निम्न निर्धारण एवं बोरियत, उपेक्षा आदि से न केवल परेशान होता है बल्कि सक्रियता के निम्न स्तर पर तनाव ग्रस्त हो जाता है। संगठन मे अनिश्चितता भी तनाव कारक बनती है। कार्य लक्ष्य परिस्थिति, उत्तरदायित्व, अपेक्षा, संचार की कमी, शंका, असहायता एवं तनाव का कारण उपस्थित कराती है। संगठन में अत्यधिक उत्तरदायित्व भी व्यक्ति को अधिक व्यस्तता एवं कार्य अपूर्णता की आशंका के रूप में तनाव कारित करती है। व्यक्ति के कार्यस्थल पर सहकर्मियो से संबध में सामंजस्य एवं मधुरता का अभाव व्यक्ति को कार्य के प्रति उत्साह एवं अभिप्रेरण के अभाव के रूप में वर्णित होकर तनाव का कारण बनता है। कार्य के स्वरूप मे परिवर्तन व्यक्ति को अनुकुलन के समय के अपेक्षा के रूप में चुनौती प्रस्तुत करता है तथा तत्कालिक अनुकूलन का अभाव तनाव के रूप में वर्णित होता है।

तनाव प्रबंधन के लिए विभिन्न रणनीति एवं तकनीकि की व्याख्या विभिन्न विद्वानो के द्वारा प्रस्तुत की जाती है। तनाव प्रबंधन वैसे तो व्यक्तिगत स्तर पर स्वंय द्वारा निर्धारित विभिन्न तकनीको के रूप में प्रभावी रूप से विभिन्न व्यक्तियों में भिन्न रूप में नैसर्गिक प्रक्रिया का स्थान प्राप्त करता है। तनाव प्रबंधन की रणनीति के रूप में ए, बी, सी रणनीति प्रभावी निर्धारण प्रस्तुत करती है।

ए, बी, सी रणनीति

यहां ए से आशय Awareness (जागरूकता), बी से आशय Balance (संतुलन) एवं सी से आशय Control (नियंत्रण) है। जागरूकता तनाव के कारण एवं उसके प्रति प्रतिक्रिया के संबध में आवश्यक जानकारी एवं उसके निदानात्मक सुझाव की निर्धारित प्रक्रिया की स्थापना स्वंय के स्तर पर करना। व्यक्ति किन परिस्थितियों मे तनावपूर्ण एवं किन परिस्थितियो में सामान्य है तथा किन परिस्थितियों मे वह अनुकूल एवं प्रसन्न है। यह जानकारी तनाव प्रबंधन में प्राथमिक एवं मूलभूत भूमिका निभाती है। व्यक्ति को लगातार इस संबध में जागरूक बने रहना एवं समय समय पर परिवर्तित परिस्थितियों के संबध में निर्धारण करना वाछंनीय होता है।

तनाव प्रबंधन में द्वितीय स्तर पर संतुलन का स्थान है। संतुलन धनात्मक एवं ऋणात्मक तनाव की परिस्थितियों के बीच निर्धारित करना अपेक्षित होता है। व्यक्ति किस स्तर पर तनाव के धनात्मक या सकारात्मक स्वरूप से नकारात्मक स्वरूप में प्रवेश कर रहा है। यह जानकारी एवं समुचित संतुलन अत्यधिक आवश्यक होता है। तनाव के प्रति संतुलित प्रतिक्रिया तथा संतुलित व्यवहार का प्रदर्शन तनाव प्रबंधन में महत्वपूर्ण होता है। व्यक्ति में नकारात्मक तनाव संतुलन

के अभाव का परिणाम कहा जाना अतिश्योक्ति नहीं होगा।

जागरूकता एवं संतुलन के उपरान्त नियंत्रण रणनीति का तृतीय भाग होता है। नियंत्रण से आशय तनाव के नकारात्मक प्रभावों से बचाव एवं स्वंय की अभिव्यक्ति पर नियंत्रण के रूप में माना जा सकता है। विभिन्न कार्यलक्ष्य संबधी निर्धारण एवं भावनात्मक अभिव्यक्ति जो कि अनियंत्रित रूप में तनाव के उदवेग का कारण बनती है पर प्रभावी नियंत्रण आवश्यक है। इस प्रकार व्यक्ति जागरूकता से जानकारी या सूचना प्राप्त कर तनाव की नकरात्मक रेखा के उल्लंघन से बचाव का प्रयास करता है एवं भावनाओं एवं प्रभावों की नकारात्मक अभिव्यक्ति पर नियंत्रण निर्धारित कर तनाव प्रबंधन सुनिश्चित करता है।

तनाव प्रबंधन कि विभिन्न तकनीकों में परिवर्तन को विशेष स्थान प्रदाय किया जाता है। परिवर्तन विचार के स्तर पर, व्यवहार के स्तर एवं जीवन शैली के स्तर पर निर्धारित होता है। अपने विचार के स्तर पर तथ्यों की पुनः प्रारूपगत स्थापना जहां विचार के स्तर पर निर्धारित नकारात्मक पूर्वाग्रहो का परिहार एवं सकारात्मक रूप में स्थापन किया जाता है। किसी भी परिस्थिति तथ्य या विचार के नकरात्मक एवं सकारात्मक विचार पहलू होते है, व्यक्ति को तनाव प्रबंधन के लिए आवश्यक है कि वह सकारात्मक सोच को महत्ता प्रदान करें। अपनी अक्षमताओं, असमर्थताओं एवं असफलताओं को भूलकर उन्हें शिक्षा, प्रेरणा या अनुभव के सकारात्मक रूप में स्थापित करना एवं नकारात्मक सुझावों की उपेक्षा करना इस दिशा मे प्रभावी हो सकता है। धनात्मक सोच की किन क्षेत्रों मे व्यक्तिगत स्तर पर प्रभावी है, तनाव के कारकों से निदान कारकों का निर्धारण करना एवं अवसर एवं चुनौतियों को धनात्मक अभिप्रेरण के रूप में स्वीकार करना प्रभावी हो सकता है। व्यक्ति का व्यवहार सतत निर्मित एवं निर्धारित होने वाली प्रक्रिया है तथा सतत प्रचलित किसी भी विचार या मापदण्ड में समय समय पर परिमार्जन एवं परिवर्तन आवश्यक होता है। व्यक्ति का व्यवहार विभिन्न पूर्वाग्रहों एवं निर्धारणों के कारण नकारात्मक एवं तनाव कारक तथ्यों को समाहित करता है, इन में सकारात्मक परिवर्तन वांछित होते है। व्यक्ति की जीवन शैली देर से सोना, कम सोना, अनियत्रित आहार, व्यायाम, योगभ्यास का अभाव, भावनात्मक संबधों के प्रति उपेक्षा, मनोरंजन एवं सुखदाई समय का अभाव, नशे की प्रवृत्ति आदि कारक व्यक्ति को तनावग्रस्त करते है। अतः आवश्यक है कि अपनी जीवनचर्या एवं जीवन शैली में अपेक्षित परिवर्तन आवश्यक हो जाते है।

तनाव प्रबंधन के लिए विभिन्न सूझाव सामान्य रूप में प्रस्तुत किए जाते है, यथा

कार्य के बीच लघु लेकिन प्रभावी अंतराल
स्वंय की रुचियों को जीवन में स्थान
धार्मिक एवं भावनात्मक आस्था को स्थान
योग, व्यायाम
हास-परिहास के लिए समय
क्षमता के अनुरूप लक्ष्य निर्धारण
अतिमहत्वाकांक्षा से बचाव
स्वंय के मूल्यों का निर्धारण एवं पालन
शिष्टाचार मानकों का पालन
स्वयं की उत्तरदायित्व की सीमाओं का निर्धारण
प्रभावी समय प्रबंधन
तकनीकि एवं कौशल संबधी अद्यतन ज्ञान
पारिवारिक अपेक्षाओं की पूर्ति
कार्यस्थल पर सह संबधों में भावनात्मक दक्षता का प्रदर्शन
सकरात्मक प्रतिस्पर्धा का स्वीकार्य एवं नकारात्मक का परिहार

एवं इसके अलावा अन्य सामान्य सुझाव भी प्रस्तुत किए जाते हैं। वास्तव में तनाव प्रबंधन इस संबधी जागरूकता का विषय है। तनाव नियंत्रण एवं प्रबंधन के प्रति सतत एवं प्रभावी जागरूकता का निर्धारण समस्या का आधा समाधान प्रस्तुत कर देता है। आवश्यकता होती है कि व्यक्ति तनाव के स्तर को पहचान कर उसके प्रति अपेक्षित निदान को स्थान प्रदान करें अन्य शब्दों में तनाव प्रबंधन की तकनीको एवं सुझावों में निर्धारित तथ्यों में से उपयुक्त का चयन कर प्रभावी निदान सुनिश्चित किया जा सकता है। पुलिस संगठन में तनाव कारकों की व्याख्या एवं विश्लेक्षण करने पर ज्ञात होता है कि पुलिस के अधिकांश तनाव संगठन की कार्य संस्कृति एवं कार्य प्रकृति के परिणाम होते है तथा इन का निवारण इन्ही मे निहित होता है। पुलिस संगठन में नेतृत्वकर्ता की भूमिका तनाव के स्तर एवं स्वरूप की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण होती है। पदक्रम संबधी भावनाएं एवं अधिकारी के व्यवहार कड़े शब्द, अव्यवहारिक लक्ष्य तथा कर्मचारी के प्रति दुर्भावना आदि कर्मचारियों के स्तर पर तनाव के मुख्य कारक होते है। पुलिस नेतृत्व के विभिन्न स्तरों पर अधिकारियों को विचार करना होगा कि अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के स्वास्थ एवं तनाव में उनका कितना योगदान है। इकाई प्रमुख को अपने कार्य लक्ष्यों की पूर्ति एवं व्यवसायिक दक्षता के प्रदर्शन के साथ महत्वपूर्ण रूप में कर्मचारियो के तनाव के प्रति संवेदनशील होना होगा। पुलिस

के कार्य लक्ष्य एवं चुनौतियां अत्यधिक गंभीर प्रकृति की होती है। स्वाभाविक है कि विपरीत परिस्थितियां निर्मित हों लेकिन तनाव एवं घबराहट के निदान के उपयुक्त तरीके नहीं है। ऐसी परिस्थितियों मे नेतृत्व का प्राथमिक दायित्व है कि वह तनाव के स्थान पर निदान में अपनी भूमिका प्रस्तुत करें। अधिकारी स्तर पर सिर्फ कमियां निकालना एवं अपशब्द, दण्डात्मक कार्यवाही ही उत्तरदायित्व नहीं है। अपितु अधिकारी को अपने स्तर के व्यवसायिक निदान एवं कौशल के सुझाव प्रस्तुत कर अपना दायित्व निर्धारित करना चाहिए। 'क्या', परिणाम क्या एवं निदान क्या में से अधिकारी को तृतीय स्तर पर अधिक ध्यान देना अपेक्षित होता है। इस प्रकार वह न केवल स्वंय के बल्कि संगठन के कर्मचारियो के तनाव को भी नियंत्रित कर सकता है। पुलिस संगठन में तनाव के अन्य कारक के प्रति निदान की दृष्टि से भावनात्मक दक्षता का नेतृत्व के स्तर पर प्रदर्शन बहुमूल्य हो सकता है। भावनात्मक तारतम्य की स्थापना न केवल कार्य के प्रति प्रतिबद्धता की दृष्टि से बल्कि तनावपूर्ण परिस्थिति के निवारण की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण हो सकती है। कार्य परिवेश मे भावनाओं का सम्मान सर्वागं, उत्कृष्टता की स्थापना कर सकता है। पुलिस पर विभिन्न दबावों की बात लगतार प्रकाश मे आती है। यह भी अच्छे नेतृत्वकर्ता का गुण होना चाहिए कि वह इस प्रकार के दबाव का समाहार उपयुक्त रूप में करें तथा इन कारकों को तनाव के रूप में परिणत न होने दें। पुलिस संगठन मे कल्याणकारी गतिविधियों को नियमित स्थान प्रदान करना, कर्मचारियों के पारिवारिक आवश्यकताओ के प्रति संवेदनशील एवं निदानात्मक भूमिका प्रस्तुत करना, पदोन्नती के प्रति, निर्धारण सुनिश्चित करना एवं संगठन के आंतरिक पारस्परिक व्यवहार प्रदर्शन में मानवीय मूल्यों को स्थान प्रदान करना श्रेयस्कर हो सकता है। निर्णय की स्पष्टता इस दिशा में अत्यधिक प्रभावी भूमिका प्रस्तुत कर सकती है। पुलिस संगठन निर्णय एवं निर्धारण की अनिश्चितता एवं आशंका की स्थिति में तनावग्रस्त होता है। पुलिस नेतृत्व यदि निर्णय निर्देश आदि को स्पष्ट तथा त्वरित रूप में प्रतिपादित करें तो निश्चत ही सकारात्मक परिणाम प्राप्त किए जा सकतें है। निष्कर्षतः यह कहां जा सकता है कि पुलिस संगठन के तनाव प्रबधंन एवं नियंत्रण में नेतृत्व की मूल भूत भूमिका होती है तथा नेतृत्वकर्ता यदि बुद्धिमत्तापूर्ण नेतृत्व क्षमता का प्रदर्शन करे तो संगठन के तनाव कारकों को न्यून किया जा सकता है। तनाव प्रबंधन एवं नियंत्रण पुलिस नेतृत्वकर्ता का आवश्यक एवं महत्वपूर्ण गुण है। पुलिस संगठन में तनाव कारकों के परिणाम सकारात्मक स्तर तक प्राप्त किया जाना एवं नकारात्मक परिणामों को अवरूद्ध करना नेतृत्वकर्ता का उत्तरदायित्व है।

अध्याय 10

पुलिस से सामाजिक अपेक्षाएं और नेतृत्व

समाज में कानून व्यवस्था की स्थापना कानूनों का पालन अपराध नियंत्रण अपराधों की रोकथाम एवं अपराधों की पतारसी विवेचना के लिए निर्धारित संगठन को पुलिस संगठन के रूप में जाना जाता है। सामान्य तौर पर पुलिस संगठन शासन के विभाग के रूप में कार्य करता है। सन् 1861 के पुलिस अधिनियम में पुलिस के दायित्वों को धारा 23 में रेखांकित किया गया है जो कि विधिपूर्ण आदेश एवं वारंटों का पालन एवं निष्पादन, लोकशांति को प्रभावित करने वाली गुप्तवार्ता का संग्रहण और संसूचना, अपराधों और लोकन्यूसेंसों के किए जाने का निवारण, अपराधियों का पता चलाना ओर न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करना आदि दर्शाए गए हैं। वर्तमान परिदृश्य में पुलिस से समाज की अपेक्षाएं एवं पुलिस के दायित्व और अधिक महत्वपूर्ण कलेवर प्राप्त करते हैं। वर्तमान परिवेश में जहां पुलिस के निर्धारित दायित्व अधिक चुनौती पूर्ण रूप में पुलिस के समक्ष हैं वहीं नई नई चुनौतियां आतंकवाद, नक्सलवाद, सायबर अपराध, एवं राजनैतिक धार्मिक संघर्षों के रूप में पुलिस के समक्ष हैं विभिन्न विशिष्ट व्यक्तियों पर हुए हमलों के कारण वी.आई.पी. सुरक्षा पुलिस संगठन के दायित्वों का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बनके प्रत्यक्ष हुआ है। पुलिस के दायित्वों को मुख्य बिन्दुओं के आधार पर निम्न रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

- कानून व्यवस्था का निर्धारण
- अपराध नियंत्रण
- अपराध विवेचना एवं पतासाजी
- वी.आई.पी. सुरक्षा
- आतंकवादी, अलगाववादी गतिविधियों का प्रतिरोध
- न्याय व्यवस्था संचालन में सहयोग

- शासकीय विभागों के कार्यों में सहयोग
- जन आयोजनों में व्यवस्थापन
- यातायात संबंधी व्यवस्थाप

इस प्रकार सामान्य तौर पर अपराध संबंधी दायित्व पुलिस के माने जाते थे जो कि वर्तमान परिवेश में विविधमुखी रूप प्राप्त कर चुके हैं साथ ही अपराध शब्द अब सामान्य मारपीट हत्या, चोरी, डकैती के सामान्य स्वरूपों से भिन्न जालसाजी धोखाधडी, दस्तावेजों की हेरफेर, सूचना प्रोधोगिकी संबंधी अपराध, कंम्प्युटर संबंधी अपराध, मादक पदार्थो की तस्करी संबंधी अपराध आतंकवाद नक्सलवाद विस्फोटक संबंधी अपराध, जाली मुद्रा, स्टाम्प, पासपोर्ट संबंधी अपराधों के विभिन्न रूपों में वृहद विस्तार प्राप्त कर चुका है। यदि आपराधिक परिदृश्य पर विचार किया जाए तो पुलिस संगठन की चुनौती संबंधी गंभीर परीदृश्य प्रत्यक्ष होता है।

वर्तमान अपराध परिदृश्य

वर्ष 1953 से अपराध संबंधी सांख्यिकी 'क्राईम इन इंडिया' नाम से भारत सरकार द्वारा प्रकाशित की जाती है। इसी प्रकार नेशनल क्राईम रिकार्ड ब्यूरों द्वारा भी अपराध सांख्यिकी के आंकड़े गत दशक से प्रस्तुत किए जा रहे है। क्राईम इन इंडिया में माह सितम्बर 2011 में वर्ष 2010 के राष्ट्र स्तरीय अपराध संबंधी आंकड़े प्रकाशित किए गए हैं। वर्ष 2010 में कुल 67 लाख 50 हजार 748 संज्ञेय अपराध दर्ज किए गए हैं। जो कि वर्ष 2000 में दर्ज किए गए 51 लाख 67 हजार 750 संज्ञेय अपराधों की अपेक्षा 30.6 प्रतिशत अधिक हैं तथा वर्ष 2000 से 2010 के मध्य प्रतिवर्ष औसत 2.2 प्रतिशत की वृद्धि का रूझान आंकड़े प्रदर्शित करते हैं। संज्ञेय अपराधों में यदि भारतीय दण्ड विधान एवं विशेष एवं स्थानीय अधिनियम के अपराध संबंधी आंकडों को पृथक पृथक प्रस्तुत किया जाए तो वर्ष 2000 के 17 लाख 71 हजार 84 भादवि संज्ञेय अपराधों की तुलना में वर्ष 2010 में 22 लाख 24 हजार 831 संज्ञेय अपराध दर्ज किए गए है। जो कि वर्ष 2000 से वर्ष 2010 के आंकडो में कुल 25.6 प्रतिशत की वृद्धि प्रदर्शित करते हैं, तथा प्रतिवर्ष संयुक्त रूप से औसत वुद्धि 2.5 प्रतिशत की हुई है। विशेष एवं स्थानीय अधिनियम के तहत अपराधों में वर्ष 2000 में जहां 33 लाख 96 हजार 666 अपराध दर्ज किए गए थे वहीं वर्ष 2010 में 45 लाख 25 हजार 917 अपराध दर्ज किए गए हैं जो कि वृद्धि का कुल प्रतिशत 33.2 रहा है। तथा वार्षिक औसत वृद्धि 2 प्रतिशत दर्ज की गई है। इस प्रकार सामान्य

कार्यकलापों के क्षेत्र में उत्तरोत्तर वृद्धि एवं नवीन चुनौतियों के साथ ही अपराध एवं भादवि अपराधों में उत्तरोत्तर वृद्धि का रूझान प्रदर्शित होता है। वर्ष 2010 में कुल 33335 हत्या के अपराध दर्ज किए गए, जिनमें चालानी कार्यवाही का प्रतिशत 8.42 प्रतिशत रहा। तथा सजायाबी प्रतिशत 36.7 रहा। हत्या का प्रयास के 29421 प्रकरण दर्ज कर 899 प्रतिशत चालानी कार्यवाही की गई। जबकि सजायाबी 29.9 प्रतिशत रही। बलात्कार के 22172 प्रकरण दर्ज किए गए जिनमें 94.5 प्रतिशत प्रकरणों में चालानी कार्यवाही की गई तथा 26.6 प्रतिशत सजायाबी की दर रही। अपहरण के 38440 प्रकरण दर्ज किए गए जिनमें 72.4 प्रतिशत में चालान किया गया तथा सजायाबी 27.7 रही, डकैती के 4358 प्रकरणों में 764 प्रतिशत चालान तथा 21.9 प्रतिशत सजायाबी रही, लूट के 23393 प्रकरणों में से 70.6 प्रतिशत में चालान किया गया तथा 28.3 प्रतिशत सजायाबी रही। इस प्रकार कुल हिंसक अपराध 2 लाख 41 हजार 986 दर्ज किए गए, जिनमें से 84.6 प्रतिशत में चालान एवं 27.7 प्रतिशत में सजायाबी हुई है। महिला संबंधी अपराधों में लैंगिग हिंसा एवं शोषण, अपहरण, पति एवं परिजनों की प्रताड़ना तथा ट्रेफिकिंग के कुल 2 लाख 13 हजार 585 अपराध पंजीबद्ध किए गए जिनमें 92 प्रतिशत अपराधों में चालान किया गया तथा 2.78 प्रतिशत में सजायाबी हुई आर्थिक अपराधों में अपराधिक न्यास बंद छल कूट करण आदि से संबंधित कुल 98 हजार 266 मामले दर्ज किए गए जिनमें 70.6 प्रतिशत चालानी दर एवं 30.3 प्रतिशत सजायाबी दर रही। संपत्ति संबंधी अपराधों में चोरी, नकबजनी के कुल 4 लाख 20 हजार 491 प्रकरण दर्ज किए गए जिनमें 38.9 प्रतिशत चालान एवं 36.7 प्रतिशत की सजायाबी दर्ज की गई। अनुसूचित जाति उत्पीडन संबंधी 32 हजार 712 प्रकरण दर्ज किए गए जिनमें 90.7 प्रतिशत चालानी कार्यवाही की गई तथा 35 प्रतिशत सजायाबी दर्ज हुई, अनुसूचित जन जाति की प्रताडना संबंधी 5 हजार 885 प्रकरण दर्ज किए गए जिनमें 96 प्रतिशत चालान एवं 25 प्रतिशत सजायाबी दर्ज हुई। इस प्रकार भारतीय दण्ड विधान के कुल 22 लाख 24 हजार 831 प्रकरणों में मात्र 79.1 प्रतिशत चालानी दर तथा 40.7 प्रतिशत सजायाबी की दर दर्ज हुई है। जबकि विशेष एवं स्थानीय अधिनियमों के अंतर्गत 45 लाख 25 हजार 917 प्रकरणों में से चालानी दर 94.7 प्रतिशत तथा सजायाबी दर 91.7 प्रतिशत रही है। जो कि कुल संज्ञेय अपराधों की सजायाबी के प्रतिशत में महत्वपूर्ण भूमिका निर्धारित करती है।

यदि प्रति 1 लाख जनसंख्या पर अपराध दर के रूप में आंकडों को

प्रदर्शित किया जाए तो वर्ष 2000 में हत्या के 37 हजार 399 प्रकरण हुए जो कि प्रतिलाख जनसंख्या दर 3.7 रही, वर्ष 2005 में हत्या के 32719 प्रकरणों में यह दर 3.0 रही, वर्ष 2006 कुल 32481 हत्या के प्रकरण दर्ज किए गए तथा प्रतिलाख जनसंख्या पर हत्या की दर 2.9 रही। वर्ष 2007 में 32318 हत्या के प्रकरणों में यह दर 2.8 रही, तथा क्रमशः वर्ष 2008-09 में कुल 32466 एवं 32369 हत्या के प्रकरणों के साथ प्रतिलाख हत्या की दर 2.8 पर स्थिर रही। इस प्रकार जनसंख्या के समानुपातिक हत्या के अपराध में वृद्धि का रूझान प्रदर्शित नहीं होता है। इसी प्रकार हत्या का प्रयास के मामलों में प्रतिलाख जनसंख्या पर अपराध दर जहां वर्ष 2000 में 3.1 थी, वहीं 2009 में यह दर 2.5 पर सिमट गई। इसी प्रकार आपराधिक मानवबध एवं उसके प्रयास संबंधी प्रकरणों के संबंध में यह दर वर्ष 2000 में 0.4 से वर्ष 2009 में 0.3 के स्तर पर दर्ज की गई। बलात्कार के प्रकरण वर्ष 2000 में प्रतिलाख जनसंख्या पर 1.6 की दर से दर्ज किए गए जो कि वर्ष 2005 में 1.7 वर्ष 2006 में 1.7 वर्ष 2007 में 1.8, वर्ष 2008 में 1.9 एवं वर्ष 2009 में 1.8 के रूप में अल्प उतार चढाव के साथ लगभग स्थिरता का रूझान प्रस्तुत करते हैं। इसी प्रकार डकैती के मामले वर्ष 2000 में प्रतिलाख जनसंख्या पर 0.7 दर्ज किए गए जो वर्ष 2009 में 0.4 दर्ज हुए ग्रह भेदन के मामलों में प्रतिलाख जनसंख्या अपराध दर वर्ष 2000 में 10.5 वर्ष 2005 में 8.2 वर्ष 2006 में 8.2 में, वर्ष 2007 में 8.0 वर्ष 2008 में 8.1, वर्ष 2009 में 7.9 दर्ज की गई, इस प्रकार प्रतिलाख जनसंख्या गृहभेदन में क्रमशः अल्पता का रूझान, प्रदर्शित हुआ। यदि इस दौरान भादवि के कुल अपराधों के प्रतिलाख जनसंख्या दर का विश्लेषण किया जाए तो वर्ष 2000 में प्रतिलाख जनसंख्या भादवि अपराध 176.7, वर्ष 2005 में 165.3 वर्ष 2006 में 167.7, वर्ष 2007 में 175.1 वर्ष 2008 में 181.5, एवं वर्ष 2009 में 181.4, दर्ज की गई है। भादवि के कुल अपराध प्रतिलाख जनसंख्या दर की दृष्टि स लघु उत्थान प्रदर्शित करते हैं। इसमें यह महत्वपूर्ण है कि हत्या, हत्या का प्रयास, एवं डकैती जैसे अपराध की दर में प्रति लाख जनसंख्या की दृष्टि से अल्पता का रूझान प्रस्तुत करती है जबकि पति एवं परिजनों द्वारा हिंसा, दुर्घटना, एवं लापरवाही संबंधी अपराध एवं छल कपट, कूटकरण संबंधी अपराधों में उत्थान प्रदर्शित हुआ है। यह आंकड़े जहां जन संख्या के समानुपातिक अपराध वृद्धि नहीं होने को व्यक्त करते हैं। वहीं यह भी व्यक्त करते है कि अपराधों का परिदृश्य, परिवर्तित, स्वरूप में वृद्धि को प्राप्त कर रहा है।

वर्ष 1953 से अखिल भारतीय स्तर पर आपराधिक सांख्यिकी का

प्रकाशन किया गया तथा वर्ष 2010 के अंतिम आंकड़े क्राईम इन इंडिया द्वारा प्रकाशित किए गए हैं। यदि वर्ष 1953 एवं 2010 के आंकड़ों की तुलनात्मक व्याख्या की जाए तो वर्ष 1953 में जहां कुल 6 लाख 1 हजार 964 भारतीय दण्ड विधान के संज्ञेय अपराध दर्ज किए गए थे वहीं वर्ष 2010 में 22 लाख 24 हजार 831 प्रकरण दर्ज हुए जो कि वर्ष 1953 से वर्ष 2010 तक कुल 369.6 प्रतिशत की वृद्धि कुल भादवि अपराधों में हुई है। इसी प्रकार मतबार विश्लेषण पर हत्या में वर्ष 1953 की अपेक्षा 2010 में 240.1 प्रतिशत की वृद्धि, बलात्कार में 79.1 प्रतिशत वृद्धि, अपहरण में 630.7 की वृद्धि, लूट में 178.3 प्रतिशत की वृद्धि, एवं बल्वा में 229.1 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है। यहां आश्चर्यजनक रूप से ग्रहभेदन के प्रकरण जो कि वर्ष 1953 में एक लाख 47 हजार 379 दर्ज किए गए थे जो कि वर्ष 2010 में 38.8 प्रतिशत कमी के साथ 90 हजार 179 प्रकरण दर्ज किए गए, इसी प्रकार डकैती के मामले वर्ष 1953 में 5579 दर्ज किए गए थे जो वर्ष 2010 में 4358 दर्ज किए गए जो कि 21.9 प्रतिशत की कमी इन अपराधों में दर्ज की गई। जो कि यह रूझान यह दर्शाता है कि वर्ष 1953 की अपेक्षा भादवि अपराधों में अत्यधिक वृद्धि दर्ज की गई है। वृद्धि की अपेक्षा पुलिस बल एवं संसाधन की वृद्धि दर अपेक्षाकृत नहीं रही है। अपराधों के पारंम्परिक तरीको में परिवर्तन प्रदर्शित हुआ है तथा आधुनिक तकनीक एवं सुगमता के आधार पर अपराध प्रचलन बड़ा है। अपराधों के संबंध में पुलिस की सफलता, अपराधी की गिरफ्तारी, साक्ष्य संग्रहण एवं चालानी कार्यवाही के उपरांत सजायाबी की स्थिति में पूर्ण होती है। लेकिन प्रदर्शित आंकड़े यह व्यक्त करते हैं कि संपत्ति संबंधी अपराधों में चालानी, कार्यवाही की दर वर्ष 2010 में मात्र 38.9 प्रतिशत रही है तथा उसमें भी मात्र 36.7 प्रतिशत अपराधियों को सजा दिलाने में सफलता पुलिस को प्राप्त हुई है। इसी प्रकार लगभग 30 प्रतिशत आर्थिक अपराधियों के विरूद्ध साक्ष्य संकलन में पुलिस को सफलता प्राप्त नहीं हुई तथा चालान किए गए 70.6 प्रतिशत अपराधियों में से मात्र 30.3 प्रतिशत अपराधियों को ही सजा दिलाने में पुलिस सफल रही। चालानी एवं सजायाबी की अल्पता कहीं न कहीं अपराध वृद्धि का कारण बनती है। इस प्रकार का अपराध परिदृश्य न केवल पुलिस संगठन के लिए कठोर चुनौती प्रस्तुत करता है बल्कि अपराध नियंत्रण की संभावनाओं की क्षीणता भी इसमें समाहित हो जाती है।

अपराध निराकरण परिदृश्य

अपराधों का समय अवधि में निराकरण पुलिस संगठन की कार्य दक्षता की

दृष्टि स अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है। प्रत्येक लंबित अपराध घटित होने वाले अपराधों के साथ जुडता जाता है। तथा कार्य आधिक्य की स्थिति निर्मित करता है। पुलिस विभाग में प्रत्येक विवेचना अधिकारी अपेक्षा से अधिक पेन्डेन्सी से ग्रसित है। जिसका परिणाम यह है कि वह अपनी क्षमता के कार्य भी कार्य आधिक्य के कारण निष्पादन नहीं कर पाता जिसका सीधा लाभ अपराधिक तत्वों को मिलता है। वर्ष 2010 के आपराधिक निराकरण संबंधी आंकडो का विवेचन किया जाए तो वर्ष 2010 में हत्या के 58 हजार 469 अपराध विवेचना हेतु लंबित हुए जिनमें पूर्व वर्षों के लंबित अपराध शामिल हैं। इन अपराधों में से तीन अपराध शासन द्वारा वापस लिए गए, 75 अपराधों में विवेचना स्वीकार नहीं की गई। 1416 मामले गलत या झूठी रिपोर्ट के आधार पर दर्ज पाए गए। 25196 मामलों में चालान प्रस्तुत किया गया तथा 4722 मामलों में अंतिम रिपोर्ट दर्ज की गई। इस प्रकार कुल 31334 प्रकरणों की विवेचना पूर्ण की गई तथा 27057 हत्या के अपराध वर्ष 2010 में लंबित रह गए, इस प्रकार विवेचना के अंतिम सोपान तक पहुंचने में लगभग आधे मामले असफल रहे जो कि वर्ष 2011 के लंबित हत्या संबधी अपराधों में शुमार हुए। इसी प्रकार हत्या के प्रयास के 46005 मामलों में से 27606 की विवेचना पूर्ण हुई तथा 18373 प्रकरण लंबित शेष रहे, बलात्कार 33436 प्रकरणों में 21411 का निराकरण किया गया तथा 11998 प्रकरण लंबित रहे। कुल भादवि के 11 लाख 43 हजार 894 प्रकरण वर्ष 2010 में लंबित हुए जिसमें से 9 लाख 1 हजार 553 का निराकरण किया गया तथा 2 लाख 41 हजार 794 प्रकरण लंबित शेष रहे। कुल संज्ञेय अपराधों की दृष्टि से वर्ष 2010 में पूर्व शेष को शामिल करते हुए 29 लाख 85 हजार 719 प्रकरण लंबित हुए जिनमें से 21 लाख 56 हजार 257 का निराकरण किया गया तथा 8 लाख 26 हजार 631 प्रकरण विवेचना के लिए लंबित शेष रहे। इस प्रकार का निराकरण का परिदृश्य विवेचना के स्तर पर कार्य आधिक्य की स्थिति को व्यक्त करता है। अपराधों के विवेचनागत अंतिम निराकरण के लंबित रहने का यह स्तर आगामी वर्ष में दर्ज होने वाले अपराधों की विवेचना एवं लंबित अपराधों में न केवल वृद्धि करता है। बल्कि विवेचना के स्तर को भी नकारात्मक रूप में प्रभावित करता है। पुलिस संसाधनों की अल्पता विभिन्न बंदोबस्त वीआईपी सुरक्षा एवं कानून व्यवस्था ड्यूटीयों का आधिक्य इस प्रकार के लंबित प्रकरणों का मुख्य कारण है। अपेक्षित संख्यानुसार विवेचको में वृद्वि नहीं होना एवं उपलब्ध विवेचक एवं बल का अन्य कार्यों में भी समाहित होना इसके लिए उत्तरदाई है। विवेचना के स्तर में गिरावट प्रत्यक्ष रूप से अपराधियों की दोषमुक्ति

के प्रतिशत में वृद्धि का प्रमुख कारक बनता है।

प्रकरण की विवेचना उपरांत चालान प्रस्तुत किए जाने के बाद भी पुलिस के दायित्व की इति नहीं होती है, न्यायालय में विचारण के दौरान गवाहों को उपस्थित कराना आरोपी को न्यायालय पेश करना प्रकरण संबंधी समंस वारंट तामील करना, प्रकरण के संबंध में विधि विज्ञान मेडिको लीगल अंगुंल चिह्न, हस्त लिपी आदि संबंधी विभिन्न रिपोर्ट न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करना एवं विवेचक द्वारा न्यायालय में विवेचना कार्यवाही को प्रमाणित करना आदि पुलिस के दायित्व होते हैं। अतः प्रकरण के न्यायालय में लंबित रहने के दौरान पुलिस मशीनरी की उर्जा का व्ययन जारी रहता है। वर्ष 2010 में न्यायालय से विभिन्न मदबार निराकृत किए गए प्रकरणों के विश्लेषण से पुलिस के अतिरिक्त कार्य दबाव की स्थिति व्यक्त होती है। वर्ष 2010 में पूर्व वर्ष के लंबित मामलों को शमिल करते हुए न्यायालयों में हत्या के 1 लाख 76 हजार 57 मामलों का विचारण किया गया, 02 प्रकरण शासन द्वारा वापस लिए गए, 82 मामलों में राजीनामा या केस वापसी की स्थिति निर्मित हुई, 8 हजार 383 प्रकरण दोषसिद्घी के साथ तथा 14437 प्रकरण दोष मुक्ति के निराकृत हुए इस प्रकार कुल 22 हजार 820 हत्या के प्रकरणों का न्यायालपीन निराकरण किया गया तथा वर्षान्त पर 1 लाख 53 हजार 155 प्रकरण हत्या के न्यायालयों में लंबित रहे। इसी प्रकार हत्या के प्रयास के 1 लाख 44 हजार 191 प्रकरणों में 20261 का न्यायालपीन निराकरण हुआ तथा 1 लाख 23 हजार 629, हत्या के प्रयास के वर्षान्त पर लंबित रहे। बलात्कार के 89 हजार 707 प्रकरणों में 14263 का निराकरण हुआ तथा 75 हजार प्रकरण न्यायालपीन निराकरण को शेष रहे, कुल भादवि के 85 लाख 49 हजार 655 प्रकरण वर्ष 2010 में पूर्व के लंबित शामिल करते हुए लंबित हुए जिनमें से मात्र 11 लाख 41 हजार 31 का न्यायालपीन निराकरण हो सका तथा 72 लाख 58 हजार 302 भादवि के प्रकरण न्यायालपीन निराकरण को शेष रहे। इस प्रकार आंकड़े बताते है कि न्यायालईन लंबित प्रकरणों की संख्या बहुत अधिक है। तथा वर्ष में दर्ज होने वाले प्रकरणों से अधिक पैन्डेन्सी पूर्व वर्ष की प्राप्त होती है। यह लंबित प्रकरण संख्या लगातार वृद्धि प्राप्त कर रही है क्योकि निराकरण की दर, दर्ज होने वाले प्रकरणों की दर से न्यून है। यह आंकड़े पुलिस संसाधनों के व्ययन की स्थिति स्पष्ट करते हैं, तथा पुलिस संसाधनों एवं पुलिस के मानवीय संसाधनों की अपेक्षा की सीमा को व्यक्त करते हैं। जबकि वास्तविक धरातल पर पुलिस संसाधनों का विकास इस स्तर से नहीं हुआ।

जन संख्या पुलिस अनुपात

भारत की आंतरिक सुरक्षा संबंधी समस्याओं का 90 प्रतिशत कारण समुचित पुलिस सुधारों का अभाव है। अध्ययन के साथ ही भारत सरकार के ग्रह मंत्रालय द्वारा भी इस तथ्य को न केवल स्वीकार किया गया है बल्कि इस संबंध में सार्थक प्रयास भी प्रारंभ किए गए है। अखिल भारतीय स्तर पर प्रति एक लाख व्यक्तियों पर स्वीकृत पुलिस बल 145.25 है, जबकि उपलब्ध बल 117.09 है। जबकि संयुक्त राष्ट्र के द्वारा प्रतिलाख जनसंख्या पर निर्धारित मानक अनुसार पुलिस बल 220 होना चाहिए इस प्रकार लगभग 6 लाख पुलिसकर्मियों की कमी सतत विद्यमान है। चूंकि पुलिस राज्य का विषय है अतः राज्य सरकारों के 80 हजार पुलिसकर्मी प्रतिवर्ष नियुक्त करने की अपेक्षा की गई है। पुलिसकर्मियों की नियुक्ति में नियुक्ति की प्रक्रिया एवं प्रशिक्षण दोनों ही महत्वपूर्ण पहलू हैं यदि पुलिसकर्मी मैरिट के आधार पर चयनित होता है तो वह कार्य के प्रति उत्तरदाई एवं निष्ठावान होता है। अन्य परिस्थिति में यदि गलत साधनों के इस्तेमाल से यदि वह नियुक्ति प्राप्त करता है। तो वह नौकरी के दौरान अपना निवेश वापस करने एवं उस पर लाभ कमाने की प्रक्रिया में संलग्न हो जाता है। अतः यह अत्यधिक आवश्यक है कि पुलिस की नियुक्ति प्रक्रिया पूर्ण रूपेण पारदर्शी हो। पुलिस प्रशिक्षण एक सामान्य नागरिक को पुलिस कर्मी के रूप में तैयार करता है। लेकिन पुलिस फोर्स के प्रशिक्षण के संबंध में पर्याप्त विद्यालयों एवं संसाधनों का अभाव लगातार प्रकाश में आता है। जम्मू कमीर राज्य में कुल चार पुलिस ट्रेनिंग स्कूल हैं जिनमें भी प्रशिक्षण नगण्य स्तर का है। बिहार राज्य में कोई पुलिस ट्रेनिंग स्कूल नहीं है जिसका की परिणाम है कि पुलिस कर्मी नियुक्ति के पश्चात तैनात होकर कार्य के दौरान ही प्रशिक्षण प्राप्त करता है तथा विशेषज्ञता की स्थिति को प्राप्त नहीं कर पाता। इसी प्रकार वरिष्ट स्तर पर भी प्रशिक्षण की अल्पताएं प्रकाश में आती हैं। पुलिस उपाधीक्षक स्तर के अधिकारी भी कंम्प्युटर के उपयोग को नहीं जानते हैं। सायबर अपराध के निराकरण का कोई प्रशिक्षण उन्हें अपने सेवाकाल में प्राप्त नहीं हो पाता है। सामान्यतः सेवा के दौरान मूल प्रशिक्षण एक दौर में ही दिया जाता है। तथा बाद के कैप्सूल प्रशिक्षण कोर्स औपचारिकता मात्र रह जाते हैं। ऐसी स्थिति में विकास के नए क्षेत्रों में पारंगतता प्राप्त नहीं की जा सकती। पुलिस कार्यों में राजनैतिक हस्तक्षेप एवं पक्षपात की प्रधानता पुलिस कार्य प्रणाली पर न केवल आक्षेप है बल्कि आम जनता में पुलिस के प्रति विश्वास कम होने का प्रमुख कारण भी है। भारत के एक बड़े राज्य में सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश एवं स्थानान्तरण बोर्ड की स्थापना के पूर्व पुलिस अधीक्षक

का औसत कार्यकाल 2 माह का था, 2 माह अथवा 60 दिनों में तो व्यक्ति अपने कार्यालय कार्य क्षेत्र की व्यवस्था को समझ पाएगा फिर पुलिस की चुनौतियों अनसुलझे अपराधों एवं इकाई के नेतृत्वकर्ता के रूप में वह किस प्रकार अपने आप को स्थापित कर पाएगा यह विचारणीय हैं। वहीं भारत के एक अन्य राज्य में अभियोगी के रिपोर्ट हेतु थाने जाने पर उसे संगठन विशेष के क्षेत्रीय समिति कार्यालय भेजे जाने एवं उस कार्यालय से सहमति मिलने पर ही अपराध पंजीबद्ध किए जाने का मामला भी प्रकाश में आया है। इस प्रकार पुलिस संसाधनों की कमी, मानवीय संसाधनों की अल्पता एवं विभिन्न सामाजिक राजनैतिक कारकों की चुनौतियां, वर्तमान परिवेश में पुलिस संगठन से सामाजिक अपेक्षाओं के वृहत्तर स्वरूप को प्रस्तुत करता है।

सफेदपोश अपराध : गंभीर चुनौती

समाजशास्त्री सदरलैंड ने सफेदपोश अपराध की अवधारणा प्रस्तुत कर समाज का ध्यान उन अपराधियों की ओर आकर्षित किया जो कि समाज को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं तथा जिन पर प्रचलित कानून का शिंकजा असरकारक नहीं होता है। वर्तमान परिवेश में यदि परंम्परागत अपराध और अपराधियों तथा उनके द्वारा समाज को पहुंचाई गई हानि एवं स्वेतपोश अपराधियों एवं उनके द्वारा समाज को पहुंचाई गई हानि पर प्रकाश डाला जाए तो अध्ययन स्पष्ट करते हैं कि जहां पारंपरिक अपराधों लूट, डकैती, चोरी से लोकधन की हानि 10 प्रतिशत पाई गई वहीं सफेदपोश अपराधों से 90 प्रतिशत हिस्सा, की हानि हुई। यह अपराध व्यवसाय के दौरान किए जाने वाले वे अपराध हैं जिनमें अपराधी उच्च प्रतिष्ठा, एवं सामाजिक स्थिति का लाभ प्राप्त करते हुए कानून के दायरे से बचने का प्रयास करते हैं। डाक्टर द्वारा अनावश्यक इलाज करना अधिक फीस लेना, अधिवक्ता द्वारा अवांछनीय रूप से अधिक धन प्राप्त करना, कोलोनाइजर द्वारा गलत प्रचार कर अधिक पैसा लेकर कम गुणवत्ता के मकान तैयार करना विभिन्न आवश्यक वस्तुओं की मूल्यवृद्धि मिलावट, कम माप तौल कर अनुचित लाभ प्राप्त करना, शासकीय निर्माण कार्यों में अल्प गुणवत्ता आदि कई प्रकार के अपराध सफेदपोश अपराधों की श्रेणी में हैं जिनका सीधा असर जनता के उपर पड़ता है। यहां पुलिस की दोहरी दुविधा की स्थिति प्रकाश में आती है। जहां एक तरफ ऐसे अपराधियों की पोजीशन के कारण उन पर सीधे हाथ डालना पुलिस के लिए संकोच का विषय होता है वहीं दूसरी ओर प्रचलित कानून एवं विधियों से बचाव हेतु विशेषज्ञता का भरपूर प्रयास इस प्रकार के अपराधी

विभिन्न स्तरों पर करते है। साथ ही इन्हें विभिन्न स्तरों पर व्यवसायिक राजनैतिक एवं प्रशासनिक संरक्षण भी प्राप्त होता है। कुल मिलाकर इन अपराधों के विरूद्ध कार्यवाही अत्यधिक कठिनाई एवं चुनौती का विषय होती है। वहीं दूसरी ओर इन अपराधों का प्रभाव जनता पर पडता है तथा जनता ऐसे अपराधियों को खुलेआम घूमता एवं प्रगति करता हुआ देखकर न केवल कुंठित होती है। बल्कि पुलिस से साठगांठ की सीधी धारणा जनता के मन में व्याप्त होती है। जनता से संघर्ष एवं कानून व्यवस्था की स्थितियों में पुलिस के प्रति रोष का बहुत बड़ा कारण इस प्रकार के अपराध होते हैं। यदि सफेदपोस अपराध या इससे संबंधित किसी अपराध या अपराधी पर पुलिस कार्यवाही करने में सफल होती है तो यह स्थिति आम जनता की दृष्टि से स्वागत योग्य एवं स्वीकार्य मानी जाती है। पुलिस को अपनी छवि सुधारने के लिए इस प्रकार के माफिया एवं अपराधों पर कार्यवाही बेहतर विकल्प हो सकती है।

मोबाइल एवं सायबर अपराध

सूचना प्रोद्यौगिकी के क्रांतिकारी युग में पुलिस की चुनौतियों का नवीन स्वरूप कम्प्युटर एवं सायबर अपराधों के रूप में प्रकाश में आता है। सायबर अपराध को पुलिस व्यवसायिकता की कमजोरी के रूप में देखा जाता है। स्वभाविक रूप से पुलिस संगठन के पास न तो पर्याप्त कम्प्युटर है न ही कम्प्युटर प्रशिक्षक, एवं न ही कम्प्युटर प्रशिक्षित व्यवसायिक ही पुलिस के पास हैं। कम्प्युटर एवं इंटरनेट के माध्यम से सुविधाओं एवं सेवाओं के विस्तार के साथ ही इनके दुरूपयोग एवं इनके माध्यम से अपराध का प्रचलन बड़ा है। ई-बैंकिंग, ई-टिकट सेवा, ई-पैंमेंट, तथा इंटरनैट के माध्यम से सेवाओं के संबंध में सामान्यतः पूर्ण जानकारी आमजन को नहीं होती है। ऐसे में सीमित जानकारी के साथ इन सेवाओं का उपयोग जोखिम पूर्ण परिस्थिति निर्मित करता है तथा विशेषज्ञ अपराधी इसका लाभ लेकर अपराध कारित कर देता है। मोबाइल सिम क्लोनिंग, मोबाइल आईएमईआई क्लोनिंग, काल रेड, आदि के माध्यम से अपराधी अपराध कर आसानी से किसी भी व्यक्ति को अपराधी के रूप में पहचान कराने में सक्षम हो जाता है। इसी प्रकार टावर लोकेशन का गलत प्रदर्शन एवं परिवर्तन या स्वीचिंग करके अपराधी पुलिस को दिशा भ्रमित करने का प्रयास करता है। मोबाइल कंपनियों एवं इंटरनेट प्रदाता कंपनियों के द्वारा सेवा प्रारंभ किए जाने के पूर्व व्यक्ति का पर्याप्त वैरिफिकेशन किए जाने के संबंध में कानून एवं नियमों में प्रावधानों की अल्पता का लाभ भी अपराधियों को प्राप्त होता है।

एक ही परिचय पर एकाधिक सिम या कनेक्शन प्राप्त करने की पात्रता तथा एक व्यक्ति के नाम पर मोबाइल सिम एवं इंटरनेट कनेक्शन लिए जाने की सीमा निर्धारित नहीं होना भी इस क्षेत्र में गंभीर चुनौती प्रस्तुत करता है। एक तरफ जहां कानून एवं प्रावधान तथा अपराधी की विशेषज्ञता पुलिस के समक्ष कड़ी चुनौती प्रस्तुत करते हैं वहीं दूसरी तरफ पुलिस में सायबर विशेषज्ञों का अत्यधिक अभाव समस्या को और अधिक गंभीर स्वरूप प्रदान करता है। पुलिस सायबर सैल की उपलब्धता भौतिक रूप से राज्यों के महानगरों तक ही सीमित है। पुलिस सायबर सैल का तकनीकी एवं उपकरण गत विकास भी अपेक्षित स्तर का नहीं है। यही कारण है कि पुलिस सायबर सैल की सफलताएं अपराधों की संख्या की अपेक्षा सीमित हैं। सायबर अपराध की स्थिति में भौतिक क्षेत्र विस्तृत तथा लंबी दूरी का होता है। जबकि सायबर सैल के पास संसाधनों की उपयुक्त उपलब्धता नहीं होती एवं पुलिस की अन्य शाखाएं उस स्तर पर सहयोग प्रदान नहीं कर पाती परिणाम स्वरूप सायबर अपराधी लाभ प्राप्त कर बचने में समर्थ हो जाता है। सायबर अपराध के क्षेत्र में विशेषज्ञता का विकास ही सार्थक सफलता प्रदान कर सकता है। इस दिशा में संसाधन एवं प्रशिक्षण के स्तर पर मूलभूत प्रयास अपेक्षित हैं।

आर्थिक अपराध

कंप्यूटर अपराधों की भांति आर्थिक अपराध भी संख्या एवं चुनौती की दृष्टि से पुलिस के समक्ष गंभीर चुनौती प्रस्तुत कर रहा है। समाचार पत्र में लोन हेतु आकर्षक विज्ञापन पढकर जब व्यक्ति ने दिए गए फोन नम्बर पर संपर्क किया तो उसे बताया गया कि उसे दस लाख रुपए का लोन बिना किसी शर्त मंजूर किया जाएगा, उसके बाद उससे तीन किश्तों में प्रक्रिया शुल्क के नाम पर स्थानीय बैंक में तीस हजार रुपए बताए गए खाता क्रमांक पर जमा करने कहा गया। तीस हजार रुपए जमा करने के उपरांत पुनः टेलीफोन पर उसे बताया गया कि आपको लोन के संबंध में ड्रा ईनाम के रूप में मोटर सायकल प्रदान की जाएगी, जिसके लिए 15 हजार रुपए अग्रिम जमा करने होंगे। व्यक्ति द्वारा उक्त 15 हजार रुपए भी उस बैंक खाते में जमा किए गए इस प्रकार कुल 45 हजार रुपए जमा करने बाद फोन पर टालमटोल की जाती रही लगभग डेढ माह बाद विज्ञापन में दिया गया फोन नम्बर बंद हो गया तब व्यक्ति ने स्थानीय थाने में रिपोर्ट दर्ज कराई पुलिस के द्वारा ज्ञात किए जाने पर दिया गया खाता क्रमांक स्थानीय न होकर प्रदेश के बाहर राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र का होना ज्ञात हुआ,

विज्ञापन में दिया गया मोबाइल नम्बर भी किसी दूरस्त व्यक्ति के नाम का पाया गया पुलिस द्वारा पतासाजी करने पर सिम, फर्जी आई डी पर जारी की गई थी तथा खाता लगभग 15 लाख रुपए निकाले जाकर बंद किया गया था एक रुपए देश के विभिन्न क्षेत्रों से इसी प्रकार लोगों के द्वारा जमा किए गए पाए गए उस मोबाइल नम्बर की काल डिटेल में सिर्फ इसी तरह के लोगों से उसकी लगातार बातचीत होना पाई गई तथा देश के किसी भी कोने में जमा होने एवं किलीयरिंग होने के तुरंत बाद खाते से आहरण करना विवेचना के दौरान प्रकाश में आया। पुलिस की व्यस्तता एवं संसाधन अल्पता के कारण अत्यधिक दूरस्त स्थानों पर जांच तलाश हेतु बार बार पुलिस का जाना संभाव्य नहीं था ओर न ही 45 हजार रुपए की उत्पीडित व्यक्ति के स्वयं की लापरवाही से की गई धोखाधडी पुलिस के लिए बहुत अधिक महत्वपूर्ण थी। इसी प्रकार चिटफंड कंपनी, चैन मार्केटिंग कंपनी, स्व सहायता, सेवा समूह, संबंधी फायनेंस कंपनी, वृक्षा रोपण एवं उसमें निवेश संबंधी कंपनी, स्थानीय स्तर पर निर्मित बीसी एवं धन में अप्रत्याशित वृद्धि कर निवेश कराने वाली कंपनी आदि के रूप में आर्थिक अपराध लगातार पुलिस के समक्ष चुनौती के रूप में प्रस्तुत होते हैं। पुलिस के साधारण उपनिरीक्षक स्तर के प्रशिक्षित अधिकारी जो कि मुख्य रूप से इन अपराधों की विवेचना करते है, कानून प्रावधान एवं प्रक्रिया के स्तर पर अपेक्षित रूप से दक्ष नहीं होते। भौगोलिक सीमाएं, कार्य आधिक्य एवं पुलिस की प्राथमिकताओं में उच्च स्थान प्राप्त नहीं होने के कारण अधिकांश मामलों में इस प्रकार की विवेचना असफल हो जाती है। इन अपराधों में उत्पीडित व्यक्ति की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण होती है तथा अधिकाधिक रूप में वह स्वयं ही अपराध सुगम बनाने में सहयोग प्रदान करता है। यही कारण है कि ऐसे अपराधों के प्रति पुलिस की रुचि एवं दबाव का स्तर भी अल्प होता है। जिसका लाभ अपराधियों को प्राप्त होता है। इसके अलावा गबन, कूट करण एवं 420 के रूप में भी आर्थिक अपराधों का प्रसार एवं प्रभाव अत्यधिक बढ रहा है। जमीन संबंधी प्रकरणों में फर्जी रजिस्ट्री स्टाम्प, दस्तावेज आदि के माध्यम से आर्थिक अपराधों के कई स्वरूप प्रकाश में आ रहे हैं। विभिन्न शासकीय विभागों से संबंधित आर्थिक अपराधों में भी अत्यधिक वृद्धि परिलक्षित हुई है। विभिन्न शासकीय विभागों में विवेचना संबंधी जानकारी एवं प्रक्रिया का अभाव तथा पुलिस को वांछित सहयोग प्रदान नहीं करने एवं विभिन्न शासकीय विभागों के

नियम प्रावधानों एवं प्रक्रिया के संबंध में तकनीकी रूप से पुलिस विभाग का जानकारी के स्तर पर सक्षम नहीं होना भी आर्थिक अपराधों के प्रसार के लिए उत्तरदाई कारण प्रस्तुत करता है।

आंतकवाद : गंभीर चुनौती

आतंकवाद एवं नक्सलवाद जैसे शब्द अब समाज के लिए नए नहीं हैं अपितु समाज एवं विचारधारा पर गंभीर प्रभाव भिन्न अतिवादी धारणाओं ने अंकित किए हैं। अपनी विचारधारा में न्याय संबंधी आभासी विचारों को समाहित करते हुए यह धारणाएं लोक प्रशांति एवं सार्वभौम सत्ता के प्रति हिंसात्मक प्रतिरोध की स्थापना करती हैं। इनके मूल में तथाकथित कुछ लोगों के निजी स्वार्थ लाभ विद्यमान होते हैं। जिन्हें अन्याय एवं अत्याचार के प्रति प्रतिरोध का नाम देकर जन समुदाय को जोडने का प्रयास किया जाता है। आंतकवाद एक आपराधिकृत्य होने के साथ ही विशेष या सामान्य जनता की हत्या तथा आकस्मिकता के तत्व को समाहित करता है। एक को मारकर हजारों को दहशत देना अपनी विचारधारा एवं पक्ष को अन्याय एवं अत्याचार से जोडना अपने कृत्यों पर दावे प्रस्तुत करना एवं देश एवं विश्व में गोपनीय तौर पर प्रायोजित होना, आतंकवाद के प्रमुख लक्षण होते हैं। विश्व के कई देश वर्तमान में आतंकवाद की चुनौती से जूझ रहे हैं लेकिन भारत में आतंकवाद की चुनौती का स्तर अपेक्षाकृत गंभीर है। यहां पंजाब में खालिस्तान सर्मथक पूर्वी भागों में नक्सलवाद वाम पंथी समर्थक एवं उत्तर पश्चिम में पाकिस्तान समर्थक आतंकवादी चुनौतियों का लगातार सामना करना होता है। भारत में आतंकवादी संगठनों ने देश के अन्य हिस्से में भी अपनी पैठ बनाने एवं समर्थको एवं सदस्यों की संख्या बढाने का काम प्रारंभ किया है। इस प्रकार प्रभावित इलाको में अधिक एवं अन्य इलाको में अल्प रूप में लगभग देश के प्रत्येक भाग में इस प्रकार की गतिविधियों की चुनौती पुलिस को न केवल प्रभावित कर रही है बल्कि नवीन परिवेश में इस विषयक सक्षमता के विकास हेतु अपेक्षा भी निर्धारित करती है। पुलिस के परम्परागत संसाधनों एवं हथियारों तथा तकनीकी साधनों एवं प्रशिक्षण में भी अपेक्षित सुधार एवं तैयारी आवश्यक हो जाती है।

मादक दृव्यों का अवैध व्यापार

नारकोटिक्स ड्रग्स एवं साइकोट्राफिक पदार्थ अधिनियम 1985 के प्रावधान विभिन्न मादक पदार्थो के व्यापार एवं प्रचलन को नियंत्रित करने संबंधी निर्धारण एवं दण्डात्मक प्रावधान निर्धारित करते हैं। अधिनियम में निर्धारित विभिन्न प्रावधान सहगामी व्यवस्था निर्धारित करती हैं लेकिन व्यवहारिक रूप में सामान्यतः इस अधिनियम एवं प्रावधानों पर क्रियान्वयन का मुख्य दायित्व पुलिस का ही होता है। जन सामान्य के बीच इस प्रकार के पदार्थो के प्रचलन की सीधी प्रतिक्रिया पुलिस के प्रति ही प्रकाश में आती है। जिस प्रकार इन पदार्थो के प्रचलन के सुनियोजित प्रयास प्रकाश में आए हैं तथा जिस प्रकार के गंभीर परिणाम इनके उपयोग एवं प्रभाव के होते है। उस दृष्टि से नारको आतंकवाद की अवधारणा का अस्तित्व भी प्रकाश में आता है। आतंकवाद के विभिन्न स्वरूपों में देश की व्यवस्था एवं उर्जा के प्रतीक युवाओं को इन स्वापक एवं मनः प्रभावी पदार्थो के प्रचलन के माध्यम से प्रभावित कर घातक परिणाम प्रस्तुत किए जा सकते है। अफीम, मार्फिन, हिरोईन, कोडिन, थिवेन, कोकेन, हसीस, एल.एस.डी, डी.एच.सी. मैथेन फेटामिन, एम्फेटेमिन, आदि विभिन्न रूपों में उपलब्ध ये औषधियां प्राकृतिक एवं संलेषित पदार्थो के मिश्रण होते है। तथा विभिन्न क्रिया अवधि के आधार पर मानव मस्तिष्क पर प्रभाव अंकित कर व्यक्ति को औषधि प्रभाव के अधीन निर्भरता, स्थापित करते हैं, पुलिस के समक्ष यह बड़ी चुनौती है, क्योंकि अधिनियम के प्रावधान तथा प्रक्रिया के प्रति सामान्यतः आशंका की भावना पुलिस अधिकारियों एवं विवेचको में सामान्यतः देखी जाती है। इस प्रकार के व्यवसाय संगठित अपराध की श्रेणी में होकर योजनाबद्ध तरीके से किए जाते हैं तथा मुख्य अपराधी स्वेतपोस रूप में विभिन्न संरक्षण एवं अपराध में अप्रत्यक्ष संलिप्तता की स्थिति में होकर पुलिस को कड़ी चुनौती प्रस्तुत करता है। विभिन्न पुलिस संगठनों द्वारा पृथक विंग एवं थाने आदि निर्धारित कर इस दिशा में विशेषज्ञता के साथ नियंत्रण हेतु प्रयास प्रारंभ किए हैं लेकिन इस प्रकार की स्थापना अपेक्षा अनुरूप न होकर अत्यधिक अल्प हैं। ऐसे में सक्षम नियंत्रण लगातार पुलिस की चुनौती का विषय है।

मानव अधिकार एवं पुलिस

मानव अधिकारों के संबंध में सामान्यतः मानव अधिकार संबंधी बातों को पुलिस के विरोधी या प्रतिरोधी स्वरूप में व्याख्यायित किया जाता है। जबकि मानव अधिकार संबंधी तथ्यों को स्थापित कर पुलिस संगठन के नियमन एवं तंत्र

को आदर्श रूप में स्थापित किया जा सकता है। मानव अधिकार का सरोकार पुलिस के आंतरिक एवं बाह्य दोनों स्वरूपों से होता है। मानव अधिकार संबंधी व्यावस्थापन्न पुलिस संगठन को उच्च आदर्शों एवं सतत नियंत्रण संबंधी व्यवस्था प्रदान करने में सहायक हो सकता है। पुलिस संगठन किसी भी सत्ता में शक्ति एवं प्राधिकार की उच्च अवस्था को समाहित करता है। जो कि शासन की शक्ति के प्रवाह एवं स्थापना के रूप में देखा जा सकता है। पुलिस संगठन का प्रत्येक कर्मचारी इस प्रकार के शक्ति एवं प्राधिकार को अपनी सीमाओं में उपयोग के लिए अधिकृत होता है। मानव अधिकार संबंधी प्रावधान व्यक्ति के मूल अधिकारों के साथ ही प्राकृतिक जीवन के लिए आवश्यक मूलभूत अधिकारों को निरूपित करते हैं। विकसित एवं प्रजातांत्रिक समाज में मानव अधिकार संबंधी प्रावधान एवं संरक्षण समाज के महत्वपूर्ण अंग होते है तथा अधिकांश मानव अधिकारों के संरक्षण की व्यवस्था पुलिस विभाग के द्वारा ही निर्धारित की जाती है। पुलिस संगठन द्वारा अपने कार्य कलापों एवं अधिकारों के उपयोग के दौरान मानव अधिकारों के उल्लंघन संबंधी मामले बहुतायत में प्रकाश में आए। पुलिस सशस्त्र बल, केन्द्रीय बल एवं सेना के अधिकारियों एवं कर्मचारियों के विरूद्ध इस प्रकार के अधिकाधिक मामले संचार माध्यमों पर भी विशेष स्थान प्राप्त करते हैं। इस प्रकार प्रचार प्रसार एवं वर्दीधारी बलों के प्रति मानव अधिकार संरक्षण बहुतायत से पुलिस एवं अन्य बलों के सदस्यों के मध्य मानव अधिकारों के प्रति विरोधाभासी भावना स्थापित हुई। वर्तमान परिवेश में यह आवश्यक है कि पुलिस आम जनता के मानव अधिकारों के संरक्षक की भूमिका में कार्य करें तथा समाज में स्वयं को मानव अधिकार उल्लंघन आरोपों से स्वयं को दूर रखने का प्रयास करें। मानव अधिकार संबंधी जागरूकता के परिणाम स्वरूप स्थिति में सुधार हुआ है। पुलिस अभिरक्षा में मृत्यु, प्रताड़ना, के प्रकरणों या पुलिस कर्मचारियों द्वारा कार्य के दौरान घटित अपराधों के मामलें हो, संवेदनशीलता का प्रसार प्रकाश में आया है। पुलिस संगठन को मानव अधिकार मित्र के रूप में स्थापित करने तथा प्रशिक्षण एवं नियमित कार्यवाहियों के दौरान इस दिशा में संवेदनशीलता स्थापित करने की आवश्यकता सर्वथा विद्यमान है।

मीडिया एवं पुलिस

पुलिस और मीडिया के सह संबंधों को वर्तमान परिदृश्य में अत्यधिक उज्जवल नहीं कहा जा सकता। समाज में पुलिस की खराब छवि का एक महत्वपूर्ण कारण पुलिस मीडिया संबंधों में ही अंतर्निहित है, पुलिस एवं मीडिया

नेतृत्व के बीच विभिन्न स्तरों पर विभेद एवं विरोधाभास प्रकाश में आते हैं। थाना स्तर से लेकर पुलिस मुख्यालय स्तर तक पुलिस एवं मीडिया के पारस्परिक आरोप एवं अपने पक्ष के संबंध में तर्क प्रस्तुत करने की स्थिति सामान्यतः देखी जाती है। दोनों ही संस्थाओं की कार्य प्रणाली में कहीं न कहीं आम आदमी या जनता के सामान्य हित समाहित होते हैं। ऐसे में विरोधाभास को महत्व प्रदान नहीं करते हुए वास्तविक एवं तथ्यात्मक स्थिति की प्रस्तुति जनता की दृष्टि से उपयोगी हो सकती है। पुलिस की कमजोरियां स्वभाविक रूप से विभिन्न स्तरों पर देखी जाती हैं तथा तथ्यात्मक रूप से उन्हें प्रकाश में लाना मीडिया का दायित्व होता है। लेकिन पुलिस की अच्छाईयों सफलताओं एवं सार्थक प्रयासों का जनता के समक्ष प्रस्तुतिकरण भी मीडिया का दायित्व होता है। अपराध घटित होने की खबर को सनसनी एवं वृहद रूप में प्रस्तुत करना तथा उसी अपराध पर पुलिस की सफलता को समाचार में अपेक्षित स्थान प्रदान नहीं करना पुलिस की छवि को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है। मीडिया की सजगता शासकीय तंत्र को सजग बनाती है तथा आम जनता के हित में कमियों को उजागर करती है। लेकिन पुलिस के प्रति मीडिया की दूसरे दर्जे की प्रतिक्रिया अभिव्यक्ति पुलिस तंत्र की अभिप्रेरण को भी अल्प करती है। पुलिस कंट्रोल रूप में अपराध संबंधी जानकारी प्राप्त नहीं होना थानों के द्वारा मीडिया को महत्व नहीं दिया जाना आदि विरोधाभास के कारण होते हैं इस दिशा में प्रक्रिया का निर्धारण एवं पुलिस की सफलताओं के संबंध में मीडिया को अवगत कराया जाना तथा किसी भी घटना की वास्तविकता एवं पारदर्शी कार्य प्रणाली से पुलिस एवं मीडिया के अच्छे सह संबंधों एवं पुलिस छवि सुधारने के उदाहरण भी विद्यमान हैं।

सामूदायिक पुलिसिंग

आधुनिक युग में समुदाय आधारित पुलिसिंग की अवधारणा ने उत्तरोत्तर का विकास प्राप्त किया है। पुलिस संगठन की सफलता में सहयोग के नए आयाम सामूदायिक पुलिस के माध्यम से प्रकाश में आए है सामूदायिक पुलिसिंग एवं समाज सेवा कार्यों को पुलिस पर अतिरिक्त बोझ एवं अनावश्यक कार्य कलापों के रूप में में परम्परागत सोच के आधार पर भी व्यक्त किया जाता है। लेकिन वास्तव में कानून व्यवस्था की स्थितियों, विवादों के निराकरण पुलिस सूचना तंत्र एवं पुलिस सहयोग की दृष्टि से सामूदायिक पुलिसिंग अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत करती है। समुदाय को पुलिस कार्यवाहियों से जोडने पर जहां पारदर्शिता व्यक्त होती है वहीं समाज एवं मीडिया में पुलिस के प्रति साधारण सोच में परिवर्तन

की स्थापना भी होती है। किसी भी घटना, दुर्घटना या स्थिति पर सामान्यतः एक पक्ष प्रत्येक व्यक्ति के समक्ष प्रकाश में आता है तथा पुलिस का पक्ष जो कि अधिकांशतः वास्तविक भी होता है, जनता के समक्ष नहीं आ पाता ऐसी स्थिति में समुदाय के लोग जो सामुदायिक पुलिसिंग के तहत बिना किसी विशेष प्रयोजन के पुलिस के संपर्क में रहते है। पुलिस का पक्ष समाज के समक्ष प्रभावी रूप से प्रेषित करते हैं। परिवार परामर्श केन्द्र, रक्षा समिति, यातायात बार्डन, बाल मित्र पुलिस, सामाजिक सशक्तिकरण, वृहद सेवा समिति आदि विभिन्न रूपों में सामूदायिक पुलिसिंग के उत्कृष्ट उदाहरण विभिन्न पुलिस इकाइयों द्वारा प्रस्तुत किए गए हैं। इस प्रकार की प्रक्रिया के माध्यम से छवि संबंधी सुधार एवं सूचना तंत्र एवं सहयोगी तंत्र का विकास कारगर रूप से किया जा सकता है।

राजनैतिक व्यवस्था एवं पुलिस

जैसा कि प्रजातांत्रिक व्यवस्था में सत्ता की शक्ति जनता एवं जनता द्वारा चुनी हुई सरकार में निहित होती है। संपूर्ण व्यवस्था का निर्धारण व्यवस्थापिका, कार्यपालिका, एवं न्यायपालिका में निहित होता है। इस परिप्रेक्ष्य में यदि पुलिस विभाग को देखा जाए तो व्यवस्था के प्रत्येक अंग से पुलिस का प्रत्यक्ष तारतम्य प्रकाश में आता है। साथ ही महत्वपूर्ण रूप में जनता से दिन प्रतिदिन का प्रत्यक्ष संपर्क भी प्रकाशित होता है। इस प्रकार पुलिस संगठन के दोनों ओर प्रत्यक्ष संपर्क कहीं न कहीं द्वंद्व या विरोधाभास के कारण बनते हैं। प्रजातांत्रिक व्यवस्था की अपेक्षा होती है कि जनता के प्रति उत्तरदाई एवं उनके द्वारा चुने गए जन प्रतिनिधियों की अपेक्षाओं एवं उत्तरदायित्वों के प्रति पुलिस संवेदनशील हो वहीं दूसरी ओर जैसा कि विभिन्न देशों की व्यवस्था में निर्धारित है एवं विभिन्न निर्णयों में प्रतिपादित किया गया है कि पुलिस जनता के प्रति पूर्ण रूप से उत्तरदाई एवं विधि अनुरूप निष्पक्ष संस्था के रूप में कार्य करे। इस प्रकार दोहरी अपेक्षाओं के मध्य पुलिस नेतृत्व या विभिन्न श्रेणी के अधिकारी अपने व्यक्तित्व एवं प्राथमिकताओं के आधार पर अभिरुचि प्रदर्शित करते हैं। यहां पुनः नेतृत्वकर्ता के रूप में उनका अनुशरण करने वाले स्टाफ के मध्य विरोधाभास की स्थिति उत्पन्न होती है व्यक्तिगतता तथा व्यक्तिगत्ता को मान्यता प्राप्त होती है। एक पुलिस अधिकारी जहां राजनैतिक संपर्क तथा सत्तारूढ क्षेत्रीय जनप्रतिनिधि के अनुसार कार्य निष्पादन करना है तथा राजनैतिक संपर्को का अपनी पद स्थापना, स्थानांतरण, आदि में प्रयोग करता है। वहीं किसी अन्य अधिकारी की प्राथमिकताएं इससे भिन्न कानून एवं विभागीय नियमों के पालन में निहित होती

है। कई बार एक ही इकाई के विभिन्न स्तरों में इस प्रकार के विरोधाभास की स्थिति देखी जाती है। वर्तमान परिवेश में राजनैतिक संपर्क एवं उनसे व्यक्तिगत लाभों को प्राप्त करने अच्छी एवं लाभप्रद प्रदस्थापना प्राप्त करने की प्रवृत्ति में लगातार वृद्धि प्रदर्शित हो रही है। यह स्थिति विभिन्न संस्थाओं एवं जांच एजेन्सियों के प्रति जनविश्वास की कमी एवं पुलिस की विभिन्न इकाइयों के प्रति विश्वसनीयता एवं निष्पक्षता के हास के रूप में प्रभाव प्रदर्शित कर रही है। विभिन्न राज्य स्तरीय अन्वेषण इकाइयों के प्रति धारणाओं को इस रूप में देखा जा सकता है। जहां जांच में विलंब आरोपी को लाभ, मामला ठंडे बस्ते में डालने जैसी धारणाएं एजेन्सियों के प्रति जनता एवं विभिन्न फोरम व्यक्त करते हैं। पुलिस संगठन में भावनात्मक दक्षता के प्रसार कर्मचारियों के कल्याण एवं उनकी सुविधाओं पर ध्यान देकर तथा संभाव्यतानुसार उपयुक्त स्थान पर पदस्थापना कर्मचारी से प्राथमिकता प्राप्त कर की जाकर इस दिशा में प्रयास किया जा सकता है। पुलिस संस्थाओं के प्रति जन विश्वास की स्थापना एवं उसके प्रति संवेदनशील व्यवस्था का निर्धारण इस दिशा में कारगर हो सकता है। जनप्रतिनिधि उनके समक्ष उपस्थित पक्ष को सुनकर प्रस्तुत करते हैं जो कि स्वाभाविक भी है। ऐसे में पुलिस अधिकारियों का दायित्व दोनों पक्षों की बातों एवं तथ्य तथा वस्तु स्थिति को स्पष्ट कर विधि संमत निष्पक्ष कार्यवाही करने का होता है। क्षेत्रीय जन प्रतिनिधियों से पुलिस के स्तर अनुरूप संपर्क एवं सतत बातचीत तथा जनता के हित में प्रभावी कार्य योजना एवं परंम्परा का विकास किया जाना चाहिए। सामुदायिक पुलिसिंग, शांति समिति आदि की पहल से इस विषयक समुचित व्यवस्था स्थापित की जा सकती है। पुलिस नेतृत्व को इस प्रकार के प्रयसों एवं उनसे अपेक्षित परिणाम प्राप्त करने की दिशा में सार्थक प्रयास अपेक्षित हैं।

वर्तमान परिदृश्य पुलिस संगठन की विविधमुखी चुनौतीयों का युग है, तकनीकी एवं व्यवस्था संबंधी तीव्र परिवर्तन राजनैतिक व्यवसायिक, तथा संचार क्रांति के युग की स्थापना, जीवन की तीव्र गति भौतिकता तथा अपने हितों की पूर्ति की प्रवृत्ति के तीव्र विकास के इस युग में पुलिस संगठन को अपने निर्धारित मूल भूत प्रतिमानों को सुरक्षित रखते हुए। विभिन्न परिवर्तनों से तारतम्य स्थापित करना होगा किसी भी संगठन में परिवर्तन नवाचार की स्वीकृति एवं अनुकूलन के साथ विकास का दायित्व मुख्य रूप से नेतृत्व के ऊपर होता है। यही अपेक्षा वर्तमान युग पुलिस नेतृत्व से करता है। सामाजिक अपेक्षाओं के स्तर पर यदि प्रकाश डाला जाए तो पुलिस संसाधनों की वृद्धि की अपेक्षा का स्तर 100 प्रतिशत से भी आधिक्य हो जाता है। लोकतंत्र के विभिन्न निर्वाचनों, लोकसभा

से लेकर ग्राम पंचायत तक पुलिस की सक्षम उपस्थिति में ही संभव हो पा रहे हैं। एक तरफ निर्वाचनों के विभिन्न नए स्तर स्थापित हुए हैं जैसे की त्रिस्तरीय ग्राम पंचायत, नगर पंचायत, नगर पालिका निर्वाचन, सहकारी संस्थाओं के निर्वाचन, सिंचाई समितियों के निर्वाचन, कृषि उपज मंडियों के निर्वाचन, वन समितियों के निर्वाचन, विद्यालपीन संघों के निर्वाचन, महाविद्यालयों में छात्र संघों के निर्वाचन, कर्मचारी संघठनों, बार कांउसिल, खेल संघों के निर्वाचन, व्यपारी संघों के निर्वाचन आदि निर्वाचन के सभी शासकीय अशासकीय रूपों में बड़ी मात्रा में पुलिस व्यवस्था लगाई जा रही है। हाई स्कूल, हायर सेंकेन्डरी एवं महाविद्यालय परीक्षाएं भी अब बिना पुलिस व्यवस्था के संभव नहीं हो पा रही हैं। विभिन्न शासकीय विभागों के कार्य, बैको की वसूली, ग्रामीणी स्तर पर विभिन्न शासकीय विकास कार्य, अतिक्रमण का हटाया जाना, न्यायालपीन आदेशों की तामीली कराना, शासकीय अमले को विभिन्न शासकीय कार्यों में दिन प्रतिदिन सहयोग करना अब पुलिस की आवश्यकता बन चुकी है। वन विभाग एवं आबकारी विभाग जैसे वर्दीधारी एवं हथियारधारी अमले को भी किन्ही परिस्थितियों में पुलिस सहयोग से कार्यवाही करना वांछनीय हो गया है। खनन विभाग एवं परिवहन विभाग भी अवैध कार्यवाहियों पर अंकुश लगाने में कहीं न कहीं पुलिस का सहयोग चाहता है। संचार एवं परिवहन की सुलभता में अपराधियों को बहुत हद तक निडर बनाने का काम किया है। पुलिस की सीमाएं जानकर उनका लाभ उठाने का प्रयास करते हुए अपराधी वर्तमान परिवेश में मुखर हुए हैं जो कि पुलिस के लिए गंभीर चुनौती है। भारत में विभिन्न श्रेणी की सुरक्षा प्राप्त विशिष्ट व्यक्तियों की संख्या अत्यधिक है, तथा विशिष्ट व्यक्तियों एवं सुरक्षा प्राप्त वी.आई.पी. की भ्रमण एवं जन संपर्क के दौरान उनकी सुरक्षा व्यवस्था पुलिस व्यस्तता का एक पृथक मद है। विभिन्न धार्मिक एवं सांस्कृतिक श्रेणी के बड़े आयोजन निवधि रूप से किए जाने की व्यवस्था, हमारा तंत्र लोगों को प्रदान करता है तथा समय समय पर विभिन्न वृहद आयोजन त्योहार, मेला, समागम आदि आयोजित किए जाते हैं जिनमें पुलिस बंदोबस्त एवं यातायात बंदोवस्त पुलिस का दायित्व हो जाता है। विभिन्न राजनैतिक, सामूहिक महत्वकांक्षाओं की पूर्ति के लिए जन आंदोलन, धरना प्रदर्शन रैली जुलुस आदि विभिन्न संगठनों द्वारा आयोजित किए जाते हैं तथा इनमें सुरक्षा एवं व्यवस्था पुलिस का उत्तरदायित्व होता है। इस प्रकार के आयोजन के लिए अनुमति संबंधी प्रावधान हमारी व्यवस्था में सरल हैं, साथ ही ऐसे आयोजनों में पुलिस एवं अन्य शासकीय व्यवस्थाओं की प्रतिपूर्ति की व्यवस्था निर्धारित नहीं हैं। इसी कारण इस प्रकार के

आयोजन एवं उनमें पुलिस की संबद्धता लगातार बढ रही है। समाज निष्पक्ष, ईमानदार, त्वरित प्रतिक्रिया प्रदान करने वाली सेवा भावी संवेदनशील पुलिस की अपेक्षा करता है। जबकि इस दृष्टि से पुलिस संसाधन मानवीय संसाधन, पर्याप्त रूप में विद्यमान नहीं है साथ ही संगठनात्मक, प्रशिक्षणगत एवं प्रक्रियागत अल्पताएं, बहुतायत में विद्यमान हैं, साथ ही परिस्थितियों में निर्धारित अवरोधकारक भी विद्यमान हैं जो कि इस दिशा में अपेक्षित परिणामों की प्राप्ति में प्रतिरोधक की भूमिका निभाते हैं।

पुलिस नेतृत्व से वर्तमान परिवेश में विभिन्न क्षेत्रों एवं मानकों पर अपेक्षाएं अत्यधिक बढ जाती हैं जो कि विभाग एवं जनता के लक्ष्यों उद्दश्यों की पूर्ति एवं जन व्यवस्था की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। पुलिस नेतृत्व को न केवल विचार योजना एवं कार्यान्वयन के स्तर पर बल्कि नीतिगत स्तर पर भी इस दिशा में प्रयास प्रारंभ करने होंगे, प्रयासों को अंतिम परिणति तक पहुंचाने एवं सतत प्रक्रिया के निर्धारण को भी सुनिश्चित करना होगा। यदि पुलिस एवं उसकी विभिन्न इकाईयां आम जनता के विश्वास को स्थापित एवं कायम रखने में असफल रहती है तो पुलिस का औचित्य ही प्रश्नगत हो जाता है। अपेक्षाएं अत्यधिक हैं, संसाधनों एवं परिस्थितियों में अवरोध के तत्व विद्यमान हैं ऐसे में पुलिस नेतृत्व को सर्वोत्कृष्ट प्रदर्शन कर लक्ष्य प्राप्ति करनी होगी।

पुलिस नेतृत्व एवं परिवर्तन

अपराध की प्रवृत्तियां एवं स्वरूप समाज की गतिविधियों को प्रतिविम्वित करता है, यथा समाज के अनुसार अपराध एवं अपराधी का पैटर्न एवं अपराध के पेटर्न के अनुरूप पुलिस प्रतिक्रिया आवश्यक होती है। समाज के परिवर्तन एवं प्रवृत्तियों की जानकारी एवं उनमें परिवर्तन के अनुरूप लक्षणों एंव प्रवत्तियों का समावेश पुलिस नेतृत्व की चुनौती होती है। पुलिस को विधिक स्तर पर, सामाजिक स्वीकार्यता के स्तर पर, राजनैतिक प्रतिक्रिया एवं जन प्रतिक्रिया के स्तर पर, तथा नैतिक मूल्यों के स्तर पर विभिन्न लक्ष्णों का परीक्षण एवं निर्धारण करना होता है। सामाजिक मूल्य ही कहीं न कहीं विधि निर्माण के मूल में निहित होते हैं तथा सामाजिक स्तर पर मूल्य एवं प्रतिमानों के परिवर्तन की गति के अनुरूप विधि का निर्धारण समान गति से नहीं हो पाता है। विधि निर्माण अत्यधिक परीक्षण एवं विचार विमर्श के उपरांत होने वाली प्रक्रिया है। जबकि सामाजिक परिवर्तन अनायास हो जाते हैं। भारतीय दण्ड विधान की धारा 377 प्रकृति की व्यवस्था के विरूद्ध यौनाचार को दण्डनीय अपराध निर्धारित करती है। वर्तमान

समलैगिंग संबंधों की अवधारणा तथा कई समाजों में इस अवधारणा को मिल रही स्वीकृति तथा लिव इन रिलेशनशिप जैसी अवधारणाएं कहीं कहीं इस प्रकार के विरोधाभास को व्यक्त करते हैं। सामाजिक परिवर्तन एवं उस पर विधि का निर्धारण के बीच का समय अंतराल क्रांतिक स्थिति निर्मित करता है। सामाजिक मान्यताओं का परिवर्तन प्रारंभ, प्रचलन एवं निर्धारण की अवस्थाओं को तय करते हुए स्थापित होता है एवं स्थापन्न की अवस्था के उपरांत इस पर विधि निर्धारण की प्रक्रिया प्रारंभ होती है। तथा पुलिस को प्रत्येक परिस्थिति एवं स्तर के साथ समायोजन कर व्यवहार प्रदर्शन करना होता है। सामाजिक प्रतिमानों के अलावा तकनीकि विकास एवं उसके विविध आयाम परिवर्तनशील प्रवत्ति प्रदर्शित करते हैं। यहां तकनीकि परिवर्तन एवं उसके विकास तथा उसमें समाहित विधिक नैतिक उल्लंघन की संभावना तथा नवीन तकनीकि से पुलिस के व्यवसायिक लाभ की सीमाओं की जानकारी एवं उनका प्रक्रिया के स्तर पर लागू किया जाना नेतृत्व का महत्वपूर्ण दायित्व है। कम्प्युटर अपराध तथा पुलिस कार्यों में कम्प्युटर के उपयोग की पूर्ण संभावना का उपयोग, मोबाइल सबंधी अपराध एवं मोबाइल फारेंन्सिक का अधिकतम उपयोग, जी.पी.एस, सेटेलाइट पद्धति एवं विभिन्न ट्रेकिंग तंत्रों का पुलिस कार्यों में उपयोग, नवीन पहचान पत्र के शब्द चित्र, डी.एन.ए. फिंगर प्रिंट, अंगुली चिह्न, के द्वारा अपराधी का निर्धारण, पोलीग्राफ, नारको परीक्षण, के माध्यम से पूछताछ एवं सत्यता का निर्धारण, विभिन्न आधुनिक हथियारों एवं संचार तकनीको के उपयोग के प्रति अनुकूलन स्थापित करना विभिन्न स्तरों पर पुलिस नेतृत्व के महत्वपूर्ण दायित्व हैं। यहां यह अपेक्षित हैं कि विभिन्न स्तरों पर पुलिस नेतृत्व व्यक्तिगत रूप में विशेषज्ञता प्राप्त करने का प्रयास करे तथा उपलब्ध तकनीकि संसाधनों का उपयोग करते हुए अन्य इकाइयों जहां संसाधन उपलब्ध हैं से संपर्क एवं तारतम्य स्थापित कर इन तकनीको के प्रचलन का प्रयास प्रारंभ करे। पुलिस द्वारा मूलभूत विधियों के साथ ही अत्यधिक संख्या में स्थापित लघु अधिनियमों एवं स्थानीय विधियों को भी लागू कराया जाता है। पुलिस प्रशिक्षण के दौरान विशेष एवं लघु अधिनियमों के सर्वाधिक प्रचलित प्रावधानों की प्रशिक्षण दी जाती है। तथा इसके उपरांत विभिन्न विधियों में परिवर्तन एवं नवीन लघु अधिनियमों के संबंध में सामान्यतः प्रशिक्षण नहीं किया जाता है। जबकि विभिन्न परिस्थितियों में आवश्यकता पर उनका उपयोग वांछनीय होता है। मुख्य अधिनियमों के संबंध में भी सम्यक परिवर्तन किए जाते हैं तथा उनकी अद्यतन स्थिति के संबंध में भी पुलिस अधिकारियों को पूर्ण जानकारी नहीं होती है। नेतृत्व के स्तर पर इस प्रकार के विधिक परिवर्तनों की

जानकारी एवं इनके स्त्रोत निर्धारित करना तथा विधिक परिवर्तनों से अद्यतन जानकारी को समाहित करना एवं परिवर्तनशील स्थिति में क्रियांन्वयन एवं उसकी प्रक्रिया को स्पष्ट करना आवश्यक होता है। इस दृष्टि से विभिन्न कानून संबंधी प्रकाशनों का अध्ययन एवं विभागीय परिपत्र, प्रवेश पत्र का गंभीर अध्ययन एवं इसके क्रियान्वयन पर विचार विमर्श सार्थक परिणाम प्रस्तुत कर सकता है।

परिवर्तन एक स्वाभाविक प्रक्रिया है लेकिन परिवर्तन के साथ अनुकूलन एवं समायोजन स्थापित कर व्यवसायिक दक्षता की दृष्टि से कारगर रूप में उनका विनिश्चय करना नेतृत्व का दायित्व है। पुलिस नेतृत्व अनुशासन के स्वरूप में इस प्रकार के दायित्व एवं अपनी कमजोरियों को अपने अधीनस्थों पर थोपने का प्रयास भले ही करे लेकिन वास्तव में परिवर्तनशील परिस्थितियों में यह केवल नेतृत्व का ही दायित्व है कि परिवर्तन के साथ प्रचलित परम्परागत प्रतिमानों को जीवित रखते हुए सार्थक परिणाम प्रस्तुत करे।

पुलिस नेतृत्व एवं व्यवहार

समाज के पिछडे एवं कमजोर वर्गो के प्रति पुलिस के संवेदनशील व्यवहार प्रदर्शन, की दिशा में विभिन्न संस्थागत प्रयास किए जाते हैं। समाज के पिछडे वर्ग को आयु, सामाजिक स्थिति, एवं लिंग के आधार पर बच्चे अनुसूचित वर्ग एवं महिलाओं को इस श्रेणी में शामिल किया जाता है। इनके सबंध में विभिन्न विधिक प्रावधान भी निर्धारित किए गए हैं। जिनसे इन वर्गो का संरक्षण सुनिश्चित हो सके। यह विशेष विधिक प्रावधान पुलिस के द्वारा ही लागू किए जाते हैं। आम जनता के प्रति पुलिस के संवेदनशील नहीं होने एवं पुलिस व्यवहार के खराब होने की शिकायत सामान्यतः प्रकाश में आती है। समाज के किसी कमजोर वर्ग के प्रति इस प्रकार का व्यवहार अथवा कूरता को विविध संचार माध्यमों पर भी प्रमुख स्थान प्राप्त होता है। जैसे कि बीमारी एवं कष्ट के प्रति चिकित्सक की सहानूभूति सामान्य तौर पर उपयुक्त नहीं लगती है। जिसका कि कारण डाक्टर द्वारा उसी प्रकार के एवं उससे गंभीर स्थिति के कई मरीजों से लगातार सुबह शाम सामना होना होता है। इसी प्रकार पुलिस के समक्ष दुर्घटना, मारपीट, अपराध, संबंधी मामले अत्यधिक संख्या में सामने आते है तथा किसी व्यक्ति विशेष को यदि किसी ने गाली गलौच, मारपीट आदि की है तो यह पुलिस के लिए सामान्य दिनचर्या की कार्यवाही एवं 294/323 भादवि का सामान्य अपराध होता है तथा पुलिस की सहानुभूति का स्तर भी इसी आधार पर निर्धारित होता है। वहीं दूसरी और पीडित व्यक्ति जिसके साथ पहली बार सार्वजनिक स्तर पर मारपीट की गई है के लिए यह जीवन का सबसे बड़ा अपराध होकर अत्यधिक गंभीर

कृत्य होता है। इस प्रकार पुलिस और पीड़ित पक्ष की सहानुभूति की अपेक्षा एवं पूर्ति के धरातल, विपरीत स्तर के होते हैं और इसका परिणाम पुलिस पर सहानुभूति संबंधी आरोपों के रूप में प्रत्यक्ष होता है। यह कहना कि पुलिस का व्यवहार सर्वथा उपयुक्त श्रेणी का होता है, सत्य नहीं होगा, लेकिन यह कहना भी सत्य नहीं होगा कि पुलिस का व्यवहार जनता के प्रति अनुपयुक्त ही होता है। पुलिस विभाग अनुशासनिक बल के तौर पर कार्य करता है तथा पदक्रम की भावना का स्तर यहां उच्च होता है एवं भावनात्मक दक्षता का स्तर निम्न होता है। यही कारण है कि पुलिस के उच्च अधिकारियों द्वारा निम्न रैंक कर्मचारियों से उपयुक्त व्यवहार नहीं किया जाता यहां तक कि कई बार अपमान तक किया जाता है। अनुशासन का आशय भय का माहौल निर्मित करना नहीं होता है बल्कि अनुशासन सम्मान के उच्च आदर्शों की अभिव्यक्ति के रूप में वास्तविक अर्थ प्राप्त करता है। जिन इकाइयों में उच्च अधिकारियों द्वारा कर्मचारियों से अपमानजनक व्यवहार किया जाता है। उन इकाइयों में जनता से पुलिस के व्यवहार के संबंध में अपेक्षाकृत अधिक शिकायतें प्रकाश में आती हैं। भारत में पुलिस की संस्थागत स्थापना ब्रिटिश शासन काल में हुई तथा उस काल में पुलिस का मुख्य कार्य जनता पर दबाव बनाकर हुकूमत को कायम रखना एवं स्वदेशी भावना एवं आंदोलनों को कुचलना था यही कारण है कि आम जनता में पुलिस की दमनकारी छवि परंम्परागत रूप से विद्यमान है तथा यह परम्परागत सोच न केवल जनता के रूप में पुलिस के प्रति अपना प्रभाव दिखाती है बल्कि जनता से पुलिस विभाग में शामिल होकर पुलिस कर्मी के रूप में व्यवहार प्रदर्शन में भी इसका प्रभाव देखा जाता है। विभिन्न संस्थागत एंव असंस्थागत प्रयासों के बावजूद इस प्रकार की प्रवत्तियां लगातार विद्यमान रहकर अपना प्रभाव अंकित करती हैं। पुलिस व्यवहार के संबंध में पुलिस के कार्यों की मूल प्रवत्ति के प्रभाव को भी जिम्मेदार माना जाता है। पुलिस के मूल कार्य लोगों को रोकने निर्देशित करने बंद करने विभिन्न आयोजनों आदि में निषेधकारी निर्देश लागू करने, त्यौहार आदि के उत्साह को नियंत्रित करने के रूप में अभिव्यक्त होते हैं। इस प्रकार की लगातार अभिव्यक्ति एवं रोल प्ले पुलिस कर्मचारियों को सहानूभूति पूर्ण व्यवहार से परे रूखा एवं कठोर बना देती है। तथा इसे भी पुलिस व्यवहार की शिकायत का कारण माना जाता है। पुलिस अधिकारी के रूप में व्यवस्थापक एवं नियंत्रक के कार्य तथा रोल प्ले स्वभाविक रूप में अहम की भावना का प्रसार करता है। यह भावना विभिन्न अवसरों पर प्रतिक्रिया रूप में अभिव्यक्त होकर व्यवहार संबंधी आरोप का कारण बनती है।

पुलिस नेतृत्व के स्तर पर व्यवहार संबंधी आदर्श प्रस्तुत किया जाकर इस दिशा में सार्थक प्रयास किया जा सकता है। पुलिस व्यवहार के आंतरिक कारण का

निवारण आंतरिक वातावरण में सहानुभूति एवं सहृदयता को शामिल कर किया जा सकता है। विभिन्न संवेदनशीलता संबंधी लघु प्रशिक्षण आयोजित किए जाकर पुलिस कर्मचारियों को घटना के प्रतीक पीड़ित व्यक्ति की स्थिति में जाकर उसके द्वारा की जाने वाली प्रतिक्रिया संबंधी जानकारी देकर इस संबंध में सुधार किया जा सकता है। यह सही है की पुलिस लगातार विभिन्न घटनाओं को सुनती है एवं उस पर कार्यवाही करती है। लेकिन किसी व्यक्ति के साथ घटना एकाध बार ही होकर उसके लिए अति महत्वपूर्ण होती है।

पुलिस के पास आने वाला फरियादी पुलिस अधिकारी के लिए बहुत सारे फरियादियों में से एक सामान्य सा फरियादी हो सकता है लेकिन उस फरियादी के लिए पूरे दिन पूरी दूरी जो उसने तय की है तथा समस्या का साध्य वह पुलिस अधिकारी होता है जिसके समक्ष वह अपनी समस्या लेकर आता है। पुलिस अधिकारी के द्वारा गंभीरता एवं सहानूभूति से समस्या को सुन लेना उस फरियादी के लिए उसकी सफलता एवं बहुत हद तक समस्या के निवारण जैसा होता है, उक्त तथ्यों पर आधारित सोच स्वयं एवं अधीनस्थों के मध्य स्थापित करके तथा अपने अधीनस्थों के प्रति सहानुभूति एवं मित्रवत् व्यवहार प्रदर्शित करके इस दिशा में सार्थक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। पुलिस संगठन का प्रारंम्भिक एवं अंतिम लक्ष्य क्षेत्र की जनता होती है तथा किसी भी संगठन के लक्ष्य के प्रति असंवेदनशील व्यवहार को व्यवसायिकता नहीं कहा जा सकता। पुलिस नेतृत्व के विभिन्न स्तरों से समाज एवं संगठन महती अपेक्षा व्यक्त करता है।

पुलिस नेतृत्व एवं मानव संसाधन प्रबंधन

प्रति एक लाख जनसंख्या पर उपलब्ध पुलिसकर्मियों की संख्या का अंतर्राष्ट्रीय मानक जहां 220 है वहीं भारत में प्रतिलाख व्यक्ति लगभग 130 पुलिसकर्मी की उपलब्धता है। जबकि अन्य देशों की अपेक्षा भारत में पुलिस के कार्य क्षेत्र का विस्तार अधिक है। इस प्रकार मानव संसाधनों की पर्याप्त उपलब्धता पुलिस संगठन में विद्यमान नहीं है। विभिन्न मौको पर फौर्स की कमी एवं उसका प्रदर्शन भी लगातार प्रकाश में आता है। लेकिन उसके साथ ही मानवीय संसाधनों के दुरूपयोग या अल्प प्रयोग की स्थिति भी लगातार प्रदर्शित होती है। जब संसाधनों की अल्पता की स्थिति हो तब उपलब्ध संसाधनों का सार्थक प्रयोग बेहतर परिणाम स्थापित करने में सहयोग प्रदान कर सकता है। पुलिस विभाग में विपरीत परिस्थिति में उत्तरदायित्व निर्धारण एवं दण्डात्मक प्रतिक्रिया की परम्परा विद्यमान है। यह परम्परा पुलिस अधिकारियों के आत्म

विश्वास में कमी या भय के रूप में परिणत होती है। तथा विभिन्न परिस्थितियों में अधिकतम मानवीय संसाधनों की मांग की जाती है। इस प्रकार अपेक्षा से अधिक मानव संसाधन का व्ययन वस्तु स्थिति के वास्तविक निर्धारण से परे कल्पित आधारों का किया जाता है। विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा अपनी सुरक्षा एवं अपने कार्यक्रम में पुलिस की भीड को स्तर सूचक के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इसी प्रकार पुलिस के अधिकारियों में अधिक से अधिक व्यक्तिगत कार्यालपीन एवं बंगला स्टाप रखने की होड़ भी मानव संसाधनों के दुरूपयोग को व्यक्त करती है। पुलिस थानों में बल की कमी का प्रचार-प्रसार तो किया जाता है लेकिन उपलब्ध पुलिस बल का सार्थक उपयोग नहीं किया जाता। पुलिस विभाग में काम नहीं करने वाले एवं कम काम करने वाले कर्मचारियों को सुधार, सुझाव एवं प्रशिक्षण के स्थान पर उन्हें दोयम दर्जे का निर्धारित कर उनसे काम लेना ही कम कर दिया जाता है। पुलिस के सहयोगी मानव संसाधन, नगर सेना, विशेष सशस्त्र बल, एवं विशेष पुलिस अधिकारियों आदि के संबंध में भी पुलिस थानों में उचित स्थिति व्यक्त नहीं होती है। पुलिस थाने के सामान्य कार्यों में इनकी भागीदारी विभिन्न कारणों से निर्धारित नहीं की जाती जो कि मानव संसाधनों के अप्रयोग या अल्पप्रयोग की स्थिति को व्यक्त करता है। विभिन्न थानों में कर्मचारियों की व्यक्तिगत पसंद एवं नापसंद के रूप में ग्रेडिंग अघोषित रूप से कर दी जाती है जो कि टीम भावना को कमजोर करने के साथ ही दूसरी श्रेणी के कर्मचारियों की संभावनाओं के अल्प दोहन की स्थिति के रूप में अभिव्यक्त होता है। थाने के एवं विभिन्न कार्यालयों के वे कार्य जो थाना प्रभारी या कार्यालय प्रमुख की व्यक्तिगत जिम्मेदारी के कार्य है उनमें अधिक एवं योग्य कर्मचारियों को अधिकारियों द्वारा संलग्न किया जाता है। जिससे की वह अपने व्यक्तिगत उत्तरदायित्व की सफलता को सुनिश्चित कर लेते हैं। लेकिन समग्र रूप में थाना या कार्यालय के कार्यों के प्रति न्यायसंगत नहीं हो पाते। नेतृत्वकर्ता के रूप में इस प्रकार का प्रदर्शन व्यक्तिगत निष्पादन के अभिप्रेरण को अल्प करता है। पुलिस नेतृत्व के विभिन्न स्तर इस दिशा में सार्थक प्रयास निर्धारित कर मानव संसाधन की कमी की कुछ हद तक पूर्ति करने में सफल हो सकते हैं। मानव संसाधन के कुशल उपयोग की दिशा में निम्नवत् प्रयास किए जा सकते है।

• एक स्तर का कर्मचारी एक दिन में कितना कार्य कर सकता है। उसकी सीमा निर्धारित कर आंकलन करना तथा आकस्मिक परिस्थिति में उसका निष्पादन किस स्तर तक हो सकता है इस संबंध में भी आंकलन करना।. एक व्यक्ति के एक दिन में कार्य के समय की सीमा का आंकलन एवं निर्धारण करना

तथा इस सीमा में आकस्मिकता की स्थिति में वृद्धि का आंकलन करना।

• इकाई में उपलब्ध कर्मचारियों के कार्य का निष्पादन एवं समय के आधार पर मूल्यांकन कर कमियों में सुधार करना एवं परामर्श प्रदान करना

• उपयुक्त एवं पारदर्शी कार्य वितरण करना।

• कर्मचारियों के श्रेणीयन, खासकर नकारा, या बिना काम के जैसे लेबल देने की प्रक्रिया पर पूर्णतः नियंत्रण करना।

• दीर्घ अवधि कार्यों में रोटेशन प्रक्रिया का प्रयोग कर सभी को समान रूप से कार्य प्रदान करना।

• कर्मचारी राज्य एवं जनता की संपत्ति है तथा उनका किसी भी स्तर पर व्यक्तिगत परिप्रेक्ष्य नहीं है इस धारणा को समाहित करते हुए कर्मचारियों की व्यक्तिगत संलग्नता की प्रवृत्ति को पृथक करना।

• सहयोगी एवं वैकल्पिक मानव संसाधनों के कार्य के क्षेत्र पूर्व से योजनाबद्ध करना तथा किस प्रकार के कार्यों में यह विकल्प प्रस्तुत कर सकते हैं एवं किस प्रकार के कार्यों में यह सहयोगी हो सकते हैं के संबंध में सूक्ष्म योजना तैयार करना।

• कुल उपलब्ध मानव संसाधन की सूची एवं स्थिति की जानकारी रखना तथा आवश्यकता पर विकल्प एवं पूर्ति कहां किस प्रकार, कितने समय में हो सकेगी के संबंध में योजना निर्धारित करना आदि।

पुलिस नेतृत्व संवाद एवं पारदर्शिता

वर्तमान परिवेश में पुलिस की जन सामान्य में छवि पुलिस संगठन की एक वृहद चुनौती है। पुलिस की छवि खराब होने का दुष्प्रभाव प्रत्यक्ष रूप में तो प्रदर्शित होता ही है अप्रत्यक्ष रूप में यह पुलिस एवं सम्पूर्ण व्यवस्था के प्रति जन आक्रोश के रूप में भी अभिव्यक्त होता है। पुलिस नेतृत्व का दायित्व पुलिस की सम्पूर्ण कार्य प्रणाली में पारदर्शिता स्थापित करने तथा उसे सार्वजनिक रूप से प्रस्तुत करने का भी होता है। विभिन्न अवसरों पर पुलिस पर राजनीति, व्यक्तिगत लाभ, धर्म जाति आदि के आधार पर पक्षपात किए जाने के आरोप लगाए जाते है। कई प्रकरणों में यह आरोप वास्तविक होते हैं तथा कई प्रकरणों में अवास्तविक एवं आधारहीन आरोप भी पुलिस कर्मचारियों के उपर लगाए जाते हैं। इकाई प्रमुख अथवा नेतृत्वकर्ता के रूप में पुलिस अधिकारी का यह दायित्व होता है कि आरोपों के संबंध में वस्तु स्थिति स्पष्ट कर उसे जनता एवं मीडिया के समक्ष प्रस्तुत करे। सामान्यतः पुलिस पर आरोपों का विस्तृत प्रचार प्रसार विभिन्न संचार माध्यमों पर किया जाता है लेकिन उसके समाधान

एवं आरोप के निराधार होने पर वस्तु स्थिति का प्रदर्शन आम जनता के समक्ष नहीं हो पाता है। ऐसे अधिकांश मामलों में या तो संबंधित पक्ष का समाधान कर दिया जाता है। या संबंधित पक्ष ही विरोधाभासी कथन या पक्ष विरोधी कथन प्रस्तुत करता है। लेकिन इस प्रक्रिया के दौरान पुलिस छवि को क्षति व्यापक रूप में प्रसार प्राप्त कर लेती है और समाधान सिर्फ संबंधित पक्ष का ही किया जाता है ऐसे में पुलिस नेतृत्व का दायित्व है कि आरोपों के निराधार होने प्रार्थी के पक्ष विरोधी होने या समाधान होने की स्थिति को आम जनता एवं मीडिया के समक्ष प्रस्तुत करे। इसी के साथ पुलिस छवि को नकारात्मक रूप से प्रभावित करने वाले कारकों का निराकरण भी किया जाए पुलिस प्रशिक्षण एवं व्यवहार संबंधी मानकों के निर्धारण से इस प्रकार की स्थिति एवं सार्थक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। संवादहीनता पुलिस एवं जनता, जनप्रतिनिधियों तथा पुलिस के वरिष्ठ और कनिष्ठ रैंको के मध्य अनापेक्षित रूप से पाई जाने वाली अवधारणा है। आंतरिक कार्य व्यवस्था सह संबंध एवं भावनात्मक दक्षता संबंधी तथ्यों की बात हो या पुलिस जनता संबंध अथवा पुलिस के प्रति जनता के संदेह की भावना, मूल रूप में संवादहीनता की उपस्थिति विद्यमान पाई जाती है। पुलिस नेतृत्व से वर्तमान परिप्रेक्ष्य की महत्वपूर्ण अपेक्षा है कि नेतृत्व के स्तर पर संवादहीनता को कम या खत्म करने का प्रयास किया जाए। पुलिस के पक्ष में पारदर्शिता होने एवं उपयुक्त कार्यवाही किए जाने के बाद भी संबंधित पक्ष पूर्णरूप से संतुष्ट नहीं होते हैं। ऐसे में नेतृत्व के स्तर पर व्यापक संवाद की प्रक्रिया स्थापित की जाकर पुलिस का पक्ष या विधिक पक्ष प्रस्तुत किया जा सकता है। इसी प्रकार विभाग में आंतरिक स्तर पर अधिकारियों के द्वारा निर्धारित कार्य लक्ष्य एवं उद्देश्यों के संबंध में कर्मचारियों के स्तर पर असहमति या आंतरिक रूप से स्वीकृति के प्रति संदेह की स्थिति देखी जाती है तथा कई बार विभिन्न प्रकार की भ्रांतियां कर्मचारियों के मध्य विद्यमान होती है। निर्धारित किए गए कार्य लक्ष्यों को राजनीति प्रेरित मानना व्यक्तिगत लाभ के लिए स्टाफ को परेशान करना आदि भ्रांतियां सामान्यतः देखी जाती हैं। पुलिस नेतृत्व कहीं न कहीं अपने रैंक एवं स्तर के अहम् की भावना से पीडित होकर निचले स्तर के स्टाफ एवं कर्मचारियों से बातचीत उन्हें कार्य कारण की जानकारी प्रदान किए जाने को अपनी तौहीन समझता है इस सब का परिणाम विभागीय कार्य दक्षता एवं उपलब्धि पर पड़ता है। लक्ष्य प्राप्ति हेतु वांछित अभिप्रेरण एवं मनोयोग के अभाव की स्थिति भी प्रकाश में आती है।

पुलिस नेतृत्व एवं उपलब्ध भौतिक संसाधनों का अधिकतम उपयोग

पुलिस विभाग के भौतिक संसाधनों में वाहन, हथियार, आधुनिक बल्वा

उपकरण, क्रेन, ऐम्बूलैंस, कर्मचारी आवास, हवालात, चौकी, थाना भवन, क्लोदिंग, वायरलैस उपकरण, आधुनिक उपकरणों में कम्प्युटर, प्रिंटर, कैमरा, रिकार्डर, बुलेट प्रुफ जैकेट एवं वाहन, बम डिस्पोजल संबंधी उपकरण, फारेंसिक विज्ञान संबंधी रसायन एवं किट, विवेचना किट, एनडीपीएस परीक्षण किट, आदि अनेकानेक संसाधन शामिल होते हैं। इस संसाधनों के संबंध में जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया गया है, पर्याप्तता का अभाव सर्वथा विद्यमान देखा जाता है विभिन्न राज्यों के ग्रामीण क्षेत्र के थाने जो कि अपेक्षाकृत अधिक संख्या में हैं तथा अपेक्षाकृत अधिक जनसंख्या के लिए पुलिसिंग प्रदान करते हैं, में संसाधनों की स्थिति अत्यधिक दयनीय स्तर की पाई जाती है। ऐसे अनेक थाने जो नक्सल एवं डकैत जैसी गंभीर समस्याओं से ग्रसित क्षेत्र में कार्य कर रहे हैं के पास बिजली एवं पानी जैसी मूलभूत सुविधा का अभाव प्रकाश आया है। विवेचना गत संसाधन हथियार सुरक्षात्मक उपकरण आदि के संबंध में न केवल उक्त इलाको की पुलिस अपितु आम जनता को अपेक्षाकृत निम्न मानकों से प्रत्यक्ष होना पड रहा है। 21वीं शताब्दी के दूसरे दशक में यदि जनता 18 वीं शताब्दी के पुलिस कार्यों से प्रत्यक्ष होती है तो निश्चित ही कहीं न कहीं उच्च स्तरीय पुलिस नेतृत्व को इस विषय में गंभीर विचार की आवश्यकता है। पुलिस संसाधनों की अपेक्षानुरूप पूर्ति नहीं होना स्वीकार्य तथ्य है। लेकिन ऐसी स्थिति में आवश्यकता एवं अपेक्षा के अनुरूप समुचित वितरण एवं उपयोग की प्रक्रिया को भी निर्धारित करना वांछनीय है। पुलिस संगठन में सामान्य रूप में संसाधनों की अल्पता को व्यक्त करना सहज रूप से प्रकाश में आता है लेकिन उपलब्ध संसाधनों पर समुचित एवं सार्थक उपयोग किया गया या नहीं इस संबंध में विचार सामान्यतः अपेक्षित स्तर पर नहीं किया जाता विभिन्न इकाइयों में आर्म्स एम्यूनेशन, बल्वा सामग्री, आदि के खराब होने के उपयोगी नहीं होने की बात बार बार प्रकाश में आती है। स्वीकृत राशि से ऐसी जगह बैरेक या भवन तैयार करा दिए जाते हैं जहां कि भविष्य की दृष्टि से आवश्यकता युक्ति संगत नहीं होती है। अल्प राशि के चार बिना काम भवनों से बेहतर एक ऐसे भवन का निर्माण होता है जो कि भविष्य में दीर्घ अवधि तक सार्थक रूप में उपयोग किया जा सके लेकिन इस दिशा में वांछित प्रयास अपेक्षित ही बने हुए हैं। पुलिस नेतृत्व में इकाई प्रमुख अपनी सोच एवं धारणा को प्राथमिकता प्रदान करता है तथा अनुशासन एवं उसको नखुश न करने की आकांक्षा के कारण सामान्यतः अन्य स्तर के अधिकारी न तो विरोध करते हैं न ही उससे भिन्न मत प्रस्तुत करते हैं। परिणाम स्वरूप निर्माण एवं क्रय व्यक्तिगत धारणा तक सीमित रह जाता है। सामान्य रूप में उसके बाद आने वाले

इकाई प्रमुख की धारणा उससे भिन्न होती है जो कि पूर्व दिए गए निर्णयों के प्रति आस्था व्यक्त नहीं करता है। यहां क्रय एवं निर्माण संबंधी निर्णय में उस संसाधन को मैदानी स्तर पर उपयोग करने वाले कर्मचारियों के स्तर पर उनके अभिमत की जानकारी एवं उस दिशा में विभिन्न मतों के संग्रहण के उपरांत निर्णयन एवं निर्धारण सार्थक हो सकता है। पुलिस नेतृत्व संसाधनों के वितरण के प्रति सजग एवं संवेदनशील हो तथा उन दूरस्थ इलाको एवं ग्रामीण क्षेत्रों के पुलिस थानों में आधुनिक तकनीकि एवं संसाधनों की उपलब्धता भी सुनिश्चित हो, जहां आज भी समय से अत्यधिक पूर्व की स्थितियां विद्यमान हैं। इकाई के स्तर पर उपलब्ध संसाधनों का क्रमवार वितरण तथा आवश्यकता पर आसानी से पहुंच वाले केन्द्रों का चयन एवं उन पर संग्रहण अपेक्षित परिणाम प्रदान कर सकता है। जहां क्रमवार वितरण प्रशिक्षण एवं जानकारी जागरूकता प्रदान करेगा, वहीं पहुंच हेतु सुगम केन्द्र चाहे वे आरक्षी भवन हो या कोई कार्यालय, समय पर उपलब्धता का आत्म विश्वास जाग्रत करेगा। उपलब्ध संसाधनों का नियमित निरीक्षण, साफ सफाई, तथा पूर्व निर्माण तिथि की सामग्री के प्राथमिकता के आधार पर उपयोग से खराब होने या पुराना होने की स्थिति से बचा जा सकेगा। नेतृत्व के स्तर पर संसाधनों की अल्पता से उसके मूल्यवान होने का आभास एवं इस संबंधी संवेदनशीलता का विकास बेहद आवश्यक है। संसाधनों के मूल्यवान होने के प्रति संवेदनशीलता की भावना उनके अधिकतम उपयोग को प्रेरित करेगी।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि पुलिस से वर्तमान सामाजिक एवं व्यवस्थागत अपेक्षाएं अत्याधिक है तथा पुलिस संसाधनों की पर्याप्त उपलब्धि समय अनुरूप नहीं है। ऐसे में पुलिस नेतृत्व एवं संगठन के दायित्व अत्याधिक महत्वपूर्ण हो जाते है। नेतृत्व की सूझबूझ एवं प्रभाव समाज में न केवल कार्य निष्पादन एवं लक्ष्य प्राप्ति की दृष्टि से अपितु उपलब्ध संसाधनों से सार्थक परिणाम प्राप्ति की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण हो सकती है। सामाजिक अपेक्षाओं के प्रति संवेदनशीलता एवं सतत सार्थक प्रयास अपेक्षित है।

अध्याय 11

पुलिस प्रशिक्षण और नेतृत्व

किसी भी संगठन की व्यवसायिक दक्षता की नींव प्रशिक्षण पर आधारित होती है, यहां यह आवश्यक होता है कि प्रशिक्षण अर्थपूर्ण व्यवसाय से पूर्णतः संबद्ध तथा सामयिक परिर्वतनों को समाहित करने वाला हो प्रशिक्षण वास्तव में साधारण व्यक्ति को संगठन के कार्यकारी व्यक्ति के रूप में परिणत करने की प्रक्रिया को कहा जाता है। उदाहारणार्थ पुलिस विभाग में शामिल होने वाला व्यक्ति प्रारंम्भिक स्तर पर आम आदमी के रूप में संगठन में शामिल होता है। लेकिन प्रशिक्षण उपरांत वह अपने हाव भाव, चाल-ढाल वर्ताव से परिवर्तित रूप में प्रशिक्षण केन्द्र से निकलता है। प्रशिक्षण संगठन की कार्य संस्कृति कार्य के तरीके तकनीकि एवं नियम विनियम, कानून आदि की शिक्षा को समाहित करता है। किसी भी संगठन की सफलता एवं सदस्यों की दक्षता तथा कार्य संस्कृति एवं अभिप्रेरण के स्तर से संगठन के प्रशिक्षण के स्तर को आंका जा सकता है। जनतांत्रिक शासन व्यवस्था में जहां पुलिस का अत्यधिक विस्तृत कार्य क्षेत्र है तथा अपने विस्तार में पुलिस संगठन को पुलिस बल, पुलिस सेवा एवं पुलिस विभाग की त्रिस्तरीय भूमिकाओं का निर्वाहन करना होता है। पुलिस बल वर्दी, अनुशासन, एवं सुरक्षा व्यवस्था के रूप में, पुलिस सेवा, जनता की विभिन्न आकस्मिकता, आपदा, दुर्घटना की स्थिति में सेवा के रूप में एवं पुलिस विभाग विभिन्न जांच, विवेचना, दस्तावेज, रिकार्ड संधारण, आदि के रूप में पुलिस से अपेक्षाएं की जाती हैं। उक्त सभी अपेक्षाओं के प्रति आम जनता शत प्रतिशत एवं तत्काल निष्पादन की चाहत रखती है। विविध रूपों में विविध मुखी गुणवत्ता एवं पारंगतता के संबंध में व्यापक प्रशिक्षण मानकों एवं मानकों एवं विषयों की रूपरेखा अपेक्षित है। पुलिस के कर्तव्य न केवल विविधमुखी बल्कि जटिल हैं

तथा पुलिस कार्य आधिक्य एवं मानव संसाधनों की अल्पता के कारकों से भी प्रभावित है। ऐसे में पुलिस नेतृत्व के उच्च स्तरीय प्रशिक्षण की आवश्यकता स्वाभाविक रूप से स्थापित होती है।

प्रशिक्षण सिर्फ नाम या विश्वास न होकर कौशल उन्नयन की सतत चलने वाली प्रक्रिया है जो कि संभवतः लक्ष्य प्राप्ति का सबसे आसान एवं कम खर्चे को निर्धारित करने वाली प्रक्रिया है। पुलिस संगठन के लक्ष्य एवं अनुशासन की स्थापना में भी प्रशिक्षण आधारभूत भूमिका निभाता है। संगठन के व्यक्तियों की अभिवृत्ति एवं वर्ताव संबंधी परिवर्तन तथा उन्हें समय के साथ सार्थक बनाए रखने की दिशा में भी प्रशिक्षण एक मात्र विकल्प प्रमाणित होता है। खासकर पुलिस जैसे जन सेवा संबंधी संगठन में प्रशिक्षण की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। प्रशिक्षण के लाभ न केवल संगठन को होते हैं बल्कि प्रशिक्षण प्राप्त करने वाला व्यक्ति भी प्रशिक्षण से लाभ प्राप्त करता है तथा सह-अस्तित्व एवं आपसी आवश्यकता की पूति की धारणा प्रशिक्षण के माध्यम से स्थापित होती हैं। इस संबंध में संगठन की ओर से भी सतत प्रयास अपेक्षित होते हैं।

1. व्यक्ति की व्यक्तिगत योग्यताओं को नियुक्ति के समय ही पहचान कर चिह्नित करना।

2. समय समय पर व्यक्ति की योग्यताओं का मूल्यांकन तथा सेवा के दौरान प्रशिक्षण की आवश्यकताओं की पहचान।

3. संगठन के लक्ष्यों के संबंध में समयबद्ध निर्धारण एवं मूल्यांकन।

4. विधिक एवं अन्य मानकों के संबंध में निर्धारण प्रस्तुत करना।

5. वह अभिक्रियाएं प्रस्तुत करना जिससे की संगठन के व्यक्ति आवश्यक सूचना प्राप्त करने में सक्षम हों।

प्रशिक्षण वास्तव में साधन है जो कि अपनी प्रक्रिया में कभी पूर्ण नहीं होता, संगठन को इस तथ्य को पूर्ण रूप में समाहित करना चाहिए तथा प्रशिक्षण संबंधी योजनाओं में इस आधारभूत कारक को विचार में लिया जाना चाहिए। प्रशिक्षण की प्रक्रिया में प्रशिक्षक एवं प्रशिक्षार्थी के रूप में मानव संसाधन तथा आर्थिक संसाधन का व्ययन होता है। अतः प्रशिक्षण की योजना में सजगता पूर्वक कार्य योजना का निर्धारण करते हुए संसाधनों को महत्ता प्रदान की जाना चाहिए। यह सही है कि प्रशिक्षण संगठन एवं व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति की युक्तिसंगत पद्धति है लेकिन यह भी याद रखना होगा कि प्रशिक्षण संसाधनों की कमी एवं आधारभूत संरचना की अल्पता तथा अनुपयुक्त संगठन तंत्र का विकल्प नहीं है। यदि प्रशिक्षण की प्रक्रिया योजनाबद्ध तरीके से तैयार नहीं की जाए तथा

अनुपयुक्त रूप में प्रारंभ की जाए साथ ही प्रशिक्षण अभिक्रियाओं एवं संगठन के लक्ष्यों उद्देश्यों के बीच आवश्यक सह संबंध का अभाव हो तो सार्थक परिणाम प्राप्त नहीं किए जा सकते हैं। संगठन में सभी स्तरों पर निष्पादन एवं उसके मानकों में गिरावट की स्थिति प्रकाश में आती हैं। ऐसी स्थिति में कर्मचारियों में अक्षमता एवं असंतोष की भावना तथा संसाधनों के व्यर्थ व्ययन की स्थिति निर्मित होती है तथा व्यय, लाभ विश्लेषण तथा प्रशिक्षण मूल्यांकन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता हैं। प्रशिक्षण सतत प्रक्रिया हैं जिसमें की निम्नलिखित तत्वों का समावेश होना चाहिए।

- प्रशिक्षण आवश्यकताओं की पहचान।
- प्रशिक्षण संसाधन एवं विषयों का निर्धारण।
- योजना एवं प्रशिक्षण प्रारूप का निर्धारण।
- प्रशिक्षण प्रक्रिया की कार्य रूप परिणति।
- परिणामों की समीक्षा एवं पुर्नमूल्यांकन।

इस प्रकार प्रशिक्षण के निर्धारक तत्वों पर गंभीर विचार विमर्श, विभिन्न मत आमंत्रित कर तत्वगत निर्धारण सुनिश्चित कर, पूर्व अनुभवों के कारकों को समाहित कर, परिवेश एवं सामयिक प्रभावी कारकों की समीक्षा कर प्रशिक्षण की रूप रेखा का निर्धारण किया जाना वांछनीय है।

प्रशिक्षण की आवश्यकता की पहचान एवं निर्धारण के पूर्व यह निर्धारित किया जाना आवश्यक होता है कि व्यक्तिगत स्तर पर किस प्रकार के कार्य एवं निष्पादन की अपेक्षा संगठन को है तथा व्यक्ति की व्यक्तिगत योग्यताएं कार्य के परिप्रेक्ष्य में किस स्तर की हैं। इस प्रकार दोनों तथ्यों पर सम्यक विचार किया जाकर वास्तव में किस प्रकार का प्रशिक्षण अपेक्षित है के संबंध में निर्धारण सुनिश्चित किया जा सकता है। प्रशिक्षण के माध्यम से व्यक्ति तैयार किया जाता है। व्यक्तिगत स्तर पर ही कौशल एवं ज्ञान प्रदान किया जाता है तथा वह व्यक्ति ही होता है जिसमें प्रशिक्षण के तत्व आत्मसात होकर संगठन के अनुशासन की स्थापना एवं विभिन्न सुधार प्रशिक्षण के माध्यम से किए जाते हैं। कार्य की आवश्यकता के अनुरूप अभिवृत्ति का व्यक्तिगत विकास प्रशिक्षण का ध्येय होता है अतः प्रशिक्षण आवश्यकताओं के निर्धारण के पूर्व व्यक्तिगत नाम, सूची, तैयार कर उपलब्ध एवं आवश्यक कौशल पर विचार किया जाना सार्थक परिणाम प्रस्तुत कर सकता है। सामान्यतः प्रशिक्षण के संबंध में आवश्यकता का निर्धारण समूह वर्ग अथवा रैंक के सामूहिक आधार पर किया जाता है। जबकि वृहद रूप में इस प्रकार प्रशिक्षण आवश्यकताएं निर्धारित कर व्यक्तिगत रूप में भी प्रशिक्षण

आवश्यकताओं का विश्लेषण किया जाना चाहिए। प्रशिक्षण आवश्यकताओं के निर्धारण के संबंध में संगठन की जानकारी, कार्य का विवरण तथा प्रकृति, कार्य विशेषज्ञता, कार्य मूल्यांकन एवं उसकी प्रक्रिया, स्टाफ के व्यक्तिगत निष्पादन का मूल्यांकन, व्यक्ति के पुराने रिकार्ड यथा प्रशिक्षण अनुभव, विशेष योग्यताओं की जानकारी आदि का विश्लेषण विस्तार से किया जाकर इस दिशा में सार्थक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। प्रशिक्षण की योजना एवं प्रशिक्षण आवश्यकता के संबंध में संगठन के स्तर पर एवं व्यक्तिगत स्तर पर निर्धारण सुनिश्चित किए जाकर उत्कृष्ट स्थिति निर्धारित की जा सकती है। संगठन के स्तर पर कर्मचारियों के अभिलेख संगठन उपलब्ध मानव संसाधन संबंधी आंकड़े, निर्वतमान प्रशिक्षण गतिविधियां तथा मूल्यांकन की पद्धति को समाहित करते हुए तथा संगठन में मानव संसाधन के विकास की योजनाएं किस प्रकार की हैं पर पूर्ण विचार किया जाकर इस प्रकार का निर्धारण सार्थक हो सकते हैं। संगठन के स्तर पर निष्पादन की समस्याओं को भी प्रशिक्षण आवश्यकताओं के निर्धारण के पूर्व प्रकाश में लाना अपेक्षित होता है। संगठन में जन शिकायतें, बिलंब संबंधी कारक, अत्यधिक अनुपस्थिति, विधिक अवरोध, मीडिया संबंधी धारणाएं, बाह्य स्वरूप में कमियां, योजना एवं उद्देश्यों के संबंध में सूचनाओं का अभाव, नवीन सुविधाओं के उपयोग में विफलता, वैज्ञानिक तकनीकी एवं साधनों के उपयोग में विफलता, कार्य के प्रति रुचि का अभाव एवं नवाचार का अभाव आदि की सूची विधिवत् तैयार की जाकर समाहित किया जाना चाहिए। इसी प्रकार व्यक्तिगत स्तर पर व्यक्ति की प्रतिक्रिया एवं अपेक्षा कार्य संतुष्टि के स्तर वर्तमान कौशल उपलब्धि एवं आवश्यकताएं, कार्य विश्लेषण, तथा अपेक्षित कौशल एवं उपलब्ध कौशल के बीच अंतर या कमियों का निर्धारण व्यक्तिगत स्तर पर किया जाना चाहिए। कर्मचारी के व्यक्तिगत स्तर के निर्धारण सीधे अवलोकन के द्वारा या कार्य के संबंध में प्रश्न स्वयं कर्मचारी से अथवा उसके वरिष्ठ अधिकारी से अथवा उसके कार्य से प्रत्यक्षतः प्रभावित किसी व्यक्ति से विभिन्न प्रश्नोत्तर के द्वारा निर्धारण किया जा सकता है। विभिन्न सर्वे एवं विश्लेषण भी व्यक्तिगत स्तर के निर्धारण में महत्वपूर्ण हो सकते हैं। प्रशिक्षण आवश्यकताओं के निर्धारण के मुख्य आधार किसके लिए? एवं क्या प्रशिक्षण? के आधार पर निर्धारित करने के साथ त्वरितता के स्तर पर भी विचार एवं निर्धारण अपेक्षित होता है। कार्य लक्ष्य की प्राथमिकता के अनुरूप प्रशिक्षण के स्वरूप की प्राथमिकता निर्धारित की जानी चाहिए साथ ही नियम विनियम परिवेश उद्देश्य आदि के निकट भविष्य में संभावित परिवर्तन को भी निर्धारण में समाहित किया जाना चाहिए। निकट भविष्य

में परिवर्तन की संभावना के आधार पर प्रशिक्षण कार्यक्रम में परिवर्तन से जुडी हुई अभिक्रियाओं को विलंम्बित किया जा सकता है। किसी भी संगठन के समस्त प्रशिक्षण आवश्यकताओं को एक ही समय में निर्धारित एवं समाहित करना संभव नहीं होता है। क्योंकि जीवन विविधमुखी तथा विभिन्न कारकों के सतत परिवर्तन पर आधारित होता है। प्रशिक्षण के निर्धारण में प्राथमिकता पर विचार करते हुए उपलब्ध संसाधनों तथा कार्य के दौरान प्रत्यक्ष होने वाली समस्याओं के संबंध में निदानात्मक शैलियों को स्थापित किया जाकर उनके परिप्रेक्ष्य में संगठन के निष्पादन की समीक्षा की जानी चाहिए।

प्रशिक्षण आवश्यकताओं के निर्धारण के पश्चात् प्रशिक्षण के मूल एवं सहयोगी संसाधनों तथा विषय वस्तु का निर्धारण अपेक्षित होता है जैसा कि पूर्व में प्रशिक्षण आवश्यकताओं के निर्धारण में संगठन की आवश्यकताओं, लक्ष्यों, के आधार पर निर्धारण के संबंध में प्रतिपादन किया गया है। प्रशिक्षण के मूल विषय वस्तु भी आवश्यकताएं एवं लक्ष्य के आधार पर निर्धारित किए जाते हैं। प्रशिक्षण संसाधनों के रूप में दृश्य श्रृव्य उपकरणों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसके अलावा प्रशिक्षण का परिवेश, प्रशिक्षार्थियों की बैठक व्यवस्था, माईक अथवा प्रतिध्वनि संबंधी विशेषताएं प्रशिक्षार्थियों की सहभागिता एवं स्वयं करके सीखने के संबंध में विभिन्न संसाधन, पावर पाईंट, प्रस्तुतिकरण के लिए एलसीडी एवं प्रोजेक्टर, क्लिप बोर्ड, फ्लिप चार्ट, आदि संसाधन अपेक्षित होते हैं। संसाधन की उपलब्धता एवं पूर्ति हेतु प्रयास किया जाना निश्चित ही महत्वपूर्ण है लेकिन प्रशिक्षण संसाधनों की अनुपलब्धता के आधार पर प्रशिक्षण अवरोध स्थापित नहीं होना चाहिए, साथ ही प्रशिक्षार्थियों में एवं उनके सीखने की प्रक्रिया में संसाधनों की अल्पता संबंधी चर्चा अत्यधिक नकारात्मक प्रभाव अंकित करती है। अतः प्रशिक्षार्थियों को उत्साहपूर्ण परिवेश में प्रशिक्षण दिया जाकर संसाधनगत अल्पता महसूस न हो यह दायित्व मुख्य रूप से प्रशिक्षण प्रबंधन का होता है। प्रशिक्षण की विषय वस्तु एवं उस पर विशेषज्ञ प्रशिक्षक के माध्यम से प्रशिक्षण की व्यवस्था प्रभावी परिणाम प्रस्तुत करती है। प्रशिक्षण की योजना में सूक्ष्म योजना जिसमें की दूरगामी प्रभाव को समाहित करते हुए प्रशिक्षण का उद्देश्य विषय, उस विषय पर काल खण्डों की संख्या एवं समय, कुल प्रशिक्षण का विषय बार प्रतिशत का निर्धारण जिसमें की कौन सा विषय कुल प्रशिक्षण का कितने प्रतिशत समय पढाया जाना है का निर्धारण हो, प्रशिक्षण विषय से अपेक्षित लक्ष्य, प्रशिक्षण से प्राप्त कौशल के मूल्यांकन के स्तर का निर्धारण जिसमें की यह निर्धारित हो कि प्रशिक्षण विशेष विषय के उपरांत प्रशिक्षार्थी किस कौशल में किस स्तर तक

सक्षम होंगे। विषय विशेष के उपलब्ध प्रशिक्षक उनकी योग्यता उनकी उपलब्धता एवं संचारगत क्षमता के निर्धारण करते हुए योजना, को स्वरूप प्रदाय करना चाहिए, प्रशिक्षार्थियों के संबंध में अपेक्षाओं का निर्धारण पूर्व में प्रशिक्षण आवश्यकताओं के निर्धारण के समय किया गया था लेकिन यदि विषय पर एकाधिक प्रशिक्षक उपलब्ध हैं तब प्रशिक्षार्थी समूह के कौशल एवं ग्राहता के स्तर के अनुरूप कौन सा प्रशिक्षक सर्वोत्तकृष्ट है, यह निर्धारण किया जाकर हम न केवल प्रशिक्षार्थीयों की अभिरूची को स्थान प्रदान करते हैं बल्कि प्रशिक्षण के शत प्रतिशत परिणाम की ओर अग्रसर होते हैं। प्रशिक्षण योजना विभिन्न तथ्यों को समाहित करते हुए माइक्रो प्लानिंग के स्तर की होना चाहिए, योजनगत् स्तर पर प्रशिक्षण परिलब्धियों के अधिकाधिक प्रतिशत का निर्धारण किया जा सकता है। प्रशिक्षण योजना में प्रशिक्षार्थियों के मध्य गुणवत्तापूर्ण हर्षोल्लास के समय का निर्धारण तथा प्रशिक्षार्थी एवं प्रशिक्षक समूहों के बीच पारस्परिक संपर्क के लिए स्थान प्रदाय किया जाना चाहिए।

प्रशिक्षण अभिक्रियाओं के संचालन के दौरान सहभागी अभिक्रियाओं का सम्मेलन अत्यधिक आवश्यक होता है। प्रशिक्षण के दौरान संचार एक तरफा न होकर पारस्परिक सहभागी संचार की व्यवस्था सार्थक परिणाम प्रस्तुत करने में सहायक होती है। प्रशिक्षण कार्यक्रमों में चूंकि पढे-लिखे प्रतिस्पर्धाओं में उत्तीर्ण व्यक्तियों को कार्य संबंधी प्रशिक्षण प्रदाय किया जाता है। अतः विरोधाभास एवं वर्चस्व की भावना स्वभाविक होती है। यह स्थिति प्रशिक्षक के लिए अत्यधिक चुनौतीपूर्ण परिस्थिति का निर्माण करती है तथा प्रशिक्षक इस प्रकार की स्थिति से बचाव के लिए अनुशासन की ढाल का उपयोग कर नीरस माहौल में एक तरफा संवाद से ओतप्रोत प्रशिक्षण विधि को अंगीकृत करता है। परिणामों की दृष्टि से इस प्रकार की स्थिति सार्थक परिणाम प्रस्तुत करने में नकारात्मक प्रभाव अंकित करती है, तथा प्रशिक्षार्थी की प्रशिक्षण परिलब्धि भी न्यूनतम स्तर की होती है। ऐसी स्थिति में प्रबंधन या पर्यवेक्षण के स्तर पर हस्तक्षेप किया जाकर सुधारात्मक सुझाव प्रेरित किया जाना चाहिए तथा प्रशिक्षण को आदान प्रदान की प्रक्रिया का स्वरूप प्रदाय किया जाना चाहिए प्रशिक्षार्थियों को उनकी मानसिक योग्यताओं एवं अनुभवों की अभिस्वीकृति प्रदान करना तथा प्रशिक्षण गतिविधि को परिचर्चा का सहभागी स्वरूप प्रदान करना श्रेयस्कर हो सकता है। प्रशिक्षण के मूल्यांकन एवं प्रतिभागियों से विभिन्न बिन्दुओं से फीडवैक प्राप्त करना, प्रशिक्षण सत्र के दौरान एवं अंतिम सोपान पर अपेक्षित होता है। मूल्यांकन की विधि एवं प्रारूप योजना के स्तर पर ही निर्धारित किया जाना चाहिए तथा प्रशिक्षण उपरांत

प्रशिक्षार्थी किस कौशल के किस स्तर को अपने में समाहित करेंगे यह जानकारी आवश्यक रूप से योजना के स्तर पर ही निर्धारित की जाना चाहिए तथा समयबद्ध सतत मूल्यांकन की दृष्टि से विभिन्न कालखडों के प्रशिक्षक को भी इस तथ्य से पूर्व से ही अवगत कराना चाहिए ताकि वह विभिन्न समय अंतराल पर लघु मूल्यांकन निर्धारित कर सके। प्रशिक्षण मूल्यांकन की प्रक्रिया सतत एवं वस्तुनिष्ठ होनी चाहिए तथा किस स्तर तक का प्रशिक्षण अवदान स्वीकृति की श्रेणी में होगा तथा उस स्तर से निम्न स्तर को स्वीकृति प्रदान नहीं की जाएगी यह निर्धारण भी योजना के स्तर पर सुनिश्चित किया जाकर मूल्यांकन प्रक्रिया में इसे समाहित किया जाना चाहिए। प्रशिक्षण के मूल्यांकन पर अपेक्षित स्थति का कौशल विकास परिलक्षित न हो यह संभाव्य है अतः ऐसी स्थिति में वैकल्पिक योजना एवं कौशल उन्नयन के पूरक सत्र के संबंध में निर्धारण मूल्यांकन के साथ ही किया जाना चाहिए। प्रशिक्षण अत्यधिक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। तथा एक व्यक्ति को शारीरिक मानसिक व्यवहारगत तथा सभ्यता एवं संस्कृति के स्तर तक आमूलचूक परिवर्तन, प्रशिक्षण के माध्यम से किए जा सकते हैं। संगठन की संस्कृति लक्ष्य उददेय एवं कार्य के प्रति अभिप्रेरण तथा प्रतिबद्धता का विकास प्रशिक्षण के माध्यम से किया जा सकता है। अतः इसे एक गंभीर प्रक्रिया के तौर पर निरूपित करते हुए सार्थक प्रयास किए जाने चाहिए।

शिक्षण एवं प्रशिक्षण

शिक्षण एवं प्रशिक्षण दोनों के ही माध्यम से ज्ञान एवं सूचनाओं का संप्रेषण किया जाता है। लेकिन शिक्षण की प्रकृति जहां सामान्य होती है वहीं प्रशिक्षण विशेष प्रकृति का होता है, प्रशिक्षण का संबंध व्यक्ति के आधारभूत ज्ञान तथा अकादमिक उपलब्धियों से होता है। वहीं प्रशिक्षण का सीधा संबंध व्यवसाय या कार्य संबंधी आवश्यकताओं से होता है। प्रशिक्षण में कौशल ज्ञान एवं अनुशासन का सम्मिलित संप्रेषण किया जाकर व्यक्ति की अभिवृत्तियों के विकास की अपेक्षा की जाती है तथा व्यक्ति के कार्य संबंधी अपेक्षाओं की पूर्ति का प्रयास प्रशिक्षण के माध्यम से किया जाता है। पुलिस कार्य भी एक जानकारी एवं व्यवसायिक अपेक्षाओं से परिपूर्ण होता है जहां पुलिस कर्मी से व्यवसायिक दक्षता की अपेक्षा की जाती है जो कि प्रशिक्षण के माध्यम से ही संभव होता है। प्रशिक्षण व्यक्ति को उसके कार्य एवं व्यवहार के प्रति जागरूकता तथा लक्ष्यों के प्रति सचेत बनाने का कार्य करता है ताकि वह अपने कार्य को पूर्ण योग्यता से संपादित कर सके। पुलिस संगठन में शामिल होने वाले विभिन्न स्तरों के व्यक्ति विभिन्न

शैक्षिक परिवेश से आते हैं। तथा प्रशिक्षण के माध्यम से पुलिस विभाग की कार्य संस्कृति एवं कार्यों को आत्मसात करते है। यह सर्वथा आवश्यक नहीं है कि अच्छी शैक्षणिक योग्यतावाला व्यक्ति पुलिस अथवा किसी भी संगठन में अपेक्षाकृत श्रेष्ठ कार्य निष्पादित करेगा अपितु ऐसे कई उदाहरण प्रकाश में हैं जहां विभाग में एक साथ पर्दापण एवं प्रशिक्षण करने वाले पृथक-पृथक शैक्षणिक योग्यताओं के दो व्यक्तियों के मध्य अधिक शैक्षणिक योग्यता वाले व्यक्ति से अधिक अच्छा कार्य निष्पादन अपेक्षाकृत कम शैक्षणिक योग्यता वाले व्यक्ति के द्वारा प्रस्तुत किया गया यहां संगठन में शैक्षणित योग्यता से अधिक महत्व संगठन की कार्य संस्कृति कार्य प्रकृति एवं कार्य स्वरूप को प्राप्त होता है जिससे की व्यक्ति का संगठन में निष्पादन निर्धारित होता है एवं प्रशिक्षण उक्त कौशल के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत करता है। वर्तमान परिवेश में आधुनिक संस्कृति, सूचना प्रौद्योगिकि संचार क्रांति, आर्थिक उदारीकरण एवं भू मंडलीकरण के कारकों ने पुलिस के समक्ष गंभीर चुनौतियां प्रस्तुत की हैं। अंतराष्ट्रीय स्तर पर छद्म युद्ध की परिकल्पना ने मुख्य स्थान प्राप्त किया है जो कि पुनः पुलिस के लिए नक्सलवाद आतंकवाद आदि के रूप में गंभीर चुनौती प्रस्तुत करती है। ऐसी स्थिति में पुलिस की प्रतिबद्धता के स्तर में अत्यधिक वृद्धि की अपेक्षा समाज एवं राष्ट्र द्वारा की जा रही है। अतः पुलिस को विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षण के माध्यम में पारंगत होना होगा। पुलिस प्रशिक्षण में विभिन्न कौशलो के निर्धारक कारकों को स्थान प्रदाय करते हुए विभिन्न स्तरों पर इनसर्विस कोर्स की योजना तैयार कर उपलब्ध अमले को प्रशिक्षण प्रदान करना तथा विभाग में सेवा देने आ रहे नए लोगों के लिए बेहतर प्रशिक्षण योजना तथा प्रति वर्ष विचार विमर्श कर उपादेयता संबंधी मूल्यांकन एवं उसके आधार पर निर्धारण अत्यधिक आवश्यक है।

पुलिस में नवीन पद्धतियों के माध्यम से तैयारी एवं जागरूकता संबंधी कारक

• सर्वविदित है कि पुलिस संगठन के कार्य लक्ष्य विविध मुखी होते हैं यहां तक की औसत पुलिस थाना स्तर पर विभिन्न प्रकार की अभिक्रिया एवं कार्य किए जाते हैं एवं अपेक्षित होते हैं। कार्य की विविधता एवं अभिक्रियाओं के प्रसार का स्तर अत्यधिक वृहद् होता है।

• पुलिस कार्य जनता के परिवेश में होने के कारण प्रत्येक कार्य बहुमुखी आयाम समाहित करता है तथा परिष्कृत जनतंत्रीय मानव संबंधों की अपेक्षा पुलिस से की जाती है। यह कार्य यांत्रिक प्रकृति के नहीं होते हैं तथा अधिकांश

पुनर्रावृत्ति के रूप में पुलिस के समक्ष होते हैं। ऐसे में अपेक्षा एवं अभ्यास का विरोधाभास कार्य को जटिलता प्रदान करता है। अतः सतत प्रशिक्षण कार्यक्रम, आवश्यक हो जाते हैं।

• विभिन्न न्यायालपीन निर्देशों के परिप्रेक्ष्य में पुलिस प्रक्रिया एवं प्रशासकीय नीति निर्धारण तकनीकी एवं अन्य परिवर्तन, सतत क्रियाशील रहते हैं। ऐसे में पुलिस संगठन की कार्य प्रणाली निर्धारित सही दिशा में अग्रसर हो यह अत्यधिक महत्वपूर्ण हो जाता है तथा पुलिस को विभिन्न अनुकूलन के साथ ताल मेल एवं सार्थक प्रक्रिया का निर्धारण करना होता है।

• तीव्रगति से परिवर्तन शील वैश्विक परिदृश्य तकनीकि एवं सतत प्रवाहशील नए विचारों के मध्य यह आवश्यक है कि संगठन एवं व्यक्ति विशेष इन परिवर्तनों से तालमेल स्थापित कर उपयुक्त परिवर्तनों का स्वीकार्य सुनिश्चित करें तथा अपनी दक्षताओं का विकास करें एवं नकारात्मक एवं वे परिवर्तन जो संगठन के समक्ष चुनौती प्रस्तुत करते हैं से उभरने की रणनीति पर सतत प्रयास किया जाए।

• संगठन के स्तर पर परिवर्तनों को आत्मसात किए जाने की स्थिति में व्यक्तिगत एवं नेतृत्व के स्तर पर इस प्रकार के अनुकूलन के लिए इनसर्विस प्रशिक्षण कार्यक्रम अपेक्षित एवं आवश्यक होते हैं।

• किसी भी संगठन में संबंद्ध व्यक्ति को व्यक्तिगत स्तर पर विकास के अवसर प्रदान किया जाना न केवल अपेक्षित होता है बल्कि यह संगठन की महती आवश्यकता भी होती है। अतः पुलिस संगठन को अपनी सीमाओं में इस प्रकार के अवसर निर्धारित करने होंगे।

• सतत प्रशिक्षण, संगठन में अवसरों के विस्तार के व्यक्तिगत स्तर का निर्धारण करता है साथ ही संगठन के द्वारा समाज को प्रदान की जाने वाली सेवाओं की गुणवत्ता में वृद्धि भी इसके माध्यम से होती है तथा संगठन प्रभाव भी वृद्धि को प्राप्त करता है। इस प्रकार के गुणवत्ता सुधार व्यक्ति को संतुष्टि एवं उपलब्धि की भावना से प्रेरित करता है।

• साधारणतः यह धारणा विद्यमान पाई जाती है कि यदि किसी एक व्यक्ति को विजय प्राप्त करनी है तो दूसरे किसी व्यक्ति को पराजय प्राप्त करनी होगी लेकिन सतत प्रशिक्षण की प्रक्रिया में कोई पराजित नहीं होता तथा व्यक्ति संगठन एवं संगठन से सेवा प्राप्त करने वाला समाज सभी लाभांवित होते हैं।

• पुलिस संगठन में प्रशिक्षण पुलिसकर्मियों को कम तनाव में अधिक दक्षता से अपने लक्ष्य एवं कार्य पूर्ण करने की सार्मथ्य प्रदान करते हैं तथा उनके

कौशल में उन्नयन निर्धारित करते है तथा पुलिस कर्मी की अभिवृत्ति में सुधार का प्रसार इसके माध्यम से होता है।

• पुलिस संगठन में सेना या बल के लक्षणों का प्रभाव आधिक्य में देखा जाता है जबकि पुलिस सेवा एवं आपराधिक न्याय कानून का प्रस्तुतकर्ता विभाग होता है इन रूपों में पुलिस कर्मियों से व्यवहार कुशलता, बुद्धिमत्ता एवं योग्यता के स्तर की अपेक्षा की जाती है। इस दिशा में विभिन्न देशों ने प्रयास प्रारंभ कर पुलिस भर्ती में शैक्षणिक योग्यता की अपेक्षा के स्तर में वृद्धि की है।

• जैसा कि पुलिस संगठन बेहतर योग्य व्यक्ति चाहता है तब संगठन के स्तर पर भी समान रूप से अपेक्षित होता है कि लोगों की शिक्षा कौशल एवं गुणवत्ता के प्रदर्शन के पूर्ण अवसर उन्हें पुलिस संगठन में प्रदान किए जावें तथा इनके विस्तार के संबंध में भी अनुकूल परिस्थितियां निर्मित हों विभिन्न राष्ट्रों में पुलिस संगठनों ने विश्व विद्यालयों के साथ साझेदारी का विकास किया है जिससे की संगठन के कर्मचारियों को ज्ञान एवं कौशल के उन्नयन का विशेष अवसर प्राप्त हो सके। इनमें पुलिस से संबंधित विषयों पर डिग्री एवं डिप्लोमा कार्यक्रम में समाहित होने का अवसर पुलिस कर्मियों को प्रदान किया जा रहा है। यह कार्यक्रम समक्ष उपस्थिति एवं दूरस्थ शिक्षा विधियों के माध्यम से शिक्षण करते हैं। प्रशासन प्रबंधन, मानव संसाधन, विधि विज्ञान एवं उसके प्रयोग दण्ड विज्ञान, अपराध विज्ञान एवं कानून तथा इससे संबंधित विषयों को इसमें समाहित किया जाता है। यह अत्यधिक श्रेयस्कर प्रक्रिया है जो कि कर्मचारियों में शिक्षा एवं प्रशिक्षण के प्रति अभिप्रेरण जागृत करती है तथा डिग्री डिप्लोमा के माध्यम से भविष्य की संभावनाएं व्याप्त होती हैं। जो कि संगठन एवं कर्मचारी दोनों स्तरों पर लाभप्रद स्थति निर्धारित होती है।

• इसी प्रकार कई देश एवं राज्यों में पुलिस संगठन के कर्मचारियों को शिक्षण प्रशिक्षण के लिए छात्रवृत्तियां एवं ऋण सुविधा उपलब्ध कराई जा रही है जो कि शैक्षणिक परिवेश के उन्नयन में महत्वपूर्ण है।

• पुलिस संगठन में अब न केवल आधुनिक कारकों को निर्धारित करना बल्कि सभी संगठन सदस्यों के मध्य स्व जागरूकता का विकास करना एवं आधुनिकता संबंधी अनुकूलन के प्रति सहज एवं प्रभावी प्रतिक्रिया का विकास भी अपेक्षित है।

पुलिस संगठन में प्रशिक्षण संबंधी विभिन्न आवश्यकताए एवं विशेषताएं समाहित हैं। जो कि प्रशिक्षण के परिवेश को निरूपित करती हैं। भारत में पुलिस कर्मचारी की आरक्षक के स्तर पर भर्ती की अपेक्षित योग्यता, हाई

स्कूल परीक्षा होती है। यह योग्यता सफल एवं अपेक्षित कार्य निष्पादन की दृष्टि से पर्याप्त नहीं है इसमें पुर्नविचार कर निर्धारण अपेक्षित है। खासकर तब जबकि अधिक शिक्षित लोगों की उपलब्धता विद्यमान है। पुलिस के कुल कार्यकारी मैदानी अमले में से लगभग 25-30 प्रतिशत का बल ही बाहरी क्षेत्रों में कार्य करता है तथा शेष 70-75 प्रतिशत का बल ग्रामीण अथवा कस्बाई क्षेत्रों में सेवाएं प्रदान करता है। इनमें से भी अधिकांश इलाके दूरस्थ एंव पिछडे हुए होते हैं। ऐसी स्थिति में इन लगभग 70 से 75 प्रतिशत पुलिसकर्मियों को जिनकी संख्या अत्यधिक है। आधुनिक परिवर्तनों से अवगत कराना नवाचार एवं नव तकनिकि की जानकारी प्रदान करना निश्चित ही दुरूह कार्य है। दूरस्थ इलाको से प्रशिक्षण कार्यक्रमों में एवं इनसर्विस कोर्स में शामिल होना भी हर समय संभव नहीं हो पाता है साथ ही आधारभूत संरचनागत संसाधनों की उपलब्धता की कमी यथा बिजली, फोन लाईन, इंटरनेट आदि की अनुपलब्धता या अपर्याप्त उपलब्धता विपरीत परिस्थिति उत्पन्न करते हैं। दूरस्त इलाको में विभिन्न शासकीय कार्यालयों एवं विशेषज्ञों आदि का अभाव होता है जो कि पुनः नवाचार एवं तकनिकि विकास के प्रशिक्षण को नकारात्मक रूप में प्रभावित करते हैं। ऐसी स्थिति में पुलिस नेतृत्व एवं अधिकारी स्तर पर वैकल्पिक प्रयास सुनिश्चित किए जाने चाहिए। यह वैकल्पिक प्रयास क्रमानुसार शहरी एवं ग्रामीण पदस्थापना के रूप में तथा विभिन्न कर्मचारियों के प्रशिक्षण के विकल्प की व्यवस्था के रूप में, ग्रामीण क्षेत्रों के लिए संबंधित क्षेत्र में ही प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करने के रूप में एवं दूरस्थ प्रशिक्षण विधियों के प्रयोग के रूप में सार्थक हो सकते है। नियमित रूप से उपयोग में लाए जाने वाले कौशल यथा चैकिंग, गिरफ्तारी, पूछताछ, फोन पर वार्तालाप, यातायात व्यवस्था, जनता से वार्तालाप, आदि के संबंध में साधारण एवं लघु प्रशिक्षण कार्यक्रम थाना स्तर पर, थाना प्रभारी के माध्यम से ही चलाए जा सकते हैं। विभिन्न कौशल एवं नवाचार संबंधी प्रशिक्षण वीडियो फिल्म का निर्माण कर थाना स्तर तक प्रदर्शन एवं उस पर परिचर्चा आयोजित कर प्रशिक्षण दिया जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यालय आदि स्थापित होते है तथा इनके शिक्षक एवं अन्य शिक्षित व्यक्ति क्षेत्रों में निवासरत् पाए जाते हैं। थाना प्रभारी ऐसे लोगों को आमंत्रित कर मानव व्यवहार, पुलिस व्यवहार एवं अपेक्षाओं संबंधी परिचर्चा

आयोजित कर सकते हैं। इस प्रकार की चर्चा प्रथमतः पुलिस के सामाजिक सरोकार एवं सह संबंधों की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान कर सकेगी तथा संपर्क के माध्यम से सीखने की प्रवत्ति में भी विकास हो सकेगा। समाज के बुद्धिमान प्रतिष्ठित व्यक्ति से थाने के प्रत्येक कर्मचारी का सीधा संपर्क, पुलिस की छवि एवं मानव अधिकारों की दृष्टि से भी श्रेयस्कर स्थिति प्रदान करेगा।

दूरस्थ प्रशिक्षण कार्यक्रम

जैसा कि पुलिस के दूरस्थ क्षेत्रों में विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में पदस्थ कर्मचारियों के प्रशिक्षण एवं विभिन्न इनसर्विस कार्यक्रमों में उपलब्धता प्रायः प्रश्नगत होती है ऐसे में दूरस्त प्रशिक्षण प्रभावी विकल्प प्रस्तुत कर सकता है। पुलिस प्रशिक्षण कार्यक्रमों को पुलिस प्रशिक्षण का माध्यम के रूप में स्थापित करने से न केवल व्यवसायिक जागरूकता का विकास हो सकता है बल्कि प्रचलित प्रशिक्षण परिस्थितियों में मूलभूत परिवर्तन एवं सुधार समाहित किए जा सकते हैं। व्यक्तिगत आत्म विश्वास सेवा की गुणवत्ता आदि में भी उन्नयन किया जा सकता है। दूरस्थ प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लिए पुलिस प्रशिक्षण के वरिष्ठ स्तर पर प्रशिक्षण सामग्री तैयार करना एवं इन कार्यक्रमों को पुलिस थाना स्तर पर चलाया जाना तथा व्यवस्थित एवं सतत गति प्रदान करना श्रेयस्कर हो सकता है। यह कार्यक्रम जिज्ञासा के उत्थान तथा कौशल के विषय में स्वयं सीखने की प्रवत्ति का विकास करने में सहायक होते हैं। इन दूरस्थ कार्यक्रमों में विभिन्न परिवर्तनों एवं विधिक तथा तकनीकि सुधारों को समाहित करते हुए कौशल प्रशिक्षण एंव उन्नयन के कार्य किए जा सकते हैं।

यद्यपि दूरस्थ प्रशिक्षण कार्यक्रम पुलिस के मूल भूत प्रशिक्षण का स्थान नहीं ले सकते तथापि कौशल एवं ज्ञान के उन्नयन में प्रभावित भूमिका प्रस्तुत कर सकते हैं। वरिष्ठ स्तर पर विस्तृत विचार विमर्श के उपरांत वांछनीय विषयों पर दूरस्थ प्रशिक्षण हेतु योजना तैयार की जाकर तथा प्रशिक्षण कार्यक्रमों को प्रमाण पत्र डिप्लोमा या विशेष योग्यता का दर्जा एवं अभिस्वीकृति प्रदान की जाकर उपयोगी प्रशिक्षण परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। इन कार्यक्रमों के माध्यम से दूरस्थ इलाको में पदस्थ पुलिस कर्मचारियों के प्रशिक्षण संबंधी समस्या के संबंध में काफी हद तक वैकल्पिक व्यवस्था सुनिश्चित की जा सकती है। वैधानिक परिवर्तन एवं संशोधन, सूचना प्रौद्योगिकी का विकास, फॉरेन्सिक विज्ञान के नए

आयाम, मोबाइल फारेन्सिक संबंधी नवीन गतिविधियां, व्यवहार परिवर्तन, संवेदनशीलता, प्रक्रियागत सुधार, विभिन्न चुनौतियों एवं कठिनाईयों के संबंध में सवेदनशीलता आदि विषयों पर सीमित अवधि के कोर्स तैयार किए जाकर विषय सामग्री, डाक के माध्यम से प्रशिक्षार्थियों को प्रेषित कर इसमें विभिन्न अभिक्रियाओं यथा केस स्टडी, निबंध लेखन, प्रस्तुतीकरण आदि को स्थान दिया जाकर सार्थक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। यह प्रशिक्षार्थियों का विभिन्न माध्यमों से मूल्यांकन एवं प्रशिक्षण की सफलता पर प्रमाण पत्र या डिप्लोमा विशेष योग्यता के रूप में अभिस्वीकृति प्रदान कर प्रशिक्षण के प्रति जिज्ञासा एवं अभिरुचि स्थापित कर परिणामों की सार्थकता को बढाया जा सकता है। विभिन्न स्तरों पर इस प्रकार के प्रयास अपेक्षित हैं।

सतत प्रशिक्षण एवं महत्व

जैसा कि कहा जाता है कि 'ज्ञान ही शक्ति होती है' की कहावत न केवल भूतकाल में बल्कि वर्तमान काल में भी उतनी ही सार्थक प्रतीत होती है। खासकर पुलिस जैसे कार्यों की दृष्टि से ज्ञान एवं कौशल की सार्थकता ओर अधिक बढ जाती है। पुलिस का कार्य विस्तार अत्यधिक होने से यह कई विषयों को अपने आप में समाहित करता है। मानव व्यवहार, मानव मनोविज्ञान, समाज शास्त्र, लोक प्रशासन, संविधान कानून विधि विज्ञान, दण्ड विज्ञान, कंम्प्युटर विज्ञान, आदि ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र का संबंध कहीं न कहीं पुलिस कार्यों से स्थापित हो जाता है। अपराध विवेचना में जहां विधि चिकित्सा विज्ञान, पोस्ट मार्टम, मेडिकल रिपोर्ट आदि की समझ के लिए अनिवार्य है वहीं विधि भौतिकी, विधि रसायन, विधि जन्तु विज्ञान एवं विधि वनस्पति विज्ञान, का प्रयोग विभिन्न अपराधों में तथा मादक पदार्थ संबंधी पौधों की पहचान आदि में उपयोग की जाती है। मानव शरीर की कार्यविधि अस्थि विज्ञान, विष विज्ञान, आदि का लगातार उपयोग पुलिस कार्यों में होता है। चूंकि वर्तमान दौर की पुलिसिंग लोकतांत्रिक विधि एवं सूचना का अधिकार अधिनियम, लोक सेवा प्रदाय गारंटी अधिनियम जैसे प्रावधानों की प्रमुखता का समय है अतः ऐसे में पुलिस को अपने कार्य एवं उसके पार्श्व में कारण की युक्तिसंगत जानकारी एवं उसके पारदर्शी प्रदर्शन की अपेक्षा पूर्ति करनी आवश्यक होती है। सामान्यतः पुलिस थानों में पुलिस कर्मचारी नियमित कार्य निष्पादन तो करता है लेकिन उसके पीछे निर्धारित विधि उसके प्रावधान एवं उसकी सीमाओं के बारे में अनविज्ञ होता है। वर्तमान परिवेश में कार्य कारण एवं प्रावधानों के प्राधिकरण की वस्तु स्थिति के प्रस्तुतीकरण का

अभाव पुलिस की गिरती हुई छवि का मुख्य कारण है उदाहरणार्थ यातायात नियमों के उल्लंघन पर चालान होने एवं समन शुल्क वसूल कर विधिवत रसीद प्रदान किए जाने की स्थिति में भी चैकिंग करने वाले पुलिस अधिकारी के द्वारा वाहन मालिक को उसके द्वारा किए गए उल्लंघन विधिक प्रावधान संमन शुल्क एवं वैकल्पिक प्रावधानों की जानकारी नहीं दी जाती है तथा व्यक्ति का वाहन रोककर चैकिंग उपरांत उसे संमन शुल्क राशि के बारे बताया जाता है। यहां विधिवत् कार्यवाही एवं संमन शुल्क वसूली के उपरांत वाहन मालिक कहीं न कहीं भ्रष्टाचार की शंका से ग्रसित होकर या तो प्रतिरोध करता है अन्यथा शिकायत दर्ज कराता है। इनमें से कुछ भी नहीं होने पर वह अपने मन में पुलिस के प्रति नकारात्मक सोच के साथ आगे बढता है। यहां यदि चैकिंग कर्ता द्वारा न्यूनतम समय में उसे प्रावधान, उल्लघंन, संमन शुल्क एवं वैकल्पिक स्थिति जिसमें की वह प्रकरण का न्यायालपीन निराकरण भी करा सकता है कि विधिवत् जानकारी यदि दी जाए तो निश्चित ही न केवल वह स्वेच्छा से चालान भरेगा। अपितु भविष्य में त्रुटि सुधार के प्रयास एवं पुलिस की पारदर्शी छवि के प्रति आशवस्त होगा। इस प्रकार के प्रदर्शन एवं वस्तु स्थिति की स्पष्टता के लिए अपेक्षित है कि विधि एंव प्रावधानों की पूर्ण तथा अद्यतन विश्वसनीय जानकारी पुलिस कर्मचारियों को हो नियम प्रावधान की परिवर्तित स्थिति में वर्तमान प्रचलित प्रावधानों की जानकारी का सामान्यतः अभाव होता है तथा विभिन्न भ्रम की स्थिति में इस संबंधी आत्मविश्वास में कमी की स्थिति देखी जाती है अतः पुलिस नेतृत्व का दायित्व होता है कि सतत प्रशिक्षण की व्यवस्था के माध्यम से इस प्रकार की स्थिति निर्मित की जाए। भारत में पुलिस संगठन एक बहुत बड़े मानव समूह का प्रतिनिधित्व प्रस्तुत करता है। यह बात सही है कि भारत में पुलिस जनसंख्या अनुपात विकसित राष्ट्र अमेरिका, ब्रिटेन, जापान, फ्रांस, जर्मनी, कनाडा आदि से कम हैं लेकिन देश के विस्तार के अनुरूप पुलिस संगठन का विस्तार बड़े संगठन के रूप में है। इस वृहद संख्या वाले पुलिस संगठन में अधिकांश भाग लगभग 85 प्रतिशत आरक्षक, प्रधान आरक्षक स्तर के कर्मचारियों का है साथ ही यह तथ्य भी महत्वपूर्ण है कि कानून व्यवस्था के नियमन के संबंध में इस वृहद भाग को सहायक से अधिक भूमिका विधि एवं नियमों में प्रदान नहीं की गई है। पुलिस जनसंख्या अनुपात की अल्पता पर विचार करने के साथ ही इस तत्व पर भी विचार किया जाना अपेक्षित है कि 85 प्रतिशत पुलिस अमले की मूल भूत भूमिका एवं अधिकारों की सीमित वृद्धि के माध्यम से सार्थक परिणाम प्राप्त किए जा सकते है। पुलिस बल की कुल संख्या में

सशस्त्र पुलिस बल की संख्यात्मक स्थिति समुचित स्थान रखती है, तथा यह सशस्त्र बल कानून व्यवस्थापन के मूल भूत कार्यों के लिए उपलब्ध न होकर विशेष कार्यों के लिए तैनात की जाती है तथा इनका अपराध नियंत्रण एवं अपराध पतासाजी विवेचना आदि में कोई स्थान आदि नहीं होता है उक्त परिस्थितियों यह विचारणीय है कि उपलब्ध बल का अधिकतम सार्थक उपयोग संगठन एवं समाज के हित में किस प्रकार किया जा सकता है? सतत प्रशिक्षण एवं विभिन्न भूमिकाओं के प्रति जागरूकता एवं संवेदनशीलता इस दिशा में कारगर परिणाम प्रस्तुत कर सकते हैं।

पुलिस संगठन की दक्षता एवं अधिकतम व्यक्तिगत अवदान या निष्पादन की स्थिति के लिए पुलिस भर्ती एवं प्रशिक्षण के मापदण्ड नीव का काम कर सकते हैं। यदि नियुक्ति की प्रक्रिया पारदर्शी एवं युक्तिसंगत तथा व्यवसायिक अपेक्षा के अनुरूप है तो निश्चित ही विभिन्न पदों के लिए उपयुक्त उम्मीद वार चयनित किए जा सकेगें। इसी प्रकार यदि प्रशिक्षण के माध्यम से मूलभूत अभिप्रेरण एवं कार्य संस्कृति के प्रति अभिरुचि का स्थापन्न किया जाएगा तो अपेक्षाकृत सार्थक परिणाम प्राप्त होंगे। पुलिस के विभिन्न स्तर एवं रैंक के अधिकारी अपना अधिकतम निष्पादन प्रस्तुत करें तथा विभिन्न स्तरों के अपेक्षित दायित्व एवं नेतृत्वकर्ता के रूप में भूमिका संबंधी प्रभावी कार्य परिणति संगठन के सभी सदस्यों के द्वारा प्रस्तुत की जाए, इस दिशा में प्रशिक्षण एवं इनसर्विस प्रशिक्षण कार्यक्रम के माध्यम से लक्ष्य प्राप्ति की जा सकती है। पुलिस नेतृत्व को वर्तमान परिवेश में निम्न स्तरीय रैक के कर्मचारी यथा आरक्षक, प्रधान आरक्षक, सहायक उप निरीक्षक, एंव उप निरीक्षक के व्यवसायिक दक्षता एवं प्राधिकार तथा भूमि का के उन्नयन हेतु सार्थक पहल करनी होगी। पुलिस के निम्न रैंक स्तर पर उत्तरदायित्व संबंधी अभाव एवं सिर्फ सहायक की भूमिका तथा कार्य के किसी भी पक्ष में स्व निर्धारण एवं स्व निष्पादन की अभाव संगठन के लिए चिंता का विषय है विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों एवं ओरिएंटेशन कार्यक्रमों के माध्यम से इस दिशा में सार्थक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। अभिप्रेरण की समान उर्जा यदि निम्न से उच्चतम स्तर की रैंक तक विद्यमान होगी तभी हम सार्थक पुलिस व्यवस्था एवं उपलब्ध संसाधनों में उत्कृष्ट प्रदर्शन सुनिश्चित कर सकेगें।

प्रशिक्षण रणनीति

प्रशिक्षण की आवश्यकता एवं उसका निर्धारण कार्य की विभिन्न स्तरों पर आवश्यकता के आधार पर निर्धारित की जा सकती है पुलिस में विभिन्न स्तरों एवं

रैको के आधार पर कार्य सीमाओं का विस्तृत निर्धारण किया गया है। पुलिस नेतृत्व के विभिन्न स्तरों में मुख्य रूप से वरिष्ठ अधिकारी स्तर जिसमें भारतीय पुलिस सेवा एवं राज्य पुलिस सेवा के अधिकारी शामिल हैं मध्यम स्तरीय जिसमें निरीक्षक, उप निरीक्षक शामिल हैं एंव तृतीय स्तर पर आरक्षक एंव प्रधान आरक्षक रैंक को शामिल किया जाता है। यहां प्रत्येक स्तर के कार्य उपलक्ष्यों, उत्तरदायित्वों के संबंध में स्पष्ट निर्धारण किया गया है। प्रत्येक स्तर में ज्ञान एंव कौशल संबंधी अपेक्षाओं एवं प्रशिक्षण आवश्यकताओं का निर्धारण कर लक्ष्य केन्द्रित प्रशिक्षण की रणनीति सार्थक परिणामों के लिए आवश्यक है। विभिन्न स्तरों के प्रशिक्षण में कार्य की दृष्टि से केन्द्रीयकरण के लिए सामान्यतः किए जाने वाले कार्यों का निर्धारण आवश्यक है।

सर्वप्रथम यदि पुलिस के प्रधान आरक्षक, आरक्षक स्तर के अधिकारियों के कार्यों के संबंध में विचार किया जाए तो विभिन्न मेनुअल एवं विधि के द्वारा लगभग एक जैसे कार्य का उत्तरदायित्व इस स्तर के कर्मचारियों को विभिन्न राज्यों में प्रदान किया गया है। विभिन्न राज्यों राजस्थान, मध्यप्रदेश, आंध्रप्रदेश, में प्रधान आरक्षक को विवेचना एवं मर्ग जांच के अधिकार प्रदान किए गए हैं। जबकि अन्य सभी राज्यों में समान रूप से प्रधान आरक्षक को लघु प्रकृति की जांच बीट प्रेट्रोलिंग, पुलिस चौकी प्रभारी, वी.आई.पी. सुरक्षा कोर्ट कार्य आदि कर्तव्य प्रदान किए जाते है। कुछ राज्यों में शहरी क्षेत्रों में वरिष्ठ आरक्षक को भी विवेचना के अधिकार सीमित धाराओं में प्रदान किए गए हैं। सर्वांग एवं सामान्य रूप में पुलिस आरक्षक एंव प्रधान आरक्षक के स्तर पर अपेक्षित कार्यों में मुख्य रूप से बीट पेट्रोलिंग, विवेचना अधिकारियों की सहायता, सूचना संकलन एवं प्रेषण, संमन्स एंव नोटिसों की तामीली, वारंट की तामीली, निगरानी दुश्चरित्र बदमाश आदि की चैंकिग, पिकेट डयूटी, तनाव आदि के संबंध में सूचना संकलन, घटना दुर्घटना पर त्वरित कार्यवाही, वी.आई.पी. एव्म व्यवस्था ड्यूटी, आकस्मिक ड्यूटी, कोर्ट ड्यूटी, संतरी एवं पहरा ड्यूटी, आरक्षक एवं प्रधान आरक्षक लेखक के रूप में ड्यूटी, टेलीफोन ड्यूटी, आर्डरली ड्यूटी, बाल एवं किशोर अपराधियों संबंधी कार्य, जन व्यवस्था के निर्धारण में सहयोग, गुमशुदा व्यक्तियों की तलाश, मैस एवं केन्टिन की डयूटी, संदेश वाहक के कार्य, परेड एवं रोलकॉल ड्यूटी, हथियार संबंधी अभ्यास, हथियारों का रखरखाव, पुलिस थाना, वाहन आदि का रखरखाव आदि मुख्य दायित्व इस स्तर के द्वारा निष्पादित किए जाते हैं। इसके अलावा सम्पूर्ण पुलिस बल का 85 प्रतिशत भाग इस स्तर के कर्मचारियों का होता है, तथा आम जनता से प्राथमिक एवं नियमित संपर्क की

दृष्टि से इस स्तर के अधिकारी कर्मचारी सतत संपर्क स्थापित करते हैं। जिनके द्वारा प्रदर्शित व्यवहार एवं निष्पादित कर्तव्य का प्रत्यक्ष अवलोकन समाज के द्वारा किया जाता है। अतः पुलिस संगठन की छवि के दर्पण के रूप में यह स्तर समाज से लगातार प्रत्यक्ष होता है। यद्यति यह स्तर निर्णयन के महत्वपूर्ण स्थिति में नहीं होता है। तथापि पुलिस की छवि एवं नेतृत्व के निर्धारणों की प्रस्तुती समाज में इसी स्तर के द्वारा की जाती है। बीट के प्रधान आरक्षक,आरक्षक की अभिवृत्ति, व्यवहार प्रदर्शन एवं संपर्क का स्तर पुलिस के मूल भूत स्वरूप की अभिव्यक्ति का आधारभूत माध्यम होता है। अतः पुलिस के आरक्षक, प्रधान आरक्षक स्तर के कर्मचारियों को व्यवहार,संचार, एवं अभिवृत्ति संबंधी कौशल का प्रशिक्षण दिया जाना अनिवार्य है। पुलिस का जन विश्वास अर्जित करने लिए मुख्य रूप से इस प्रकार के प्रशिक्षण की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। सामान्यतः इस स्तर का प्रशिक्षण में शारीरिक कौशल, शस्त्र अभ्यास, परेड अभ्यास एवं अनुशासन पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया जाता है। जबकि अपेक्षित व्यवहारों एवं संवेदनशीलता संबंधी मापदण्डों के कौशल को प्रशिक्षण में महत्व प्रदान किया जाना चाहिए। आरक्षक वर्ग को पुलिस विभाग की आधारभूत संरचना माना जाता है लेकिन जैसा कि इन्हें विवेचना एवं निर्णयन संबंधी अधिकार प्राप्त नहीं हैं अतः अपने वर्तमान स्वरूप में अधिकतम निष्पादन निर्धारित करने का प्रयास तथा इस दिशा में प्रशिक्षण रणनीतियों एवं कार्य के दौरान सतत प्रदर्शन रणनीतियों का निर्धारण श्रेष्ठ परिणाम प्रस्तुत कर सकता है।

पुलिस संगठन के मध्यम स्तर पर निरीक्षक एवं उप निरीक्षक का स्तर होता है जो कि अधिकांशतः थाना प्रभारी के रूप में कार्य करते हैं। तथा थाना प्रभारी के सहायक के रूप में कार्य करते है। सहायक उप निरीक्षक के पद के व्यक्ति इसी प्रकार की ड्यूटी का निष्पादन करते हैं। इस स्तर पर मुख्य रूप से अपराध नियंत्रण, अपराध विवेचना, कानून व्यवस्था का निर्धारण, विभिन्न सूचनाओं का विश्लेषण एवं कार्यवाही, थाना के रिकार्ड एवं मालखाना सामान आदि का रखरखाव, रोलकॉल परेड आदि का पर्यवेक्षण एवं कार्य वितरण, पुलिस सहायता केन्द्र एंव चौकियों का पर्यवेक्षण, गुमशुदा व्यक्ति एवं अज्ञात व्यक्तियों के शव आदि के संबंध में कार्यवाही, प्रोटोकाल ड्यूटी, विशिष्ट व्यक्तियों की सुरक्षा, शिकायतों की जांच, समुदाय से संबंध स्थापना, ास्त्र अभ्यास का पर्यवेक्षण, नव आरक्षक एवं परिवीक्षाधीन उप निरीक्षक के कार्यों का पर्यवेक्षण एवं दिशा निर्देश, साप्ताहिक एवं मासिक डायरी जानकारी आदि का रखरखाव, प्राकृतिक आपदाओं दुर्घटना आदि में सहयोग, फोर्स की मोराल एवं

दक्षता बनाए रखना आदि कार्य निष्पादित किए जाते हैं। यह स्तर विवेचना एवं विभिन्न कठिन परिस्थितियों के प्राथमिक स्तर पर सामना करने एवं व्यवस्था बनाए रखने के दायित्व के निर्वहन के रूप में अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभांता है। इन्हे थाना एवं थाने के स्टाप के प्रंबंधन के साथ ही क्षेत्रीय जनता एवं उसकी प्रवृत्तियों के संबंध में गहन निर्धारण करना होता है। पुलिस के मध्यम स्तरीय इस महत्वपूर्ण नेतृत्व स्तर में कौशल ज्ञान एवं प्रबंधन संबंधी अपेक्षाएं विद्यमान होती हैं। इस स्तर के प्रशिक्षण में विभिन्न प्रवृत्तियों के मिश्रित स्वरूप को प्रशिक्षण रणनीति के रूप में स्थापित किया जाना अपेक्षित होता है।

पुलिस संगठन में उप पुलिस अधीक्षक सामान्यतः अनुविभाग स्तरीय नेतृत्व को निष्पादित करते हैं जिसे मध्यम स्तरीय पर्यवेक्षक के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। सामान्य तौर पर इस स्तर के द्वारा पुलिस अधीक्षक के सहायक के रूप में कार्य निष्पादन किया जाता है। इकाई के पुलिस संबंधी योजना निर्माण में भी यह स्तर पुलिस अधीक्षक को सहायक भूमिका प्रदान करता है। विभिन्न गंभीर अपराधों का पर्यवेक्षण, वरिष्ठ अधिकारियों को गंभीर अपराधों की प्रकृति से अवगत कराना, मजिस्टीयल जांचों में पक्ष प्रस्तुत करना, पुलिस थाना कार्यों का पर्यवेक्षण, अपराध नियंत्रण, विवेचना, एवं कानून व्यवस्था संबंधी कार्य निष्पादित करना, वी.आई.पी. सुरक्षा, एवं सामूदायिक संबंधों का प्रबंधन विभिन्न विषम परिस्थितियों में फोर्स का नेतृत्व करना, पुलिस थाना चौकियों का निरीक्षण, महत्वपूर्ण एंव विशेष अधिनियमों के अपराधों की विवेचना एवं नव विवाहिता प्रकरणों की मर्ग जांच, आपराधियों की सूचना प्राप्त करना एवं सक्षम नियंत्रण हेतु कार्य योजना, स्वयं एवं वरिष्ठ स्तरों पर जारी निर्देशों के पालन एवं पूर्ति प्रतिवेदन प्रस्तुत करना, क्राईम डायजेस्ट का संधारण एवं लेखन करना, केस डायरियों की स्कूटनी करना एवं निर्देश देना, विवेचना अधिकारियों को मार्ग दर्शन प्रदान करना, केस डायरी, साप्ताहिक एंव मासिक का एकत्रण एवं प्रेषण साधारण डायरी का एकत्रण एवं प्रेषण,गंभीर शिकायतों में जांच एंव विभागीय जांच, शासन के अन्य विभागों से संपर्क, स्थापित करना, परेड गार्ड, संतरी आदि के चैकिंग करना अपराध के स्वरूप का विश्लेषण कर विभिन्न ग्राम गस्त आदि की योजना तैयार करना परिवीक्षाधीन अधिकारीयों के प्रशिक्षण एवं मार्ग दर्शन, पुलिस थाना रिकार्ड का रख रखाव एवं आकस्मिक चैकिंग, शस्त्र आदि की चैकिंग एवं किट निरीक्षण, शस्त्र अभ्यास का पर्यवेक्षण, अधीनस्त स्टाफ को अवकाश एवं अन्य कल्याणकारी गतिविधियों का निर्धारण फोर्स के मोराल एवं दक्षता के उन्नयन हेतु प्रयास करना। फोर्स में अनुशासन का निर्धारण करना, प्रोटोकाल एवं वी.आई.पी

ड्यूटी करना, विभिन्न व्यवस्था ड्यूटीयों में नेतृत्व प्रदान करना, विभिन्न आपदाओं की स्थिति में नेतृत्व प्रदान करना, आदि इस स्तर के अधिकारियों के मुख्य दायित्व होते हैं। पुलिस अधीक्षक एवं अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक के स्तर पर इकाई के सम्पूर्ण पुलिस कार्यवाहियों में पर्यवेक्षण विभिन्न नियम नीति आदि का कार्यान्वयन एवं कार्य एंव लक्ष्यों का निर्धारण किया जाता है। इस स्तर पर मानव संसाधन का समुचित प्रबंधन आंतरिक अनुशासन एवं आंतरिक प्रशासन का निर्धारण एवं निर्णयन सुनिश्चित किया जाता है। विभिन्न कर्मचारी कल्याण गतिविधियों का संचालन विभिन्न स्तर पर समन्वयन, विभागीय जांचों की स्थापना एवं उन पर निर्णय अवकाश, एवं अनुपस्थिति संबंधी निर्धारण इस स्तर पर किए जाते हैं।

पुलिस प्रंशिक्षण के वर्तमान स्वरूप में विभिन्न स्तरों के प्रशिक्षण में कारक, आधारित, वर्गीकरण एवं उसकी प्रतिशतता तथा अपेक्षित स्थिति के संबंध में ज्ञान, कौशल, अभिवृत्ति एवं रैजिमेंटेशन के कारकों के आधार पर निम्नवत चार्ट प्रस्तुत किया जा सकता है।

	आरक्षक, प्रधान आरक्षक स्तर 'अ'		विवेचक, निरीक्षक, उप निरीक्षक स्तर 'ब'		उप पुलिस अधीक्षक, पुलिस अधीक्षक स्तर 'स'	
	प्रचलित	अपेक्षित	प्रचलित	अपेक्षित	प्रचलित	अपेक्षित
रैजिमेंटेशन	700	500	700	500	700	700
ज्ञान	400	350	1000	600	850	700
कौशल	100	150	300	600	275	300
अभिवृत्ति	100	300	100	400	175	300
	(1300 लगभग)		(2100 लगभग)		(2000 लगभग)	

प्रशिक्षण संबंधी योजना एवं प्रशिक्षण पर निर्धारित समय के अनुपातिक विश्लेषण पर कार्य अपेक्षा के अनुरूप प्रशिक्षण के निर्धारण एवं उस पर समय के व्ययन की स्थिति अपेक्षित प्रतीत नहीं होती है विशेष रूप से मध्यम स्तरीय विवेचक स्तर पर जो कि महत्वपूर्ण एवं गंभीर मामलों की विवेचना दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 के प्रावधान अंतर्गत करते है एवं कानून व्यवस्था के निर्धारण की दृष्टि से पुलिस नेतृत्व के प्राथमिक महत्वपूर्ण निर्धारक की भूमिका निभाते हैं। अतः इनकी कार्य अपेक्षा कौशल संबंधी विभिन्न आयामों के क्षेत्र में सुदृढ़ता की

आवश्यकता निर्धारित करती है। जबकि कौशल संबंधी निर्धारित कार्यक्रम कुल 2100 प्रशिक्षण घंटों में से मात्र तीन सौ घंटे का कौशल प्रशिक्षण सामान्यतः निर्धारित करता है। इसी प्रकार अपने कार्य एवं उसके विभिन्न आयामों तथा सीमाओं के संबंध में जागरूकता मध्यम एवं उच्च स्तरीय नेतृत्व के प्रशिक्षण में महत्वपूर्ण स्थान पर होनी चाहिए। जबकि कुल 2100 मूलभूत प्रशिक्षण घंटों में जागरूकता संबंधी प्रशिक्षण को 5 प्रतिशत से निम्न स्थान प्राप्त होता है। इसी प्रकार विवेचना संबंधी कार्य अधिकांश स्तर पर अपराधियों के पकडने,तलाश, पूछताछ, एवं मानवीय संपर्को पर आधारित होता हैं, तथा इस प्रकार के कार्यों में कानून के निर्धारित मापदण्डों का पूर्ण परिपालन करते हुए कार्य को सफलता पूर्वक निष्कर्ष तक पहुंचाना महत्वपूर्ण हो जाता है। अतः मध्यम स्तरीय नेतृत्व के प्रशिक्षण में संविधान की मानव अधिकार संबंधी प्रतिबद्धताओं के विषय में न्यूनतम 10 प्रतिशत समय निर्धारित किया जाना चाहिए। इस प्रकार के प्रशिक्षित अधिकारी मानव अधिकार संरक्षण एवं पुलिस पर आए दिन लगने वाले मानव अधिकार उल्लंघन संबंधी आरापों की दृष्टि से परिमार्जित पुलिस कार्य निष्पादित कर सकेगें। इसी प्रकार मध्यम स्तरीय विवेचना अधिकारी संबंधी प्रशिक्षण में ज्ञान संबंधी विषयों में ऐसे विषय जो विवेचना अधिकारियों के कौशल उन्नयन में सहायक न हो को न्यून कर बहुमूल्य प्रशिक्षण समय की बचत की जा सकती है। इसी प्रकार आरक्षक एवं विवेचक स्तर के मूलभूत प्रशिक्षण कार्यक्रम में विभिन्न दण्ड विधि एवं संबंधित विषयों पर महत्व दिया जाता है। जबकि ऐसी कई विधि एंव प्रावधानों का अत्यधिक प्रयोग नहीं होता है। अतः बिरले प्रयोग होने वाले प्रावधान जिनकी सभी स्थानों पर सभी समय में सामान्य प्रयोग नहीं किया जाता है। उन प्रावधानों के संबंध में प्रशिक्षण समय अल्प किया जा सकता है। इसी प्रकार रैजिमैटेशन संबंधी प्रशिक्षण जिससे आशय परेड हथियार संबंधी प्रशिक्षण पी.टी. आदि से है पर पुलिस प्रशिक्षण में अत्यधिक समय निर्धारित किया जाता है। प्रशिक्षण का लगभग चालीस प्रतिशत समय इस प्रकार की गतिविधियों पर आधारित होता है, जबकि इसे कुल प्रशिक्षण के 25 से 30 प्रतिशत तक निर्धारित होना चाहिए। पुलिस प्रशिक्षण विधि मानवीय अपेक्षाओं से समाहित प्रभावी पुलिस नेतृत्व की आधारशिला का कार्य करे यह प्रयास पुलिस प्रशिक्षण के माध्यम से किया जाना चाहिए। पुलिस विवेचना में विवेचक की नैतिक मूल्य एवं प्रतिमान भी महत्वपूर्ण होते हैं। जो कि पारदर्शिता एवं पुलिस विवेचना के प्रति आम जनता के विश्वास का आधार तथा सही तथ्यों एवं सूचनाओं की प्राप्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पुलिस संगठन में आरक्षक 85 प्रतिशत बल को

समाहित करने वाला इस तरह तथा सर्वाधिक जनसंपर्क एवं जनता के प्रति पुलिस का चेहरा अधिकांशतः पुलिस आरक्षक के रूप में ही अधिकांश जनता के समक्ष प्रस्तुत होता है। अतः आरक्षक स्तर पर जन संपर्क एवं जनता से नैकट्य पुलिस छवि की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। वर्तमान परिवेश में सामान्य रूप में आरक्षक स्तर पर पुलिस नेतृत्व न केवल समाज से पृथककृत स्थिति को महसूस कर रहा है, बल्कि विभागीय अपेक्षाओं के प्रति अनैच्छिक उपस्थिति एवं खानापूर्ति जैसी प्रवृत्ति लगातार विस्तार प्राप्त कर रही है। जैसा कि भारत में पुलिस की छवि संतोषप्रद स्तर की नहीं है तथा इसका सुधार तभी संभव है जबकि पुलिस के प्रत्येक स्तर पर पारदर्शी निष्पादन प्रस्तुत हो। आरक्षक के प्रशिक्षण में अभिवृत्ति संबंधी प्रशिक्षण के लिए अत्यधिक अल्प स्थान प्रदान किया जाता है। भारत के अधिकांश राज्यों में आरक्षक प्रशिक्षण रंगरूट प्रशिक्षण तक सीमित है। जिसमें शारीरिक दक्षताओं एवं फटिक को प्रमुखता प्रदान की जाती है। कई राज्यों में पुलिस आरक्षक स्तर पर पृथक से पुलिस प्रशिक्षण संस्थाओं का अभाव है तथा जो राज्य संस्थागत प्रशिक्षण के साथ व्यवहार कौशल का प्रशिक्षण इस स्तर पर प्रदान कर रहे हैं उनमें भी 10 प्रतिशत से भी अल्प स्थान व्यवहार कौशल को प्रदान किया जा रहा है। पुलिस आरक्षक अन्य सशस्त्र बलों की तरह सिर्फ बल का सदस्य न होकर पुलिस विभाग एवं पुलिस सेवा का प्राथमिक स्तर निर्धारित करता है, तथा इन रूपों म वह विभिन्न कानून व्यवस्था वी.आई.पी. मेला, जुलूस, एवं विवेचना के दौरान तथा भ्रमण एवं पेट्रोलिंन के दौरान लगातार जनता के संपर्क में आता है। अतः आवश्यक है कि कार्य अपेक्षाओं के अनुरूप प्रशिक्षण का निर्धारण किया जाए जो कि पुलिस छवि की दृष्टि से भी प्रभाव कारी हो सकेगा। पुलिस आरक्षक स्तर पर विधिक ज्ञान एवं प्रावधानों के लिए लगभग 30 प्रतिशत प्रशिक्षण समय निर्धारित किया जाता है। जबकि आरक्षक स्तर पर संगठन में शामिल होने वाले कर्मचारी को पदोन्नति के उपरांत ही मुख्य रूप से विधि संबंधी प्रावधानों से सामना करना होता है। अतः अत्यधिक विधिक जानकारी आरक्षक प्रशिक्षण का आवश्यक पक्ष नहीं माना जा सकता। इसी प्रकार विभिन्न प्रशिक्षण संबंधी विरोधाभासी स्थितियां विभिन्न राज्यों के आधारभूत प्रशिक्षण कार्यक्रमों में प्रकाश में आती है। होमगार्ड के जिला सैनानी को सेवा प्रावधानों एवं आपदा प्रबंधन से कहीं अधिक विधिक का प्रशिक्षण यहां तक की विधिविज्ञान फारेंन्सिक मेडीसिन का प्रशिक्षण दिया जाना। उप पुलिस अधीक्षक एवं उप निरीक्षक स्तर पर कभी उपयोग में न आने वाले हथियारों गोला बारूद आदि का प्रशिक्षण दिया जाना आदि ऐसे अनेक उदाहरण प्रकाश में आतें है।

आधुनिक युग विशेषज्ञता का युग है ऐसे में पुलिस संगठन को प्रशिक्षण के स्तर पर सामान्य से विशेष की ओर अग्रसर होना होगा विभिन्न क्षेत्रों का चयन के स्तर पर निर्धारण कर क्षेत्र विशेष का प्रशिक्षण तथा उसमें विशेषज्ञ व्यवसायिक तैयार करना समय की अपेक्षा है। विभिन्न स्तरों पर सशस्त्र बल रेडियो, फिंगर प्रिंट आदि पृथक शाखाओं का निर्धारण कर नियुक्ति एवं प्रशिक्षण की पहल की गई है। इसे और आगे बढाते हुए विवेचक यातायात व्यवस्था पर कानून व्यवस्था, वी.आई.पी व्यवस्था, सायबर अपराध, बंदोवस्त व्यवस्था आदि विशेषज्ञों के स्तर तक विभक्त कर विशेषज्ञता प्राप्त करना तथा निर्धारित क्षेत्रों में कार्य निष्पादन करना श्रेष्ठ विकल्प हो सकता है।

पुलिस प्रशिक्षण में मुख्य रूप से कुछ ऐसे कारक या विशेषताएं समाहित हैं जो कि प्रशिक्षण निष्पादन की दृष्टि से कमजोरी या प्रतिरोधक स्थिति को उत्पन्न करते है। पुलिस विभाग में नेतृत्व केन्द्रीयकृत होता है तथा सम्पूर्ण नियंत्रण नेतृत्व के स्तर पर समाहित होता है। यह स्थिति कानून व्यवस्था संबंधित निर्धारण एवं सुरक्षा संबंधी अपेक्षाओं के कारण होती है। लेकिन प्रशिक्षण परिदृश्य में इसका ऋणात्मक प्रभाव प्रकाशित होता है। पुलिस विभाग नियम एवं रेग्यूलेशन के आधार पर कार्य करते हैं जो कि केन्द्रीयकृत व्यवस्था की स्थिति निर्धारित करते हैं। संगठन में पद क्रम का जटिल स्वरूप स्थापित है तथा इसके कई स्तर हैं एवं इनमें पदोन्नति का आधार मुख्य रूप से वरिष्ठता है तथा मैरिट के आधार पर पदोन्नति की संभावनाएं नगन्य है अतः प्रशिक्षण एवं ज्ञान कौशल के उन्नयन के प्रति अभिप्रेरण का अभाव परिलक्षित होता है। इसी प्रकार संगठन में शैक्षिक योग्यताओं एवं पुलिस क्षेत्र से पृथक योग्यताओं को महत्ता प्रदान नहीं की जाती जबकि अन्य क्षेत्र भी प्रत्यक्ष या परोक्ष सहायक रूप में लाभप्रद हो सकते हैं। यहां कार्य की गुणवत्तापूर्ण निष्पादन की अपेक्षा त्वरित पूर्णता को महत्ता प्रदान की जाती है तथा येनकेन प्रकारेण लक्ष्य प्राप्ति को श्रेयस्कर माना जाता है। अतः प्रशिक्षण परिदृश्य से अधिक परिणाम निष्पादन के लघु मार्गो की महत्ता स्थापित होती है। पुलिस के इन सर्विस प्रशिक्षण कार्यक्रम भी अपेक्षित स्वरूप एवं स्थान प्राप्त नहीं कर पाते अपितु इकाई के अवांछनीय कर्मचारियों को अनैच्छिक रूप से इन प्रशिक्षणों के लिए नामांकित कर दिया जाता है। जबकि प्रशिक्षण की आवश्यकता के मूल्यांकन उपरांत चयन नामांकन किया जाना चाहिए। मूलभूत प्रशिक्षण के मूल्यांकन के उपरांत सेवा के दौरान किसी भी प्रकार के मूल्यांकन की व्यवस्था नहीं है। अतः व्यक्ति सेवा में शामिल होकर पदोन्नति के लिए वरिष्ठता की प्रतीक्षा तो करता है लेकिन ज्ञान कौशल उन्नयन के प्रति जागरूक

नहीं रहता। विभिन्न पुलिस प्रशिक्षण कार्यक्रमों में बौद्धिक विमर्श एवं वैचारिक आदान प्रदान के स्थान पर पदक्रम एवं अनुशासन का एकमार्गी परिवेश निर्मित कर दिया जाता है जो कि कहीं न कहीं सीखने की प्रक्रिया में बाधक होता है।

अभिप्रेरण एवं प्रशिक्षण

पुलिस प्रशिक्षण का मुख्य लक्ष्य पुलिस कार्य के प्रति अभिप्रेरण की स्थापना होना चाहिए व्यक्तिगत अभिप्रेरण कारकों के अभाव की स्थिति में पूर्ण मनोयोग एवं प्रतिबद्धता का अभाव कार्यगुणवत्ता को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है। यद्यपि पुलिस, कानून व्यवस्था के निष्पादन को निर्धारित करती है तथापि मूल्य संबंधी मानकों एवं सामाजिक प्रतिमानों की स्थापना भी पुलिस का सामाजिक उत्तरदायित्व है। सामान्यतः पुलिस के मैदानी अधिकारियों एवं प्रशिक्षण नेतृत्व के मध्य गतिरोध या असमानता प्रकाश में आती है जिसका परिणाम प्रशिक्षण योजनाओं एवं अपेक्षाओं को नकारात्मक रूप में प्रभावित करता है। अतः मैदानी अपेक्षाओं एवं निरीक्षण संबंधी मानकों को समाहित करते हुए उददेय पूर्ण प्रशिक्षण योजना निर्मित की जानी चाहिए। पुलिस संगठन में प्रशिक्षण एवं प्रशिक्षितों की महत्ता को स्थापित कर प्रशिक्षण के प्रति अभिप्रेरण स्थापित करना अत्याधिक वांछनीय है। प्रशिक्षण बोझ या मैदानी कार्य में असफल अधिकारियों के द्वारा ऐसे ही अधिकारियों के लिए दिया जाने वाला औपचारिक कार्यक्रम न होकर कर्मचारियों की जिज्ञासा एवं अपेक्षा का विषय होना चाहिए। प्रशिक्षण विभाग के निष्पादन एवं दक्षता का मुख्य आधार होता है अतः इस रूप में इसे महत्व भी प्राप्त होना चाहिए। प्रशिक्षण की शैली एवं स्वरूप के स्तर पर भी अभिप्रेरण कारक निर्धारित करना अपेक्षित है। प्रशिक्षण परिवेश वैचारिक आदान प्रदान के लिए स्वतंत्र एवं पदक्रम की भावना से मुक्त होना चाहिए तथा

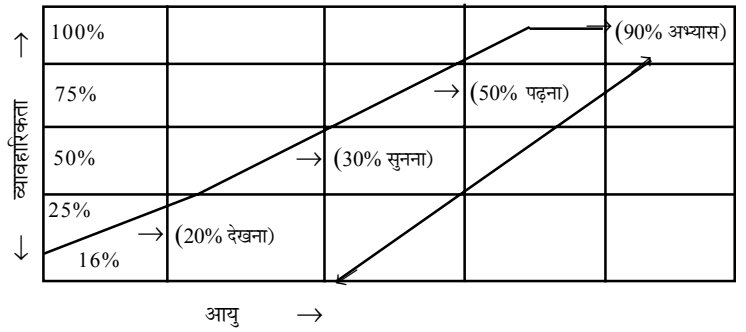

प्रशिक्षक वास्तव में ज्ञान कौशल एवं अनुभव की दृष्टि से सफल संचार में सक्षम एवं प्रशिक्षण उद्देश्यों के प्रति प्रतिबद्ध एवं जागरूक हों यह भी सुनिश्चयन का विषय है। प्रशिक्षण में विभिन्न तकनीकी साधनों एवं प्रशिक्षण नवाचारों को समाहित किया जाना वांछनीय है।

पुलिस प्रशिक्षण में सीखने की प्रक्रिया तथा व्यस्क मनुष्य के प्रशिक्षण ग्राह्यता संबंधी आयामों को शामिल किया जाना चाहिए प्राथमिक या मिडिल स्कूल के विद्यार्थी, हायर सेकेन्डरी के विद्यार्थी, कालेज के विद्यार्थी एवं किसी भी संगठन सेवा के सदस्य की सीखने की प्रक्रिया का स्वरूप भिन्न-भिन्न होता है। जहां अल्प आयु में पढना, देखना, सुनना, सीखने का मुख्य कौशल होता है, वहीं व्यस्क व्यक्ति स्वयं करके प्रयोग के अनुभव के रूप में अधिकांश विषय वस्तु को ग्राह्य करता है। सीखने की प्रक्रिया को निम्नवत ग्राफ के रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है।

पुलिस प्रशिक्षण एवं नेतृत्व प्रशिक्षण

पुलिस के विभिन्न रैंक स्तर, भारतीय पुलिस सेवा से लेकर आरक्षक तक किसी न किसी रूप में नेतृत्वकर्ता की भूमिका का निर्वहन करते हैं। वरिष्ठ स्तर पर योजना निर्माण नीति निर्धारण एवं अपने अधीनस्थ बल को नेतृत्व प्रदान किया जाता है तो मध्यम स्तर पर थाना क्षेत्र एवं अधीनस्थ स्टाफ के नेतृत्व का स्वरूप थाना प्रभारी निरीक्षण, उप निरीक्षक स्तर में निहित होता है। वहीं आरक्षक प्रधान आरक्षक स्तर पर कार्य करने वाले कर्मचारी अपनी बीट या क्षेत्र में पुलिस एवं शासन के प्रतिनिधि की भूमिका का निर्वहन करते हैं तथा विभिन्न परिस्थितियों में संगठन के पक्ष को प्रस्तुत कर नेतृत्वकर्ता का स्थान प्राप्त करते हैं। पुलिस बल सेवा एवं विभाग के स्वरूपों में विभिन्न नेतृत्वकर्ता के उत्तरदायित्वों का प्रस्तुतिकरण करती है। लेकिन पुलिस प्रशिक्षण में विभिन्न स्तर के अधिकारियों को नेतृत्वकर्ता के रूप में स्थापित करने की दिशा में अपेक्षित प्रयास नहीं किया जाता है। पुलिस के मध्यम स्तर के नेतृत्व यथा उप पुलिस अधीक्षक, निरीक्षक, उप-निरीक्षक के प्रशिक्षण में नेतृत्व कौशल के प्रशिक्षण को अत्यधिक अल्प स्थान प्राप्त है। उप पुलिस अधीक्षक स्तर पर कुल प्रशिक्षण का मात्र 07 प्रतिशत केन्द्रित होना सामान्यतः पाया गया है जो कि अत्यधिक अल्प है। इसी प्रकार उप निरीक्षक स्तर पर भी नेतृत्व कौशल संबंधित प्रशिक्षण को पांच से सात प्रतिशत समय ही प्रदान किया जाता है। परिणामतः विभिन्न वांछनीय कौशल का अभाव पुलिस नेतृत्व में सामान्य रूप से परिलक्षित प्रतीत होता है। पुलिस संचार पर

यदि प्रकाश डाला जाए तो सामान्यतः किसी भी संदेश के यदि वह लिखित रूप में नहीं है तो, प्रेषण पर ग्राहता का प्रतिशत लगभग 35 प्रतिशत तक सीमित है। इसी प्रकार विभिन्न विरोधाभास एवं संघर्ष की स्थितियों के निराकरण की दक्षता का स्तर भी संतुष्टिजनक नहीं हैं। मानव व्यवहार एवं उसके विभिन्न प्रतिक्रियाओं के स्तर के निर्धारण के संबंध में त्रुटियों के प्रकरण लगातार प्रकाश में आते हैं। जहां पुलिस यथोचित कार्यवाही करने के उपरांत भी असंतुष्टि एवं आक्षेप तथा आरोपों का शिकार भी होती है। पुलिस विभाग में तनाव कारक एवं तनाव का स्तर उच्च स्तर को प्राप्त करता है लेकिन तनाव नियंत्रण संबंधी दक्षता एवं प्रबंधन उपयुक्त रूप में नहीं होने का परिणाम पुलिस विभाग में कर्मचारियों में तनावजन्य बिमारियों के आधिक्य के रूप में प्रत्यक्ष होता है। पुलिस संगठन के विभिन्न इकाई स्तर पर टीम भावना का अभाव पाया जाता है। एक नेतृत्वकर्ता के रूप में थाना प्रभारी या उप पुलिस अधीक्षक अपने अधीनस्थों को एक टीम के रूप में व्यवस्थित करने में सफल नहीं हो पाते परिणामतः संगठित कार्य निष्पादन के प्रयास एवं परिणाम प्राप्ति में विभिन्न अवरोध प्रत्यक्ष होते हैं। पुलिस विभाग में रैंक अवनति की स्थिति वर्तमान परिवेश में प्रसार प्राप्त कर रही है। इससे आशय यह है कि पूर्व में जिस कार्य को आरक्षक के स्तर पर कर लिया जाता था आज वह कार्य प्रधान आरक्षक एवं सहायक उप-निरीक्षक के स्तर पर व्यक्तिगत रूप से निष्पादित हो पा रहा है। जहां थाना प्रभारी या उप निरीक्षक प्रभावी होते थे वहां उप पुलिस अधीक्षक भी प्रभावी निराकरण नहीं कर पा रहें है। इस प्रकार रैंक एवं पदक्रम के उच्च स्तर की अपेक्षा जनता एवं समाज द्वारा व्यक्त की जा रही है जो कि कहीं न कहीं नेतृत्व की अक्षमता का प्रत्यक्ष प्रमाण है नेतृत्वकर्ता के रूप में पुलिस फोर्स में अभिप्रेरण एवं आत्मविश्वास जाग्रत करने में पुलिस अधिकारी किसी न किसी रूप में अपेक्षित व्यवहार प्रदर्शन में नाकाम रहें हैं। इस प्रकार अन्य कई उदाहरण हैं जहां नेतृत्व की प्रभावी भूमिका का निर्वहन नहीं होना एवं संगठन पर दुष्प्रभाव प्रकाश आए हैं। पुलिस अनुशासन अब शैक्षिक न होकर दण्ड के भय एवं त्रुटियों के प्रति सुरक्षात्मक उपाय के रूप में स्थान ग्रहण कर रहा है। उत्तरदायित्व ग्रहण करने की अपेक्षा, उत्तरदायित्व से बचने एवं सुरक्षात्मक पुलिसिंग के प्रचलन का मूल कारण कहीं न कहीं नेतृत्व संबंधी अल्पता में निहित है।

पुलिस के प्रशिक्षण प्रबंधन एवं नीति निर्धारको को विभिन्न स्तरों पर नेतृत्व कौशल के विकास को पुलिस प्रशिक्षण में महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करने गंभीर विचार करना होगा। पुलिस प्रशिक्षण में उप पुलिस अधीक्षक स्तर पर संचार

कौशल अशाब्दिक संचार टीम निर्माण, टीम प्रबंधन, मानव व्यवहार, आत्म निरीक्षण, असहमति का निवारण, तनाव प्रबंधन, भावनात्मक दक्षता, समय प्रबंधन, आदि को स्थान प्रदान करना अपेक्षित है। उप पुलिस अधीक्षक के सम्पूर्ण प्रशिक्षण कार्यक्रम में इस प्रकार की अभिक्रियाओं को न्यूनतम 15 प्रतिशत समाहित निर्धारित कर प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए। इसी प्रकार उप निरीक्षक स्तर के प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भी 10 से 15 प्रतिशत स्थान न्यूनतम नेतृत्व क्षमता के विकास हेतु निर्धारित किया जाना अपेक्षित है। भारतीय पुलिस सेवा स्तर के अधिकारियों के प्रशिक्षण में 15 से 20 प्रतिशत भाग नेतृत्व प्रशिक्षण का होना आवश्यक है। नेतृत्व अभिरुचियों के उन्नयन के लिए नेतृत्व अभिरुचियो के संबंध में मूल्यांकन एवं प्रशिक्षण उत्तीर्ण करने के लिए आवश्यक विषय के रूप में नेतृत्व संबंधी अभियोग्यताओं को निर्धारित किया जाना श्रेष्ठ हो सकता है। जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया गया है पुलिस के दक्षता प्रवर्धन में प्रशिक्षण के साथ नियुक्ति प्रक्रिया का महत्वपूर्ण स्थान है अतः पुलिस की नियुक्ति प्रक्रिया में भी नेतृत्व संबंधी परीक्षण एवं इस संबंधी अभिरुचि मूल्यांकन को स्थान प्रदान किया जाना अच्छे पुलिस नेतृत्व के निर्माण के लिए सार्थक हो सकता है। पुलिस नेतृत्व के विकास एवं विभिन्न रैंक स्तरों पर नेतृत्व कौशल के उन्नयन प्रयास पुलिस संगठन के मूल भूत एवं नवीन लक्ष्यों की प्राप्ति में महत्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत कर सकते हैं। बदलते परिवेश में पुलिस संगठन के सदस्यों की अभिवृत्तियों में परिवर्तन अत्यधिक आवश्यक है। यह परिवर्तन नेतृत्व कौशल के विकास के आधार पर आसानी से प्राप्त किया जा सकता है।

अध्याय 12

पुलिस नेतृत्व सुधारात्मक पहलू

मानव व्यक्तित्व, व्यक्तिगत विभिन्नताओं से परिपूर्ण होता है तथा ये व्यक्तिगत विभेद विभिन्न स्तरों के निर्धारण एवं प्रतिरोध, गतिरोध विरोधाभास के कारण बनते हैं। किसी भी व्यक्ति का व्यक्तित्व विभिन्न निर्धारक कारकों का परिणाम होता है। व्यक्ति का व्यक्तित्व मुख्य रूप से तीन कारकों के आधार पर स्थापित होता है :

- अनुवांशिकता
- परिवेश
- व्यक्तिगत अनुभव

कोई व्यक्ति संगठन के लिए एक अच्छा नेतृत्वकर्ता या कर्मचारी सिद्ध हो इसके उसके व्यक्तित्व की मूलभूत प्रवृत्तियां निर्धारक की भूमिका निभाती हैं। व्यक्तित्व के कारक व्यक्तित्व को आकार प्रदान करते हैं। अनुवांशिकी व्यक्ति के माता पिता से मिलने वाले मूल भूत गुणों एवं प्रवत्तियों का निर्धारण करती हैं। विभिन्न शारीरिक क्षमताएं एवं कमजोरियां तथा बीमारियां भी अनुवांशिक कारक व्यक्ति में निर्धारित करते हैं। ये कारक जन्मजात होते हैं तथा इनमें परिवर्तन की अल्प संभावनाएं होती हैं, अनुवांशिक कारकों के आधार पर व्यक्ति की योग्यताओं का यथा शारीरिक क्षमताओं, मानसिक योग्यताओं एवं शारीरिक अक्षमताओं का निर्धारण मौटे तौर पर किया जा सकता है। व्यक्ति का परिवेश व्यक्ति में सभ्यता एवं संस्कार की स्थापना को निर्धारित करता है। परिवेशगत कारक मूल भूत अनुवांशिक कारकों को पूर्ण रूपेण परिवर्तित नहीं कर सकते लेकिन परिवेश व्यक्ति की प्रवृत्तियों को निर्धारित करता है। व्यक्ति किस स्तर तक संघर्ष की क्षमताएं समाहित करता है। वह किस स्तर तक नैतिक एवं सामाजिक मूल्य का पालन करेगा एवं विभिन्न मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता का स्तर

किस श्रेणी का है के संबंध में परिवेशगत कारक व्यक्तितत्व को आकार प्रदान करते हैं। व्यक्ति की अभिप्रेरण के साधन एवं स्वरूप किस प्रकार के होंगे तथा व्यक्ति की व्यक्तिगत अपेक्षाओं एवं उन पर स्व नियंत्रण की सीमाएं किस स्तर की होंगी यह सभी निर्धारण परिवेशगत कारकों के द्वारा सुनिश्चित होते हैं। व्यक्ति की नियंत्रण क्षमताएं एवं अभिव्यक्ति संबंधी निर्धारण भी परिवेशगत कारकों के आधार पर होते हैं। व्यक्ति के विभिन्न अनुभव व्यक्ति की प्रतिक्रियाओं के निर्धारक होते हैं। विभिन्न परिस्थितियों व्यक्तियों के प्रति पूर्व आग्रह की भावना तथा व्यक्ति परिस्थिति एवं परिवेश के विशेष मानकों के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्ति का अनुभव ही निर्धारित करता है। अतः किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्धारण एवं आंकलन के संबंध में उक्त कारकों के आधार पर निर्धारण एवं विश्लेषण किया जा सकता है। व्यक्ति की शारीरिक मानसिक भावनात्मक एवं विशेषताओं संबंधी अपेक्षाएं भी व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक होते हैं। शारीरिक कारक व्यक्ति के लिए उपयुक्त कार्य की प्रकृति निर्धारित करते हैं तथा भावनात्मक लक्षण व्यक्ति के समस्याओं से संघर्ष एवं प्रतिबद्धता तथा अभिप्रेरण संबंधी कारकों के निर्धारक होते हैं। व्यक्ति की मानसिक योग्यता कार्य संबंधी मानसिक अपेक्षाएं एवं बुद्धिमत्ता कौशल संबंधी दक्षता के निर्धारक होते हैं। नेतृत्वकर्ता के रूप में व्यक्ति के उपयुक्त निर्धारको के आधार पर विश्लेषण उसके स्तर निर्धारण में आधारभूत भूमिका प्रस्तुत करता है।

व्यक्तिगत व्यवहार का मूल स्वरूप

व्यक्तित्व का प्रदर्शन एवं अभिव्यक्ति व्यवहार के रूप में प्रदर्शित होती है। अतः व्यक्तिगत व्यवहार को व्यक्तित्व का दर्पण कहा जा सकता है। इसी प्रकार किसी भी रूप में व्यक्ति का मूल्यांकन उसके व्यक्तित्व के आधार पर ही किया जाता है। अतः किसी भी व्यक्ति के व्यवहार प्रदर्शन को उसके व्यक्ति के रूप में विभिन्न स्तरों पर मूल्यांकन का मुख्य आधार कहा जा सकता है। व्यक्ति के व्यवहार प्रदर्शन को मूल भूत मानवीय आवश्यकताओं के रूप में व्याख्यायित किया जा सकता है। ये मूलभूत मानवीय आवश्यकताएं दो प्रकारों में वर्गीकृत की जाती हैं :

1. शारीरिक आवश्यकताएं
2. अर्जित आवश्यकताएं

शारीरिक आवश्यकताओं में व्यक्ति की सामान्य दिनचर्या की मूल आवश्यकताएं शामिल होती हैं। दूसरे शब्दों में ये वो आवश्यकताएं हैं जिनकी मांग

व्यक्ति के शरीर द्वारा स्वतः की जाती है। इनमें खाना, पानी, श्वास, कपड़े, तापमान आदि संबंधी आवश्यकताएं समाहित होती हैं। व्यक्ति सामाजिक प्राणी होने के नाते अन्य व्यक्तियों से सह संबंध स्थापित करता है। तथा व्यक्तिगत सह संबंधों की शृंखला जीवन पर्यन्त नवीन आवश्यकताओं का सृजन करती रहती है। जिन्हें अर्जित आवश्यकताओं के रूप में देखा जाता है। अर्जित आवश्यकताएं अन्य व्यक्तियों के द्वारा प्रतिपादित मूल्य संबंधी निर्धारण एवं विभिन्न व्यक्तियों की प्रतिक्रिया के आधार पर जीवन पर्यन्त अर्जित की जाती हैं। यह आवश्यकताएं व्यक्ति विभिन्न व्यक्तियों की प्रवत्तियों एवं पारस्परिक प्रतिक्रियाओं को अपने मूल भूत संस्कारों के आधार पर परिवर्तित कर निर्धारित होती हैं। अर्जित आवश्यकताएं विभिन्न स्वरूपों में प्रकाश में आती हैं :

- सुरक्षा
- सामाजिक स्वीकृति
- प्रतिष्ठ

व्यक्ति मूलभूत शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के उपरांत सुरक्षा की अपेक्षा को सर्वाधिक महत्व प्रदान करता है। प्राथमिक रूप में शारीरिक हमले क्षति आदि से सुरक्षा तथा इसके उपरांत प्रतिकूल परिस्थितियों से सुरक्षा एवं सामाजिक सुरक्षा, स्थान प्राप्त करती है। व्यक्ति अपने जीवन में अनुकूल परिवेश की अपेक्षा रखता है साथ ही सामाजिक सह संबंधों के आधार पर विभिन्न परिस्थितियों में सहयोग का विश्वास वह अपने आप में स्थापित करना चाहता है। व्यक्ति विभिन्न कार्यों के प्रति परिवेश की अभिस्वीकृति का प्रवल आकांक्षी होता है। आसपास के परिवेश एवं समाज के द्वारा उसके विभिन्न कृत्यों के प्रति क्या सोच है तथा उसकी सामाजिक अभिस्वीकृति का स्तर क्या है। एवं समाज में उसकी मान्यता किस स्तर की है आदि अपेक्षाएं व्यक्ति के कार्यों को विभिन्न रूपों में प्रभावित करती हैं। सामान्य रूप से मानव मन प्रतिष्ठा की अपेक्षा मूलभूत आवश्यकताओं के उपरान्त प्रमुख स्थान प्राप्त करती है। यहीं व्यक्ति के व्यक्तित्व एवं अभिप्रेरण का मूल निर्मित होता है। कुछ व्यक्ति अत्यधिक महत्वाकांक्षी तथा मध्यम एवं निम्न महत्वाकांक्षा के स्तर को धारण करते हैं। जिसके आधार पर व्यक्ति की भौतिक जगत की उपलब्धियां एवं अपेक्षाओं का स्तर निर्धारित होता है। कार्य के प्रति अभिप्रेरण कारण की दृष्टि से विचार किया जाए तो कुछ व्यक्ति सिर्फ कार्यपूर्ति की अपेक्षा से स्वतःस्फूर्त रूप से कार्य में उच्चस्तरीय रुचि प्रदर्शित करते हैं। कुछ व्यक्ति अभिस्वीकृति सम्मान या नाम के लिए कार्य हेतु रुचि प्रदर्शन करते हैं तो वही व्यक्तिगत लाभ एवं दण्ड के भय

की आशंका के विना कार्य नहीं करने वाले भी बहुतायत में पाए जाते हैं। नेतृत्वकर्ता के रूप में इन अभिप्रेरण कारणों की मूल्यांकन एवं निर्धारण किया जाना नेतृत्व की सफलता का प्रमुख आधार होता है।

पुलिस संगठन में अभिप्रेरण की स्तर का निर्माण नेतृत्व की प्रमुख चुनौती है। पुलिस में शासकीय संगठन होने के कारण आगम उपरांत निर्गम की दुरूह व्यवस्था एवं इस संबंध में कर्मचारियों को प्राप्त संरक्षण पदोन्नती में दक्षता को प्रमुखता प्रदान नहीं किया जाना विभिन्न स्तर के कर्मचारियों जिनके दक्षता एवं निष्पादन के स्तर में अत्यधिक भिन्नता है, को समान वेतन भत्ते, सुविधा एवं पदोन्नती प्राप्त होना आदि कारक कार्य अभिप्रेरण के स्तर में अपेक्षित वृद्धि की दृष्टि से अवरोध प्रस्तुत करते हैं। अतः विभिन्न स्तर पर पुलिस नेतृत्वकर्ता के लिए संगठन के सदस्यों की अपेक्षाओं अभिप्रेरण कारकों की वस्तुस्थिति का निर्धारण एवं उसकी गंभीर समझ महत्वपूर्ण हो जाती है पुलिस विभाग में अंतर्व्यैक्तिक आवश्यकताओं के स्तर पर विचार किया जाए तो मुख्य रूप से 6 अन्तर व्यैक्तिक आवश्यकताएं प्रकाश में आती हैं जिनकी पूर्ति आवश्यक है :

1. व्यक्तिगत अस्तित्व की आवश्यकता।
2. पूर्णता की आवश्यकता।
3. निष्पक्ष वर्ताव की आवश्यकता।
4. अभिव्यक्ति एवं सुने जाने की आवश्यकता।
5. संगठन के महत्वपूर्ण भाग के रूप में अभिस्वीकृति।
6. स्तर संबंधी आवश्यकता।

पुलिस नेतृत्व उक्त आवश्यकताओं की पूर्ति एवं अपनी इकाई के स्तर पर संबद्ध सभी कर्मचारियों का इस दृष्टि से सतत मूल्यांकन कर अभिप्रेरण के स्तर एवं स्वस्थ कार्य परिवेश का निर्माण कर सकता है। पुलिस विभाग में आरक्षक, प्र.आर. स्तर से लेकर वरिष्ठ स्तर तक व्यक्तिगत पहचान की अपेक्षा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में सतत विद्यमान रहती है। अपेक्षा के स्तर एवं क्षेत्रीय सीमाओं में भिन्नता के साथ या आरक्षक थाने स्तर पर एवं जिले के वरिष्ठ अधिकारियों के मध्य अपनी पहचान स्थापित करना चाहता है वहीं वरिष्ठ अधिकारी इससे वृहद दायरे में इसी प्रकार की अपेक्षा प्रदर्शित करते हैं। संगठन में कार्य के प्रति रुचि एवं अभिप्रेरण स्थापित करने का यह सरलतम कारक हो सकता है। व्यक्ति में निश्चित ही कोई न कोई गुण खूवी या अच्छाई निहित होती है। इससे परे यदि विचार किया जाए तो व्यक्ति के परिवार पूर्वज वंश संबंधी कोई न कोई विशेषता आसानी से चिह्नित की जा सकती है। इस निहित विशेषता के आधार पर

अभिस्वीकृति प्रदान कर कर्मचारी को उसकी पहिचान का आभास कराया जा सकता है। व्यक्ति के सबल पक्ष पर जोर देकर निर्वल पक्ष में सुधार प्रस्तुत कर तथा निर्वल पक्ष को कम महत्व का बताकर आत्मविश्वास जाग्रत कर सार्थक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। अभिप्रेरण का यह स्तर संगठन के उद्देश्यों एवं पुलिस छवि की दृष्टि से भी श्रेयस्कर परिणाम प्रस्तुत कर सकता है। पुलिस कार्य का विस्तार वृहद कलेवर का होता है तथा कार्यपारंगत एवं कार्य पूर्णता की स्थिति जटिल तथा सामान्यतः संभव प्रतीत नहीं होने वाली अवधारणा पुलिस कार्य के संदर्भ में कही जाती है। इसके बाद भी पुलिस संगठन में कार्य करने वाले अधिकांश कर्मचारी विशेष दक्षता पारंगतता एवं पूर्णता की प्रतिक्रिया की अपेक्षा रखते हैं। तथा नेतृत्व के स्तर पर इस प्रकार की अभिस्वीकृति की इच्छा उनमें विद्यमान होती है। पुलिस विभाग में कर्मचारी को विशेष कार्य में उसकी योग्यता की सराहना पुरुस्कार एवं किसी विशेष कार्य के लिए विशेष रूप से नाम निर्धारण एवं चयन उस कर्मचारी को न केवल कार्य के प्रति अभिप्रेरित करता है बल्कि विशेषज्ञता का भार उसके कौशल उन्न्यन के प्रति प्रेरण को भी जाग्रत करता है। ऐसे कर्मचारी अपनी विशेषज्ञता के क्षेत्र को बनाए रखने, उस क्षेत्र में प्रतिस्पर्धी विजय हासिल करने एवं उस रूप में रोलप्ले एवं प्रतिपादन प्रस्तुत करने के लिए सतत रूप से तत्पर हो जाते हैं। इस प्रकार व्यक्ति एवं विषय विशेष की दक्षता के प्रति सार्थक अवदान नेतृत्व के स्तर पर प्रस्तुत किया जा सकता है। युक्तिसंगत एवं निष्पक्ष वर्ताव की अपेक्षा पुलिस कर्मचारी अपने संगठन एवं वरिष्ठ अधिकारियों से करते हैं। इसका आशय स्पष्ठ है कि किसी भी आधार पर भेदभाव पूर्ण व्यवहार कर्मचारियों के प्रति नहीं किया जाए। संगठन की सफलता एवं कार्य परिवेश की दृष्टि से भी यह अत्यधिक आवश्यक होता है विभिन्न आधारों पर भेदभाव के उदाहरण पुलिस विभाग में लगातार प्रकाश में आते रहते हैं। जाति धर्म के आधार पर, लाभ के आधार पर राजनैतिक संपर्क के आधार पर व्यक्तिगत पसंद के आधार पर पक्षपात पुलिस संगठन का अत्यधिक नकारात्मक पक्ष प्रस्तुत करता है। पुलिस संगठन में प्रत्येक कर्मचारी वर्दी धारण करता है। जिसका सीधा उद्देश्य समानता में निहित है तथा यह समानता न केवल विभाग के प्रति अपितु समग्र समाज एवं जनता के प्रति प्रदर्शित की जानी चाहिए। ऐसे में इस प्रकार के कुत्सित भेदभाव करने वाले अधिकारियों को गंभीर विचार कर अपने कृत्य की गंभीरता एवं संगठन पर उसके अत्यधिक नकारात्मक प्रभाव का विचार कर सुधार हेतु प्रयास करना चाहिए यदि पुलिस अधिकारी कर्मचारी पक्षपात प्रदर्शित करें तो लोगों का न केवल पुलिस संगठन से अपितु संपूर्ण

व्यवस्था से विश्वास उठने में अत्यधिक विलंब नहीं होगा कार्य एवं दक्षता को मान्यता प्रदान करना ईमानदारी निष्ठा एवं प्रतिवद्धता को श्रेष्ठ अभिस्वीकृति प्रदान करना पुलिस नेतृत्व का दायित्व है। जिससे कि संगठन में प्रतिबद्धता, दक्षता एवं लक्ष्य प्राप्ति सुगम हो सके। अनुश्शासन के मापदण्डों की मर्यादा विभाग को यूनीफार्म फोर्स के रूप में सार्थक स्थान प्रदान करने की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। लेकिन अनुशासन के बंधन एवं अपनी रैंक एवं रुतवे के प्रभाव में कर्मचारियों की अभिव्यक्ति के अवसर का नाा नहीं होना चाहिए प्रजातांत्रिक व्यवस्था में जहां अभिव्यक्ति एवं सूचना जानकारी तथा सेवा की स्वाधीनता एवं अधिकार प्रत्येक नागरिक को प्राप्त हैं ऐसे में पुलिस संगठन में ऐसे उदाहरण जहां कर्मचारी अपने ही अधिकारी से अपनी बात कहने में संकोच करे या भयभीत हो निश्चित ही निंदनीय हैं। पुलिस के प्रत्येक कर्मचारी का स्वभाविक अधिकार है कि वह अपनी समस्या अथवा अन्य किसी विसंगति के संबंध में तथ्य को सुधार के स्तर तक प्रस्तुत करे जिन इकाइयों में नेतृत्व इस प्रकार की स्वतन्त्रता स्थापित करने में नाकाम रहता है वहां निश्चित ही दूषित कार्य परिवेश तथा नेतृत्व के निर्णय के प्रति आशंका तथा टीम भावना का अभाव प्रदर्शित होता है जो कि संगठन की लक्ष्य प्राप्ति में प्रतिरोधक भूमिका प्रस्तुत करता है। नेतृत्वकर्ता का दायित्व संगठन के जिसका कि वह उत्तरदाई नेतृत्वकर्ता है, अंतिम कर्मचारी तक होता है। इकाई का कोई भी कर्मचारी अन्याय पूर्ण परिस्थिति पक्षपात या उपेक्षा के कारण कुंठा की भावना से ग्रसित होने की स्थिति में नेतृत्वकर्ता के दायित्व की अपूर्णता प्रकाशित होती है। पुलिस इकाइयों में विभिन्न कारणों से कर्मचारी विशेष को मुख्यधारा से प्रथक करने एवं अघोषित रूप से महत्वहीन करने के उदाहरण प्रकाश में आते हैं। जब कर्मचारी को किसी भी कारण से इस प्रकार की स्थिति का सामना करना होता है तब वह कुंठा के एक स्तर के बाद अपने भूमिका के उस स्वरूप को स्वीकार कर लेता है एवं उसी उपेक्षित रूप में विचित्र रोलप्ले की प्रस्तुति वह लगातार करता रहता है। विभिन्न इकाइयों में शराबी, नशा करनेवाले मानसिक रूप से अस्वस्थ बीमार की श्रेणियों में इस प्रकार के अकार्यशील व्यक्ति देखे जा सकते हैं। जो कि एक उपयुक्त रूप से कार्य करने बाले व्यक्ति की भांति वेतन आदि प्राप्त करते हैं एक कर्मचारी का स्थान झेलते हैं लेकिन उनके कार्य का बोझ अन्य कार्यशील व्यक्तियों के उपर होता है। नेतृत्वकर्ता का यह महत्वपूर्ण दायित्व है कि इकाई के सभी सदस्य अपेक्षित एवं क्षमता अनुरूप कार्य निष्पादन प्रस्तुत करें। इस प्रकार के सदस्यों कि कमजोरी का आंकलन प्रारंभिक स्तर पर किया जाकर समूह में छींटाकसी आदि को रोकना तथा उस

कमजोरी के साथ बेहतर तरीके से निष्पादित किए जा सकने वाले कार्यों में ऐसे लोगों का उपयोग करना श्रेयस्कर परिणाम प्रस्तुत कर सकता है। व्यक्ति को यदि इस प्रकार की स्थिति के प्रारंभिक स्तर पर ही संभाला जाए तथा सार्थक प्रयास किए जावें तो महत्वपूर्ण वल के दुरुपयोग एवं ऐसे लोगों का उदाहरण देकर कामचोरी करने वाली प्रक्रिया से संगठन को बचाया जा सकता है। इस प्रकार का प्रोत्साहन न केवल संगठन के लिए अपितु उस कर्मचारी के व्यक्तिगत जीवन की दृष्टि से भी लाभकारी हो सकता है। संगठन के प्रत्येक सदस्य में यह आकांक्षा निहित होती है कि वह संगठन का महत्वपूर्ण भाग है तथा इस रूप में संगठन की अभिस्वीकृति उसे प्राप्त है। अपने सामाजिक व्यक्तिगत आर्थिक एवं विभागीय स्तर के प्रति व्यक्ति लगातार सचेत रहता है। व्यक्ति का स्तर मूल अवधारणा न होकर एक सापेक्षिक अवधारणा हैं तथा स्तर का निर्धारण मूलभूत न होकर विभिन्न लोगों कि प्रतिक्रिया के स्वरूप के आधार पर सुनिश्चित होता है। लोग हमें कैसा समझते हैं तथा लोगों के मध्य हमारी तुल्नात्मक स्थिति क्या है इन्ही आधारों पर व्यक्ति का स्तर विभिन्न रूपों एवं वर्गो में स्थापित होता है, या कि उसे आभासित होता है। संगठन के प्रत्येक व्यक्ति में स्वयं के महत्व की भावना एवं उसके स्तर का आभास न केवल उत्तर दायित्व की भावना बढ़ाने की दृष्टि से बल्कि मूल्यों के स्तर निर्धारण की दृष्टि से भी अत्यधिक महत्वपूर्ण होती है।

पुलिस नेतृत्व को एक व्यक्ति एवं एक कर्मचारी के रूप में संगठन के प्रत्येक कर्मचारी को उसकी मूलभूत प्रवृत्तियों एवं व्यक्तिगत तथा व्यवसायिक विशेषताओं के साथ न केवल स्वीकार करना आवश्यक है बल्कि उसे वास्तविक रूप में समझना भी आवश्यक है। संगठन के निष्पादन एवं बहुमुखी उन्न्यन के लक्ष्य प्राप्ति की दृष्टि से यह अपरिहार्य भी है।

पुलिस नेतृत्व एवं प्रबंधन

पुलिस नेतृत्व में प्रबंधन के कारकों को समाहित कर सार्थक परिणाम प्राप्त किए जा सकते है। वर्तमान परिवेश में जहां प्रशासन के स्थान पर प्रबंधन ने महत्ता प्राप्त की है। पुलिस संगठन के नेतृत्व में भी प्रबंधन के कारकों को समाहित किया जाना वाछनीय हो गया है। प्रबंधन से आशय सामान्य सोच का लक्ष्योन्मुख विकास से है। जहां कार्य की योजना एवं योजनाओं पर कार्य निर्धारित किए जाते है। यहां कौशल के विभिन्न आयाम एवं तकनीको एवं उन से संबधित अभिक्रियाओं को निरूपित किया जाता है। प्रबंधन में लक्ष्य की दृष्टि से विविध आयाम निर्धारित किए जाते है। इनमें योजना, संगठन, निर्देश, संयोजन एवं नियंत्रण के प्राथमिक

स्तर पर वस्तुनिष्ठ चयन टीम का अभिप्रेरण, विचारों का उन्नयन तथा प्रचलित मान्यताओं के अनुरूप अस्तित्व का निर्धारण किया जाता है। कौशल की दृष्टि से मात्रात्मक, निर्णयन क्षमता, सहसंबध एवं विचारात्मक कौशल को क्रमशः निर्धारित किया जाता है।

पुलिस नेत्तृव के प्रभावी कार्यान्वयन की दृष्टि से विभिन्न निर्धारकों को निरूपित किया जा सकता है। जो कि पुलिस नेतृत्व में प्रबंधन की दृष्टि से औजार कहे जा सकते है।

1. दर्शिता :- नेतृत्वकर्ता का विजन वृहद तथा भविष्य की संभावनाओं का पूर्व अनुमान समाहित करते हुऐ व्यवहारिकता की कसौटी पर सार्थक होना चाहिए। नेतृत्वकर्ता की दर्शिता संगठन के सदस्यों में अपेक्षाओं एवं स्वप्नों को रोपित करती है। जिससे की कार्य के प्रति स्व उत्प्रेरण स्थापित होता है। इस के माध्यम से नेतृत्वकर्ता अपने संगठन के भविष्य का निर्माण करता है। पुलिस संगठन में यह अति आवश्यक है कि नेतृत्वकर्ता का विजन वृहद तथा अपेक्षाओ के अनुरूप हो, साथ ही यह भी आवश्यक है कि उसके मुख्य निर्धारको में संगठन के सदस्यों की भावनाओं एवं अपेक्षाओं का सार्थक समांजस्य भी निर्धारित हो। नेतृत्वकर्ता की दर्शिता संबधी सोच संगठन में सदस्यों की प्रतिबद्धता एवं अपने उज्जवल भविष्य की कल्पना को निरूपित करती है तथा सदस्यों की उपलब्धि संबधी अपेक्षाओं को बनाए रखने मे सार्थक परिणाम प्रदान करती है।

2. स्वाट (SWOT) :- नेतृत्वकर्ता के लिए प्रबंधन का मूल भूत लक्षण है कि वहां स्वयं की तथा संगठन की मूल भूत प्रवृत्तियों को वास्तविक अर्थो मे पहचानें। समार्थ्य, कमजोरियों, अवसरों, चिंताओं की भूत, वर्तमान एवं भविष्य की वास्तविक परिकल्पना तथा उनपर निदानात्मक प्रयास नेतृत्वकर्ता के स्तर पर अपेक्षित होते है। पुलिस संगठन में इस प्रकार के निर्धारण सीमित अवधि के लक्ष्यों एवं दीर्घ अवधि के लक्ष्यों की दृष्टि से सार्थक परिणाम प्रदान कर सकते है।

3. मनः स्थिति निर्माण :- पुलिस नेतृत्व प्रबंधन में अल्प रूप में पाए जाने वाला महत्वपूर्ण गुण इस रूप में परिभाषित किया जा सकता है। नेतृत्वकर्ता का दायित्व न केवल कार्य एवं लक्ष्यों का निष्पादन एवं निर्धारण होता है बल्कि समय समय पर नेतृत्वकर्ता से अपेक्षा होती है कि वह संगठन के सदस्यों की मनः स्थिति में परिवर्तन एवं निर्माण करें जिससे कि संगठन सामयिक परिस्थितियों में बेहतर निष्पादन प्रदान कर सकें।

4. शक्ति प्रवाह :- नेतृत्वकर्ता का प्रबंधन एवं उसकी सफलता संगठन के

समग्र तथा एक रूप निष्पादन की स्थिति में श्रेष्ठतम हो सकती है। नेतृत्वकर्ता का दायित्व है कि वह अपने संगठन के सदस्यों को समय एव परिस्थिति के अनुरूप शक्ति प्रदान करें एवं भावनात्मक स्तर पर इस प्रकार के अभिप्रेरण कारकों की स्थापना करें। शक्ति केंद्रित नेत्तृव में एक और एक दो का निष्पादन प्राप्त होता है, तो शक्ति के वितरण की स्थिति में एक और एक ग्यारह की कहावत को सार्थक करते हुऐ परिणाम प्राप्त किया जा सकता है। नेतृत्व की शक्ति का विस्तार, स्थानांतरण संबधी नेतृत्व अवधारणा के अनुरूप सरल रूप में किया जा सकता है। जहां नेतृत्व अपने से नीचे विभिन्न स्तरों पर विभिन्न श्रेणियों में नेतृत्व को स्थापित करता है।

पुलिस संगठन में प्रबंधन के सिद्धांत मुख्य रूप से पुलिस के प्राथमिक लक्ष्यों से समाहित कर निर्धारित किए जा सकते है। पुलिस एवं सुधार तथा अपराध संबधी अवधारणाएं अतर्संबंधित होती है। अपराध विवेचना अपराध नियंत्रण अपराधियों से डीलिग तथा अपराध के परिदृश्य में सुधार के संबध में प्रबंधन रणनीतियां निर्धारित किया जाना अपेक्षित है। पुलिस कार्यों के संबध में प्रबंधन सिद्धांतों की समझ एवं योजना निर्माण के संबध में वृहद प्रयास अपेक्षित है। पुलिस प्रशिक्षण मे प्रबंध सिद्धांतों एवं व्यवहार विज्ञान संबधी कारकों का अभाव है। जिन्हें दूर किया जाना अपेक्षित है।

पुलिस अपने मूल भूत स्वरूप में एक फोर्स के रूप में कार्य करती है एवं इसके प्रबंधन की पद्धति फोर्स, अधिकार एवं आधिपत्य के प्रदर्शन के रूप में निर्धारित की जाना चाहिए। पुलिस के कार्यों में मानव एवं सवैधानिक अधिकारों के संरक्षण को निर्धारित किया जाना आवश्यक है। पुलिस के कार्य प्रबंधन में विशेषज्ञता के प्रसार को स्थापित किया जाना आवश्यक है। पुलिस विज्ञान एवं तकनीको के ज्ञान एवं प्रशिक्षण के संबध में प्रबंधन एवं निर्धारण वांछनीय है। उद्देश्यों एवं अपवादों के संबध में निर्धारण करते हुऐ निष्पादन का मापन एवं मूल्याकंन की प्रक्रिया तथा सतत विकास की अवधारणा को प्रबंधन में स्थान दिया जाना अपेक्षित है।

टीम निर्माण

नेतृत्वकर्ता के मूलभूत गुणों में टीम निर्माण को प्राथमिक महत्ता प्रदान की जाती है। संगठन के सामान्य उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक है कि संगठन के सभी सदस्य एक इकाई के रूप में सामूहिक निष्पादन प्रस्तुत करें। पुलिस विभाग में टीम निर्माण एवं इकाई के एक रूप, कार्य प्रदर्शन की स्थिति

अपेक्षा अनुरूप प्रतिपादित होना सामान्यतः प्रकाश में नहीं आता है। पुलिस विभाग में अच्छे एवं धनात्मक कार्यों में स्वयं की भूमिका एवं योगदान को बड़ा चढ़ा कर प्रस्तुत करने की भावना तथा विपरीत परिस्थिति एवं परिणाम की स्थिति में उत्तरदायित्व अन्य पर अधिरोपित करने की भावना इस दिशा में सर्वाधिक नकारात्मक स्वरूप प्रस्तुत करती है। ऐसी स्थिति में संगठन के सदस्य नेतृत्व के प्रति सहानभूति एवं नेतृत्व की अपेक्षाओं से संम्बद्ध नहीं हो पाते है। यही कारण है कि इकाई में नेतृत्व एवं सदस्यो के बीच भावनात्मक सामंजस्य स्थापित नहीं हो पाता तथा अपेक्षित परिणाम प्राप्ति में बाधा उत्पन्न होती है। संगठन के इकाई स्तर पर विभिन्न छोटे ग्रुप का निर्माण तथा आपसी खींचतान की भावना भी लगातार प्रकाश मे आती है तथा यह परिस्थिति भी इकाई के टीम के रूप में कार्य करने की प्रवृत्ति में बाधा स्थापित करती है।

पुलिस एवं अन्य संगठन में यह नेतृत्व का मूलभूत दायित्व है कि वह प्रत्येक सदस्य की क्षमताओं एवं धनात्मक पक्षों को समझकर उन्हें कार्य के प्रति प्रेरित कर इकाई को एक टीम के रूप में स्थापित करें। विचारक बेकहार्ड ने टीम निर्माण प्रक्रिया के चार उद्देश्य निरूपित किए है।

1. लक्ष्य एवं प्राथमिकताओं का निर्धारण

2. सदस्यों के द्वारा कार्य निष्पादन के तरीको एवं उनकी भूमिकाओं एवं उत्तरदायित्वों के संबध में विश्लेषण एवं निर्धारण

3. समूह के कार्य के तरीको के संबध मे परीक्षण, प्रक्रिया, प्रतिमान, निर्णयन, संचार आदि के संबध में परीक्षण निर्धारण

4. सदस्यों के संबधों के संबध में परीक्षण एवं सुधार

इस प्रकार बेकहार्ड ने टीम निर्माण के उद्देश्यों को संगठन के आधारभूत संरचना के रूप में स्थापित करनें का प्रयास किया तथा यह बताया कि नेतृत्व की सफलता टीम निर्माण संबधी कौशल के आधार पर निर्धारित होती है। पुलिस संगठन में उक्त चार मानकों के आधार पर टीम निर्माण के मूल भूत स्वरूप को व्याख्यित किया जा सकता है। इकाई के स्तर पर तात्कालिक लक्ष्यों, उद्देश्यों एवं दीर्घ कालिक लक्ष्यों का निर्धारण करना तथा संगठन के प्रत्येक सदस्य को इन लक्ष्यों के प्रति समाहित करने का प्रयास करना अत्यधिक महत्वपूर्ण कार्य है। जो कि सामान्यतः व्यवहारिक तौर पर दिखाई नहीं देता है। पुलिस की विभिन्न इकाइयों में लक्ष्य निर्धारण या तो होता नहीं है एवं यदि होता है तो नेतृत्व के सीमित तथा उपरी स्तर तक ही इसकी जानकारी एवं तारतम्य सीमित होता है। टीम के सदस्यों में यदि लक्ष्यों के प्रति जागरूकता एवं उनकी स्थिति की जानकारी नहीं है तो उन

सदस्यों का वांछित अवदान संगठन को प्राप्त होना संम्भव ही नहीं है। द्वितीय स्तर पर सदस्यों के भूमिका एवं उत्तरदायित्वों का विश्लेषण एवं कार्य के उपयुक्त तरीको को चिह्नित किया जाना एक ऐसी प्रक्रिया है जो कि समय के परिमाण के अपेक्षा व्यक्त करती है। पुलिस संगठन में नेतृत्वकर्ता का मैदानी कार्यकाल निश्चित नहीं होता तथा अधिकांशतः अल्प होता है। ऐसे में इस प्रकार की प्रक्रिया के प्रति सार्थक प्रयासों के लिए अपेक्षित समय का अभाव तथा प्राप्त समय में तात्कालिक कानून व्यवस्था एवं अपराधों के प्रति संवेदनशीलता के कारण यह प्रक्रिया उपेक्षित हो जाती है। कार्य विश्लेषण एवं कार्य प्रक्रिया विश्लेषण की अवधारणा को पुलिस नेतृत्व के विभिन्न स्तरों पर स्थापित किया जाना अत्यधिक आवश्यक है। स्तरीकृत व्यवस्था में विभिन्न स्तरों के नेतृत्व को इसके प्रति प्रेरित करना होगा। पुलिस विभाग में यह प्रक्रिया उच्चतम स्तर के नेतृत्व द्वारा प्रारंम्भ की जाकर निम्न स्तर तक प्रसार किया जाना वांछित परिणाम की दृष्टि से महत्वपूर्ण हो सकता है। पुलिस संगठन के प्रतिमान निर्णयन, संचार आदि की प्रक्रिया परम्परागत एवं निर्धारित स्वरूप में अग्रसर होती है। सामयिक परीक्षण एवं स्थानीय इकाई स्तर पर सुधार के प्रयास नेतृत्व के स्तर पर अपेक्षित होते है। इकाई नेतृत्व इन अवधारणाओं पर स्थानीय प्रभाव एवं अपेक्षाओं का निर्धारण तथा इनके परिमार्जन के प्रयास सतत रूप से करें तो निश्चित ही टीम के सार्थक निष्पादन को प्राप्त किया जा सकता है। संगठन के सदस्यों के आपसी अंतर्संबंध संगठन में द्वद एवं संघर्ष की परिस्थिति निर्मित करते है तथा इस प्रकार के द्वद संगठन के निष्पादन पर अत्यधिक नकारात्मक प्रभाव कारित करते है। अतः टीम निमार्ण की दृष्टि से नेतृत्वकर्ता का अपेक्षित दायित्व है कि वह संगठन के आंतरिक सह संबधों पर विश्लेषण एवं निर्धारण सुनिश्चित करें तथा इस दिशा में सकारात्मक प्रभाव अंकित करें।

प्रभावी टीम निर्माण एवं निष्पादन के निर्धारक तत्वों के संबध में डगलस मैकग्रेगोर ने कारकों की व्याख्या प्रस्तुत की है :

1. प्राथमिक लक्ष्यों के संबध में आपसी सहमति कारकों की पहचान
2. स्वतंत्र संचार व्यवस्था
3. आपसी विश्वास
4. आपसी सहयोग
5. विरोधाभासों एवं असहमति कारकों का प्रबंधन
6. टीम का चर्यनित उपयोग
7. सदस्यों के कौशल का उपयुक्त निष्पादन एवं उपयोग
8. नेतृत्व

इस प्रकार उक्त कारक टीम भावना एवं टीम निर्माण की दृष्टि से अपेक्षित निर्धारण प्रकाशित करते है। यहां यह नेतृत्वकर्ता का दायित्व है कि उक्त मानकों के आधार पर सुगठित एवं सुसंगठित टीम का निर्माण करें। पुलिस संगठन टीम निर्माण की अपेक्षाओं एवं अत्याधिक संभावनाओं से ओतप्रोत है। अनुशासनिक एवं पदक्रम संबधी उच्च भावना के चलते पुलिस नेतृत्व दण्ड एवं भय जैसे कारकों के उपयोग के प्रति विवश होता है। यह भावनाएं कहीं न कहीं पुलिस के टीम प्रबंधन एवं टीम निर्माण को नकारात्मक रूप में प्रभावित करती है। अतः यह आवश्यक है कि पुलिस नेतृत्व टीम निर्माण मानकों के प्रति जागरूक हो तथा टीम के रूप में अपने निष्पादन एवं लक्ष्य प्राप्ति अपेक्षाओं को वृहद स्वरूप में प्राप्त करें।

पुलिस संगठन में नेतृत्व के स्तर पर विभिन्न प्रयासों को प्रारंम्भ किया जाना अपेक्षित है। संगठन की समझ एवं उसके मूल स्वरूप को ज्ञात कर उसमें कार्य प्रक्रिया एवं संगठन की समझ का प्रत्येक कर्मचारी स्तर पर विकास महती आवश्यकता है। संगठन को समझने की आवधारणा तथा व्यक्तिगत स्तर पर संगठन के मास्टर के रूप में जानकारी समाहित करने की अवधारणा का निर्धारण साथ ही संगठन के माड्ल स्तर पर प्रबंधन की प्रक्रिया की समझ का विकास श्रेष्ठ परिणाम प्रदान कर सकता है। पुलिस संगठन में लगातार प्रशिक्षण एवं उन्नयन को विक्रेन्दिकृत व्यवस्था के रूप में थाना स्तर पर निर्धारित किया जाना चाहिएं। पुलिस नेतृत्व के दृर्शित लक्ष्यों एवं भविष्य की परिकल्पनाओं को संगठन के प्रत्येक कर्मचारी तक प्रसारित कर तारतम्य निर्माण की अपेक्षाएं विद्यमान है। वर्तमान की चुनौतियों एवं भविष्य की अपेक्षाओं के प्रति अलार्मिंग प्रक्रिया का निर्माण किया जाना भविष्य के पुलिस संगठन एवं परिवर्तनो के प्रति अनुकूलन की सहजता की दृष्टि से सार्थक होगा।

पुलिस संगठन में प्रबंधन के स्तर पर नेतृत्व से प्रारंभिक अपेक्षा मानव संसाधनों के प्रबंधन की है। पुलिस थाना स्तर पर प्रबधंन मानव संसाधन प्रबंधन पर विविध स्तरों पर प्रशिक्षण एवं जनसूचना प्रबंधन पर निर्धारण पुलिस प्रबंधन एवं नेतृत्व की सार्थकता की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। पुलिस संगठन में आधुनिक मानकों एवं प्रशिक्षण विषयों को समाहित किया जाना तथा पुलिस नेतृत्व को प्रबंधन कौशल के प्रति संवेदनशील किया जाना अति आवश्यक है। पुलिस नेतृत्व का मुख्य केन्द्रिकरण बिन्दु भविष्य की अपेक्षाओं तथा वर्तमान की चुनौतियों के प्रति अनुकूलन स्थापित करते हुऐ सतत परिमार्जन होना चाहिए।

वर्तमान परिवेश में पुलिस नेतृत्व गंभीर चुनौतियों से प्रत्यक्ष हो रहा है। संसाधन की कमी कहे या पराम्परागंत मानक प्रभाव, पुलिस संगठन समायिक

परिवर्तनों के प्रति सहज निर्धारण में सफल नहीं कहा जा सकता। यही कारण है कि पुलिस की छवि एवं अपेक्षाओं के मध्य स्थान वृहद स्वरूप को प्राप्त कर रहा है। पुलिस नेतृत्व नवाचारो के प्रति व्यक्तिवादी सोच से ग्रसित है। यही कारण है कि विभिन्न नवाचार व्यवस्था व्यक्ति केन्द्रित रूप में प्रकाश मे आती है तथा इसी रूप में व्यवस्था से पृथक कर दी जाती है। व्यक्तिगत अहम का उच्च स्तर संगठन के मूल भूत लक्ष्यों को द्वितीयक स्तर पर सीमित करने में प्रभावी है। जिस का परिणाम संगठन के सुधारों को नकरारात्मक रूप में प्रभावित करता है। पुलिस नेतृत्व के विभिन्न उच्च स्तरों पर संगठन के नवाचार को प्राथमिकता प्रदान करना वांछनीय है। पुलिस संगठन में संचार की सरल एवं द्विस्तरीय व्यवस्था का निर्धारण संगठन को सदस्यों की दृष्टि से उपयुक्त बनाने मे सहयोगी होगा। पुलिस नेतृत्व के उत्कृष्ट स्वरूप की स्थापना न केवल संगठन अपितु संविधान एवं जनलक्ष्यों की दृष्टि से सार्थक परिणाम प्रस्तुत करने में सफल होगी। पुलिस नेतृत्व की अपेक्षाओं के प्रति जागरूकता एवं सतत् प्रयास अत्याधिक आवश्यक है। पुलिस प्रशिक्षण एवं नियमित कार्यकलापों में नेतृत्व कौशल के अयाम स्थापित किया जाना तथा उनके अनुरूप प्रक्रिया का निर्धारण भविष्य के संगठन निर्माण मे बहुउपयोगी होगा। इन प्रयासों के प्रति संस्थागत निर्धारण की अल्पता निश्चित ही प्रकाश मे आती है। लेकिन भविष्य के लिए दोनों ही स्वरूपों मे सार्थक प्रयास वांछनीय है। पुलिस नेतृत्व के लिए समय अनुरूप निर्धारक बिन्दुओं को निम्नवत रूप में देखा जा सकता है।

- आधुनिक परिवेश के प्रति वैश्विक दृष्टि
- आत्मविश्वास तथा नवाचार के प्रति प्रेरणा
- संगठन के सदस्यों को प्रभावित करना तथा अपने सोच एवं लक्ष्यों में उन्हें समाहित करना
- अपरिमित उर्जा एवं कार्य के प्रति जुनून का प्रदर्शन
- संगठन के सदस्यों के प्रति सहृदयता

इस प्रकार पुलिस नेतृत्व अपने नवीन स्वरूप में संगठन एवं जनता की अपेक्षाओं के प्रति पूर्ण संवेदनशील एवं प्रभावी रूप में स्थापित किया जा सकता है। अवश्यकता, हार्दिक, सार्थक प्रयासों की है।

• • •

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. पुलिस लीडरशिप : द इनसाइड स्टोरी : डा. जेम्स बाडाकुमाचेरी
2. इंडियन पुलिस टुडे : शंकर सेन
3. प्रिपेयरिंग द इंडियन पुलिस फाइट 21 सेंचुरी : एस. कृष्णामूर्ति
4. पुलिस आर्गनाइजेशन इन इण्डिया : वी.पी.आर.डी.
5. काइम इन इंडिया : वी.पी.आर.डी.
6. व्यक्तित्व : डा. रामनाथ शर्मा
7. आब्जेक्टिव अप्रोचेज टु पर्सनैलिटी : बास और वर्ग
8. एनसायक्लोपीडिया एवं अन्य इंटरनेट साइट पर उपलब्ध जानकारी
9. पुलिस लीडरशिप पर एडमिनिसट्रेटिव स्टाफ कालेज आफॅ इंडिया का स्टेडी मटेरियल।